BED-05

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

विद्यालय प्रणाली मुद्दे एवं प्रबन्धन
School System Issue & Management

BED-05

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

विद्यालय प्रणाली मुद्दे एवं प्रबन्धन
School System Issue & Management

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक एवं सदस्य

संयोजक

डॉ. दामीना चौधरी

सह आचार्य, शिक्षा

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय. कोटा (राज.)

सदस्य

1. प्रो. पी. के. साहू
   शिक्षा विभाग
   इलाहाबाद विश्वविद्यालय (उप्र.)
2. प्रो. आर. पी. श्रीवास्तव (से.नि.)
   जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
3. प्रो. आर. जे. सिंह
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ प्र.)
4. प्रो. डी. एन. सनसनवाल
   देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
5. प्रो. एस. बी. मेनन
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
6. प्रो. स्नेह. एम. जोशी
   एम. एस. विश्वविद्यालय, बड़ौदा
7. प्रो. सोहनवीर सिंह चौधरी
   इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
8. डॉ. एम. एल. गुप्ता
   सह आचार्य शिक्षा (से. नि.)
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
9. डॉ. अनिल शुक्ला
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उप्र.)

संपादन एवं पाठ लेखन

संपादक

प्रो. रीटा अरोड़ा

विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

पाठ लेखक

- डॉ. रजनी शर्मा
  जयपुर (राज.)
- डॉ. मीनू अग्रवाल
  जयपुर (राज.)
- डॉ. अंशु भाटिया
  जयपुर (राज.)
- डॉ मधु माधुर
  वनस्थली, टोंक (राज.)
- डॉ. हेमलता तलेसरा
  लाड़नू (राज.)
- डॉ. बनवारी लाल जैन
  लाडनू (राज.)
- डॉ. सुषमा तलेसरा
  उदयपुर (राज.)
- डॉ. सुदेश मारवाह
  जयपुर (राज.)
- डॉ. कमला वशिष्ट
  जयपुर (राज.)
- डॉ. शिरीष वालिया
  जोधपुर (राज.)
- डॉ. प्रमिला दुबे
  जयपुर (राज.)
- डॉ. शकुन्तला शर्मा
  जयपुर (राज.)
- डॉ. रीटा शर्मा
  जयपुर (राज.)
- डॉ. वन्दना गोस्वामी
  वनस्थली, टोंक (राज.)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. (डॉ) नरेश दाधीच	**प्रो. (डॉ.) एम. के. घडोलिया**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक (अकादमिक)	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन : अप्रेल 2012 ISBN - 13/978-85-8496-333-5

सर्वाधिकार सुरक्षित : इस सामग्री के किसी भी अंश की वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में 'मिमियाग्राफी' (चक्रमुद्रण) के द्वारा या अन्यथा पुन: प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।
कुलसचिव, व. म. खु. विश्वविद्यालय, कोटा द्वारा वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के लिये मुद्रित एवं प्रकाशित।

BED-05

विद्यालय प्रणाली : मुद्दे एवं प्रबन्धन

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

अनुक्रमणिका

इकाई		पृष्ठ संख्या
	खण्ड - 1	
	विद्यालय प्रणाली	
1.	विद्यालय प्रणाली	08
2.	राजस्थान में विद्यालयी प्रशासन के चरण	26
3.	विद्यालयी शिक्षा पर शैक्षिक दस्तावेज	52
4.	विद्यालयी शिक्षा की संरचना	90
	खण्ड - 2	
	विद्यालयी प्रबंधन एवं नवप्रवर्तन	
5.	विद्यालयी की एक संस्था के रूप में संभावनाएँ	108
6.	मूलभूत शिक्षा का वैयक्तिक अध्ययन	128
7.	विद्यालयी प्रबन्धन	149
8.	विभिन्न निकायों के लिये क्रियाओं का आयोजन	175
9.	विद्यालयी शिक्षा की समस्याएँ	210
	खण्ड - 3	
	अध्यापक एवं कक्षा-कक्ष प्रबंधन	
10.	कक्षा-कक्ष प्रबन्धन	237
11.	नेतृत्व शैली	271
12.	अध्यापक की सामाजिक- पृष्ठभूमि	287
13.	अध्यापक की एक व्यावसायिक के नाते प्रगतिशील सामाजिक भूमिका	297
14.	शिक्षकों के सतत व्यवसायिक विकास के अवसर	320
15.	शिक्षा की शब्द सूची	335

इकाई - 1

विद्यालय प्रणाली

SCHOOL SYSTEM

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

1.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

1.1 विद्यालय प्रणाली (School System)

1.1.1 प्रणाली-संप्रत्यय, घटक, पारस्परिक सम्बन्ध
(Concept of System, Components & Interrelationships)

1.1.2 विद्यालय सामाजिक प्रणाली के रूप में
(School as a Social System)

1.2 विद्यालय प्रणाली के घटक (Components of School Systems)

(क) आन्तरिक घटक - भौतिक ढाँचा, उपकरण, प्रबन्ध के प्रकार, विद्यालय-दर्शन, छात्र-अध्यापक सम्बन्ध मानवीय संसाधनों की कार्य-प्रणाली, पूर्ण विद्यालय वातावरण।
(Internal Components-Infrastructure, Management, Philosophy of School, Students-Teacher relations, working Patterns of Human Resources, School Climate)

(ख) बाह्य घटक - विद्यालय क्षेत्र, अभिभावक-शिक्षक संघ, सामुदायिक सहभागिता, संचार माध्यम, सांस्कृतिक कारक, तकनीकी विकास राजनीतिक जटिलताएँ ।
(External Components- Locality, Parents Teacher Association, Community, Media, Cultural factors, Technology development, Political Morass)

1.4 आन्तरिक एवं बाहा घटकों में अन्तःसम्बन्ध
(Interrelationship of Externals and Internal Components)

1.5 सारांश (Summary)

1.6 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

विद्यालय व्यवस्था का सम्प्रत्यय एवं इसके घटक विद्यालयी व्यवस्था के विभिन्न घटकों के मथ्य अन्तर्सम्बन्ध, आन्तरिक एवं बह्या

(Concept of School System and its Components. Interrelationship of different components of School System : Internal and External)

1.0 लक्ष्य एवं उद्देशय
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप---

- विद्यालय प्रणाली का संप्रत्यय, एवं सामाजिक प्रणाली से अन्तःसम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे ।
- विद्यालय प्रणाली के आन्तरिक एवं बाह्य कारकों में विभेद कर सकेंगे ।
- विद्यालय प्रणाली के समुदाय के साथ सम्बन्ध को सूचीबद्ध कर सकेंगे ।
- शिक्षा की औपचारिक प्रणाली के रूप में विद्यालय का वर्णन कर सकेंगे ।

1.1 विद्यालय प्रणाली
(School System)

सामाजिक प्रणाली की उपप्रणाली के रूप में शिक्षा को स्वीकार किया जाता है । शिक्षा प्रणाली के रूप में (Education as a system) स्वीकार करने पर इसके औपचारिक तंत्र के रूप में विद्यालय उपप्रणाली (school subsystem) को मान्यता दी जाती है । किन्तु विद्यालय को एक प्रणाली (school as a system) के रूप में मानने पर इसके विभिन्न घटकों की पारस्परिक अन्त: क्रिया से व्यक्ति को सामाजिक पर्यावरण में सामंजस्य करने की क्षमता प्रदान की जा सकती है । शिक्षा के सन्दर्भ में विद्यालय-प्रणाली का संप्रत्यय स्वीकार करने के पीछे निहित भावना भी यही है कि एक प्रणाली में जो विशेषताएँ एवं तत्व होते हैं उन्हीं के अनुसार विद्यालय की सम्पूर्ण व्यवस्था संचालित हो । शिक्षा-शास्त्र को एक वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में समझने पर विद्यालय की परम्परागत अवधारणा से भिन्न एक व्यवस्था अथवा प्रणाली (system) के रूप में विद्यालय की व्याख्या की जाती है । प्रणाली की विभिन्न उपप्रणाली (sub-systems) पारस्परिक अन्त: क्रिया के द्वारा सम्पूर्ण कार्य प्रणाली को प्रभावित एवं सक्रिय रखती है । एक वृहत् प्रणाली (large system) के रूप में विद्यालय प्रणाली अपने उद्देश्यों की प्राप्ति एवं सफलता पूर्ण संचालन के लिए उप प्रणाली घटकों पर आश्रित होती है ।

सर्वप्रथम यह आवश्यक हो जाता है कि हम विद्यालय प्रणाली के सम्प्रत्यय को स्पष्ट रूप से समझने के लिए, 'प्रणाली' की अवधारणा को ज्ञात करें ।

1.1.1 प्रणाली-संप्रत्यय, घटक, पारस्परिक सम्बन्ध (Concept of system, components and interrelationship) -ग्रिफिथ्स ने प्रणाली शब्द को सरल रूप में परिभाषित किया है "प्रणाली को सरल रूप में परिभाषित करें तो इसे आपस में अन्त: क्रिया करने वाले कारकों का पुंज कहा जा सकता है ।" (System may be simply defined as complex of elements of mutual interaction-Daniel E.Griffths-1964) विद्यालय को जब एक प्रणाली के रूप में समझने का प्रयास करते हैं तो आपस में अन्त: क्रिया करने वाले कारकों में छात्रा/छात्राएँ, शिक्षक/शिक्षिकाएँ, प्रबन्ध तंत्र तथा अभिभावकों को सम्मिलित करते हैं इस तथ्य को चित्रात्मक रूप में निम्नवत् समझ सकते हैं :-

चित्र संख्या: 1.1

विद्यालय प्रणाली की मूल आत्मा विद्यार्थी होता है, शिक्षक एवं अभिभावक मिल कर विद्यार्थी को प्रभावित करते हैं । प्रबन्ध तंत्र की विशेषताएँ सम्पूर्ण विद्यालय -प्रणाली को प्रभावित करती हैं । विद्यालय के लक्ष्य उनकी प्राप्ति एवं प्राप्ति के तरीके प्रबन्ध तंत्र निश्चित करता है तथा तदानुसार क्रियान्वयन का प्रयास कर विद्यार्थी द्वारा वृहद एवं मुख्य सामाजिक प्रणाली को स्वरूप प्रदान किया जाता है ।

विद्यालय प्रणाली की औपचारिक संरचना में उपर्युक्त तत्वों को सम्मिलित करते हैं तो इन तत्वों को समझना भी आवश्यक हो जाता है क्योंकि एक सामाजिक प्रणाली की उप प्रणाली के रूप में विद्यालय-प्रणाली की औपचारिक संरचना का निर्माण इन्हीं के पारस्परिक संयोजन का परिणाम होता है। इनका संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत है:-

चित्र संख्या : 12

समाज (Society) - प्रत्येक समाज के अपने विशिष्ट मूल्य, आशाएँ, अपेक्षाएँ एवं संस्कृति होती है। समाज का लक्ष्य होता है कि वह इन विशेषताओं का संरक्षण करें तथा आगामी पीढ़ी को इन्हें हस्तांतरित भी करें । शिक्षा के माध्यम से इस कार्य को सम्पन्न किया जाता है तथा इस अर्थ में शिक्षा को सांस्कृतिक संरक्षण (Preservation) हस्तांतरण (Transmission) एवं परिमार्जन (Purification) की प्रक्रिया कहा जाता है । शिक्षा ये तीनों कार्य जिस औपचारिक संस्था (formal institution) के माध्यम से सम्पन्न करती है उसे विद्यालय/शाला का नाम दिया जाता है । विद्यालय को एक लघु समाज के रूप में पहचाना जाता है इसी कारण इसे एक वृहद सामाजिक प्रणाली की उप प्रणाली के रूप में स्वीकार किया जाता है ।

विद्यालय प्रणाली की औपचारिक संरचना में सर्वप्रथम समाज का स्थान है समाज की अपेक्षाओं (Aspirations) एवं आवश्यकताओं (Needs) की पूर्ति हेतु विद्यालय प्रणाली का स्वरूप निश्चित होता है । सामाजिक प्रणाली की विशेषताओं में संस्कृति (Culture) तथा मूल्य (Values) का उल्लेख किया गया है । विद्यालय प्रणाली का लक्ष्य निर्धारण समाज की संस्कृति व मूल्यों के आधार पर किया जाता है । अत: यह सत्य है कि विद्यालय प्रणाली की औपचारिक संरचना का आधार बिन्दु समाज होता है ।

प्रधानाचार्य (Principal) - विद्यालय व्यवस्था को सुचारू रूप देने के लिए एक ऐसे अधिकारी की अनिवार्यता होती है जो व्यवस्था के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहे तथा व्यवस्था के अन्य घटकों को लक्ष्योन्मुख बनाये रखे । प्रधानाध्यापक का दायित्व व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए नियमों की अनुपालना करने हेतु अधीन कर्मचारियों को तैयार करना होता है । किन्तु इस दायित्व निर्वहन में यह स्वयं सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में नियमों का पालन करते हुए सम्पूर्ण वातावरण का निर्माण करता है तो वह जिस लक्ष्य से विद्यालय-प्रणाली को संचालित कर रहा है उस लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है । केवल नियमों को लागू करने की व्यवस्था कर देने मात्र से विद्यालय व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करना कठिन है । इसके लिए प्रधानाध्यापक के सम्मुख एक स्पष्ट सामाजिक परिप्रेक्ष्य तथा शैक्षिक दर्शन होना चाहिए ।

शिक्षक (Teachers) - अध्यापक विद्यालय प्रणाली का एक सुदृढ़ स्तम्भ है । वह ज्ञान, भावना एवं कौशलों को आगामी पीढ़ी को प्रदान करके विद्यालय प्रणाली को गति प्रदान करता है । शिक्षक के दायित्व बोध के अनुसार ही विद्यालय प्रणाली लक्ष्योन्मुख बनती है । यदि शिक्षक अपने व्यवसाय के प्रति निष्ठावान है तो विद्यालय प्रणाली की सक्रिया बढ़ती है तथा यह प्रणाली लक्ष्योन्मुख भी बनती है । यदि शिक्षक में अपने व्यवसाय के प्रति निष्ठा है तो विद्यालय प्रणाली में अन्य घटकों के साथ पारस्परिक अन्त: क्रिया को बढ़ावा मिलता है, शिक्षक की प्रमुख व्यावसायिक निष्ठाएँ, स्व के व्यवसाय के प्रति निष्ठा, छात्रों के प्रति निष्ठा, समाज के प्रति निष्ठा तथा राष्ट्र के प्रति निष्ठा हैं । इन निष्ठाओं के आधार पर ही शिक्षक का आचरण व्यवहार रूप लेता है । यह शिक्षक-व्यवहार, विद्यालय प्रणाली की विभिन्न उपप्रणालियों को प्रभावित करता है । उदाहरण के लिए यदि शिक्षक अपने व्यवसाय के प्रति उत्तरदायी नहीं है तो वह सामाजिक परिवर्तन का कार्य नहीं कर सकता । क्योंकि व्यावसायिक निष्ठा के अभाव के कारण वह कक्षा-कक्ष में अपने विद्यार्थियों से लक्ष्य केन्द्रित अन्त: क्रिया (goal oriented interaction) स्थापित नहीं कर सकेगा । अत: यह आवश्यक है कि शिक्षक एक सक्रिय घटक के रूप में विद्यालय-प्रणाली की गत्यात्मकता में अपनी भूमिका निर्वहन करे जिससे विद्यालय प्रणाली अपने लक्ष्य को प्राप्त करे तथा सामाजिक प्रणाली को सशक्त बनाये ।

कर्मचारी (Workers) - प्रत्येक प्रणाली में उसके घटकों की भूमिका प्रस्थिति (Role Status) निश्चित होती है । इसी कारण विद्यालय प्रणाली में उसके प्रत्येक कर्मचारी का दायित्व भी निश्चित होता है । कर्मचारियों की पारस्परिक समझ, समान लक्ष्य तथा विद्यालय कार्यक्रमों को उत्कृष्ट बनाने की लालसा पर ही विद्यालय प्रणाली की श्रेष्ठता निर्भर करती है । प्रधानाचार्य, शिक्षक एवं प्रबंधतंत्र के साथ कर्मचारियों के संबंध विद्यालय प्रणाली का स्वरूप निर्धारित करते हैं

। विद्यालय के लक्ष्यों के प्रति रागात्मक एवं भावात्मक सम्बन्ध रखने वाले कर्मचारी विद्यालय प्रणाली की पारस्परिक अन्त: क्रिया की सक्रियता बनाये रखने में सहयोग प्रदान करते हैं ।

विद्यार्थी (Students) - प्रत्येक प्रणाली में उसके घटकों की भूमिका प्रस्थिति के अनुसार विद्यार्थीयों की भूमिका निर्धारित रहती है । विद्यालय प्रणाली द्वारा निश्चित किये गये लक्ष्यों की प्राप्ति में विद्यार्थी केन्द्रीय भूमिका में विद्यमान होता है । यह घटक अपने परिवेश में अन्य घटकों से अन्तःक्रिया के आधार पर प्रणाली का स्वरूप निश्चित करता है । विद्यार्थी विद्यालय के आन्तरिक एवं बाह्य घटकों से सम्बन्धित विभिन्न क्रिया-प्रतिक्रियाओं को नियन्त्रित एवं नियमित करता है ।

प्रशासक (Administrators) - प्रशासक विद्यालय प्रणाली का लक्ष्य निर्धारित करता है तथा अपने प्रशासकीय स्वरूप से विद्यालय प्रणाली को विशिष्ट दिशा प्रदान करता है । प्रशासक के चिन्तन, दर्शन, कार्य प्रणाली एवं निर्णय क्षमता से विद्यालय प्रणाली का स्वरूप निश्चित होता है तथा इस स्वरूप को बनाये रखने और सामाजिक घटकों से अन्तःक्रिया के आधार पर प्रणाली के लक्ष्यों को प्राप्त करने में प्रशासक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है ।

विद्यालय बोर्ड (School Board) - विद्यालय बोर्ड राजकीय या गैर-राजकीय दोनों प्रकार का हो सकता है । विद्यालय बोर्ड की क्रिया-विधि, नियंत्रण एवं हस्तक्षेप विद्यालय प्रणाली को प्रभावित करते हैं । बोर्ड द्वारा निर्धारित किये गये मानदण्डों की अनुपालना एवं पूर्ति करना विद्यालय प्रणाली का लक्ष्य बन जाता है जिस कारण विद्यालय प्रणाली की स्वतंत्रता एवं स्वायत्तता भी प्रभावित होती है ।

विद्यालय प्रणाली की संरचना में उपर्युक्त घटक सम्मिलित हैं । यदि विद्यालय की औपचारिक सामाजिक संरचना को समझना चाहें तो इन घटकों को श्रेणी (rank) एवं प्रतिष्ठा (Prestige) के आधार पर विभिन्न उपसमूहों (sub-groups) में बाँट कर समझा जाता है ।

सरलतम रूप में विद्यालय प्रणाली में श्रेणीकरण के आधार पर चार स्तर होते हैं । जो विद्यालय संरचना का निर्माण करते हैं । इनमें सर्वोच्च स्तर विद्यालय बोर्ड-नीति निर्धारण करता है । द्वितीय स्तर पर प्रबंध मण्डल-सम्पूर्ण व्यवस्था देखता है जिसमें, प्रधानाचार्य, प्रबन्धक एवं पर्यवेक्षक होते हैं, तीसरे स्तर पर शिक्षक तथा अन्तिम चौथे स्तर पर विद्यार्थी होते हैं ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. प्रणाली पद को परिभाषित कीजिए ।

   Define the term system.

2. 'विद्यालय प्रणाली की मूल आत्मा शिक्षक है।'' इस कथन को उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए

   "Teacher is the soul of school system" Explain this statement with examples.

3. समाज की आवश्यकताएँ विद्यालय प्रणाली को किस प्रकार प्रभावित करती है? उपयुक्त उदाहरण दीजिए ।

   How the needs of society offects school system? Explain with suitable example.

1.1.2 विद्यालय सामाजिक प्रणाली के रूप में (School as a social system)- विद्यालय को एक सामाजिक प्रणाली के रूप में स्वीकार किया गया है । विद्यालय में वे समस्त कारक विद्यामान होते हैं जिनके आधार पर सामाजिक प्रणाली का स्वरूप निर्मित होता है तथा विद्यालय में अन्त: क्रियात्मक व्यवस्थाएँ भी सामाजिक प्रणाली के समान ही सक्रिय होती हैं । यह प्रासंगिक होगा कि विद्यालय को सामाजिक प्रणाली के रूप में समझते समय विद्यालय की अवधारणा का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर लिया जाए । "विद्यालय का तात्पर्य एक ऐसे विशेष वातावरण से है जहाँ जीवन के कुछ गुणों एवं कुछ विशेष प्रकार की क्रियाओं एवं व्यवसायों की शिक्षा इस प्रयोजन से दी जाती है कि बालकों का वांछित दिशा में विकास हो" (school is a special environment where a certain anality of life and occupations are provided with the object of securing child's development along desirable line-John Dewey) जॉन ड्यूई के इस कथन से विद्यालय का एक मात्र लक्ष्य, "बालक को भविष्य के लिए तैयार करना" स्पष्ट होता है । यहाँ ड्यूई इस प्रयास के लिए वातावरण निर्माण की ओर स्पष्ट संकेत करते हैं । विद्यालय की परम्परागत अवधारणा से कुछ अलग हट कर जब हम विद्यालय को सम्पूर्ण सामाजिक परिदृश्य में एक प्रणाली के रूप में स्वीकार करते हैं तब विद्यालय एक सामाजिक प्रणाली का स्वरूप ले लेता है । सरल शब्दों में सामाजिक प्रणाली का अर्थ समझ लेने से यह तथ्य भी स्पष्ट समझा जा सकता है।

सामाजिक-प्रणाली (Social System) - "सामाजिक प्रणाली वह स्थिति है जिसके अन्तर्गत समाज के विभिन्न कार्यशील अंग एक-दूसरे से, और सम्पूर्ण समाज के साथ अर्थपूर्ण तरीके से सम्बद्ध होकर कार्य करते हैं"- एम. ई. जोन्स का यह कथन सामाजिक प्रणाली की विशेषताओं की ओर भी संकेत करता है । सामाजिक प्रणाली अर्थपूर्ण भी होती है तथा इसमें संस्कृति के विभिन्न अवयव एक-दूसरे से मिलकर एक सन्तुलित पूर्ण समग्र का निर्माण भी करते हैं । सामाजिक प्रणाली का निर्माण मानवों की अन्तःक्रिया से होता है जिसमें उनकी भूमिका एवं पद निर्धारित होते हैं तथा लक्ष्यों के आधार पर व्यक्ति अपनी-अपनी भूमिका का निर्वहन करता है । सामाजिक प्रणाली में व्यक्ति एक कर्त्ता (actor) के रूप में अपनी क्रिया सम्पन्न करता है उस

क्रिया पर प्रतिक्रिया प्राप्त होती है ये प्रतिक्रिया अर्थपूर्ण (Meaningful) होती है । इन क्रिया तथा प्रतिक्रियाओं में क्रमबद्धता (Arrangement) होती है जिससे ये कार्य-प्रणाली की जटिल समग्रता (complex whole) का रूप प्रदान करती हैं। यह सम्पूर्ण प्रणाली, सांस्कृतिक प्रणाली (cultural system) से सम्बन्धित होती है ।

हमने सरल शब्दों में विद्यालय तथा सामाजिक प्रणाली को समझने का प्रयास किया है इस विश्लेषण से विद्यालय को एक सामाजिक प्रणाली के रूप में पहिचानने में सहायता प्राप्त होगी ।

विद्यालय प्रणाली के विभिन्न घटक-अभिभावक, विद्यार्थी, प्रबन्ध तंत्र एवं शिक्षक कार्यशील इकाई के रूप में सक्रिय रहते हैं तथा सम्पूर्ण समाज के साथ सोद्देश्य अन्तःक्रिया में संलग्न रहते हैं । इनमें से प्रत्येक इकाई की भूमिका एवं उत्तरदायित्व की स्थिति भी स्पष्ट एवं पूर्व निर्धारित रहती है । अन्त: क्रियाओं के आधार पर ये सब मिल कर सांस्कृतिक प्रणाली को भी प्रभावित करते हैं ।

सामाजिक प्रणाली में विद्यमान लक्षणों के आधार पर भी विद्यालय प्रणाली एक सामाजिक प्रणाली कही जा सकती है । सामाजिक प्रणाली गतिशील होती है, इसे समग्र रूप में पहिचाना जाता है, इसके घटक अन्त: निर्भर एवं अन्त: सम्बन्धित होते हैं । सामाजिक प्रणाली अन्तिम लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रतिबद्ध होती है । विद्यालय प्रणाली में ये सभी लक्षण विद्यमान होते हैं । विद्यालय प्रणाली गतिशील होती है गत्यात्मक विद्यालय प्रणाली का विशिष्ट लक्षण है । उत्तरोतर प्रगति की प्रवृत्ति के कारण ठहराव (Stagination) की स्थिति उत्पन्न नहीं होती । विद्यालय प्रणाली में भी सामाजिक प्रणाली के अनुसार घटकों की समग्रता के रूप में पहिचाना जाता है । विद्यालय-भवन, शिक्षक, विद्यार्थी, अभिभावक, प्रबंधतंत्र एवं सहयोगी कर्मियों की पृथक-पृथक पहिचान होने के बाद भी इन सभी के समन्वित स्वरूप से समग्र विद्यालय प्रणाली का निर्माण होता है । इन घटकों में एक घटक की कार्यप्रणाली से दूसरा घटक प्रभावित होता है तथा ये सभी मिलकर प्रणाली के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयास करते हैं । सामाजिक प्रणाली के रूप में विद्यालय समाज के लक्ष्यों, मूल्यों तथा आकांक्षाओं के अनुरूप कार्य करता है तथा समाज के लिए निर्धारित आदर्शों के अनुरूप नागरिकों का निर्माण करता है । विद्यालय, समाज के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए विद्यार्थीयों में नैतिक चरित्र का विकास करता है तथा स्वतन्त्र चिन्तन शक्ति का भी विकास करता है तथा स्वतंत्र चिन्तन शक्ति का भी विकास करता है । विद्यार्थीयों के सामाजीकरण के लिए भी विद्यालय उचित परिस्थितियों का निर्माण करता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 विद्यालय को एक सामाजिक प्रणाली के रूप में समझाइये

Explain, the concept of school as a social system.

2 सामाजिक प्रणाली को परिभाषित कीजिये |

Define, the term social system.

1.2 विद्यालय प्रणाली के घटक (Components of School System)

(क) आंतरिक घटक (Internal Components)- विद्यालय को एक प्रणाली के रूप में हम समझ चुके हैं अब यह जानने का प्रयास करते हैं कि इस स्वरूप में विद्यालय प्रणाली के मुख्य अंग, घटक या तत्व कौन-कौन से हैं ।

विद्यालय प्रणाली में सक्रिय रूप से अन्त: क्रिया करने वाले समूहों के रूप में दो व्यवस्थाएँ दिखाई देती हैं, ये हैं:-

प्रथम - प्रशासन-शिक्षक पारस्परिक क्रिया समूह ।

द्वितीय - शिक्षक-विद्यार्थी पारस्परिक क्रिया समूह ।

विद्यालय के सम्पूर्ण पर्यावरण का निर्माण करने में ये दो व्यवस्थाएँ महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती हैं । इन्हीं के आधार पर विद्यालय व्यवस्था/प्रणाली के प्रमुख घटकों को समझा जा सकता है ।

विद्यालय प्रणाली के प्रमुख घटक या अंग हैं - प्रशासन, शिक्षक, विद्यार्थी एवं सहायक सेवा कर्मचारी ।

विद्यालय प्रणाली के घटकों का विभाजन आन्तरिक (Internal) तथा बाह्य (External) घटकों के रूप में करने पर उनकी पारस्परिक निर्भरता ज्ञात होती है ।

विद्यालय प्रणाली के आन्तरिक एवं बाह्य घटक निम्नलिखित हैं :-

(क) आन्तरिक घटक (Internal Components) -

- भौतिक ढाँचा (Infrastructure),
- उपकरण (Equipments),
- प्रबन्ध के प्रकार (Types of Management),
- विद्यालय-दर्शन (Philosophy of School),
- अध्यापक-विद्यार्थी सम्बन्ध (Students-Teacher Relationship),
- मानवीय संसाधनों की कार्य-प्रणाली (working patterns of human resources),
- पूर्ण विद्यालय वातावरण (Overall school climate)

(ख) बाह्य घटक (External Components) -

- विद्यालय क्षेत्र (Locality where the school situated),
- अभिभावक-शिक्षक संघ (Parent Teacher Association),
- सामुदायिक सहभागिता (Community Participation),
- संचार माध्यम (Media),
- सांस्कृतिक कारक (Cultural Factors),
- तकनीकी विकास (Technical Advancement),
- राजनीतिक जटिलताएँ (Impact of Political Morass)

आन्तरिक एवं बाह्य घटकों की विस्तृत विवेचना यहाँ उदाहरण सहित प्रस्तुत की जा रही है । जिससे शिक्षकों को विद्यालय-प्रणाली की पूर्ण कार्य-व्यवस्था समझने में सहायता प्राप्त होगी ।

(क) आन्तरिक घटक (Internal Components) - विद्यालय प्रणाली में आन्तरिक घटक उन शक्तियों को कहा जाता है जो विद्यालय की चार दीवारी के अन्तर्गत रहते हुए विद्यालय प्रणाली को प्रभावित करते हैं । विद्यालयी व्यवस्था में प्रत्यक्ष रूप से विद्यमान होने के कारण इन घटकों को विद्यालय प्रणाली के प्रत्यक्ष घटक एवं प्राथमिक घटक (Direct and Primary Componets) भी कहा जाता है । सामाजिक प्रणाली की उप प्रणाली के रूप में विद्यालय के स्वरूप को स्पष्ट करें अथवा स्वयं एक प्रणाली के रूप में, दोनों ही स्थितियों में आन्तरिक घटकों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है यहाँ जिन आन्तरिक घटकों का उल्लेख किया जा रहा है वे निम्नलिखित हैं:-

- **भौतिक ढाँचा (Infrastructure)** - विद्यालय प्रणाली के अस्तित्व का प्रारम्भ उसके भौतिक ढाँचे से होता है । भौतिक स्वरूप ही प्रणाली की संकल्पना को साकार करने का प्रथम सोपान है । यहाँ यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि भौतिक स्वरूप में कक्षा-कक्ष की अनिवार्यता के साथ ही पुस्तकालय, प्रयोगशाला आदि का भी महत्व है । विद्यालय का कार्यालय भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना पुस्तकालय । किन्तु कार्यालय के लिए एक आलमारी भी पर्याप्त हो सकती है इसकी तुलना में पुस्तकालय के लिए पर्याप्त स्थान एवं पुस्तकों की अनिवार्यता होती है । पुस्तकें विद्यालय प्रणाली के उद्देश्य को पूर्ण करती है, शिक्षक के लिए पुस्तकों का महत्व है छात्र भी व्यक्तित्व निर्माण हेतु पुस्तकों पर निर्भर है । इसी कारण प्रत्येक विद्यालय के भौतिक ढाँचे में पुस्तकालय का स्थान महत्वपूर्ण है पुस्तकालय को विद्यालय प्रणाली का मस्तिष्क भी कहा गया है (Library is the brain of school system) इसके पश्चात् भौतिक ढाँचे में प्रयोगशालाएँ आती हैं । कौशल अर्जित करने के लिए विद्यार्थी को स्वयं करके सीखना होता है । प्रतिस्पर्धा के युग में विद्यार्थी में कौशलों के विकास के लिए, विज्ञान-प्रयोगशाला, भाषा-प्रयोगशाला, संगीत प्रयोगशाला, सामाजिक विज्ञान-प्रयोगशाला का महत्व है । विद्यालय के भौतिक संसाधन-भवन, खेल का मैदान, पुस्तकालय-वाचनालय, कम्प्यूटर प्रयोगशाला इत्यादि वह वातावरण निर्माण करते हैं ,जिनसे मानवीय संसाधन क्रियाशील एवं प्रभावी होते हैं । बिना भौतिक स्वरूप के विद्यालय के शैक्षिक एवं सह-शैक्षिक क्रिया कलाप सुचारू रूप से सम्पन्न नहीं हो सकते ।
- **उपकरण (Equipments)** - भौतिक स्वरूप को यथार्थता प्रदान करने के लिए उपकरणों की आवश्यकता होती है । विद्यालय प्रणाली का सुचारू संचालन वांछित उपकरणों पर निर्भर होता है यदि उपकरण पर्याप्त नहीं होते तो विद्यालय की कार्य-प्रणाली प्रभावित होती है । विद्यार्थीयों में कार्य संस्कृति (Work Culture) को विकसित करने के लिए उपकरणों को उचित रूप से संचालित करना तथा उनका रखरखाव करना होता है । यदि शिक्षा को क्रियात्मक रूप देना है तथा गुणवत्ता का विकास करना है तो भौतिक स्वरूप में उपयुक्त उपकरणों को उपलब्ध कराना आवश्यक हो जाता है । विद्यालय उपकरणों में कक्षा कक्ष के लिए उपयुक्त फर्नीचर, चॉकपट्ट, कक्षा-कक्ष सज्जा के उपकरण, विभिन्न प्रयोगशालाओं हेतु आवश्यक उपकरण यथा विज्ञान सामग्री, विज्ञान किट, सामाजिक विज्ञान कक्ष हेतु रख-रखाव के उपकरण, क्रीड़ा-उपकरण, भाषा-प्रयोगशाला के उपकरणों की गुणवत्ता, रख-रखाव तथा विद्यार्थीयों हेतु इनका व्यावहारिक प्रयोग

भी ध्यान देने योग्य बातें हैं । उपकरण श्रेष्ठ तथा पर्याप्त हैं, किन्तु वे केवल प्रदर्शन की वस्तु मात्र बन गये हों तो उनका कोई लाभ नहीं होगा । विद्यार्थीयों में वांछित व्यवहारगत परिवर्तन लाने में इनका प्रयोग किया जाना चाहिए, प्रयोग द्वारा ही इन उपकरणों की सार्थकता सिद्ध होगी।

- **प्रबन्ध के प्रकार (Types of Management)** - विद्यालय प्रणाली का आधारभूत घटक प्रबन्ध है । विद्यालय में जिस प्रकार का प्रबन्ध तंत्र लागू होगा । उसी प्रकार की विद्यालय व्यवस्था का विकास होगा । प्रबन्धन का सम्बन्ध केवल मानवीय तत्वों से न होकर विद्यालय के भौतिक स्वरूप से भी होता है । प्रशासन, मानवीय एवं भौतिक तत्वों के मध्य तालमेंल बैठाकर शिक्षा प्रक्रिया को समुचित ढंग से संचालित करता है । प्रबन्धन विद्यालय प्रणाली को जीवन्त करने का प्रयास करता है । प्रबंधन क्रियान्वयन इकाई का मूल है वह नीतियों को लागू करने में मुख्य भूमिका निर्वहन करता है जिसमें नियोजन, सगंठन, निर्देशन, अधिकारों निर्धारण करना, आदेशों की एकता एवं सम्प्रेषण करना इत्यादि प्रमुख कार्य होते हैं ।

- **विद्यालय-दर्शन (Philosophy of School)** - विद्यालय प्रणाली का प्रत्यक्ष एवं आन्तरिक घटक विद्यालय दर्शन है । कार्य-निष्पादन का सीधा सम्बन्ध विचारधारा (Ideology) से होता है । किसी भी प्रणाली की सक्रियता एवं सफलता के पीछे उसका दर्शन होता है । सम्पूर्ण प्रणाली में कार्य की शैली, संस्था का नियोजन, आदि बातें विद्यालय का संचालन करने वाली दार्शनिक विचारधारा पर निर्भर होती है । संस्था में कार्यरत सदस्यों का व्यक्तित्व तथा उसके आधार पर बालकों का निर्माण भी दर्शन पर निर्भर करता है । विद्यालय प्रणाली का गत्यात्मक पक्ष, प्रणाली के मूल में निहित दार्शनिक विचारधारा पर आश्रित होता है । भविष्य में प्रणाली का विकास उसके केन्द्र में स्थित विद्यालय-दर्शन से होता है । उदाहरण के लिए आदर्शवादी विचारधारा को केन्द्रबिन्दु मानने वाले विद्यालय-दर्शन वाली प्रणाली में मूल्यों एवं संस्कृति के संरक्षण पर बल दिया जाता है । विद्यालय प्रणाली के लक्ष्य आदर्शोन्मुख होते हैं तथा विद्यालय प्रणाली के विभिन्न घटक भी इसी दिशा में पारस्परिक अन्त: क्रिया करते हैं । इसके भिन्न मानवतावादी दार्शनिक विचारधारा को केन्द्र बिन्दु मान कर चलने वाली विद्यालय प्रणाली में लक्ष्य केन्द्रितता 'मानव विकास' हेतु होती है । विद्यालय प्रणाली की गतिविधियाँ मानव का सर्वागीण विकारा करने वाली होती है । अत: यह स्पष्ट है कि विद्यालय के दर्शन के अनुरूप ही भविष्य में विद्यालय प्रणाली का विकास होता है ।

- **अध्यापक-विद्यार्थी सम्बन्ध (Students-Teacher Relationship)** - विद्यालय प्रणाली में शैक्षिक गुणवत्ता के लिए विद्यार्थी अध्यापक संबंध एक घटक है । स्थायी एवं आन्तरिक घटक के रूप में यह सम्बन्ध पूर्ण शैक्षिक प्रणाली को प्रभावित करता है । विद्यालय प्रणाली के लिए महत्वपूर्ण है कि विद्यार्थी अध्यापक संबंध न केवल औपचारिक हो अपितु अनौपचारिक एवं घनिष्ठ भी हो । जिस प्रकार परिवार व्यवस्था में एक सदस्य का दूसरे के साथ विश्वास, निष्ठा एवं पारस्परिक आदान-प्रदान का सम्बन्ध होता है इसी प्रकार विद्यालय प्रणाली में भी विद्यार्थी संबंध परिवारवत् होने चाहिए । विद्यालय-प्रणाली के इन दो आधार-स्तम्भों के उचित सामंजस्य पर शैक्षिक उत्कृष्टता आधारित होती है । शिक्षक विद्यालय प्रणाली का एकमात्र ऐसा घटक है जिसके इर्द-गिर्द पूरी प्रणाली घूमती है यदि शिक्षक अपने कार्य की कुशलताओं (Skills) में निपुण नहीं होगा तो वह छात्रों की सक्रियता को बनाये रखने में भी असफल रहेगा । उसकी यह विफलता पूरी प्रणाली को असफल कर देगी अत: शिक्षक का निपुण होना तथा

विद्यार्थी से पारस्परिक संबंध बनाने में व्यावहारिक होना आवश्यक होता है । हम विद्यार्थी से बहुत अपेक्षाएँ रखते हैं । किन्तु प्रत्येक विद्यार्थी अपनी व्यक्तिगत विभिन्नताओं के कारण दूसरे से पृथक सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक विशेषताओं से युक्त होता है । शिक्षक को प्रत्येक विद्यार्थी को भली-भांति समझ कर अन्त: क्रिया की क्रियाविधि को अपनाना होता है । किस विद्यार्थी से किस प्रकार का व्यवहार करना है? इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने में शिक्षक को शिक्षा मनोविज्ञान सहायता प्रदान करता है ।

- **मानवीय संसाधनों की कार्य-प्रणाली (working patterns of human resources)** - विद्यालय प्रणाली का एक और घटक मानवीय संसाधनों की कार्य-प्रणाली है । इस प्रणाली में प्रबन्धक से लेकर व्यवस्था की न्यूनतम इकाई के सम्बन्धों को आधार में रखा जाता है । प्रशासक-कर्मचारी एवं शिक्षक-विद्यार्थी के मध्य अन्त: क्रिया एक-दूसरे के कार्यों को प्रभावित करती है । मानवीय संसाधनों की सम्पूर्ण संबंद व्यवस्था प्रणाली की कार्य-व्यवस्था को गति प्रदान करती है । आन्तरिक घटकों की कड़ी में यह घटक महत्वपूर्ण है सम्पूर्ण प्रणाली की लक्ष्य केन्द्रितता एवं परिणाम निष्पादन की क्षमता मानवीय संसाधनों की कार्य-प्रणाली से दिशा प्राप्त करती है ।

- **पूर्ण विद्यालय वातावरण (Overall school climate)** - विद्यालय का पूर्ण वातावरण स्वयं में एक आन्तरिक घटक है जिसके स्वरूप से विद्यालय-प्रणाली का स्वरूप निर्धारित होता है । भिन्न-भिन्न प्रकार के विद्यालय वातावरण में लक्ष्य उन्मुखता भी भिन्न होती है तथा शिक्षा का स्तर गुणवत्ता एवं कार्यप्रणाली भी भिन्न होती है परिणाम स्वरूप सम्पूर्ण विद्यालय-प्रणाली में परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है । यदि विद्यालय वातावरण एकतंत्रात्मक (Autocratic) होता है विद्यालय-प्रणाली के विभिन्न घटकों में पारस्परिक अन्त: क्रिया सुचारू रूप से नहीं हो पाती । इसके विपरीत प्रजातांत्रिक (Democratic) विद्यालयी वातावरण में विद्यालय प्रणाली के प्रत्येक घटक को पूर्ण सम्मान एवं स्वतन्त्रता प्राप्त होती है जिससे पारस्परिक अन्त: क्रिया तनाव रहित हो सुचारू रूप सम्पन्न होती है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 विद्यालय-प्रणाली के प्रमुख आन्तरिक घटको का वर्णन कीजिए |
Describe the main internal components of school system.

2 विद्यालय-प्रणाली में प्राधानाचार्य के स्थान का वर्णन कीजिये |
Describe the role of principal in school system.

1.3 (ख) बाह्य घटक (External Components)

इन आन्तरिक घटकों के अतिरिक्त कुछ तत्व विद्यालय प्रणाली के बाहर से भी इसे प्रभावित करते है इन्हें द्व्तियिक या अप्रत्यक्ष घटक (Secondary or Indirect Components) भी कहते हैं । ये घटक निम्नलिखित हैं -

- **विद्यालय क्षेत्र (Locality where the school situated)** - विद्यालय प्रणाली के बाह्य घटकों में प्रथम एवं महत्वपूर्ण घटक वह क्षेत्र है जहाँ विद्यालय स्थित होता है । प्रणाली के आन्तरिक घटकों को विद्यालय क्षेत्र अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है । उस क्षेत्र की विशेषताओं अथवा न्यूनताओं का सीधा प्रभाव विद्यालय प्रणाली पर पड़ता है विद्यालय क्षेत्र की विशेषताएँ बाह्य शक्तियों के रूप में प्रणाली की व्यवस्था में हस्तक्षेप करती है । विद्यालय क्षेत्र, विद्यालय प्रणाली के भौतिक स्वरूप के साथ-साथ विद्यालय के विभिन्न घटकों को प्रभावित करता है ।
- **अभिभावक-शिक्षक संघ (Parent Teacher Association)** - अभिभावक शिक्षक संघ द्वारा विद्यालय प्रणाली को अप्रत्यक्ष रूप में प्रभावित किया जाता है । शिक्षक स्वयं समाज का, प्रतिनिधित्व करता है वास्तविक परिस्थितियों में अभिभावकों की अपेक्षाओं (Expectations) को वह समझता है तथा उनकी पूर्ति के लिए विद्यालय प्रणाली में लक्ष्य निर्धारण कर क्रियान्वयन करने का कार्य करता है । सामाजिक प्रणाली की उप प्रणाली के रूप में विद्यालय की भूमिका महत्वपूर्ण है इस भूमिका का निष्पादन तभी सम्भव है जब प्रणाली के विभिन्न घटक सामंजस्य पूर्ण अन्त: क्रिया के द्वारा लक्ष्य प्राप्ति का प्रयास करें । यह प्रयास शिक्षक अभिभावक संघों के सहयोग के बिना नहीं किया जा सकता । विद्यालय प्रणाली की सक्रियता बढ़ाने के लिए विद्यालय एवं परिवार का सघन सम्पर्क होना चाहिए इसके लिए प्रत्येक विद्यालय में अभिभावक-शिक्षक संघ की स्थापना की जानी चाहिए । इन संघों द्वारा विद्यालय की महत्वपूर्ण क्रियाओं तथा निर्णयों में अभिभावकों की सहभागिता बढ़ जाती है जिससे समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सक्षम मानव संसाधन तैयार करने में सहायता मिलती है ।
- **सामुदायिक सहभागिता (Community Participation)** - विद्यालय प्रणाली को प्रभावित करने वाला सशक्त घटक उस विद्यालय प्रणाली की सामुदायिक सहभागिता भी है यदि विद्यालय एवं समुदाय के मध्य पारस्परिक सहभागिता एवं निर्भरता सघन है तो विद्यालय को अनेकों समस्याओं का समाधान सहज रूप में प्राप्त हो जाता है इसके विपरीत समुदाय से प्रगाढ़ संबंध न होने पर विद्यालय प्रणाली की गतिशीलता एवं लक्ष्य प्राप्ति कठिन हो जाती है । अत: विद्यालय को समुदाय के निकट लाना तथा समुदाय को विद्यालय के सम्पर्क में बनाए रखना प्रबन्धतंत्र के लिए अनिवार्य हो जाता है । सामुदायिक सहभागिता विद्यालय-प्रणाली के उन्नत स्वरूप के लिए एक आवश्यक एवं अनिवार्य घटक है ।
- **संचार माध्यम (Media)** - वर्तमान समय में विद्यालय प्रणाली को संचार माध्यमों के प्रभाव से मुक्त नहीं रखा जा सकता । प्रिंट माध्यम के साथ-साथ दृश्य-श्रव्य माध्यमों से विद्यालय प्रणाली प्रभावित है । राज्य एवं राष्ट्र की सीमा से बाहर निकल कर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर घटित हो रहे परिदृश्य से विद्यालय प्रणाली के आन्तरिक घटक अछूते नहीं रह पाते तथा कभी-कभी उन घटकों में अन्त: सम्बन्धों का निर्माण भी संचार-माध्यमों के परिणाम स्वरूप ही होता है ।
- **सांस्कृतिक कारक (Cultural Factors)** - विद्यालय प्रणाली का आविभाव (Origin) जिस संस्कृति में होता है उसका मूर्त रूप विद्यालय-प्रणाली होती है । किन्तु अन्य संरकृतियों की विशेषताओं के प्रभाव से विद्यालय-प्रणाली मुक्त नहीं रह सकती । विद्यालय का निजी दर्शन होता है इसके बाद भी बाह्य कारकों के रूप में कुछ सांस्कृतिक शक्तियाँ सम्पूर्ण प्रणाली का कार्यस्वरूप प्रभावित करती हैं । एक विस्तृत संस्कृति की विभिन्न उपसंस्कृतियों (Sub-

cultures) सम्पूर्ण व्यवस्था में अपनी छाप स्पष्ट रखती है । उदाहरण के लिए जिस समुदाय के व्यक्ति अधिक संख्या में विद्यालय-प्रणाली में सक्रिय होते हैं उस समुदाय की सांस्कृतिक विशेषताएँ विद्यालय प्रणाली के लक्ष्यों को प्रभावित करती हैं । विस्तृत सामाजिक प्रणाली का अंग होने पर भी विद्यालय प्रणाली में विभिन्न उपसंस्कृतियाँ हस्तक्षेप करने लगती हैं । इसी प्रकार यदि किसी विद्यालय-प्रणाली में छात्र-उपसंस्कृति के कुछ विशिष्ट प्रकार सक्रिय होते हैं, कुछ निक्रिय; तो सक्रिय उपसंस्कृति की विशेषताएँ विद्यालय प्रणाली को प्रभावित करती हैं तथा यदि विद्यालय में व्यावसायिक उपसंस्कृति को स्वीकार करने वाले छात्रों का समूह प्रभुत्व में है तो विद्यालय प्रणाली में इसकी छाप दिखाई देगी । विद्यालय में व्यवसायोन्मुख गतिविधियाँ अधिक हो जायेंगी। इसके विपरीत यदि विद्यालय में मान्यता विरोधी उप संस्कृति (Non-confermist) अधिक है तो अनुशासन की समस्या सदैव बनी रहेगी ।

- **तकनीकी विकास (Technical Advancement)** - तकनीकी विकास का शिक्षा प्रक्रिया पर प्रभाव क्रांतिकारी रूप में दिखाई दे रहा है । विद्यालय प्रणाली के सुव्यवस्थित संचालन में तकनीकी विकास की महत्वपूर्ण भूमिका है । सम्पूर्ण व्यवस्था का आधुनिकीकरण हो रहा है । कार्यालय में पंजिकाओं का स्थान कम्प्यूटर एवं सी डी संग्रह ने ले लिया है । कक्षा कक्ष में व्यवहारगत परिवर्तनों पर बल दिया जा रहा है। कम समय में अधिक कार्य करने की स्थितियाँ उत्पन्न की जा रही हैं। निःसंदेह ये सभी पक्ष विद्यालय प्रणाली के सुचारू संचालन के लिए आवश्यक हो गये हैं।

- **राजनीतिक जटिलताएँ (Impact of Political Morass)** - विद्यालय-प्रणाली की संरचना एवं कार्य निष्पादन की व्यूह रचना राजनीतिक उठापटक से भी प्रभावित होती है । विस्तृत जनहित को ध्यान में न रख कर जब राजनीति हित साधन (Political Profit) के लिए शिक्षा को यंत्र बनाया जाता है तो सम्पूर्ण विद्यालय व्यवस्था प्रभावित होती है । अत: बाह्य एवं अप्रत्यक्ष कारक के रूप में राजनीतिक जटिलताएँ भी विद्यालय प्रणाली को प्रभावित करती है । समाज व्यवस्था को प्रभावित करने के कारण राजनीतिक घटक अप्रत्यक्ष रूप से विद्यालय-प्रणाली में सम्पन्न होने वाली घटकों की पारस्परिक अन्त: निर्भरता को प्रभावित करते हैं ।

उपर्युक्त विवरण में विद्यालय-प्रणाली के अन्त: एवं बाह्य घटकों का पृथक-पृथक विवेचन प्रस्तुत किया गया है । अब इन घटकों की पारस्परिक अन्त: निर्भरता को ज्ञात करते हैं ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 अभिभावक शिक्षक संघ विद्यालय प्रणाली का प्रभावपूर्ण घटक है| व्याख्या कीजिए |
Parent-teacher association is an important factor of school system, explain it.

2 विद्यालय प्रणाली को प्रभावित करने वाले सांस्कृतिक कारकों का वर्णन कीजिए |
Describe the cultural factors which influence school system.

1.4 आन्तरिक एवं बाह्य घटकों में अन्त:सम्बन्ध
Interrelationship of Internal and External Components

विद्याली व्यवस्था को निर्बाध गति प्रदान करने के लिए इसे प्रभावित करने वाली विभिन्न शक्तियों में पारस्परिक अन्त: निर्भरता, अन्त: क्रिया तथा अन्त: सम्बन्ध का होना आवश्यक है । विद्यालय प्रणाली की संरचना, व्यवस्था एंव क्रियान्वयन की प्रक्रिया इन घटकों की निरन्तर एवं सुव्यवस्थित अन्त: क्रिया का परिणाम होती है । विद्यालय-प्रणाली के घटको का अन्त: सम्बन्ध निम्नलिखित बिन्दुओं में स्पष्ट समझा जा सकता है सरलता से समझने के लिए इन्हें एक चित्रात्मक रूप में निम्नवत् प्रदर्शित किया जा सकता है ।

चित्र संख्या : 1.3

पूर्व में वर्णित आन्तरिक एवं बाह्य घटकों की प्रकृति ही इस प्रकार की है कि विद्यालय-प्रणाली में सामाजिक अन्त: क्रिया (Social Interaction) भूमिका निर्वहन (Role Performance) एवं पद एवं स्थिति (Status) के अनुसार प्रत्येक घटक अपना कार्य सम्पन्न करता है । फलस्वरूप विद्यालय-प्रणाली अपनी उप-प्रणालियों के साथ समेंकित (Integrated) स्वरूप को प्राप्त करती है तथा विस्तृत सामाजिक प्रणाली (Larger Social System) की उप-प्रणाली के रूप में क्रिया करती है ।

इकाई के प्रारम्भ में ही हम चर्चा कर चुके हैं कि विद्यालय-प्रणाली में एक वृहद् सामाजिक प्रणाली की समस्त विशेषताएँ पाई जाती हैं । इन विशेषताओं में प्रथम एवं अनिवार्य विशेषता है- घटकों की पारस्परिक निर्भरता । इस सन्दर्भ में विद्यालय-प्रणाली के आन्तरिक एवं बाह्य घटकों में पारस्परिक निर्भरता की जाँच करें तो ज्ञात होता है कि घटकों की पारस्परिक निर्भरता के अभाव में विद्यालय प्रणाली का अस्तित्व ही नहीं रहेगा । विद्यालय प्रणाली के आन्तरिक एवं बाह्य घटकों में पारस्परिक निर्भरता के कारणों को समझने पर यह तथ्य अधिक स्पष्ट हो जाता है । विद्यालय प्रणाली के आन्तरिक एवं बाह्य कारकों के अन्त: सम्बन्ध के कारण (Causes of interrelationship of internal and external components) प्रणाली की परिभाषा में ही विभिन्न घटकों की पारस्परिक अन्त: क्रिया एवं 'अन्त: निर्भरता' शब्दों

का प्रयोग किया गया है अत: यह तो स्वत: सिद्ध है कि एक प्रणाली के विभिन्न घटकों में तालमेंल होता है । विद्यालय प्रणाली के विभिन्न घटकों में अन्त: सम्बन्ध निम्नलिखित हैं:-

उद्देश्यों की प्राप्ति (For achieving Goals)- विद्यालय प्रणाली में उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु आन्तरिक एवं बाह्य घटकों में समन्वय अनिवार्य है उदाहरणार्थ-छात्र अध्यापक सम्बन्ध एक आन्तरिक घटक है तथा अभिभावक-शिक्षक संघ बाह्य घटक है। इन दोनों घटकों की पारस्परिक अन्तःक्रिया एवं तालमेंल के परिणाम स्वरूप विद्यालय वातावरण का स्वरूप बनता है इस विषय में रायबर्न ने स्पष्ट किया है कि ये परिषदें (संघ) शाला एवं घर के मध्य एक कड़ी है, तथा शिक्षित एवं अशिक्षित दोनों प्रकार के प्रभिभावकों के लिए महत्वपूर्ण होती है । इन संघों से विद्यालय का शैक्षिक स्तर ऊँचा उठता है तथा समाज के साथ विद्यालय का सम्बन्ध भी प्रगाढ होता है अत: प्रणाली के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आन्तरिक व बाह्य घटकों में संतुलित सम्बन्ध आवश्यक है ।

कार्य निष्पादन की प्रणाली (Style of functioning of school system)- विद्यालय प्रणाली में घटकों की पारस्परिक निर्भरता कार्य पूर्ण करने की शैली को प्रभावित करती है तथा कार्य-प्रणाली का स्वरूप निश्चित करती है यदि बाह्य एवं आन्तरिक घटकों में प्रजातांत्रिक आधार पर सम्बन्ध होंगे तो कार्य भी सहज रूप से होगा अन्यथा विद्यालय एक बंद प्रणाली (Close System) के रूप में सीमित हो जायेगा। अत: कह सकते हैं कि कार्य-प्रणाली के स्वरूप का निर्धारण भी घटकों की पारस्परिक निर्भरता पर आश्रित होता है।

वृहंद शिक्षा प्रणाली को गति प्रदान करना (To give direction for larger educational) - विद्यालय प्रणाली के घटकों की अन्योन्याश्रितता से सभी परिचित हैं यदि इन घटकों में समन्वय एवं सामंजस्य स्थापित नहीं होता तो वृहत् शिक्षा प्रणाली लड़-खड़ा जाती है । सम्पूर्ण शैक्षिक तंत्र को सुव्यवस्थित रखने के लिए विद्यालय प्रबन्ध तंत्र के निहित उद्देश्यों से विद्यालय प्रणाली प्रभावित होती है यदि ये उद्देश्य सम्पूर्ण समाज के लिए हितकारी नहीं होते तो संकुचित स्वार्थों की पूर्ति करने के लिए विद्यालय प्रणाली भी कमजोर हो जाती है तथा सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली को गति प्रदान नहीं कर पाती अत: आन्तरिक एवं बाह्य कारकों में सम्बन्ध आवश्यक है ।

शिक्षा की प्रयोगशाला विद्यालय प्रणाली (School system as a laboratory of education system) - वस्तुत: विद्यालय प्रणाली को शिक्षा की प्रयोगशाला भी कहा जा सकता है । अपने औपचारिक स्वरूप के कारण विद्यालय द्वारा समाज को परिवर्तन की दिशा प्रदान की जाती है । सोद्देश्य रूप से एवं नियोजित क्रियाकलापों के लिए विद्यालय ही एक मात्र ऐसा स्थान है जहाँ शिक्षा के विभिन्न प्रयोग लघु समाज पर किये जाते हैं तथा सफल होने पर ये प्रयोग सम्पूर्ण समाज का स्वरूप ही बदल देते हैं । विद्यालय के आन्तरिक घटक, समाज के लिए कार्य करते हैं । अत: समाज की अपेक्षाओं के अनुरूप शालाओं में विद्यार्थीयों पर प्रयोग किये जाते हैं तथा विद्यार्थीयों को भावी नागरिक के रूप में तैयार किया जाता है ।

समन्वय के परिणाम स्वरूप शैक्षिक गुणवत्ता (Increase the quality of education due to coordination) - आन्तरिक एवं बाह्य घटकों में समन्वय के परिणाम स्वरूप शैक्षिक गुणवत्ता की वृद्धि होती है । उदाहरणार्थ सामुदायिक सहभागिता अधिक होने से

विद्यालय-प्रणाली के लक्ष्यों को सरलता से प्राप्त किया जा सकता है । समाज-क्षेत्र से सहयोग लिये बिना विद्यालय की गतिविधियाँ जीवन के वास्तविक अनुभव प्रदान नहीं कर सकती । शिक्षा को सर्वांगीण विकास की प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करने के लिए ज्ञान भावना एवं क्रिया, तीनो पक्षो में वांछित परिवर्तन लाना अनिवार्य है । इन तीनों पक्षों का संतुलित विकास शैक्षिक गुणवत्ता का परिचायक है । विद्यालय प्रणाली के अन्तरिक एवं बाह्य घटकों में अन्तःक्रिया के परिणाम स्वरूप शिक्षा जीवनोपयोगी एवं व्यावहारिक बनती है इसके विपरीत श्रेष्ठ भौतिक संसाधन, उच्च प्रशिक्षित शिक्षक वर्ग के होने पर भी समाज से अन्तःक्रिया न होने की स्थिति में शिक्षा मात्र सैद्धान्तिक एवं पुस्तकीय ज्ञान प्रदान करने वाली प्रक्रिया बन कर रह जाती है । विद्यालय प्रणाली के आन्तरिक स्वरूप का निर्धारण करने वाले घटक एवं समाज के बाह्य घटकों की पारस्परिक निर्भरता वर्तमान परिवेश में अधिक महत्वपूर्ण है । शिक्षक के मूल्य, आदर्श तथा समाज के मूल्य, आदर्शों में एकरूपता होने पर विद्यालय प्रणाली कमजोर हो जाती है । जैसा समाज बनाने की इच्छा है उसके अनुरूप ही विद्यालय प्रणाली का स्वरूप भी निर्माण करना होगा । विज्ञान एवं तकनीकी विकास के युग में विद्यार्थीयों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करने के लिए तकनीकी संसाधनों एवं सूचना प्रौद्योगिकी को विद्यालय प्रणाली का प्रभावपूर्ण घटक बनाकर सम्मिलित किया जाना अनिवार्य है । इसके साथ ही सांस्कृतिक परम्पराओं व मूल्यों का संरक्षण करने के लिए विद्यार्थीयों को सांस्कृतिक धरोहर का ज्ञान प्रदान करने के लिए समाज को विद्यालय-प्रणाली का सशक्त घटक बनाना होगा । अत: कह सकते हैं कि आन्तरिक एवं बाह्य घटकों में पारस्परिक निर्भरता महत्वपूर्ण है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. विद्यालय-प्रणाली के आन्तरिक एवं बाहा कारकों में सम्बन्ध की व्यखया कीजिए |
   Explain the relationship of internal and external factors of school system.

1.5 सारांश (Summary)

शिक्षा प्रणाली, सामाजिक प्रणाली की एक उपप्रणाली है । इस उपप्रणाली की औपचारिक प्रणाली विद्यालय प्रणाली है प्रणाली से अभिप्राय "आपस में अन्त: क्रिया करने वाले कारकों के पुंज से है।" इनमें से प्रत्येक कारक स्वतन्त्र एवं पूर्ण होता है किन्तु उसका कार्य प्रणाली के सन्दर्भ में ही होता है प्रणाली से बाहर होने पर उसका कोई अर्थ नहीं रहता । विद्यालय प्रणाली का निर्माण विद्यार्थी, अभिभावक, शिक्षक तथा प्रबंध तंत्र के द्वारा होता है । विद्यालय प्रणाली की औपचारिक संरचना में समाज, प्रधानाचार्य, शिक्षक, कर्मचारी, छात्र, प्रशासक विद्यालय बोर्ड एवं समुदाय सहायक होते हैं । सरलतम रूप में विद्यालय प्रणाली में श्रेणीकरण के आधार पर चार स्तर होते हैं जिससे विद्यालय बोर्ड कहते हैं दूसरा स्तर व्यवस्था देखने वाला प्रबन्ध मण्डल होता है तीसरा प्रधानाचार्य तथा चौथा स्तर विद्यार्थी होते हैं ।

विद्यालय प्रणाली के घटक मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं (1) आन्तरिक घटक, (2) बाह्य घटक । आन्तरिक घटकों में प्रमुख घटक निम्नलिखित हैं - भौतिक ढाँचा, उपकरण, प्रबन्ध

के प्रकार, विद्यालय का दर्शन, अध्यापक-विद्यार्थी सम्बन्ध, मानवीय संसाधनों की कार्यप्रणाली, पूर्ण विद्यालय व्यवस्था ।

बाह्य घटक अग्रांकित हैं - विद्यालयक्षेत्र, अभिभावक शिक्षक संघ, सामुदायिक सहभागिता, संचार माध्यम, सांस्कृतिक कारक, तकनीकी विकास, राजनीतिक जटिलताएँ । विद्यालय को एक सामाजिक प्रणाली के रूप में स्वीकार किया गया है । "सामाजिक प्रणाली वह स्थिति है जिसके अन्तर्गत समाज के विभिन्न कार्यशील अंग एक दूसरे से और सम्पूर्ण समाज के साथ अर्थपूर्ण तरीके से सम्बद्ध हो कर कार्य करते हैं।" विद्यालय प्रणाली में सामाजिक प्रणाली की सभी विशेषताएँ एवं लक्षण विद्यमान हैं जैसे कि प्रणाली की गतिशीलता समग्रता, अन्त: निर्भरता एवं अन्तिम लक्ष्यों के लिए प्रयासरत होना । विद्यालय प्रणाली के आन्तरिक एवं बाह्य घटक एक सांस्कृतिक प्रणाली के लक्ष्य की दिशा में कार्य करते हैं तथा सामाजिक प्रणाली के रूप में पहिचाने जाते हैं ।

उपर्युक्त आन्तरिक एवं बाह्य घटकों में आपसी सामंजस्य अत्यावश्यक होता है । विद्यालय प्रणाली के सुचारू रूप से संचालित होने के लिए विभिन्न घटकों की आन्तरिक एवं बाह्य अन्योन्याश्रितता को विभिन्न उदाहरणों से स्पष्ट किया जा सकता है । विद्यालय प्रणाली के लक्ष्योन्मुख होने पर समुदाय से अन्त: क्रिया होती है समुदाय की विशेषताएँ विद्यालय-प्रणाली की गुणवत्ता को प्रभावित करती है । विद्यालय प्रणाली के आन्तरिक एवं बाह्य घटकों में अन्त: सम्बन्ध उद्देश्यों की प्राप्ति, कार्य निष्पादन की प्रणाली, वृहद् शिक्षा प्रणाली को गति प्रदान करना, शिक्षा की प्रयोगशाला विद्यालय और शैक्षिक गुणवत्ता के कारण आवश्यक है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. सामाजिक प्रणाली का संप्रत्यय स्पष्ट कीजिए ।

   Explain the concept of social system.

2. "विद्यालय प्रणाली की मूल आत्मा शिक्षक है ।'' इस कथन को उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए

   "Teacher is the soul of school system" Explain this statement with example.

3. समाज की आवश्यकताएँ विद्यालय प्रणाली को किस प्रकार प्रभावित करती है उपयुक्त उदाहरण दीजिए ।

   How the needs of society offects schools system? Explain with suitable example.

4. विद्यालय-प्रणाली के प्रमुख आन्तरिक घटकों का वर्णन कीजिए ।

   Describe the main internal components of school system.

5. विद्यालय को एक सामाजिक प्रणाली के रूप में समझाइये ।

   Explain the concept of school as a social system.

6. विद्यालय-प्रणाली के आन्तरिक एवं बाह्य कारकों में सम्बन्ध की व्याख्या कीजिए ।

   Explain the relationship of internal and external factors of school system.

7. सामाजिक प्रणाली को परिभाषित कीजिए ।

Define the term social system.

8. अभिभावक शिक्षक् संघ विद्यालय प्रणाली का प्रभावपूर्ण घटक है । व्याख्या-कीजिए ।

Parent-teacher association is an important factor of school system, explain it.

संदर्भ ग्रंथ की सूची 1.6

(Bibliography)

- Agarwal.J.C. “School Administration” Surya Publication, Meerut 1995.
- ‘Encylopaedia of Educational Research’ 3rd Mac Millan Con, New York 1966.
- Getzel, J.W.& Trelen H.A.(1966) “The Class-Room Group as a Unique Social System.” In Henary M.13 (Ed.)”, The Dynamics of Instructinal groups, Socio-Psychological Aspects of Teaching & Learning.” MSSE Year Book Chicago
- Griffiths Daniel E.(1956), “Human Relation in School Administration” Appleton Century Crafts Inc. New York.
- Kochhar, S.K. “Secondary School Administration”, Sterling Publication, New York, 1979.
- Maciver, R.M. and Page C.H. “Society” Macmillian London, 1959.
- Mukerji, S.N. (1970) “Administration of Education, Planning and Finance”. Acharya Book Depot, Baroda.
- Theodorson G.A and Theodorson A.G., “A Modern Dictionary of Sociology Barners and Noble Books, New York 1969.

इकाई-2

राजस्थान में विद्यालयी प्रशासन के चरण

(Ladder of School Administration in Rajasthan)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

2.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

2.1 भूमिका (Introduction)

2.2 शैक्षिक प्रशासन का अर्थ एवं परिभाषाएं
(Meaning of definations of Educational Administration)

2.3 शैक्षिक प्रशासन की विशेषताएं (Characteristics of Education Administrations)

2.4 शिक्षा प्रशासन के स्वरूप को प्रभावित करने वाले कारक
(Factors affecting the nature of Administration)

2.5 शिक्षा-प्रशासन की प्रक्रिया (Proccess of Educational Administration)

2.6 राजस्थान में शिक्षा-प्रशासन (Educational Administration in Rajasthan)

2.6 (अ) राज्य स्तर पर प्रशासनिक संरचना (Administration Structure at State Level)

(ब) शिक्षा सचिवालय (Secretariate of Education)

(स) शिक्षा निदेशालय (Directorate of Education)

(द) क्षेत्रीय या संभागीय स्तर (Regional / Divisional Level)

(य) जिला स्तर (District Level)

(र) खण्ड स्तर (Block Level)

(स) स्थानीय स्तर पर प्रशासनिक संरचना
(Administrative Structure at Local Level)

2.7 माध्यमिक शिक्षा विभाग (Secondary Education Department)

(अ) माध्यमिक स्तर की नवीन योजनायें (New programmes at Secondary Level)

(ब) माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (secondary Education Board)

(स) अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय (C.T.E)

(द) उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान (I.A.S.E)

2.8 प्राथमिक शिक्षा विभाग (Primary Education Department)

(अ) प्राथमिक शिक्षा का प्रशासन (Administration of Primary Education)

(ब) शिक्षाकर्मी परियोजना (Shikshakarmi Project)

(स) राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल (Rajasthan State Textbook Board)

(द) राजस्थान मदरसा बोर्ड (Rajasthan Madarsa Board)

(य) पंजीयक, शिक्षा विभागीय परीक्षायें

(Registered, Education Department Exams)

(र) राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान (SIERT)

(ल) जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान

(District Institute of Education & Training)- DIET

2.9 विभिन्न प्रकार के विद्यालय (Different Types of School)

2.10 सारांश (Summary)

2.11 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

राजस्थान ' विद्यालयी प्रशासन चरण विमिन्न प्रकार के विद्यालय एवं उनका प्रबन्धन सैकण्डरी स्तर के सरकारी अनुदानित एवं निजी विद्यालय

Ladders of school administration in Rajasthan. Different types of school and their management. Govt. aided and private up to Senior Secondary Stage.

2.0 लक्ष्य एव उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- शैक्षिक प्रशासन के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शैक्षिक प्रशासन की विशेषताएं बता सकेंगे।
- शैक्षिक प्रशासन के स्वरूप को प्रभावित करने वाले कारकों का बता सकेंगे ।
- शिक्षा-प्रशासन की प्रक्रिया को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- राजस्थान में शिक्षा प्रशासन के विभिन्न स्तरों में विभेद कर सकेंगे ।
- विभिन्न प्रकार के विद्यालयों को स्पष्ट कर सकेंगे ।

2.1 भूमिका (Introduction)

प्रस्तुत इकाई में राजस्थान में शैक्षिक प्रशासन के विभिन्न स्तरों का वर्णन है । सम्पूर्ण राजस्थान में शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये राज्य सरकार द्वारा शैक्षिक उन्नयन हेतु विभिन्न प्रयोजनाओं का प्रभावी संचालन किया जा रहा है । शिक्षा में शत-प्रतिशत नामांकन, गुणवत्तापूर्ण शिक्षण और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एवं उसकी कार्य योजना 1992 के संबंध में शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए राज्य सरकार द्वारा विभिन्न शैक्षिक उन्नयन हेतु प्रायोजनाओं का प्रभावी संचालन किया जा रहा है । शिक्षा में शत-प्रतिशत नामांकन, गुणवत्तापूर्ण शिक्षण और विद्यालयों में छात्रों के ठहराव को सुनिश्चित करने के महत्वाकांक्षी कार्य के साथ-साथ संवैधानिक प्रतिबद्धता के अनुसरण में भौगोलिक, सामाजिक व आर्थिक कारणों से शिक्षा से वंचित वर्ग,

अल्पसंख्यकों, महिला एवं बालिकाओं, निःशक्तजनों आदि को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने के महत्वपूर्ण लक्ष्य की प्राप्ति में शैक्षिक अभिकरणों की अहम भूमिका है।

अत: इस इकाई में शिक्षा विभाग के अधीनस्थ कार्यालयों यथा-निदेशालय माध्यमिक एवं प्रारम्भिक शिक्षा, राजस्थान-बीकानेर, राजस्थान प्राथमिक शिक्षा परिषद् जयपुर, सर्व शिक्षा अभियान, जयपुर राजस्थान शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर, डाइट्स, आई.ए.एस.ई., सी.टी.ई. एवं राजस्थान शिक्षा बोर्ड, पाठ्यपुस्तक मण्डल आदि के कार्यों पर प्रकाश डाला जाएगा ।

2.2 शैक्षिक प्रशासन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

(Meaning and definitions of Educational Administration)

"प्रशासन का पर्याय अंग्रेजी भाषा के शब्द Administration से है जिसकी व्युत्पति लैटिन भाषा के मूल शब्द Minister से हुई है जिसका अर्थ है, दूसरों की सेवा में रत रहने वाला व्यक्ति ।

एनसाइक्लोपीडिया के अनुसार अंग्रेजी भाषा का Administration शब्द का अर्थ Ad+Ministraiare- The performance or management of affairs अर्थात् कार्यों का प्रबन्ध करना", है । अतएव वे क्रियाएं जिनके द्वारा सामान्य नीतियों की पूर्ति की जाती है, प्रशासन का अंग होती हैं । किसी भी संगठन के कार्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए प्रशासन की आवश्यकता होती है । आइये, हम देखें कि शैक्षिक प्रशासन को किस प्रकार से परिभाषित किया गया है -

1. शैक्षिक प्रशासन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा संबंधित व्यक्तियों के प्रयास का एकीकरण तथा उचित सामग्री का उपयोग इस प्रकार किया जाता है जिससे मानवीय गुणों का समुचित विकास हो सके ।

Educational Administration is a process of integrating the efforts of personnel and of utilizing appropriate materials in such a way as to promote effectively the development of human qualities.

- Encyclopedia of Educational Research

2. "शैक्षिक प्रशासन एक ऐसी सेवा करने वाली गतिविधि है जिसके माध्यम से शैक्षिक प्रक्रिया के लक्ष्य प्रभावकारी ढंग से प्राप्त किये जाते है ।"

Educational Administration is a service activity through which the objectives of the educational process may be effectively realized.

- For, Vish & Ruffner

3. शैक्षिक प्रशासन प्रक्रियाओं का सम्पूर्ण योग है जिसके द्वारा मानवीय तथा भौतिक स्त्रोतों को उपलब्ध किया जा सकता है और उन्हें किसी साहसपूर्ण कार्य के उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिए प्रभावपूर्ण बनाया जा सकता है ।

Educational Adiministration may be, defined as the total of the processes through which appropriate human and material resources are

made available and made effective for accomplishing the purpose of an enterprise.

-American Association of School Administration

4. किसी शैक्षिक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए मनुष्यों तथा सामग्रियों का जो संगठन तथा उपयोग किया जाता है, उसे शैक्षिक प्रशासन कहते हैं ।

Educational Administration is the organization and use of man and material to accomplish an education purpose

- Nigro

2.3 शैक्षिक प्रशासन की विशेषताएँ (Characteristics of Education Administrations)

1. शैक्षिक प्रशासन एक मानवीय प्रक्रिया है जो दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि परिस्थितियों से प्रभावित होती है।
2. शैक्षिक प्रशासन में व्यापक क्षेत्र तथा परिवर्तन को अपनाने की संभावना होने के कारण इसका स्वरूप सदैव गत्यात्मक (dynamic) होता है ।
3. बालक का सर्वांगीण विकास इसका मुख्य ध्येय होता है ।
4. शैक्षिक प्रशासन मानवीय गुणों के समुचित विकास से संबंधित है । अत: इसका लक्ष्य विद्यालय की कार्यशैली में सुधार करना होता है ।
5. शैक्षिक प्रशासन का विकास प्रयोग तथा शोधकार्यों पर आधारित होता है । अतएव उसमें सुनिश्चितता तथा उपयोगिता अधिक होती है ।
6. शैक्षिक प्रशासन सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक गतिशीलता से प्रभावित होता है ।
7. शैक्षिक प्रशासन लचीला तथा नम्र होता है ।
8. शैक्षिक प्रशासन में मानवीय प्रयासों का उचित निर्देशन, समायोजन तथा नियन्त्रण का समावेश होता है ।
9. शैक्षिक प्रशासन मनुष्य तथा भौतिक साधनों का समन्वय है ।
10. शैक्षिक प्रशासन आन्तरिक (कक्षा, पुस्तक, शिक्षण विधि, उपकरणों आदि से सम्बन्धित) एवं बाह्य (अधिकारीगण आदि) दो रूपों में होता है ।
11. शैक्षिक प्रशासन उपयोगिता पर आधारित एवं व्यवहारिक होता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 What do you mean by educational administration?
शैक्षिक प्रशासन से आप क्या समझते है ?

2 Explain any five characteristics of Educational Administration?
शैक्षिक प्रशासन की किन्ही पाँच विशेषताओं का उल्लेख कीजिए |

2.4 शिक्षा प्रशासन के स्वरूप को प्रभावित करने वाले कारक (Characteristics of Education Administrations)

शिक्षा का विकास देश काल की परिस्थितियों के अनुसार होता है । अत: शैक्षिक प्रशासन का स्वरूप भी देश की राजनीतिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक आदि परिस्थितियों से संबंधित एवं प्रभावित होता है । शिक्षा प्रशासन के स्वरूप को प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं -

अ. ऐतिहासिक कारक (Historical Factors) - प्रत्येक देश का अपना इतिहास होता है । देश की शिक्षा का स्वरूप इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से निर्धारित होता है । तत्कालीन सामाजिक मान्यतानुसार धर्म को उच्च स्थान प्राप्त था । शिक्षा को भी संरक्षण प्राप्त था । अंग्रेजो के आगमन के पश्चात इंग्लैण्ड की शैक्षिक नीतियों का भारत की शिक्षा पर गहरा प्रभाव पडा । वर्तमान में समाज द्वारा पंथ निरपेक्षता को स्वीकार किए जाने के कारण शिक्षा भी किसी धर्म विशेष से संबंधित नहीं है ।

ब. सांस्कृतिक कारक (Cultural Factors) - शिक्षा एवं संस्कृति का पारस्परिक संबंध अत्यन्त गहरा है । जिस प्रकार शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, अनुशासन, अध्यापक आदि पर संस्कृति का प्रभाव होता है । उसी प्रकार शैक्षिक प्रशासन भी देश की संस्कृति से प्रभावित होता है । शैक्षिक प्रशासन द्वारा शिक्षा की ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए जो देश के सांस्कृतिक मूल्यों की रक्षा कर सके ।

स. सामाजिक कारक (Social Factors) - कला, विज्ञान, तकनीकी में विकास व्यवसायीकरण औद्योगीकरण आदि के कारण समाज की आवश्यकताएं समय-समय पर परिवर्तित होती रहती है । आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा में भी परिवर्तन होता है । शिक्षा के क्षेत्र की विविधता एवं अनेकरूपता का सम्यक संचालन शैक्षिक प्रशासन करता है । अत: सामाजिक परिस्थितियों से शैक्षिक प्रशासन प्रभावित होता है ।

द. राजनीतिक कारक (Political Factors) - देश की शासन प्रणाली का प्रभाव शिक्षा पर पड़ता है। सामान्य रूप से देश तथा राज्यों में जिस दल की सरकार बनती है । उसी दल की नीतियों के अनुरूप ही शिक्षा का संचालन होता है । अत: शैक्षिक प्रशासन का सम्पूर्ण ढांचा भी राजनीतिक, परिवर्तन के साथ-साथ परिवर्तित होता है।

2.5 शैक्षिक प्रशासन की प्रक्रिया (Process of Educational Administration)

शैक्षिक लक्ष्य एवं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये मानवीय एवं भौतिक संसाधनों तथा प्रयासों का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित करने की प्रक्रिया को शैक्षिक प्रशासन कहते हैं । इस सम्पूर्ण प्रक्रिया के निम्नलिखित पाँच घटक है-

चित्र संख्या : 2.1

1. उद्देश्यीकरण (Purposing) - किसी ध्येय तक पहुंचने के लिए किए गए प्रयासों को दिशा प्रदान करने तथा इस प्रक्रिया को सफल बनाने की दृष्टि से सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है । उद्देश्य स्पष्ट रूप से परिभाषित किए जाने चाहिए जिससे प्रक्रिया के अन्य घटक यथा नियोजन, संगठन, निष्पादन एवं मूल्यांकन का उचित संपादन किया जा सके।

2. नियोजन (Planning)- उद्देश्यों को कार्यरूप में परिवर्तित करने के लिये नियोजन आधार का कार्य करता है । समय, प्रयास एवं धन के अपव्यय पर नियंत्रण करने एवं कुशलता और प्रभावशीलता में वृद्धि करने की दृष्टि से यह विभिन्न विकल्पों में से एक अच्छी कार्य प्रणाली के चयन की प्रक्रिया है । वर्तमान एवं भविष्य को दृष्टिगत करते हुए सभी उपलब्ध संसाधनों का सम्बन्धित व्यक्तियों के सहयोग से वस्तुनिष्ठ उपयोग करना ही अच्छा नियोजन है ।

3. व्यवस्थापन (Organising) - वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों, स्थानों एव वस्तुओं की इस प्रकार व्यवस्था करना जिससे विभिन्न व्यक्तियों के मध्य एवं व्यक्तियों एवं कार्यों के मध्य सम्बन्धों को दिशा प्रदान की जा सके ।

एक अच्छा प्रशासक कार्यों की आवश्यकताओं को देखते हुए औपचारिक प्रयासों एवं क्रियाओं को प्रेरित करने के लिए अनौपचारिक संगठनों की स्थापना करता है । एक अच्छा संगठन लोकतन्त्रात्मक होता है अर्थात पारस्परिक सम्बन्धों, ऐच्छिक सहयोग तथा सभी व्यक्तियों की क्रियाशील साझेदारी पर आधारित होता है ।

4. निष्पादन (Operating) - योजनाओं को व्यावहारिक एवं कार्य रूप में परिणित करना निष्पादन कहलाता है जिसके अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य सम्मिलित हैं -

अ. निर्देशन (Direction) - निर्देशन का अर्थ उन उत्तरदायित्वों से है जो कुछ परिणामों को प्राप्त करने के लिए की जाने वाली क्रियाओं से सम्बन्धित है । इसकी व्युत्पति नियोजन के साथ होती है, कार्यों के साथ-साथ आगे बढ़ती है एवं परिणामों के मूल्यांकन के साथ समाप्त हो जाती है ।

ब. समन्वय (Coordination) - विभिन्न कारकों के मध्य सम्बन्धों की विभिन्नता में एकता की अर्थात एकीकृत समन्वित प्रभाव उत्पन्न करने की प्रक्रिया समन्वय कहलाती है । समन्वय विशिष्ट समस्या, परिस्थितियों, संसाधनों की उपलब्धता एवं अंतिम लक्ष्य पर निर्भर करता है । प्रशासन प्रक्रिया के प्रारम्भ में समन्वय का प्रयोग संगठन में गतिरोध को रोकने के लिये एवं प्रक्रिया के दौरान् विरोधों एवं कुसमायोजन को दूर करने के लिये किया जाता है ।

4.3 नियंत्रण (Control) - किसी क्रिया को दिशा प्रदान करने, निर्देशन करने एवं उसका मूल्यांकन करने की प्रक्रिया नियंत्रण कहलाती है । नियंत्रण के चार पक्ष हैं यथा - नियंत्रण करने की सत्ता, सत्ता का प्रयोग करने की विधि, सत्ता प्रयोग की प्रक्रिया तथा सत्ता प्रयोग का उद्देश्य ।

5. मूल्यांकन (Evaluation) - सम्पूर्ण शैक्षिक प्रशासनिक प्रक्रिया के उद्देश्यों, नियोजन व्यवस्थापन की कमियों को चिन्हित करना तथा प्रक्रिया में परिवर्तन कर इन कमियों को दूर करना मूल्यांकन कहलाता है । मूल्यांकन मानव सम्बन्ध को सुधारनें एवं विकसित करने में सहायता करता है । मूल्यांकन के लिये मूल्यांकन के उद्देश्यों का निर्धारण,आंकडों को एकत्र करना,

उसके लिये विधियों का विकास करना, प्राप्त परिणामों की व्याख्या करना आदि पदों का सम्पादन करना पडता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. Draw a flow chart of the process of educational administration.
   शैक्षिक प्रशासन की प्रक्रिया का रेखाचित्र बनाइये |
2. Write any two factors affecting the nature of administration.
   शैक्षिक प्रशासन के स्वरूप को प्रभावित करने वाले दो कारक लिखिये |

2.6 राजस्थान में शिक्षा-प्रशासन (Educational Administration in Rajasthan)

मध्यकालीन समय से राजस्थान में लोक शिक्षा एक परम्परा रही है । शैक्षिक संस्थाओं की स्थापना राजाओं या समुदाय द्वारा (हिन्दू पाठशाला या मुस्लिम मकतब) की गई परन्तु इसमें सामान्य व्यक्ति की सहभागिता बहुत सीमित रहती थी । राजाओं द्वारा स्थापित संस्थाओं में राजघरानों या उच्च घरानों तक तथा समुदाय द्वारा स्थापित संस्थाएं उच्च वर्ग तक सीमित थी ।

राजस्थान में आधुनिक शिक्षा का प्रारम्भ 19 वीं सदी में हुआ जबकि 1844 में लोक शिक्षण विभाग की स्थापना की गई ,19वीं सदी के मध्य में 647 शिक्षण संस्थाएं थी । बालिकाओं के लिये पृथक विद्यालय नहीं थे । विद्यालयों में ब्रिटिश विद्यालय प्रणाली का प्रभाव था । 20 वीं सदी के प्रारंभ में शिक्षा का विस्तार जिलों, छोटे शहरों एवं गांवो में किया गया । 1917 से 1940 के मध्य कई आन्दोलन हुए तथा व्यापारिक समुदायों एवं सामाजिक संस्थाओं द्वारा विद्यालय प्रारम्भ किये गये, जिनमें ग्रामीण बालकों की सहभागिता प्रारम्म हुई । शिक्षा की महत्ता को लोग समझने लगे एवं ऐसे जन अधिकारों, जिनमें राजनैतिक स्वतंत्रता भी सम्मिलित है, के प्रति जागरूकता का माध्यम शिक्षा को समझा जाने लगा ।

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व राजस्थान 18 रियासतों, (अलवर, बीकानेर, बांसवाड़ा, बूंदी, कोटा, डूंगरपुर, जैसलमेंर, जयपुर, जोधपुर, झालावाड, उदयपुर, प्रतापगढ, सिरोही, किशनगढ, करौली, टोंक, भरतपुर व धौलपुर) तथा दो ठिकाने (शाहपुरा व कुशलगढ) और अजमेंर के केन्द्र शासित राज्य में बंटा हुआ था । वर्तमान में राजस्थान पंचायत राज की 32 जिला परिषदों, 237 पंचायत समितियों, 241 तहसीलों, 183 नगरपालिकाओं एवं 9189 ग्राम पंचायतों तथा 39753 आवासीय बस्तियों में व्यवस्थित एक सुनिर्मित प्रणाली है ।

राजस्थान राज्य सरकार ने शिक्षा पर विशेष ध्यान देकर शिक्षा व्यवस्था के एक संघीय एवं सुसंचालन हेतु वर्ष 1950 में प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा निदेशालय की स्थापना की । राज्य में वर्ष 1959 से पंचायत राज्य व्यवस्था लागू होने के पश्चात् ग्रामीण क्षेत्र के प्राथमिक विद्यालयों की प्रबन्धन व्यवस्था का दायित्व ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज्य विभाग के अधीन जिला परिषदों एवं पंचायत समितियों को सौंप दिया गया । शिक्षा में गुणवता लाने के लिए वर्ष 1977 में प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा निदेशालय, बीकानेर का विभाजन कर बीकानेर में ही पृथक-पृथक प्रारम्मिक शिक्षा निदेशालय एवं माध्यमिक शिक्षा निदेशालय की स्थापना की गई ।

2.6 (अ) राज्य स्तर पर प्रशासनिक संरचना (Administration Structure at State Level)

शिक्षा मंत्रालय (Education Department) - राज्य स्तर पर शिक्षा मंत्रालय का प्रमुख अधिकारी शिक्षा मंत्री होता है । यह जन प्रीतिनिधि होता है और राज्य के विधान मण्डल के प्रति उत्तरदायी होता है। शिक्षा मंत्री की अनुपस्थिति में शिक्षा राज्यमंत्री या उप मंत्री, कार्यों का निष्पादन करते हैं । शिक्षा मंत्री केवल अपने क्षेत्र से संबंधित (प्राथमिक व माध्यमिक विद्यालयी, शिक्षा महाविद्यालय और विश्वविद्यालय की सामान्य शिक्षा या जो उससे संबंधित है) शिक्षा के लिए ही उत्तरदायी होता है । कृषि, पशु, शिक्षा, अभियांत्रिक, स्वास्थ्य, वाणिज्य व उद्योग, प्राविधिक शिक्षा आदि के लिए सम्बद्ध विभागों के मंत्री उत्तरदायी होते है ।

शिक्षा मंत्री के कार्य (Functions of Education Minister) - शिक्षा मंत्री निम्नलिखित कार्यों का निर्वहन करता है-

- शिक्षा से संबंधित विषयों पर राज्य की विधानसभा के प्रति उत्तरदायी रहना ।
- राज्य की शिक्षा-नीति को निर्धारित करना तथा शिक्षा के सभी पहलुओं को राज्य स्तर पर नेतृत्व प्रदान करना ।
- विधानमण्डल को शिक्षा संबंधी परामर्श देना ।
- राज्य में शैक्षिक अनुसंधान कार्यों को प्रोत्साहित करना ।
- निजी प्रबंधको तथा स्थानीय संस्थाओं को शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर आर्थिक, प्रशासनिक तथा संचालन संबंधी सहायता प्रदान करना ।
- केन्द्रीय सरकार की शैक्षिक योजनाओं, नीतियों तथा शैक्षिक निर्णयों को राज्य में समुचित रूप से लागू कराना ।
- राज्य स्तर पर शैक्षिक प्रगति का मूल्यांकन करना ।
- सम्पूर्ण राज्य की शैक्षिक क्रियाओं में सामंजस्य स्थापित करना ।
- राज्य स्तर पर शिक्षा के प्रत्येक स्तर का निरीक्षण तथा पर्यवेक्षण करना ।

शिक्षा मंत्री अपने उपर्युक्त कार्यों को निम्नलिखित दो अभिकरणो के माध्यम से सम्पन्न करता है|

- शिक्षा सचिवालय (Secretariat of Education) तथा
- शिक्षा निदेशालय (Directorate of Education)

2.6 (ब) शिक्षा सचिवालय (Secretariat of Education) -

सचिवालय प्रत्यक्ष रूप से शिक्षा मंत्री तथा उप मंत्री से संबंधित है । शिक्षा संबंधी निर्णयों तथा नीतियों का निर्धारण शिक्षा सचिवालय में होता है । शिक्षा सचिव अखिल भारतीय सेवा का सदस्य होता है । वह शिक्षा मंत्री की नीतियों को क्रियान्वित कराता है, वहीं शिक्षा मंत्री या शिक्षा राज्य मंत्री को शिक्षा संबंधी समस्याओं पर सलाह भी देता है । राज्य सरकार के सभी आदेश उसी के नाम से निकलते हैं ।

सचिवालय स्तर पर शिक्षा विभाग की संरचना

(Administrative Structure of Education Department at Secretariat Level)

चित्र संख्या 2.2

2.6 (स) शिक्षा निदेशालय (Directorate of Education) -

यह शिक्षा के क्षेत्र में सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति है और सम्पूर्ण राज्य की शिक्षा के प्रशासन के लिए उत्तरदायी है । यह सरकार तथा राज्य में फैली हुई सैकड़ो शिक्षा संस्थाओं के मध्य एक योजक कड़ी है । यह सरकार को शिक्षा की विभिन्न शाखाओं की दशाओं, आवश्यकताओं आदि से पूर्णतया परिचित कराता है तथा इसी प्रकार सरकार की शिक्षा नीति से विभिन्न शाखाओं को उसके क्रियान्वयन हेतु परिचित कराता है ।

निदेशालय स्तर पर शिक्षा विभाग की संरचना

(Administrative Structure of Secondary Education Department at Directorate Level)

चित्र संख्या : 2.3

2.6 (द) क्षेत्रीय या संभागीय स्तर (Regional / Divisional Level) -

शिक्षा के प्रशासन के दृष्टिकोण से राज्य को कुछ संभागो या मण्डलो में विभक्त कर दिया जाता है । राजस्थान में वर्तमान में सात संभाग जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, चुरू (बीकानेर), कोटा, अजमेंर एवं भरतपुर है । प्राथमिक एव माध्यमिक शिक्षा के लिए पृथक-पृथक संभागानुसार उपनिदेशक होते है । ये अपने संभाग के शिक्षा प्रशासन के लिए उत्तरदायी होते है ।

2.6 (य) जिला स्तर (District Level) - राजस्थान में कुल 32 जिले है । अत: प्रत्येक जिला स्तर पर जिला शिक्षा अधिकारी (District Education Officer) होता है ।

2.6 (र) खण्ड स्तर (Block Level) - इस स्तर पर प्राथमिक शिक्षा के विस्तार, प्रगति का मूल्यांकन ब्लॉक शिक्षा अधिकारी (BEO) करते हैं ।

संभागीय स्तर पर शिक्षा विभाग की संरचना

(Administrative Structure of Secondary Education Department at Divisional Level)

चित्र संख्या 2.4

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. Draw the flow chart of the organizational setup of the Education Department of Rajasthan.
   राजस्थान के शिक्षा विभाग की संरचना का रेखाचित्र बनाईये ।
2. What is the difference between the function of the educational secretariate and the directorate of the education Give any four difference.
   शिक्षा सचिवालय एवं निदेशालय के मध्य क्या अन्तर है, कोई चार अन्तर दीजिए ।

2.7 माध्यमिक शिक्षा विभाग (Secondary Education Department)

माध्यमिक शिक्षा का राज्य की शिक्षा व्यवस्था में विशेष स्थान है । माध्यमिक शिक्षा स्तर पर छात्रों को अपने भविष्य के लिए उपयुक्त विकल्प का चुनाव एवं इस हेतु तैयारी करनी होती है । राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में अपेक्षा की गई है कि माध्यमिक शिक्षा में सुधार से देश के आर्थिक विकास हेतु उपयुक्त व बहुमूल्य मानव शक्ति उपलब्ध करायी जा सकती है । राजस्थान में माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न योजनाओं के माध्यम से विकास एवं विस्तार किया गया है । राज्य में वर्तमान में 3777 राजकीय माध्यमिक विद्यालय तथा 2528 राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय संचालित है । जिसमें से बालिकाओं के 371 राजकीय माध्यमिक तथा 432 राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय हैं । उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययन कराये जाने वाले संकाय एवं विषय निम्नानुसार है -

अनिवार्य विषय		हिन्दी,अंग्रेजी,पर्यावरण शिक्षा, जीवन कौशल शिक्षा एवं कम्प्यूटर (अतिरिक्त अनिवार्य)
ऐच्छिक विषय		
1.	कला	हिन्दी, अंग्रेजी, इतिहास, राजनीति शास्त्र, अर्थ शास्त्र, भूगोल, समाज शास्त्र, राजस्थानी, उर्दू, पुंजाबी, सिंधी, गणित, चित्रकला, संस्कृत, गुजराती, संगीत, दर्शन शास्त्र, गृह विज्ञान, फारसी साहित्य, मनोविज्ञान एवं लोक प्रशासन
	वाणिज्य	लेखाशास्त्र, व्यावसायिक प्रबंध, व्यावसायिक गणित एवं सांख्यिकी, आर्थिक एवं वित्तीय अध्यन्न, टंकण, व्यावसायिक सूचना, व्यवस्था एवं अनुप्रयोग व आशुलिपि (हिन्दी व अंग्रेजी)
	कृषि	मत्स्य विज्ञान, कृषि रसायन विज्ञान, उद्यान विज्ञान, पशुपालन, दुग्ध विज्ञान, तथा कृषि-जीव विज्ञान

	ललित कला	चित्रकला, संगीत
	गृह विज्ञान	आहार विज्ञान एवं पोषण, गृह प्रबन्ध वस्त्र एवं परिधान, मानव वृद्धि, विकास एवं पारिवारिक संबंध
	कम्प्युटर विज्ञान	ऐच्छिक

माध्यमिक शिक्षा विभाग के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं -

- शिक्षा नीति का निर्धारण व क्रियान्वयन ।
- शैक्षिक प्रबन्ध व प्रशासन का दायित्व ।
- माध्यमिक शिक्षा का विस्तार ।
- शिक्षक शिक्षा का सुदृढ़ीकरण एवं संचालन ।
- भाषाओं को प्रोत्साहन ।
- शैक्षिक गतिविधियों का विकास ।
- शिक्षा पर धन राशि का नियोजन ।

2.7 (अ) माध्यमिक स्तर की नवीन योजनायें (New programmes at Secondary Level)

(i) बालिकाओं को निःशुल्क बस पास सुविधा - राज्य सरकार द्वारा बजट में की गई घोषणा के अनुरूप राजकीय माध्यमिक/उच्च माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा 9 से 12 तक अध्ययनरत बालिकाओं हेतु राजस्थान रोडवेज बस द्वारा घर से विद्यालय जाने व आने हेतु निःशुल्क बस पास सुविधा दिनांक 01.01.2006 से प्रारम्भ की गई है । राजस्थान परिवहन निगम के लिए इस हेतु 400 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया है ।

(ii) पन्नाधाय जीवन अमृत योजना - सत्र 2006-07 "पन्नाधाय जीवन अमृत योजना के अन्तर्गत राज्य के समस्त बी.पी.एल. परिवारों के आश्रिम एवं कक्षा 9 से 12 में अध्ययनरत दो बच्चों को जीवन बीमा निगम द्वारा प्रति तिमाही 300 रूपये (1200 रू0 वार्षिक) छात्रवृत्ति के रूप में भारतीय जीवन बीमा निगम के द्वारा भुगतान किया जाता है । आवेदन पत्र संस्था प्रधानों / नगर निगम / संबधित पंचायत द्वारा उपलब्ध करवाये जाते हैं । भरे हुए आवेदन पत्र संबंधित निकाय / पंचायत में जमा करवाये जाते हैं ।

(iii) विद्यार्थी सुरक्षा दुर्घटना बीमा-योजना - राज्य सरकार द्वारा सत्र 2006.07 में विद्यार्थी सुरक्षा बीमा योजना के अन्तर्गत निम्नानुसार प्रावधान किया गया है -

1. कक्षा 1 से 8 तक के छात्र-छात्राओं के लिए एकमुश्त प्रीमियम राशि 75 लाख रू0 दिनांक 14.11.2006 तक राज्य बीमा एवं प्रावधायी निधि विभाग को जमा कराई गई ।

2. कक्षा 9 से 12 तक के छात्र-छात्राओं के लिए सामूहिक बीमा पत्र जारी करने के लिए 96.00 लाख रूपये बीमा विभाग को जमा करवाने हैं । अब तक 9423340 रू0 बीमा विभाग को जमा कराये जा चुके हैं । इस हेतु कक्षा 9 से 12 में अध्ययनरत प्रत्येक छात्र से 10 रूपये एवं छात्रा से 05 रू0 वसूल किये गये हैं । यह राशि सेवा कर सहित है ।

(iv) कम्प्यूटर शिक्षा योजना -राज्य में सत्र 2006-07 से कम्प्यूटर शिक्षा के लिए राजकीय माध्यमिक / उच्च माध्यमिक विद्यालयों में परियोजना के फेज - प्रथम व द्वितीय के

सभी विद्यालयों में कक्षा 9 व 10 में अनिवार्य एवं कक्षा 11 व 12 में ऐच्छिक विषय के रूप में संचालित की गई है ।

(v) सत्रांक योजना - माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान द्वारा अर्द्धवार्षिक परीक्षा को महत्वपूर्ण बनाने तथा विद्यालयों को इसमें रूचि लेने के उद्देश्य से कक्षा 10 व 12 के लिए सत्र 1995-96 से सत्रांक योजना को लागू किया गया । इस योजना के तहत उक्त कक्षाओं के विद्यालयों को अर्द्धवार्षिक परीक्षा में प्राप्तांको के 10 प्रतिशत अंक बोर्ड की परीक्षा में शामिल किये जाते हैं ।

(vi) गार्गी पुरस्कार योजना - राज्य में बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की सैकण्डरी परीक्षा में 75 प्रतिशत या इससे अधिक अंक प्राप्त करने वाली बालिकाओं को कक्षा 11 व 12 में नियिमित अध्ययन हेतु प्रमाण पत्र के साथ दो वर्ष के लिए प्रतिवर्ष 1000 रू0 प्रति बालिका पुरस्कार के रूप में दिये जाने का प्रावधान है ।

2.7 (ब) माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, (Secondary Education Board) -

माध्यमिक शिक्षा आयोग की अनुशंषानुसार माध्यमिक शिक्षा अधिनियम, 1957 के द्वारा राज्य सरकार द्वारा 01 अगस्त, 1957 को बोर्ड की स्थापना राजधानी जयपुर में एक नियमित निकाय के रूप में की गई । वर्ष 1961 में इसे अजमेंर में हस्तान्तरित कर दिया गया । राज्य की माध्यमिक शिक्षा की पद्धति को आधुनिक, वैज्ञानिक एवं प्रगतिशील रूप में विकसित करना बोर्ड की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य है, ऐसी शिक्षा का पुन: संगठन, विनिमय और पर्यवेक्षण को भी स्थापना के उद्देश्यों में सम्मिलित किया गया है । बोर्ड परीक्षा आयोजन के साथ-साथ शैक्षिक उन्नयन शिक्षा को भी आधुनिक करने के वृहत्तर उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सदैव प्रयत्नशील है । माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान द्वारा निम्नांकित परीक्षाएं संचालित की जाती हैं -

माध्यमिक परीक्षा (कक्षा-10)	उच्च माध्यमिक परीक्षा (कक्षा- 12) स्तर
1. माध्यमिक परीक्षा	1. उच्च माध्यमिक परीक्षा
2. प्रवेशिका परीक्षा	2. वरिष्ठ उपाध्याय परीक्षा

2.7 (स) अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय (C.T.E/College of Teacher Education) -

अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय / कॉलेज निम्नलिखित विशिष्ट कार्यों के लिए स्थापित किए गए हैं--

- माध्यमिक अध्यापकों की सहभागिता के लिए सेवा-पूर्व अध्यापक शिक्षा ।
- माध्यमिक अध्यापको के लिए विषय की अभिविन्यस्त और अल्पावधि (3-4 सप्ताह के) विषय विशेष वाले (3-10 दिन के) सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम इस उद्देश्य से आयोजित करना, कि प्रत्येक अध्यापक को कम से कम 5 वर्ष में एक बार विषय अभिविन्यास प्रशिक्षण पाठ्यक्रम, अल्पावधिक विषय विशेष वाले पाठ्यक्रमों के अलावा, अवश्य पूरा करना होगा ।
- माध्यमिक विद्यालयों, विद्यालय संकुलों और अलग-अलग अध्यापकों को विस्तार और समाधान सहायता / सेवाएं देना ।
- विद्यालय शिक्षा में प्रयोग और नवाचार का संचालन करना ।

- शैक्षिक सरोकार के नए क्षेत्रों के लिए प्रशिक्षण और संसाधन हेतु सहायता देना ये नए क्षेत्र है:- मूल्य-अभिविन्यस्त शिक्षा, कार्य अनुभव, शिक्षा का पर्यावरणिक अभिविन्यास जनसंख्या शिक्षा, शैक्षिक-प्रोद्यौगिकी, कम्प्यूटर साक्षरता व्यवसायीकरण और विज्ञान शिक्षा ।
- व्यावसायिक निकायों को समर्थन-सहायता देना ।
- अध्यापक तैयार करने के कार्यक्रमों में समुदाय की सहभागिता को प्रोत्साहन देना ।

2.7 (द) उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान

(I.A.S.E. / Institute of Advance Studies in Education) -

अतिरिक्त उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान निम्नलिखित कार्य करता है-

- प्रारम्भिक अध्यापकों के लिए शिक्षक तैयार करने के उद्देश्य से प्रारम्मिक अध्यापक शिक्षा संबंधी कार्यक्रम चलाना ।
- प्रारम्भिक और माध्यमिक अध्यापक- शिक्षक और शिक्षा में अनुसंधानकर्ताओं को तैयार करने के उद्देश्य से शिक्षा में एम.एड., एम.फिल और पी.एच.डी. कार्यक्रम चलाना । कुछ संस्थान माध्यमिक विद्यालयी अध्यापकों के लिए 4 वर्षीय पाठ्यक्रम भी शुरू कर सकते हैं ।
- (I) प्रारम्भिक और माध्यमिक अध्यापक - शिक्षकों (II) माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यो (III) माध्यमिक विद्यालयों के पर्यवेक्षक से जुड़े व्यक्तियों आदि के लिए सेवाकालीन पाठ्यक्रम चलाना ।
- अध्यापक शिक्षा में प्रायोगिक / पायलट कार्यक्रम चलाना शिक्षा में उच्चस्तरीय, आधारभूत और अनुप्रयुक्त अनुसंधान और प्रयोग के कार्यक्रम चलाना, जिनका स्वरूप विशेष रूप से अन्तर शास्त्रीय हो, जैसे शिक्षा का समाज विज्ञान, शिक्षा और आर्थिक विकास, शैक्षिक मनोविज्ञान आदि ।
- सॉफ्टवेयर तैयार करने और शैक्षिक प्रोद्यौगिकी के उपयोग के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाना ।
- जब सेवाकालीन कार्यक्रमों के आयोजन की प्रणाली पूरी तरह स्थापित हो जाएगी, तब ऐसी संस्थाएं अपनी क्षमता और बाहरी मांग को देखते हुए कुछ उपर्युक्त क्षेत्रों में, कुछ दीर्घावधि और विशेषज्ञता वाले पाठ्यक्रम भी चला सकती है ।
- डाइट संस्थाओं को अकादमिक मार्गदर्शन देना और अध्यापक शिक्षा कॉलेजों को संसाधान सहायता देना और शिक्षण संबंधी उच्च अध्ययन संस्थान निम्नलिखित प्रकार की शिक्षण / अनुशासनात्मक सामग्री के विकास का कार्य भी कर सकते हैं -

(i) इकाई योजनाएं अथवा विषय-वस्तु एवं कार्यविधि संबंधी शिक्षण पैकेज ।
(ii) प्रश्न बैंक ।
(iii) अध्यापकों की पुस्तिकाएं और विद्यार्थीयों की कार्यपुस्तिकाएं आदि ।
(iv) पुस्तकें और समाधान सामग्रियां तैयार करना / स्त्रोत ।
(v) संरचनात्मक कार्यक्रम / अभ्यास और प्रयोगात्मक परियोजनाएं ।
(vi) अधिगम के लिए शिक्षण पैकेज तैयार करना ।
(vii) अध्यापन सहायक सामग्रियां और किट तैयार करना ।

राज्य की आई.ए.एस.ई. एवं सी.टी.ई को सेवारत प्रशिक्षण के लिए आवंटित जिलों का विवरण वर्ष 2005-2006

1	**आई.ए.एस. ई. बीकानेर**	
	(अ) वरिष्ठ अध्यापक स्तर हेतु	बीकानेर
	(ब) व्याख्याता, प्र.अ., प्रधानाचार्य स्तर हेतु	बीकानेर, श्रीगंगानगर, हनुमानगड़,चुरू, झुंझुनूं, सीकर, जयपुर, जोधपुर, जैसलमर, बाड़मेंर, सिरोही, पाली, जालोर, नागौर, दौसा, अलवर |
2	**आई.ए.एस. ई. अजमेंर**	
	(अ) वरिष्ठ अध्यापक स्तर हेतु	अजमेंर, धौलपुर, करौली
	(ब) व्याख्याता, प्र.अ., प्रधानाचार्य स्तर हेतु	अजमेंर, टोंक, धौलपुर, करौली, कोटा, बूंदी, झलवाड़, बाराँ, सवाई माधोपुर, भरतपुर, बांसवाड़ा, उदयपुर, चित्तौडगढ, राजसमंद, भीलवाड़ा, डूंगरपुर |
वरिष्ठ अध्यापक स्तर सी.टी.ई. संस्थानों को आवंटित जिलों का विवरण		
1	सी.टी.ई सरदार शहर(चुरू)	चुरू, नागौर
2	सी.टी.ई उदयपुर	उदयपुर, पाली,कोटा,बाराँ,झालावाड़,बूंदी
3	सी.टी.ई सांगरिया (हनुमानगढ़)	श्रीनगर, हनुमानगढ़
4	सी.टी.ई जोधपुर	जोधपुर, जैसलमेंर, बाड़मेंर, जालौर
5	सी.टी.ई बग्गड(झुंझुनूं)	झुंझुनूं व सीकर
6	सी.टी.ई डबोक	डूंगरपुर, बांसवाड़ा, चित्तौड़, राजसमंद, भीलवाडा, व सिरोही
7	सी.टी.ई भुसावर (जयपुर)	जयपुर-I, II, दौसा, टोंक (पुरुष व महिला) अलवर-I, II, व सवाईमोधपुर, भरतपुर-1,II (पुरुष)
8	सी.टी.ई (भरतपुर)	अलवर, भरतपुर, धौलपुर, सवाईमाधोपुर, करौली (केवल महिलाओं के लिए)
9	सी.टी.ई (अजमेंर)	अजमेंर, नागौर, भीलवाडा, टोंक, पाली (केवल महिलाओं के लिए)

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. What is the difference between C.T.E & I.A.S.E. Give any two differences.

सी.टी.ई एवं आई.ए.एस.ई. के मध्य क्या अन्तर है कोई दो अन्तर बताईये ।

2 Write down any four functions of the secondary education department.

माध्यमिक शिक्षा विभाग के कोई चार कार्य बताईये ।

2.8 प्राथमिक शिक्षा विभाग (Primary Education Department)

भारतीय संविधान के नीति निर्देशक सिद्धान्तों में 14 वर्ष तक के समस्त बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराये जाने का प्रावधान निहित है । स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा के विकास एवं सार्वजनीकरण की दिशा में विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से अनवरत प्रयास किये जा रहे हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की कार्य योजना तथा उसमें वर्ष 1992 में किये गये संशोधनों में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वजनीकरण पर विशेष बल दिया गया है ।

प्रारम्भिक शिक्षा के सम्बन्ध में शिक्षा नीति के निम्न प्रमुख उद्देश्य हैं :-

- सबके लिए निकटस्थ प्रारम्भिक शिक्षा की सुविधा तथा सार्वभौमिक नामांकन ।
- प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने तक ठहराव तथा सहभागिता ।
- न्यूनतम अधिगम स्तर (एम.एल.एल.) के साथ शिक्षा के गुणात्मक स्तर पर बल ।

उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिये राज्य में शिक्षा के विकास एवं प्रचार-प्रसार हेतु प्रयास किये जा रहे हैं ।

प्रारम्भिक शिक्षा विभाग के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं -

- प्रारम्भिक शिक्षा नीति का निर्धारण एवं क्रियान्वयन ।
- प्रारम्भिक शिक्षा प्रबन्धन एवं प्रशासन ।
- प्रारम्भिक शिक्षा का विस्तार ।
- अनौपचारिक शिक्षा एवं साक्षरता को बढ़ावा ।
- प्रारम्मिक शिक्षा के क्षेत्र में शैक्षिक गतिविधियों का विकास ।
- प्रारम्मिक शिक्षा पर धनराशि का नियोजन ।

2.8 (अ) प्राथमिक शिक्षा का प्रशासन (Administration of Primary Education) -

चित्र संख्या 2.5

आयुक्त, प्रारम्भिक शिक्षा राजस्थान, बीकानेर के नेतृत्व में आयुक्तालय स्तर पर अतिरिक्त निदेशक प्रशासन, अतिरिक्त निदेशक प्रारम्भिक (शैक्षिक), संयुक्त निदेशक, उप निदेशक, जिला शिक्षा अधिकारी एवं समकक्ष अधिकारी कार्यरत है । प्रत्येक मण्डल स्तर पर उपनिदेशक (प्राशि), जिला स्तर पर जिला शिक्षा अधिकारी (प्राशि) एवं ब्लॉक स्तर पर अति विकास अधिकारी कम ब्लाक प्रारम्भिक शिक्षा अधिकारी कार्यरत है । राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर शैक्षिक अनुसंधान, पाठ्यक्रम निर्माण एवं प्रशिक्षण कार्य हेतु नोडल संस्थान है । कार्यालय पंजीयक शिक्षा विभागीय परीक्षाएं, बीकानेर विभिन्न शिक्षा विभागीय परीक्षाओं के संचालन के क्षेत्र में कार्यरत है ।

2.8 (ब) शिक्षाकर्मी परियोजना (Shikshakarmi Project) -

राजस्थान की भौगोलिक विषम परिस्थितियों, छितरी जनंसख्या तथा ग्रामीण समुदाय की शिक्षा के प्रति उदासीनता, शिक्षक की नियमितता का अभाव आदि कारणों से साक्षरता की स्थिति राजस्थान में दयनीय ही थी । अत: ऐसी विषम परिस्थितियों में ऐसे कठिन दूरस्थ इलाकों में शिक्षा की ज्योति प्रकाशमय करने के लिए सन् 1984 में प्रायोगिक तौर पर शिक्षाकर्मी परियोजना का प्रारम्म एस. डब्ल्यू. आर. सी. तिलोनिया के सहयोग से ब्लॉक सिलौर से प्रारम्भ किया गया । प्रारम्म में मात्र 12 विद्यालयों से यह परियोजना प्रारम्भ की गई, जिसके अत्यन्त आशावादी परिणामों से उत्साहित होकर इस परियोजना ने प्रथम चरण (1987 से 1994 तक) में 1066 विद्यालय तथा द्वितीय चरण (1994 से 1998 तक) में 2687 विद्यालय तथा वर्तमान तृतीय चरण एंव पश्चात् वर्ष मार्च 2004 में 3646 विद्यालयों के साथ विस्तार किया । इसका मुख्यालय जयपुर में हैं जिसमें 9 सन्दर्भ इकाई 33 स्वैच्छिक संस्थाए है ।

2.8 (स) राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, जयपुर
(Rajasthan State Textbook Board) -

राजस्थान सरकार ने सन् 1956 में कक्षा-1 से 8 तक पाठ्यपुस्तकों की नीति लागू की थी । राष्ट्रीकरण के पीछे सरकार की मंशा यह थी कि बालकों को अध्ययन के लिए सुरूचिपूर्ण, आकर्षण एंव उन्नत सामग्री से युक्त पाठ्यपुस्तकें उचित मूल्य पर उपलब्ध हों

पाठ्यपुस्तकों के राष्ट्रीयकरण की नीति इस नीति को अमलीजामा पहनाने के लिए एक अंग के रूप में राष्ट्रीय पाठ्यपुस्तक मण्डल की स्थापना की गई । इसके पश्चात् मण्डल के क्रिया-कलापों को अधिक गतिशील बनाने के लिए राज्य सरकार ने इसे स्वायत्तशासी संस्था बनाने का निर्णय लिया । तद्नुसार 01 जनवरी, 1974 से मण्डल ने "राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल" के रूप में कार्य आरम्भ किया ।

मण्डल का प्रमुख कार्य कक्षा-1 से 8 तक के विद्यार्थीयों के लिए 'न लाभ न हानि' के सिद्धान्त पर सुरूचिपुर्ण, आकर्षक व उन्नत सामग्री युक्त पाठ्यपुस्तक का लेखन, सम्पादन, प्रकाशन, विक्रय व वितरण करना हैं।

2.8 (द) राजस्थान मदरसा बोर्ड (Rajasthan Madarsa Board) -

राज्य में मदरसा शिक्षा के विकास, आधुनिकीरण एवं उन्नयन हेतु राज्य सरकार को सलाह देने एवं आवश्यक कार्यवाही करने के लिए जनवरी, 2003 में राजस्थान मदरसा बोर्ड का गठन किया गया था । बोर्ड का मुख्य उद्देश्य मदरसा बोर्ड में पंजीकृत मदरसों के छात्रों को दीनी तालीम के साथ-साथ आधुनिक शिक्षा की मुख्य धारा से जोडने हेतु कार्यक्रमों का निर्धारण एव उनका क्रियान्यन करना है । बोर्ड में अध्यक्ष एवं सदस्य सचिव के अतिरिक्त उर्दू अरबी भाषाओं के विद्वान एवं मुस्लिम सम्प्रदाय के सदस्यों को शामिल किया गया है । राज्य सरकार के आदेश दिनांक 23.07.2003 द्वारा राजस्थान मदरसा बोर्ड को मदरसों के उन्नयन हेतु निम्नलिखित मुख्य कार्य आवंटित किये गये हैं-

1 मदरसों का पंजीकरण ।
2 मदरसों में निःशुल्क पाठ्यपुस्तकों का वितरण ।
3 मदरसों में राज्य सरकार द्वारा स्वीकृत राशि से शिक्षा सहयोगियों का चयन, नियुक्ति एवं मानदेय का भुगतान करना ।
4 राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराई गई राशि से शिक्षण सामग्री क्रय कर मदरसों को उपलब्ध करवाना ।
5 मदरसों में नियुक्त शिक्षा सहयोगियों को प्रशिक्षण दिलवाना ।

2.8 (य) पंजीयक, शिक्षा विभागीय परीक्षाऐं

(Registered, Education Department Exams) -

पंजीयक, शिक्षा विभागीय परीक्षाएं, राज्य स्तर का स्वतंत्र कार्यालय है । इस कार्यालय का कार्यालयाध्यक्ष पंजीयक (समकक्ष उपनिदेशक शिक्षा) होता है । इस कार्यालय में जिला शिक्षा अधिकारी एवं वरिष्ठ उप जिला शिक्षा अधिकारी का भी एक-एक पद स्वीकृत है ।

इस कार्यालय की कार्य पद्धति अन्य सामान्य कार्यालयों की कार्यपद्धति से भिन्न होती है । यह कार्यालय बोर्ड/ विश्वविद्यालय की तरह शिक्षा विभागीय परीक्षाओं का आयोजन करता है । यह कार्य समयबद्ध होता है तथा विशिष्ट प्रक्रिया के अधीन समयबद्ध करना होता है । परीक्षाओं के आयोजन, मूल्यांकन एवं परीक्षा परिणामों की घोषणा तक के समस्त कार्य नितान्त गोपनीय एवं समयबद्ध होते हैं ।

इस कार्यालय द्वारा वर्तमान में निम्नांकित परीक्षाओं का आयोजन किया जा रहा है-

1. शिक्षक प्रशिक्षण परीक्षा (प्रथम व द्वितीय वर्ष)

2. संगीत भूषण
3. संगीत प्रभाकर (प्रथम व द्वितीय वर्ष)
4. अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति एवं प्रतिभावान परीक्षा (विशिष्ट शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश हेतु)
5. संस्कृत शिक्षक प्रशिक्षक पूर्व परीक्षा
6. डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय आवासीय विद्यालय में प्रवेश पूर्व चयन परीक्षा
7. राजकीय आवासीय विद्यालय अटरू (बारा) एवं टोंक में प्रवेश पूर्व चयन परीक्षा

वर्तमान में राज्य के समस्त जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानो पर संस्थागत शिक्षक प्रशिक्षण (द्विवर्षीय पाठ्यक्रम) प्रारंभ कर दिया गया है । जहां लगभग 1500 छात्र / छात्राएं अध्ययनरत है ।

2.8 (र) राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान (SIERT) -

राजस्थान राज्य में विद्यालयी शिक्षा के गुणात्मक समुन्नयन के लिए राज्य सरकार द्वारा गठित मेंहरोत्रा समिति की अभिशंसानुसार पूर्व में कार्यरत विभिन्न अभिकरणों को समन्वित कर दिनांक 11 नवम्बर, 1978 को उदयपुर में राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की गई है । यह संस्थान प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा निदेशालय (अब पृथक निदेशालय के रूप में) बीकानेर के शैक्षिक सलाहकार के रूप में भी कार्य करता है । विद्यालयी क्षेत्र में अपनी नीतियां और कार्यक्रमों के निर्धारण तथा क्रियान्वयन में शिक्षा मंत्रालय तथा विभाग को संस्थान, विशेषज्ञ सेवाएं उपलब्ध कराता है। इसका वितीय प्रबंध राजस्थान सरकार द्वारा किया जाता है ।

संस्थान संरचना

विभाग-1 मानविकी एवं समाज विज्ञान	विभाग-2 विज्ञान एवं गणित विज्ञान	विभाग-3 मनोवैज्ञानिक आधार एवं व्या. शिक्षा
अनुभाग 1 मानविकी (अ) भाषा 2 समाज	अनुभाग 1 विज्ञान 2 गणित 3 सामुदायिक विज्ञान केंद्र 4 जनसंख्या शिक्षा 5 कार्यशाला 6 स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा	अनुभाग 1. कार्यानुभव 2. मनोवैज्ञानिक आधार तथा शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन
विभाग-4 शिक्षक शिक्षा	विभाग-5 शैक्षिक आयोजना एवं प्रशासन	विभाग-6 शैक्षिक प्रौद्योगिकी
अनुभाग 1 सेवारत शिक्षक शिक्षा 2. सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण	अनुभाग 1 शैक्षिक आयोजना 2 शैक्षिक प्रशासक प्रशिक्षण 3. सामान्य प्रशासन 4 प्रबोधन 5 कम्प्यूटर	अनुभाग 1 दूरस्थ शिक्षा 2 श्रव्य- दृश्य शिक्षा 3 नई शैक्षिक प्रौद्योगिकी योजना 4 क्लास प्रोजेक्ट

	6 पुस्तकालय 7 सांख्यिकी 8 महिला शिक्षा	
विभाग-7 शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रसार सेवा	विभाग-8 अनौपचारिक एवं वंचित वर्ग शिक्षा	विभाग-9 शिक्षाक्रम एवं मूल्यांकन
अनुभाग 1. शिक्षा अनुसधान 2 प्रसार सेवा 3 प्रकाशन	अनुभाग 1 विकलांग हेतु एकीकृत शिक्षा	अनुभाग 1 शिक्षाक्रम 2 मूल्यांकन 3 पूर्व प्राथमिक शिक्षा
शिक्षाकर्मी परियोजना की एक इकाई संस्थान में कार्यरत है।		

2.8 (ल) जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान

(District Institute of Education & Training) DIET-

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में की गई अभिशंसाओं के आधार पर केन्द्रीय प्रवर्तित योजनान्तर्गत राज्य के 32 जिलों में डाइट की स्थापना की जा चुकी है । डाइट के माध्यम से प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों के सेवारत अध्यापकों को शिक्षण विषय में प्रशिक्षित किया जाता है । यह शिविर 21 दिन का होता है । इनके अतिरिक्त मूल्यांकन, तकनीक, प्रश्न पत्र निर्माण, शिक्षा के सार्वजनीकरण, शाला संगम, विद्यालयी योजना निर्माण, शाला मानचित्रण एवं स्थानीय परिवेशगत सामग्री निर्माण से संबंधित तीन-पांच दिवसीय शिविर भी आयोजित किये जाते हैं । प्रत्येक डाइट पांच दिवसीय विकलांग शिक्षा शिविर भी आयोजित करती है । राज्य में कक्षा 8 की वार्षिक परीक्षा का बोर्ड पैटर्न पर आयोजन का कार्य भी डाइट द्वारा किया जाता है । सभी डाइट द्वारा संस्थागत शिक्षक प्रशिक्षण द्विवर्षीय पाठ्यक्रम प्रारंभ कर दिया गया है ।

डाइट के निम्नलिखित प्रभाग हैं-

1. 1 कार्यानुभव (Work Experience)
2. प्रौढ शिक्षा/अनौपचारिक शिक्षा के लिए जिला संसाधन एकक (District Resource Unit) (DRV)
3. सेवारत कार्यक्रम, क्षेत्रीय अन्त: क्रिया एवं नवाचार समन्वय (Inservice Programme, Field Interaction & Innovative Co-ordination)
4. शिक्षाक्रम सामग्री विकास और मूल्यांकन (Curriculum Material development & Evaluation) (C.M.D.E)
5. योजना एवं प्रबन्धन (Planning & Management)
6. शैक्षिक प्रौद्योगिकी (Educational Technology)

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 Name four autonomous organization which are working under primary education department.
प्राथमिक शिक्षा विभाग के अधीन किन्ही चार स्वायत्त्शासी संस्थाओ के नाम बताइये |

2 Explain any four function of SIERT.
एस.आई.ई.आर.टी. के कोई चार कार्य स्पष्ट किजिए |

2.9 विभिन्न प्रकार के विद्यालय (Different Types of School)

प्रशासनिक संगठन की दृष्टि से विद्यालयों को निम्न रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है -

चित्र संख्या : 2.6

राजकीय विद्यालय (Government School)- ये वे विद्यालय है जहां राज्य सरकार द्वारा निर्धारित नियमों के अन्तर्गत अध्यापकों की नियुक्ति, अध्यापकों की पदोन्नति एवं शिक्षण

कार्य, दैनिक विद्यालयी क्रियाओं का संचालन निश्चित सीमाओं के अन्तर्गत प्रधानाध्यापक द्वारा करवाया जाता है । इसमें जाति, लिंग, भाषा, धर्म, रंग, सम्पति के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाता एवं परीक्षाओं पर भी शिक्षा विभाग का नियंत्रण होता है ।

निजी शिक्षण संस्थाएं (प्राइवेट) और राज्य शिक्षा विभाग से संबंध (Relation between Private educational institutions and State Education department) - शिक्षा राज्य का विषय होने से कोई भी संस्था बिना राज्य या राज्य शिक्षा विभाग की अनुमति के संचालित नहीं की जा सकती । प्रत्येक निजी संस्था को राज्य शिक्षा विभाग द्वारा निश्चित नियमों के अन्तर्गत पंजीकृत होना आवश्यक है । राज्य ऐसी किसी शिक्षण संस्था को, जो वैयक्ति लाभ के लिए अथवा धर्म विशेष के प्रचार के लिए खोली गई है, मान्यता प्रदान नहीं करती । केवल ट्रस्ट द्वारा संचालित निजी शिक्षण संस्था ही पंजीकरण के योग्य होती है ।

प्रत्येक संस्था को पंजीकरण के लिए स्वीकृत पाठ्यक्रम, भवन, शिक्षक तथा आवश्यक संसाधन तथा राज्य शिक्षा संहिता में निर्दिष्ट नियमों के अधीन व्यवस्थापिका होना आवश्यक है ।

प्रत्येक विभाग संस्था को राज्य की शिक्षा नीति, उन शिक्षा विभागीय नियमों का पालन करना आवश्यक होता है, जो संस्थाओं के लिए समय-समय पर बनाए गए हैं । इन नियमों में पाठ्यक्रम, स्टाफ की नियुक्ति, उनका स्थायीकरण, सेवा शर्ते, अवकाश के नियम, भविष्य कोष के नियम आदि आते है, जिन्हें पंजीकृत संस्था को मानना आवश्यक हैं ।

राज्य शिक्षाधिकारी तथा जिला शिक्षाधिकारी या उसका प्रतिनिधि राज्य में अवस्थित किसी भी माध्यमिक स्तर की संस्था का तथा निदेशक या उसका प्रतिनिधि कॉलेज स्तरीय संस्थाओं का निरीक्षण कर सकता है । राज्य शिक्षा नियमों का वित्तीय नियमों की अवहेलना की स्थिति में संस्था की अनुदान राशि रोक सकता है और गम्भीर मामलों में संस्था की मान्यता समाप्त कर सकता है ।

निजी विद्यालय (Private School) - प्रारम्भ में राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964-66) प्रतिवेदन के अनुसार समस्त देश में 33.2 प्रतिशत संस्थाएं निजी क्षेत्र में ही हैं । इसमें पूर्व प्राथमिक स्तर पर 70 प्रतिशत, निम्न प्राथमिक स्तर पर 22.2 प्रतिशत, उच्च प्राथमिक स्तर पर 27.11 प्रतिशत, विशिष्ट शिक्षा 79 प्रतिशत, माध्यमिक स्तर पर 69.2 प्रतिशत, व्यावसायिक शिक्षा स्तर पर 57.4 प्रतिशत है । उच्च शिक्षा स्तर पर 78.8 प्रतिशत संस्थाएं है ।
निजी शिक्षण संस्थाओं को उनके प्रशासन के आधार पर निम्न लिखित वर्गो में विभक्त किया जा सकता है|

1. **धार्मिक संगठनों द्वारा संचालित (Governed by Religious Organizations)** - संविधान के अनुच्छेद 'ख' के अनुसार "नागरिकों के प्रत्येक वर्ग को अपनी भाषा, लिपि, संकृति रखने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है । संविधान के अनुच्छेद “अ” के अनुसार- धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गो को अपनी रूचि की शैक्षणिक संस्थाओं की स्थापना तथा प्रशासन का अधिकार है ।

उपर्युक्त संविधान के उपर्युक्त अनुच्छेदों से स्पष्ट है कि कोई भी धर्म अपने धर्म के अनुरूप शिक्षा देने में स्वतंत्र है अत: देश में लगभग सभी धर्मो के संगठन धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था करते हैं ।

उदाहरण के लिए सेण्ट पॉल, अजमेंर रोमन कैथोलिक डायोसिएशन सोसाइटी (रजिस्टर्ड) के द्वारा संचालित, अल्प संख्यक वर्ग की संस्था है । इस संस्था का शुभारम्भ सेन्ट एन्सेलम में हुआ था ।

2. **सार्वजनिक ट्रस्ट या कोरपोरेशन संगठन द्वारा संचालित विद्यालय (Governed by Cooperative trust/Organizations)** - ये ऐसे विद्यालय है जिनके संसाधन सार्वजनिक होते है और जो समाज और के विकास के लिए कार्य करते है । ये कोई न कोई सामाजिक लक्ष्य को लेकर चलते हैं।
3. **व्यक्ति विशेष द्वारा संचालित विद्यालय (Governed by Individual Person)** - इन विद्यालयो को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है -

   (i) **अनुदान व मान्यता प्राप्त विद्यालय (Granted & Recognized School)** - ये वे विद्यालय है जो सरकार द्वारा दी गई शर्तो को पूरा करते है । सरकारी विद्यालयों के समान ही इनकी कार्यप्रणाली होती है ।

   (ii) **अनुदान रहित मान्यता प्राप्त विद्यालय (Grantless & Recognized School)** - इस प्रकार के विद्यालय वे हैं जो अनेक शर्तो को पूरा करने के कारण अनुदान प्राप्त नहीं कर पाते परन्तु शिक्षा बोर्ड की परीक्षा के लिए मान्यता प्राप्त कर लेते हैं |

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 Draw the flow chart of different types of schools on the basis of administration.
प्रशासन के आधार पर विभिन्न प्रकार के विद्यालय का रेखाचित्र बनाइये |

2 What is the difference between private & government School?
निजी व सरकारी विद्यालयों में क्या अंतर है |

2.10 सारांश (Summary)

शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपलब्ध मानवीय एवं भौतिक स्त्रोतों के प्रभावशाली उपयोग की प्रक्रिया शैक्षिक प्रशासन है । शैक्षिक प्रशासन एक ऐसी प्रक्रिया है जो ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों से प्रभावित होती है । राजस्थान में विद्यालयी शिक्षा प्रशासन शिक्षा सचिवालय एवं शिक्षा निदेशालय के माध्यम से सम्पन्न होता है । राज्य स्तर, संभाग स्तर, जिला स्तर एवं खण्ड स्तर पर विभिन्न अभिकरण कार्य करते हैं । माध्यमिक स्तर पर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेंर, राजस्थान आई.ए.एस.ई. 'सी.टी.ई. बी.एड. एवं शारीरिक शिक्षा आदि संस्थाऐं कार्यरत हैं ।

इसी प्रकार प्राथमिक स्तर पर राजस्थान प्राथमिक शिक्षा परिषद, राजस्थान शिक्षाकर्मी बोर्ड, राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, राजस्थान मदरसा बोर्ड, डायट, राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान आदि संस्थायें कार्यरत हैं । प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के विद्यालयों को प्रशासनिक संगठन की दृष्टि से सरकार द्वारा संचालित एवं निजी क्षेत्रों द्वारा संचालित दो वर्गों में विभक्त किया गया है । निजी क्षेत्रों में संचालित विद्यालयों के अन्तर्गत धार्मिक संगठनों द्वारा संचालित, सार्वजनिक ट्रस्ट द्वारा संचालित एवं व्यक्ति विशेष द्वारा संचालित विद्यालय आते हैं ।

2.11 संदर्भ ग्रंथ पुस्तकें (Bibliography)

1 Aggarwal J.C (1956) School Administration, Arya Book Depot, Karol Bagh, New Delhi-5

2 चौबे सरयू प्रसाद, (1958) जनतन्त्रात्मक विद्यालय संगठन, भारत पब्लिकेशन आगरा ।

3 माथुर एस.एस. (1965) विद्यालय संगठन एवं स्वास्थ्य शिक्षा, रस्तोगी एण्ड कम्पनी मेंरठ ।

4 Mukherji S.N. (1970) Administration, Planning and Finance: Theory & Practices, Acharya Book Depot, Baroda

5 अग्रवाल जे.सी. (1972) विद्यालय प्रशासन, आर्य बुक डिपो, करोल बाग, नई दिल्ली-5

6 Murty S.K. & Lulla D.P. (1976) Essentials of Education Administration Mohinarer Capital Publishers, Sector 1-C, Chandigarh.

7 मलैया विद्यावती के.सी. (1977) शिक्षा प्रशासन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल ।

8 योगेन्द्र जीत भाई (1977)शैक्षिक एवं विद्यालय प्रशासन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा ।

9 Khan Mohd. Sarif (1979) Education Administration, Ashish Publishing House H-12, New Delhi.

10 Verma G.S. Verma (2001-02) Educational Management, International Publishing House Meerut.

11 शर्मा आर.ए. (2001) विद्यालय संगठन तथा शिक्षा प्रकाशन, आर.लाल बुक डिपो, मेंरठ पृष्ठ 350 ।

12 शर्मा आर.ए. (2001) शिक्षा प्रबन्धन आर.लाल बुक डिपो, मेंरठ पृष्ठ 626 ।

13 Vidhya Agarwal & R.P. Bhatnagar (2002) Educational Administration Loyal Book Depot, Meerut.

14 संयुक्त वार्षिक शैक्षिक कार्यक्रम (2005-06), राजस्थान सरकार, प्रारंभिक, माध्यमिक एवं संस्कृत शिक्षा ।

15 प्रगति प्रतिवेदन (2006-07) माध्यमिक शिक्षा विभाग, राजस्थान ।

16 प्रगति प्रतिवेदन (2006-07) प्रारम्भिक शिक्षा विभाग राजस्थान ।

इकाई-3

विद्यालयी शिक्षा पर शैक्षिक दस्तावेज

Educational Documents on school Education

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

3.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

3.2 माध्यमिक शिक्षा आयोग-1952-53 (Secondary Education Commission 1952-53)

3.3 शिक्षा आयोग 1964-66 (Education Commission)

3.4 राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1988 (National Education Policy)

3.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 (National Education Policy)

3.8 आचार्य रामामूर्ति कमेंटी-1989 (Ramamurti Commission)

3.7 कार्यान्वयन कार्यक्रम-1992 (Programme of Action-1992)

3.8 विद्यालयी शिक्षा पर यशपाल समिति प्रतिवेदन-व 1993 (Yashpal Committee on School Education)

3.9 सारांश (Summary)

3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

विद्यालयी शिक्षा नीति शैक्षिक दस्तावेज़ : माध्यमिक शिक्षा आयोग शिक्षा आयोग (1964-66), शिक्षा नीति(1986), राममूर्ति कमेंटी (1989) प्रोग्राम ऑफ एक्शन (1992), विद्यालयी शिक्षा पर यशपाल कमेंटी रिपोर्ट (1993)

Educational documents on School education : secondary Education Commission Education Commission (1964-66), Education Policy (1968), National Policy on Education (1986), Rammurti Committee, Programme of Action (1992), Yashpal Committee report on School Education (1993)

3.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप

- विद्यालयी शिक्षा पर स्वतन्त्रता प्राप्ति से वर्तमान तक हुए महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों व नीतियों का ज्ञान कर सकेंगे ।

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 व राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की प्रमुख विशेषताओं में अंतर कर सकेंगे ।
- विद्यालयी शिक्षा के विस्तार की गुणवत्ता में जो महत्त्वपूर्ण संस्थागत परिवर्तन हुए हैं उनको स्पष्ट कर सकेंगे ।
- माध्यमिक शिक्षा में सुधार के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक शिक्षा में सुधार की महत्ता को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- भारतीय समाज में शिक्षा की वर्तमान स्थिति का विश्लेषण कर सकेंगे ।
- आप शिक्षण करते समय कार्यान्वयन कार्यक्रम तथा यशपाल समिति के सुझावों का उपयोग कर सकेंगे ।
- भविष्य की भारतीय शिक्षा पद्धति में किये जा सकने वाले सुधारों हेतु रचनात्मक सुझाव प्रस्तुत कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान ही हमारे महान नेताओं ने हमारे राष्ट्रीय लक्ष्यों की रूपरेखा तैयार कर ली थी जिसको साकार रूप भारतीय संविधान के रूप में देश के आजाद होने के बाद मिला । संविधान में हमारे आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक लक्ष्यों का उल्लेख है । भारतीय संविधान की प्रस्तावना में भारत को सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक धर्मनिरपेक्ष समाजवादी, गणराज्य बनाने के लिए उसके समक्ष नागरिकों को न्याय, स्वतंत्रता समानता तथा भ्रातृत्व प्रदान किए जाने का उल्लेख है।

ये हमारे राष्ट्रीय लक्ष्य है, इन राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए शिक्षा को एक सशक्त माध्यम माना गया और इस दिशा में प्रयास हेतु 1948 में डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालयी शिक्षा आयोग का गठन का किया गया । विश्वविद्यालयी शिक्षा आयोग ने यह विचार व्यक्त किया कि माध्यमिक शिक्षा के उन्नयन के बिना उच्च शिक्षा का समुचित विकास संभव नहीं है।

3.2 माध्यमिक शिक्षा आयोग (Secondary Education Commission)

सन् 1949 में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद् ने सरकार से आग्रह किया कि वह माध्यमिक शिक्षा के अध्ययन के लिए एक आयोग का गठन करें। सन् 1951 में परिषद ने अपने इस सुझाव को पुन: दोहराया । केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद की इस सिफारिश को स्वीकार करते हुए भारत सरकार ने 23 सितम्बर 1952 को डॉ. मुदालियर की अध्यक्षता में माध्यमिक शिक्षा आयोग का गठन किया । इस आयोग में निम्न सदस्य थे:

अध्यक्ष: डॉ. ए. लक्ष्मण स्वामी मुदालियर कुलपति, मद्रास विश्वविद्यालय

सदस्य -

1. जॉन क्रिस्टी, प्राचार्य, जीसस कॉलेज, ऑक्सफोर्ड ।
2. डॉ. कॅनेथ रस्ट विलियम्स एसोसियेट डायरेक्टर साउदर्न रीजनल एजुकेशन बोर्ड, अटलांटा

3. श्रीमति हंसा मेंहता, कुलपति, बड़ौदा विश्वविद्यालय
4. जे.ए. तारापोरवाला, निदेशक, तकनीकी शिक्षा, बम्बई सरकार
5. डॉ. के.एल. श्रीमाली, प्राचार्य, विद्या भवन टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, उदयपुर
6. एम.टी. व्यास, प्राचार्य, न्यू इरा स्कूल, बम्बई
7. के.जी सैयेदेन, सह सचिव, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

सदस्य सचिव - ए.एन.बसु, सेन्द्रल इंस्टीट्यूट ऑफ एजूकेशन, दिल्ली

सहायक सचिव - डॉ. एस.एम. चारी, एजूकेशन आफिसर, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

आयोग को भारत में माध्यमिक शिक्षा के सभी पक्षों की वर्तमान स्थिति की जांच करने तथा उस पर आख्या देने एवं सम्पूर्ण राष्ट्र में हमारी आवश्यकताओं व संसाधनों के अनुरूप एक सुसंठित व उचित समान माध्यमिक शिक्षा प्रणाली प्रदान करने के लिए निम्न बिन्दुओं के संदर्भ में उपाय सुझाने का कार्य दिया गया ।

आयोग का कार्यक्षेत्र-

1. माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य, संगठन और विषयवस्तु ।
2. इसका प्राथमिक, बेसिक तथा उच्च शिक्षा से सम्बन्ध ।
3. विभिन्न प्रकार के माध्यमिक स्कूलों में परस्पर सम्बन्ध ।
4. अन्य समस्यायें ।

इस विवरण से स्पष्ट है कि इस आयोग के गठन का मुख्य उद्देश्य तत्कालीन माध्यमिक शिक्षा की समस्याओं का अध्ययन करके उनके सम्बन्ध में सुझाव देना था । प्रश्नावली व साक्षात्कारों की सहायता से माध्यमिक शिक्षा की विविध समस्याओं का परिचय पाकर आयोग ने उनका समाधान खोजने का प्रयास किया । आयोग ने 29 अगस्त 1953 को 240 पृष्ठों का अपना प्रतिवेदन भारत सरकार को प्रस्तुत किया । आयोग द्वारा माध्यमिक शिक्षा के सम्बन्ध में दी गई प्रमुख सिफारिशें निम्नवत् थी -

- **माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Secondary Education) -** आयोग ने माध्यमिक शिक्षा की शैक्षिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निम्न उद्देश्य दिए-

(i) लोकतंत्रीय नागरिकता का विकास
(ii) व्यक्तित्व का विकास
(iii) व्यवसायिक दक्षता का उन्नयन
(iv) नेतृत्व के लिए शिक्षा तथा
(v) देश-प्रेम की भावना का विकास

- **माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन (Reorganisation of Secondary Education)** - आयोग ने स्कूल शिक्षा का पुनर्गठन करने का सुझाव दिया । उनके अनुसार प्राथमिक या जूनियर बेसिक शिक्षा 4 वर्ष की हो, बेसिक शिक्षा 3 वर्ष की हो तथा उच्च माध्यमिक शिक्षा 4 वर्ष की हो ।

इस आयोग ने इन्टरमीडिएट समाप्त करने तथा स्कूल शिक्षा व प्रथम उपाधि स्तर पर एक-एक वर्ष बढ़ाने का प्रस्ताव दिया ।

- **बहु उद्देशीय विद्यालय (Multi purpose school)** - व्यवसायिक तथा तकनीकी शिक्षा पर बल देते हुए आयोग ने बहु उद्देश्य स्कूल खोलने का सुझाव दिया जिससे पाठ्यक्रम में विविधता आ सके तथा छात्र अपनी रुचि, क्षमता व आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा प्राप्त कर सके ।
- **कृषि शिक्षा (Agriculture Education)** - आयोग ने सभी राज्यों के द्वारा ग्रामीण विद्यालयों में कृषि शिक्षा प्रदान करने के लिए विशेष प्रावधान करने की सिफारिश की ।
- **तकनीकी शिक्षा (Technical Education)** - आयोग ने तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की बात कही व इन तकनीकी कोर्सों का ढांचा "अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद्" और उसके अधीन कार्य करने वाले निकायों का उपयोग करने के लिए कहा गया ।
- **सह शिक्षा (Co-Education)** - आयोग ने कन्या विद्यालयों तथा सह-शिक्षा स्कूलों में गृह विज्ञान शिक्षा की विशेष सुविधाएँ उपलब्ध कराने का सुझाव दिया ।
- आयोग ने विकलांग बालकों की आवश्यकताओं के अनुरूप सही संख्या में विद्यालय खोलने की सिफारिश की ।
- मुदालियर आयोग ने आवासीय विद्यालय विशेषकर चुने हुए ग्रामीण क्षेत्रों में खोलने की अनुशंसा की ।
- **भाषाओं का अध्ययन** - आयोग ने मुख्यत: तीन भाषाओं के अध्ययन (Three Language Formula) पर बल दिया -

(i) **हिन्दी का स्थान** - आयोग ने हिन्दी का अध्ययन आवश्यक बताया जिससे कुछ समय बाद से केन्द्र और राज्यों के बीच परस्पर आदान-प्रदान की भाषा बनाया जा सके ।

(ii) **अंग्रेजी का स्थान** - अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की स्थिति को सुदृढ़ करने हेतु अंग्रेजी का माध्यमिक स्तर पर लागू रहने देना चाहिए ।

(iii) **संस्कृत का स्थान** - संस्कृत अधिकांश भारतीय भाषाओं की जननी है अत: इसका ज्ञान आवश्यक है । संस्कृत का अध्ययन करके ही भारत के महान ग्रन्थों के ज्ञान का अध्ययन किया जा सकता है इसीलिए इसके अध्ययन को प्रोत्साहन देना आवश्यक है ।

- **माध्यमिक विद्यालयों का पाठ्यक्रम** - पाठ्यक्रम के संबंध में आयोग ने लिखा "पाठ्यक्रम का अर्थ केवल उन सैद्धान्तिक विषयों से नहीं है जो विद्यालय में परम्परागत रूप से पढ़ाए जाते हैं वरन् इसमें अनुभवों को समाहित किया जाना चाहिए जो छात्र विद्यालय, कक्षा-कक्ष, पुस्तकालय प्रयोगशाला आदि से प्राप्त करता है । पाठ्यक्रम में लचीलापन होना चाहिए जिससे वह छात्रों की रूचियों, विभिन्नताओं और आवश्यकताओं के अनुकूल हो सके अत: पाठ्यक्रम में निम्न विषय रखे जाने अपेक्षित है |

(i) **मिडिल या जूनियर स्तर पर** - भाषाएं, सामाजिक अध्ययन, सामान्य विज्ञान, गणित कला और संगीत, शिल्प और शारीरिक शिक्षा ।

(ii) **उच्च माध्यमिक विद्यालयों में विविधीकरण पाठ्यक्रम** - इस स्तर पर आन्तरिक और वैकल्पिक विषय होंगे । आन्तरिक विषयों का अध्ययन सभी छात्रों को करना होगा और वैकल्पिक विषय 7 समूहों में होंगे ।

- केन्द्रीय या आन्तरिक विषयों में भाषा, सामाजिक ज्ञान, गणित, कला, संगीत दस्तकारी और शारीरिक शिक्षा को रखा गया व ऐच्छिक वर्ग में जो अलग-अलग

भाग थे, वे थे - मानविकी, विज्ञान, तकनीकी विषय, वाणिज्यिक, कृषि संबंधी विषय, ललित कला और गृहविज्ञान ।

(iii) **विद्यालयों की पाठ्य पुस्तकें (Text Book)** - आयोग को पाठ्यपुस्तकों में भी अनेक दोष नजर आये अत: पाठ्यपुस्तक समिति का निर्माण किया जिसमें 7 सदस्य रखे गये - हाइकोर्ट का 1 जज, लोक सेवा आयोग का 1 सदस्य, राज्य के किसी विश्वविद्यालय का 1 कुलीपति, राज्य के स्कूलों के प्रधानाचार्य, प्रसिद्ध शिक्षा शारत्री-2, शिक्षा संचालक ।

- **परामर्श व निर्देशन (Guidance and Counselling)** - आयोग ने उच्चतर माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम के विविधीकरण को छात्रों तक पहुंचाने हेतु व सही विषय चयन हेतु विद्यालयों में प्रशिक्षित परामर्शदाताओं तथा जीविकोपार्जन शिक्षकों (Career Masters) की नियुक्ति की अनुशंसा की ।
- **परीक्षा प्रणाली (Examination System)** - आयोग ने परीक्षा प्रणाली में ऐसे सुधारों की सिफारिश की जो विद्यार्थी के सारे शिक्षण काल में उसकी शैक्षिक प्रगति को ध्यान में रखे। इस हेतु 'विद्यालयी अभिलेख' रखा जाय । रटने पर अधिक बल न दिया जाये, परीक्षा को वस्तुनिष्ठ बनाने व ग्रेड प्रणाली प्रारंभ करने की सिफारिश की ।
- **शिक्षक (Teachers)** - आयोग ने यह भी सिफारिश की कि माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की सेवाकालीन परिस्थितियों और वेतनमानों को सुधारा जाये, सम्पूर्ण देश में अध्यापकों के चयन की समान व्यवस्था हो, योग्यता और समान कार्य करने वाले अध्यापकों को समान वेतन दिया जाए । शिक्षकों द्वारा ट्यूशन की प्रथा समाप्त की जाए ।
- **शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम (Teachers Training Programme)** - आयोग ने इस कार्यक्रम में सुधार लाने की बात कहते हुए दो प्रकार की संस्थाओं की सिफारिश की । एक उनके लिए जिन्हें विद्यालयी शिक्षा की समाप्ति का प्रमाण-पत्र मिल चुका हो, दूसरे स्नातकों के लिए जिससे वे क्रमश: प्राथमिक और माध्यमिक विषयों में शिक्षक के रूप में कार्य करें । एक महत्वपूर्ण सिफारिश यह भी थी कि स्नातक शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों को विश्वविद्यालय से सम्बद्ध किया जाए ।
- **संगठन तथा प्रशासन (Organizations and Administration)** - आयोग ने प्रशासन संबंधी समस्याओं के समाधान हेतु केन्द्र और राज्य द्वारा एक समिति के निर्माण का सुझाव दिया । प्रत्येक राज्य में 25 सदस्यीय 'माध्यमिक शिक्षा परिषद् का गठन किया जाये।' इस परिषद की उपसमिति द्वारा परीक्षाओं की व्यवस्था की जानी चाहिये । 'केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड' की तरह 'राज्य सलाहकार बोर्ड' की स्थापना की जाये ।
- **वित्त व्यवस्था (Finance)** - माध्यमिक शिक्षा के सुधार के लिए केन्द्र और राज्यों में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किये जाये । व्यवसायिक और प्राविधिक शिक्षा की उन्नति के लिए 'व्यवसायिक शिक्षा परिषद्' का गठन किया जाए । व्यवसायिक तथा प्राविधिक शिक्षा की उन्नति के लिए 'औद्योगिक शिक्षा कर' लगाया जाए । शिक्षा संस्थानों से सम्बन्धित सम्पत्तियों को आयकर से मुक्त रखा जाये । केन्द्र और राज्य सरकार स्कूलों के खेलकूद के मैदान, कृषि फार्म, इमारतें आदि मुफ्त में दें ।

इस प्रकार आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के दोषों को दूर करने और इसके स्तर को उन्नत बनाने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किये । जिनमें से कुछ को स्वीकार भी किया गया । माध्यमिक शिक्षा आयोग स्वतन्त्र भारत के शैक्षिक वृत्त में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. सन् 1952-53 के माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षा के किस क्षेत्र पर बल दिया।
   Which field of education is emphasised on Secondary education commission.
2. मुदालियर कमीशन की ऐसी दो सिफारिशों का उल्लेख कीजिए, जिनका सीधा प्रभाव प्रशिक्षण के सुधारने पर पड़ता है ।
   Point out any two recommendations given by Mudaliar commission which directly affects improvement of Teacher Education

3.3 शिक्षा आयोग (1964-66) (Education Commission)

स्वतन्त्रता के उपरान्त शिक्षा का अत्यन्त तीव्रगति से विकास हुआ लेकिन संविधान में शिक्षा के प्रति किये संकल्पों का पूरा नहीं किया जा सका जिससे समाज के विभिन्न भागों में असंतोष प्रकट किया जाने लगा तथा स्वतन्त्र भारत में शिक्षा के समस्त पक्षों की विस्तारपूर्वक जांच करने के लिए एक आयोग के गठन की मांग की जाने लगी । तब शिक्षा के सभी स्तरों पर सुधार एवं प्रगति हेतु समग्र रूप से विचार करने हेतु 14 जुलाई 1964 को "शिक्षा आयोग" का गठन डॉ. दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में किया गया ।

शिक्षा आयोग ने शिक्षा के राष्ट्र निर्माण में महती भूमिका का उल्लेख अपने प्रतिवेदन की पहली पंक्तियों में इस प्रकार किया है - "भारत के भाग्य का निर्माण इस समय उसकी कक्षाओं में हो रहा है । हमारा विश्वास है कि यह कोई चमत्कारोक्ति नहीं है । विज्ञान और शिक्षण विज्ञान पर आधारित इस दुनिया में, शिक्षा ही लोगों की खुशहाली, कल्याण और सुरक्षा के स्तर का निर्धारण करती है । हमारे स्कूलों और कॉलेजों से निकलने वाले विद्यार्थीयों की योग्यता और संख्या पर ही राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के उस महत्वपूर्ण कार्य की सफलता निर्भर करेगी जिसका प्रमुख लक्ष्य हमारे रहन-सहन के स्तर को ऊंचा उठाना है । इस बात को देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि - राष्ट्रीय विकास के समग्र कार्यक्रम शिक्षा की भूमिका का हम फिर से मूल्यांकन करें। इससे यह स्पष्ट होता है कि आज 'शिक्षा' का सम्प्रत्यय बदला है और आज 'शिक्षा राष्ट्रीय विकास' के लिये प्रमुख है, विशेषत: भारत जैसे विकासशील राष्ट्रों में । यही कारण है कि कोठारी आयोग के प्रतिवेदन का उपशीर्षक "शिक्षा और राष्ट्रीय विकास" रखा गया ।

इस आयोग के सदस्य इस प्रकार से थे -

अध्यक्ष - प्रो. दौलत सिंह कोठारी, अध्यक्ष, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली।

सदस्य-

1. श्री ए.आर. दावोद पूर्व कार्यकारी निदेशक, माध्यमिक शिक्षा प्रसार कार्यक्रम निदेशालय नई दिल्ली
2. मि. एच.एल. एल्विन निदेशक, इंस्टीट्यूट ऑफ एजूकेशन, लंदन वि.वि., लंदन
3. श्री आर.ए. गोपालस्वामी, निदेशक, प्रयुक्त जनशक्ति अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. प्रो. सदातोशी इहारा, स्कूल ऑफ साइंस एंड इजीनियरिंग, वासेदा विश्वविद्यालय, टोक्यो
5. डॉ. वी.एस.झा, पूर्व निदेशक, कामन वैल्थ एजूकेशन लियाजन, इकाई, लंदन
6. श्री पी.एन. कृपाल, शिक्षा सलाहकार तथा सचिव शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली
7. प्रो. एम.वी. माथुर, प्रोफेसर, अर्थशास्त्र व जनप्रशासन, राजस्थान वि.वि., जयपुर
8. डॉ. बी.पी.पाल निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
9. कु.एस.पानन्दीकर, अध्यक्ष, शिक्षा शास्त्र, कर्नाटक विश्वविद्यालय, धडवाड़
10. डॉ. के.जी सैयेदन, निदेशक, एशियन इंस्टीट्यूट ऑफ एजूकेशनल प्लानिंग एंड एडमिनिस्ट्रेशन, नई दिल्ली
11. प्रो. रोजर रिवेले, निदेशक, सेन्टर फॉर पॉपुलेशन स्टडीस, हावर्ड स्कूल ऑफ पब्लिक हैल्थ, कैम्बिज, यू.एस.ए.
12. डॉ. टी.सेन, कुलपति, जादवपुर विश्वविद्यालय, कलकत्ता
13. प्रो. एस.ए. शुवस्की, प्रोफेसर, भौतिक शास्त्र, मास्को विश्वविद्यालय, मास्को
14. श्री एम.जीन टामस, इंस्पेक्टर जनरल, शिक्षा, फ्रांस

सदस्य सचिव - श्री जे.पी. नायक, अध्यक्ष, शैक्षिक नियोजन, प्रशासन व वित्त विभाग, गोखले इंस्टीट्यूट ऑफ पालिटिक्स एंड इकोनोमिक्स, पूना

सह सचिव - मि. जे.एफ. मॅक्डूगल, उपनिदेशक, डिपार्टमेंन्ट ऑफ स्कूल एंड हायर एजूकेशन, यूनेस्को, पेरिस

आयोग ने अपने कार्य को पूरा करने के लिये 12 मुख्य कार्यदल और 7 सहायक कार्यदल बनाये । इन कार्यदलों ने लगभग 100 दिन तक राष्ट्र के विभिन्न राज्यों के स्कूलों, कालेजों तथा विश्वविद्यालयों का भ्रमण किया तथा लगभग 9000 व्यक्तियों से साक्षातकार किया । आयोग ने 2400 से अधिक उत्तरों का विश्लेषण भी किया तथा इन सभी सूचनाओं के आधार पर 673 पृष्ठों का प्रतिवेदन तैयार किया जिसे 20 जून 1966 को भारत सरकार को समर्पित किया गया । आयोग द्वारा दिये गये महत्वपूर्ण सुझाव निम्नवत थे-

(i) **शिक्षा के राष्ट्रीय उद्देश्य (National Objectives of Education)** - आयोग ने समग्र राष्ट्रीय विकास के लिए निम्न उद्देश्य निर्धारित किये-

- शिक्षा अपना सम्बन्ध उत्पादकता से जोड़कर राष्ट्रीय आय में वृद्धि करे ।
- शिक्षा सामाजिक और राष्ट्रीय एकीकरण करे ।
- शिक्षा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान करे ।

– शिक्षा सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को बढ़ावा देकर चरित्र निर्माण करने का प्रयत्न करे

- **शिक्षा की संरचना (Structure of Education)-** आयोग ने शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए शैक्षिक ढांचे में उर्ध्वगामी परिवर्तन करने का सुझाव दिया । आयोग ने एक से तीन वर्ष तक की प्राथमिक शिक्षा, दस वर्ष की सामान्य शिक्षा, दो वर्ष की उच्चतर माध्यमिक शिक्षा तथा प्रथम उपाधि के लिए द्विवर्षीय उच्च शिक्षा रखने का सुझाव दिया तथा आयोग ने सम्पूर्ण देश के ढांचे में एकरूपता लाने का भी सुझाव दिया व कक्षा में प्रवेश की अवस्था सामान्यत: 6 वर्ष रखने को कहा गया ।

- **शैक्षिक समानता (Education Equality)** - समानता व स्वतन्त्रता प्रजातन्त्र के मूलभूत आधार है । अत: भारत जैसे प्रजातान्त्रिक राष्ट्र में सभी नागरिकों को अपनी योग्यताओं का विकास करने के लिए शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होना चाहिए । सरकार के इस दायित्व को दृष्टिगत रखते हुए आयोग ने कहा कि जाति व धर्म के भेदभाव को समाप्त किया जाये, पुस्तक बैंक की व्यवस्था की जाए, छात्रवृत्तियों की संख्या बढ़ाई जाये, आदिवासी बालकों के लिए आवासीय विद्यालयों व तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाएं । नारी शिक्षा को गति देने हेतु शिक्षा का वृहद कार्यक्रम बनाया जाए, विकलांगों की शिक्षा का समुचित प्रबन्ध किया जाये, तथा प्रादेशिक स्तर पर असंतुलन दूर करने के लिए एक सोद्देश्य व सतत प्रयास किया जाये ।

- **नामांकन तथा मानव शक्ति (Enrollment and man-power)** - राष्ट्रीय पुनर्निमाण के कार्यक्रम में मानव शक्ति के विकास को महत्व देते हुए आयोग ने प्रत्येक बालक के लिए कम से कम 7 वर्ष की निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने, योग्य व इच्छुक छात्र-छात्राओं को माध्यमिक व उच्च शिक्षा की सुविधाएं उपलब्ध कराने, तकनीकी व व्यवसायिक शिक्षा के विकास पर बल देने तथा सामूहिक निरक्षरता अभियान प्रारभ करने जैसे सुझाव दिये ।

- **अध्यापकों की स्थिति (Status of Teacher)** - आयोग ने शिक्षकों की आर्थिक, सामाजिक व व्यवसायिक स्थिति सुधारने की सिफारिश की । इसके लिए अध्यापकों के वेतनमानों में संशोधन करने, योग्यता पदोन्नति देने, अध्यापक कल्याण कार्यक्रम प्रारम्भ करने, अध्यापिकाओं की नियुक्ति को प्रोत्साहित करने व राष्ट्रीय पुरस्कार योजना चालू करने के सुझाव दिये । तथा शिक्षक शिक्षा विशेष रूप से सेवाकालीन शिक्षा पर समुचित बल दिये जाने का सुझाव दिया ।

- **स्कूली शिक्षा का विस्तार (Expansion of School Education)** - पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लिए आयोग ने सुझाव दिये कि जिला स्तर पर पूर्व प्राथमिक शिक्षा विकास केन्द्र खोले जाय । महिला अध्यापिकाओं को वरीयता दी जाये ।

प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क व अनिवार्य करने की व्यवस्था की जाये, अपव्यय व अवरोधन को कम किया जाये । अधिक पाठशालायें खोली जाये, तथा मजदूर बालकों के लिए विशेष कक्षायें चलाई जाये ।

माध्यमिक शिक्षा में सुधार हेतु आयोग ने माध्यमिक कक्षा में स्वचयन विधि से तथा उच्च माध्यमिक कक्षाओं में बाह्मय परीक्षा विधि से प्रवेश दिये जाने का सुझाव दिया व व्यवसायिक शिक्षा को भी विकसित किया जाय ।

- **भाषाओं का विकास (Development of Languages)** - भारतीय भाषाओं एवं साहित्य के क्रियाशील विकास हेतु आयोग ने निम्न सुझाव दिये -
  - प्रादेशिक भाषाओं का विकास किया जाये । उन्हें विश्वविद्यालय स्तर तक शिक्षा का माध्यम बनाया जाये ।
  - त्रिभाषा सूत्र को माध्यमिक स्तर पर लागू किया जाये ।
  - सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का विकास किया जाये ।
  - सांस्कृतिक एकता की दृष्टि से संस्कृत का विकास किया जाये ।
  - विज्ञान, शिल्प विज्ञान एवं संसार में ज्ञान प्रसार की दृष्टि से अंग्रेजी तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं के अध्ययन पर बल दिया जाये ।
- **कार्यानुभव और राष्ट्रीय सेवा (Work Experience and National Service)** - कार्यानुभव और राष्ट्रीय सेवा को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाना चाहिये व इस कार्यक्रमों में स्वयं सहायता । चरित्र निर्माण और सामाजिक प्रतिबद्धता का भाव विकसित करने पर बल दिया जाना चाहिए ।
- कृषि तथा उद्योग के लिए शिक्षा के विकास पर विशेष बल दिया जाये तथा प्रत्येक राज्य में कम से कम एक कृषि विश्वविद्यालय खोलने की अनुशंसा आयोग ने की ।
- **विज्ञान शिक्षा तथा अनुसंधान (Science Education and Research)** -राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की प्रगति हेतु विज्ञान एवं शोध को प्राथमिकता दी जाय व विज्ञान और गणित को विद्यालय स्तर के आने तक दी जाने वाली सामान्य शिक्षा के अभिन्न अंग निर्धारित कर दिया जाये ।
- **उच्च शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Higher Education)** - आयोग अनुसार विश्वविद्यालय का कार्य, नवीन ज्ञान की खोज करना, विभिन्न व्यवसायों में निपुण नागरिक तैयार करना, समानता व सामाजिक न्याय को बढ़ाना तथा समाज में वांछित मूल्यों का विकास करना है । इस हेतु ऐसे विश्वविद्यालयों की व्यवस्था की जाये जिनका स्तर विश्व के सर्वश्रेष्ठ विश्वविद्यालयों के समकक्ष हो ।
- **उच्च शिक्षा में प्रवेश व कार्यक्रम (Admission and Programme of Higher Education)** - आयोग ने रोजगार के अवसरों तथा मानव शक्ति की आवश्यकताओं के अनुरूप ही उच्च शिक्षा के विस्तार का सुझाव दिया । इसके लिए उपयुक्त प्रवेश विधि का विकास विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा केन्द्रीय परीक्षण संस्थान की स्थापना करने का प्रस्ताव भी आयोग ने दिया ।
- **विश्वविद्यालयों की व्यवस्था (Governance of Universities)** - आयोग ने विश्वविद्यालयों को पूर्ण स्वायत्तता प्रदान करते, आर्थिक सुविधायें उपलब्ध कराने का, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विश्वविद्यालय की स्वायत्ता बनाये रखने व उच्च शिक्षा के उचित विकास के लिए नीति निर्धारण करने सम्बन्धी सिफारिश की ।
- **प्रौढ़ शिक्षा (Adult Education)** - निरक्षरता को दूर करने के लिए प्रौढ़ शिक्षा की सुविधायें उपलब्ध कराने की सिफारिश की । आयोग ने सतत शिक्षा व पत्राचार शिक्षा के आयोजन का भी सुझाव द्रिया । प्रौढ़ शिक्षा हेतु राष्ट्रीय शिक्षा परिषद् की स्थापना का सुझाव भी रखा ।

- **शैक्षिक योजना तथा प्रशासन (Educational planning and Administration)** आयोग ने राज्य व स्थानीय स्तर के शैक्षिक प्रशासन में सुधार करने का सुझाव दिया ।
- **शैक्षिक अर्थव्यवस्था (Educational Finance)** - आयोग ने शिक्षा के आर्थिक स्त्रोतों व शैक्षिक व्यय पर भी पर्याप्त सुझाव दिये । इस प्रकार शिक्षा आयोग ने शिक्षा के सभी क्षेत्रों के विभिन्न पक्षों पर विस्तृत विचार किया है तथा राष्ट्रीय विकास के लिए शैक्षिक वातावरण तैयार करने के लिए अनेक सुझाव रखे है । इस कारण शिक्षा के क्षेत्र में इस प्रतिवेदन को शिक्षा की गीता भी कहा जाता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. भारतीय शिक्षा के विकास में 1964 की शिक्षा नीति एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है क्यों?
   "In the history of Education 1964's Education Policy is an important mile stone" why?
2. शिक्षा आयोग ने किन-किन प्रमुख बिन्दुओं पर विचार प्रस्तुत किये?
   On which important apects 'Education Commission' has expressed its views?

3.4 राष्ट्रीय शिक्षा नीति -1968 (National Education Policy-1968)

भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के सम्बन्ध में ब्रिटिश शासन के समय से ही विवाद चल रहा था । स्वतन्त्रता के बाद शिक्षा को राष्ट्रीय प्रगति व विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन स्वीकार किया गया तथा भारत में शिक्षा के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया । शैक्षिक समस्याओं का समाधान खोजने के लिए अनेक समितियों तथा आयोगों का गठन किया गया । लेकिन सन् 1950 में भारतीय संविधान के लागू हो जाने पर कुछ सीमित क्षेत्रों को छोड़कर शिक्षा को राज्य के उत्तरदायित्व में स्वीकार किया गया, शायद इसी कारण कोई राष्ट्रव्यापी शिक्षा नीति नहीं बन पायी । तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत शिक्षा व्यवस्था के सविस्तार पुर्ननिरीक्षण की आवश्यकता महसूस की गई । तब सन् 1964 में भारत सरकार ने डॉ. दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में एक शिक्षा आयोग गठित किया जो शिक्षा के राष्ट्रीय स्वरूप तथा सभी स्तरों पर शिक्षा के विकास के लिए सामान्य सिद्धांतों व नीतियों पर सरकार को सलाह दे सके । इस आयोग ने सरकार से राष्ट्रीय शिक्षा अधिनियम पारित करने की संभावना पर भी विचार करने के लिए कहा । आयोग की सिफारिशों पर पर्याप्त चर्चा हुई तथा विद्वानों / शिक्षाविदों तथा राजनैतिक नेताओं ने सहमति होने पर 1968 में भारत सरकार ने स्वीकार किया कि देश के आर्थिक व सांस्कृतिक विकास, राष्ट्रीय एकता तथा समाजवादी समाज के निर्माण में लक्ष्य की प्राप्ति के लिए शिक्षा आयोग द्वारा सुझाये गये प्रस्तावों के अनुरूप शिक्षा का पुननिर्माण आवश्यक है । इस हेतु भारत सरकार ने सन् 1968 में शिक्षा की राष्ट्रीय नीति का निर्धारण करके इसकी विधिवत

घोषणा की । यह राष्ट्रीय नीति शिक्षा आयोग (1964-66) द्वारा सुझाये बिन्दुओं के अनुरूप निर्धारित की गई इस नीति में निम्न सिद्धांतों को सम्मिलित किया गया ।

- **निशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा (Free and Compulsory Education)** - संविधान की धारा 45 के अनुरूप 14 वर्ष की आयु के सभी बालकों के लिए निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने के लिए श्रमपूर्वक प्रयत्न किया जाना चाहिये । स्कूलों में अपव्यय व अवरोधन को कम करने के लिए कार्यक्रम विकसित करने चाहिये ।

- **अध्यापकों का स्तर, वेतन तथा शिक्षा (Status Emoluments and Education of Teachers)** - शिक्षा की गुणवत्ता तथा राष्ट्रीय विकास में योगदान करने वाले कारकों में अध्यापक सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। उसके चरित्र व गुणों, शैक्षिक योग्यताओं तथा व्यवसायिक अर्हताओं पर ही शिक्षा की सफलता निर्भर है। अत: उनके वेतन भत्ते एवं अन्य सेवा शर्तें की योग्यताओं और उत्तरदायित्वों को देखते हुए पर्याप्त व संतोषजनक होने चाहिये।

अध्यापकों को स्वतन्त्र अध्ययन करने व अनुसंधान संबंधी लेख प्रकाशित करने, भाषण देने की शैक्षिक स्वतन्त्रता प्रदान करनी चाहिये।

भाषाओं का विकास (Development of Languages) -

(अ) क्षेत्रीय भाषायें - शैक्षिक तथा सांस्कृतिक विकास के लिये एक आवश्यक कदम भारतीय भाषाओं तथा साहित्य का उत्साह के साथ विकास करना है । प्राथमिक व माध्यमिक स्तर पर क्षेत्रीय भाषाओं को तो पहले से ही प्रयुक्त किया जा रहा है अब इनका प्रयोग विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा के माध्यम के रूप में किये जाने हेतु कदम उठाने चाहिये ।

(ब) त्रिभाषा सूत्र - राज्य सरकारों को माध्यमिक स्तर पर त्रिभाषा सूत्र अपनाना व लागू करना चाहिये । त्रिभाषा सूत्र में, हिन्दी भाषी राज्यों में हिन्दी व अंग्रेजी के अलावा किसी एक आधुनिक भारतीय भाषा जिसमें किसी दक्षिण भाषा को वरीयता दी जाये हिन्दी भाषी राज्यों में क्षेत्रीय भाषा व अंग्रेजी के साथ हिन्दी को रखना चाहिये ।

(स) हिन्दी - हिन्दी के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए यथासंभव प्रयास किये जाने चाहिये ।

(द) संस्कृत - भारतीय भाषाओं के विकास में संस्कृत के विशेष महत्व तथा राष्ट्र की सांस्कृतिक एकता में उसके योगदान को दृष्टि में रखते हुए संस्कृत शिक्षण को नवीन विधियों की खोज को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये ।

(य) अन्तर्राष्ट्रीय भाषाएं - अंग्रेजी तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं के अध्ययन पर विशेष बल दिया जाना चाहिये ।

- **प्रतिभा की खोज (Identification of Talent)** - प्रवीणता का विकास करने के लिए यह आवश्यक है कि विभिन्न क्षेत्रों में जो प्रतिभाएं है उनकी छोटी उम्र में ही खोज निकाला जाये तथा उनके विकास के हर संभव प्रयास किये जाने चाहिये ।

- **शिक्षा के अवसरों की समानता (Equalization of Educational opportunities)** - शैक्षिक अवसरों की समानता हेतु अनवरत प्रयास किये जायें ।

- प्रादेशिक असंतुलन को समाप्त किया जाना चाहिये तथा ग्रामीण व अन्य पिछड़े क्षेत्रों में शिक्षा की अच्छी सुविधाएं उपलब्ध कराई जानी चाहिये ।
- सामाजिक व राष्ट्रीय एकता को बढ़ाने के लिए समान स्कूल पद्धति (Common School System) को अपनाया जाय । पब्लिक स्कूलों व अन्य सभी विद्यालयों में छात्रों को योग्यता के आधार पर प्रवेश दिया जाना चाहिये । निशुल्क छात्रवृत्ति की भी व्यवस्था की जाय । छात्राओं की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाय ।
- पिछड़े वर्गों तथा विशेष रूप से आदिम जातियों में शिक्षा का विकास करने के लिए तीव्र प्रयास किये जायें ।
- शारीरिक व मानसिक रूपसे विकलांग बालकों के लिए शैक्षिक सुविधाओं का विकास किया जाये ।

- **कार्यानुभव तथा राष्ट्रीय सेवा (Work Experience and National Service)** परस्पर सेवा तथा सहयोग के उपयुक्त कार्यक्रमों के द्वारा स्कूल तथा समुदाय को एक दूसरे के निकट लाना चाहिए अत: सामुदायिक सेवा तथा राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के सार्थक व चुनौतीपूर्ण कार्यक्रमों के भाग सहित कार्यानुभव तथा राष्ट्रीय सेवा, शिक्षा के अभिन्न अंग होने चाहिए । इन कार्यक्रमों में स्वावलम्बन, चरित्र निर्माण व सामाजिक संकल्प की भावना के विकास पर जोर दिया जाना चाहिए ।
- **विज्ञान शिक्षा तथा अनुसंधान (Science Education and Research)** - राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास की गति को बढाने के लिए विज्ञान की शिक्षा तथा अनुसंधान को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। विद्यालयी व्यवस्था के अन्त तक विज्ञान व गणित सामान्य शिक्षा के अभिन्न अंग होने चाहिए।
- **कृषि और उद्योग हेतु शिक्षा के विकास पर बल (Education for Agriculture and Industry) -**
  - कृषि की शिक्षा के विकास हेतु प्रत्येक राज्य में एक कृषि विश्वविद्यालय होना चाहिए ।
  - तकनीकी शिक्षा के अभिन्न अंग के रूप में उद्योगों से सम्बन्धी व्यवहारिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये ।
- **पुस्तकों का उत्पादन (Production of Books)** - पुस्तकों की गुणवत्ता में सुधार किया जाना चाहिये पुस्तकों का मूल्य इतना कम होना चाहिये कि साधारण हैसियत का छात्र भी इन्हें खरीद सके । स्वायत्त पुस्तक निगम की स्थापना की संभावना पर विचार किया जाना चाहिये ।
- **माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education)** - माध्यमिक शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक प्रमुख साधन है । अत: माध्यमिक शिक्षा की सुविधाएं तेजी से उन क्षेत्रों तथा वर्गों को दी जानी चाहिये जो अब तक इससे वंचित थे ।
  - इस स्तर पर तकनीकी तथा व्यवसायिक शिक्षा की सुविधायें को भी बढ़ाने की आवश्यकता है ।

- **विश्वविद्यालयी शिक्षा (University Education)** - विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों में प्रवेश लेने वाले छात्रों की संख्या वहां की प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों व अन्य सुविधाओं तथा कर्मचारियों की संख्या को देखते हुए निश्चित की जानी चाहिए ।
  - नये विश्वविद्यालयों की स्थापना में सावधानी बरतनी चाहिए ।
  - विश्वविद्यालयों में अनुसंधान को अधिक सहायता देने की आवश्यकता है ।
- **परीक्षायें (Examination)** - परीक्षा सुधार का मुख्य लक्ष्य परीक्षाओं की विश्वसनीयता व वैधता में सुधार करना तथा मूल्यांकन को एक ऐसी सतत प्रक्रिया बनाना होना चाहिये जिससे छात्रों को अपने उपलब्धि स्तर को उन्नत करने में सहायता मिले ।
- **अंशकालिक और पत्राचार शिक्षा (Part time Education and Correspondence courses)** - विश्वविद्यालय स्तर पर अंशकालिक शिक्षा तथा पत्राचार पाठ्यक्रमों का बड़े पैमाने पर विकास किया जाय । इन पाठ्यक्रमों की शिक्षा को पूर्णकालीन शिक्षा के समकक्ष स्तर दिया जाना चाहिये । यह सुविधा माध्यमिक छात्रों, अध्यापकों तथा कृषि औद्योगिक व अन्य कर्मियों के लिए भी विकसित की जानी चाहिए ।
- **साक्षरता तथा प्रौढ़ शिक्षा का विस्तार** - न केवल प्रजातान्त्रिक संस्थाओं की कार्यवाही में सहभागिता को बढ़ाने तथा उत्पादन कार्यक्रमतों विशेषकर कृषि के क्षेत्र में गति देने के लिए वरन् राष्ट्रीय विकास की गति को तीव्र करने के लिए लोक निरक्षरता को समाप्त करना आवश्यक है । शिक्षकों एवं छात्रों को साक्षरता अभियानों के आयोजन में सम्मिलित किया जाना चाहिए ।
- **खेल-कूद (Games and Sports)** - आम छात्रों व खेलकूद में प्रवीण छात्रों की शारीरिक योग्यता व खेल कुशलता में वृद्धि के उद्देश्य के लिए खेलकूद का विकास बड़े पैमाने पर किया जाना चाहिए ।
- **अल्पसंख्यकों की शिक्षा (Education of Minorities)** - अल्पसंख्यकों के अधिकारों को बनाये रखने के लिए व उनकी शैक्षिक अभिरूचि को बढ़ाने के लिए यथा संभव प्रयत्न करने चाहिए ।
- **शैक्षिक ढांचा (Educational Structure)** - राष्ट्र के प्रत्येक भाग में शैक्षिक ढांचे का एक समान होना आवश्यक है । इसके लिए 10+2+3 के ढांचे को अपनाना चाहिए, जिसमें दो वर्ष का उच्च माध्यमिक स्तर स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप स्कूलों या महाविद्यालयों का दोनों में हो सकता है ।
- **शिक्षा में निवेश (Investment in Education)** - शिक्षा में निवेश धीरे-धीरे बढ़ाया जाना चाहिए व जितना शीघ्र हो सके राष्ट्रीय आय के 6% व्यय स्तर पर पहुंच जाये ।
- **पुनरावलोकन (Review)** - भारत सरकार प्रत्येक पांच वर्ष के पश्चात प्रगति का पुनरावलोकन करेगी और भावी विकास के लिए निर्देश प्रदान करेगी ।

इस प्रकार 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली को एक स्पष्ट दिशा प्रदान करने का प्रयास किया गया ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. सन् 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भाषा संबंधी किन-किन मुख्य पक्षों पर सुझाव प्रस्तुत किये गये ।
   Point out the main provision of 1968 NEP for the development of languages?
2. सन् 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षकों के बारे में क्या सिफारिशें की?
   What recommendations were made for teachers in 1968's National Education Policy?

3.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति -1986 (National Educational Policy)

जनवरी सन् 1985 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने घोषणा की थी कि राष्ट्र के लिए एक शिक्षा नीति तैयार की जायेगी । नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की निर्माण प्रक्रिया के दौरान भारत सरकार ने अगस्त 1985 में एक दस्तावेज शिक्षा की चुनौती: नीति सम्बन्धी परिप्रेक्ष्य जारी किया । इस दस्तावेज को जारी करने का उद्देश्य शिक्षा नीति के सम्बन्ध में देशव्यापी विचार विमर्श को प्रोत्साहित करना था । आशा के अनुरूप इस दस्तावेज पर सम्पूर्ण भारत में पर्याप्त विचार-विमर्श हुआ जिसमें शिक्षाविदों, शिक्षा प्रशासकों, शिक्षकों, साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों, अभिभावकों एवं विद्यार्थीयों ने भाग लिया । विभिन्न क्षेत्रों, वर्गों एवं व्यक्तियों से प्राप्त सुझावों का अध्ययन व विश्लेषण करने के पश्चात् राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप मई 1986 में जारी कर दिया गया । मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने इस नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति को सुचारू रूप से लागू करने के लिए कार्यान्वयन कार्यक्रम (Programme Of Action-POA) भी तैयार किया ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 को कुल बारह खण्डों में बांटा गया जिनमें कुल 157 बिन्दुओं के अन्तर्गत शिक्षा नीति को लिपिबद्ध किया गया ।

खण्ड एक - प्रस्तावना (Introduction) -

सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार शिक्षा का महत्वपूर्ण कार्य गतिहीन समाज को ऐसा स्पंदनशील बनाना है जो प्रतिबद्ध हो, विकासशील हो और परिवर्तन शील हो । देश आर्थिक एवं तकनीकी विकास के ऐसे स्तर पर पहुंच चुका है जबकि उपलब्ध संसाधनों से अधिकतम लाभ उठाने तथा परिवर्तन का लाभ सभी वर्गों तक पहुंचाने हेतु विशेष प्रयास किये जाने चाहिए । इस लक्ष्य तक पहुंचने का एक मार्ग शिक्षा है । इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए नई शिक्षा नीति का निर्माण किया गया है ।

- भारतीय शिक्षा आज दोराहे पर खड़ी है । न तो सामान्य रेखीय वृद्धि और न ही सुधार की वर्तमान गति तथा प्रकृति, परिरिथतियों की आवश्यकता पूर्ति कर सकते हैं । भारतीय विचारधारा में मानव को एक रचनात्मक परिसम्पत्ति व एक बहुमूल्य राष्ट्रीय संसाधन

माना गया है जिसे कोमलता से पोषित करने की आवश्यकता है । इस गतिशील प्रक्रिया में शिक्षा को एक उत्प्रेरक के रूप में नियोजित करने की आवश्यकता है ।

- साथ ही समाज में विद्यमान विभिन्न प्रकार की सामाजिक आवश्यकताएं व नवीन चुनौतियों ने यह आवश्यक कर दिया है कि राष्ट्र के लिए एक नई शिक्षा नीति का निर्माण किया जाये व उसकी क्रियान्विति हो ।

खण्ड दो - शिक्षा का सार तथा भूमिका (The Essence and Role of Education) -

भारत के राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में शिक्षा सभी के लिये हैं । व्यक्ति के भौतिक तथा आध्यात्मिक या ये कहें कि सर्वागीण विकास का यह आधार है । शिक्षा संवेदनशीलता तथा प्रत्यक्षीकरण को परिमार्जित करती है जो राष्ट्रीय एकता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा मस्तिष्क व आत्मा की स्वतन्त्रता को बढ़ाते हैं । इस प्रकार से शिक्षा संविधान में स्वीकृत समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता तथा प्रजातान्त्रिकता के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक है । अर्थव्यवस्था के विभिन्न स्तरों के लिए, शिक्षा मानव शक्ति को विकसित करती है ।

खण्ड तीन - शिक्षा की राष्ट्रीय प्रणाली (National Systems of Education) -

शिक्षा की राष्ट्रीय प्रणाली में निम्नलिखित सिद्धान्तों का उल्लेख किया गया -

एक निश्चित स्तर तक सभी छात्रों को जाति, सम्प्रदाय, लिंग अथवा भौगोलिक सीमाओं के भेदभाव के बिना एक उत्तम शिक्षा प्रणाली सुलभ हो सके ।

- एक समान शिक्षा संरचना पूरे राष्ट्र में संचालित हो । इस हेतु 10+2+3 संरचना को राष्ट्र के सभी भागों में स्वीकार किया जा चुका है । प्रथम दस वर्षीय को विभाजित करने के लिए 5 वर्ष की प्राथमिक शिक्षा, दो वर्ष की उच्च प्राथमिक शिक्षा वाली प्रारम्भिक शिक्षा प्रणाली के प्रयास किये जायेंगे जिसका अनुगमन दो वर्ष की हाई स्कूल शिक्षा करेगी ।
- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली 'राष्ट्रीय शिक्षा क्रम' एक ढांचे पर आधारित होगी । जिसमें सामान्य कोर के अतिरिक्त भारतीय स्वतन्त्रता आंदोलन का इतिहास व संवैधानिक दायित्वों को स्वीकार किया गया है ।
    - शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर अधिगम का एक न्यूनतम स्तर तय किया जायेगा ।
    - उच्च शिक्षा तथा तकनीकी शिक्षा में अन्तर्क्षेत्रीय गतिशीलता के प्रयास किये जायेंगे ।
- प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वजनीकरण, प्रौढ साक्षरता, वैज्ञानिक व तकनीकी अनुसंधान के कार्यक्रमों को संसाधन, सहायता प्रदान करने का उत्तरदायित्व सम्पूर्ण राष्ट्र का होगा।
- शिक्षा प्रक्रिया का एक पोषक उद्देश्य जीवनपर्यन्त शिक्षा है । युवकों, गृहणियों, कृषकों, औद्योगिक मजदूरो तथा प्रोफेशनलों को अपनी शिक्षा जारी रखने के अवसर प्रदान किये जायेंगे । मुक्त एवं दूरस्थ अधिगम पर जोर दिया जाएगा ।
- यद्यपि राज्यों के शिक्षा सम्बन्धी उत्तरदायित्व अपरिवर्तित रहेंगे, परंतु शिक्षा के राष्ट्रीय व एकीकृत स्वरूप को सुदृढ करने, गुणवत्ता व मानकों को बनाये रखने, विकास के लिए जरूरी मानवशक्ति को जानने व नियन्त्रित करने, अनुसंधान व उच्च अध्ययन की आवश्यकताओं की देखरेख करने, शिक्षा संस्कृति व मानव संसाधन विकास के

अन्तर्राष्ट्रीय पक्षों को देखने, तथा सम्पूर्ण राष्ट्र में शिक्षा के सभी स्तरों पर श्रेष्ठता के उन्नयन करने में केन्द्र सरकार अधिक उत्तरदायित्व को स्वीकार करेगा ।

खण्ड चार - समानता के लिए शिक्षा (Education for Equality) -

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के चौथे भाग में यह संकल्प किया गया कि "असमानताओं को समाप्त करने का प्रयास किया जायेगा तथा अब तक वंचित वर्गो यथा अनुसूचित जाति, जनजाति, महिलायें, अल्पसंख्यक वर्ग, विकलांग वर्ग व ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले व्यक्तियों की विशिष्ट आवश्यकताओं पर ध्यान देकर शैक्षिक अवसरों का समानीकरण किया जायेगा-

- **महिला शिक्षा** - महिलाओं की स्थिति में आधारभूत परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा का उपयोग किया जायेगा । महिला निरक्षरता उन्मूलन तथा प्राथमिक शिक्षा में पहुंच व निरन्तरता सुनिश्चित की जायेगी, व्यवसायिक, तकनीकी प्रशिक्षण पर बल दिया जाये ।
- **अनुसूचित जाति व जनजाति की शिक्षा** - अनुसूचित जातियों के शैक्षिक विकास द्वारा सवर्ण जनसमुदाय के साथ समता उत्पन्न की जायेगी । इस हेतु अनौपचारिक शिक्षा, छात्रवृत्ति योजना, निदानात्मक शिक्षण, अनुसूचित जातियों के अध्यापकों की नियुक्ति, छात्रावास सुविधा, अनुसूचित जाति क्षेत्रों में स्कूलों, बाल-बाडियों तथा प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों की स्थापना आदि उपाय किये जाये ।

अनुसूचित जनजातियों को अन्य जातियों के समान लाने के लिए जनजाति क्षेत्रों में प्राथमिक स्कूल खोलने को प्राथमिकता देने, पाठ्यक्रम व जनजाति भाषाओं में अनुदेशन सामग्री विकसित करने, आवासीय विद्यालय खोलने व प्रोत्साहन योजनायें बनाने जैसे उपायों को यथाशीघ्र लागू किया जायेगा ।

- **अल्पसंख्यकों की शिक्षा** - शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े अल्पसंख्यक वर्गों की शिक्षा पर अधिक ध्यान दिया जायेगा ।
- **विकलांग शिक्षा** - शारीरिक एवं मानसिक रूप से विकलांगों को सामान्य समुदाय का सहभागी बनाने के उद्देश्य से इनके लिए व्यवसायिक प्रशिक्षण, जिला स्तर पर छात्रावास सुविधा की व्यवस्था की जायेगी तथा अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम को इस तरह से पुर्नगठित किया जायेगा कि अध्यापक अपंग छात्रों की समस्याओं का समाधान कर सकें ।
- **प्रौढ़ शिक्षा** - 15 से 35 वर्ष के व्यक्तियों की निरक्षरता को समाप्त करने में छात्रों, अध्यापकों, स्वैच्छिक संगठनों और नियोक्ताओं का सहयोग लिया जायेगा । प्रौढ़ों की आवश्यकता और रूचि पर आधारित व्यवसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जायेंगे ।
- **अन्य पिछड़े वर्गो की शिक्षा** - शैक्षिक दृष्टि से पिछडे अन्य वर्गों के सभी लोगों को विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में, उपयुक्त प्रोत्साहन दिया जायेगा ।

खण्ड पांच - विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का पुनर्गठन (Reorganisation of Education at different stages) -

पूर्व बाल्यकाल में देखभाल व शिक्षा - पोषण, स्वास्थ्य तथा सामाजिक, मानसिक, शारीरिक, नैतिक व संवेगात्मक विकास की दृष्टि से पूर्व बाल्यावस्था परिचय तथा शिक्षा को उच्च प्राथमिकता दी जायेगी तथा इसे यथा संभव एकीकृत बाल सेवा कार्यक्रमों से जोड़ा जायेगा ।

प्रारम्भिक शिक्षा - प्रारंभिक शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई । दो बातों पर विशेष बल दिया गया (1) 14 वर्ष तक के बच्चों का शत प्रतिशत नामांकन व ठहराव । (2) शिक्षा की गुणवत्ता में पर्याप्त सुधार पर जोर दिया जाएगा-

- प्राथमिक स्कूलों में आवश्यक सुविधाओं का प्रावधान 'आपरेशन ब्लेक बोर्ड' के माध्यम से किया जायेगा ।
- स्कूल छोड़ जाने वाले बच्चों, कार्यरत बालकों की समस्या का समाधान करने को उच्चतम प्राथमिकता दी जायेगी ।

माध्यमिक शिक्षा - माध्यमिक शिक्षा की पहुंच को बढाया जायेगा जिससे वर्तमान में छूट गये क्षेत्र भी माध्यमिक शिक्षा की पहुंच में आ सके तथा माध्यमिक शिक्षा के बालकों के लिए व्यवसायिक पाठ्यक्रम अपनाया जायेगा । विशिष्ट योग्यता व अभिवृत्ति वाले बालकों के लिए गति निर्धारक या नवोदय विद्यालय देश के विभिन्न भागों में खोले जायेंगे । जो कि ग्रामीण क्षेत्र के प्रतिभाशाली बालकों को निःशुल्क शिक्षा, भोजन व अन्य सुविधाओं की व्यवस्था करेंगे ।

शिक्षा का व्यवसायीकरण - शैक्षिक पुनर्गठन के अन्तर्गत व्यवसायीकरण शिक्षा के व्यवस्थित, योजनाबद्ध तथा दृढता से लागू होने वाले कार्यक्रम की आवश्यकता है ।

- व्यवसायिक पाठ्यक्रम या संस्थाओं की स्थापना करने का उत्तरदायित्व सरकार व गैर सरकारी क्षेत्रों के नियोक्ताओं का होगा ।

नवसाक्षरों, प्राथमिक शिक्षा प्राप्त युवकों, विद्यालय छोड़ देने वालों, कार्यरत व्यक्तियों तथा बेरोजगारों को व्यवसायिक शिक्षा के अनौपचारिक, गत्यात्मक तथा आवश्यकताओं पर आधारित कार्यक्रम भी उपलब्ध कराये जायेंगे। 1990 तक उच्च माध्यमिक स्तर के दस प्रतिशत तथा सन् 1995 तक पच्चीस प्रतिशत को व्यवसायिक पाठ्यक्रम देने का प्रस्ताव है ।

उच्च शिक्षा - वर्तमान उच्च शिक्षा संस्थाओं के एकीकरण तथा सुविधाओं के विस्तार पर जोर दिया जायेगा । उच्च शिक्षा व्यवस्था को ह्यास से बचाने के लिए शीघ्र उपाय किये जायेंगे ।

पाठ्यक्रमों तथा कार्यक्रमों को पुन: रचित करना होगा । भाषायी योग्यता पर विशेष ध्यान दिया जायेगा ।

संस्थाओं में न्यूनतम सुविधाओं का प्रावधान किया जायेगा तथा प्रवेश को क्षमता के अनुसार नियन्त्रित किया जायेगा । विश्वविद्यालयों में अनुसंधान को अधिक सहायता दी जाएगी तथा उच्च गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के उपाय किए जाएंगे ।

- **खुला विश्वविद्यालय व दूरस्थ अधिगम** - उच्च शिक्षा के अवसरों को बढ़ाने तथा शिक्षा को जनतांत्रिक करने के साधन के रूप में खुला विश्वविद्यालय प्रणाली प्रारंभ की गई है । इस शक्तिशाली साधन का विकास सावधानी से करना होगा ।
- **उपाधियों का नौकरियों से विलगन** - चुने हुए क्षेत्रों में रोजगार को डिग्री से विलग करने की शुरुआत की जायेगी । विलगता उन सेवाओं में लागू की जायेगी जिनके लिए विश्वविद्यालय उपाधि योग्यता की आवश्यकता नहीं है । विलगता के साथ ही राष्ट्रीय परीक्षण सेवा जैसी उपयुक्त तन्त्र की स्थापना विभिन्न रोजगारों के लिए अभ्यर्थियों की उपयुक्तता जानने के लिए की जायेगी ।
- **ग्रामीण विश्वविद्यालय** - ग्रामीण विश्वविद्यालय का नया पैटर्न विकसित किया जायेगा । गांधीजी की बेसिक शिक्षा की संस्थाओं तथा कार्यक्रमों को सहायता दी जायेगी ।

खण्ड छः - तकनीकी तथा प्रबंध शिक्षा (Technical and Management Education) -

तकनीकी तथा प्रबंध शिक्षा के पुनर्गठन के 20वी शताब्दी तक के अंत तक की अनुमानित परिस्थितियों, विशेषतया अर्थव्यवस्था, सामाजिक वातावरण, उत्पादन व प्रबंध प्रक्रियाओं में होने वाले संभावित परिवर्तन, ज्ञान की तीव्र गति से बढ़ोत्तरी तथा विज्ञान तकनीकी की विराट उन्नति को ध्यान में रखना ।

- कम्प्यूटर के उपयोग व महत्ता को मद्देनजर रखते हुए कम्प्यूटरों का प्रारंभिक ज्ञान तथा प्रशिक्षण प्रोफेशनल शिक्षा का अंग होगा ।
- महिलाओं, आर्थिक व सामाजिक रूप से कमजोर वर्गो तथा विकलांगों के लाभ के लिए तकनीकी शिक्षा के उपयुक्त औपचारिक तथा अनौपचारिक कार्यक्रम बनाये जायेंगे ।

खण्ड सात - शिक्षा प्रणाली का क्रियान्वयन (Making the System Work)-

सर्वोच्च बौद्धिकता, लक्ष्य की गंभीरता तथा नवाचार व सृजनशीलता के लिए आवश्यक स्वतन्त्रता के वातावरण में शिक्षा का प्रबंध करने की आवश्यकता है ।

अध्यापकों को शिक्षण तथा छात्रों को अधिगम करना चाहिए । अध्यापकों का अधिक उत्तरदायित्व, सुधरी छात्र सेवाएँ तथा व्यवहार के स्वीकृत मानकों पर जोर, संस्थाओं में अधिक सुविधाएं तथा राष्ट्रीय तथा राज्य के मानदण्डों के अनुरूप संस्थाओं का मूल्यांकन करने की व्यवस्था करनी होगी ।

खण्ड आठ - शिक्षा की विषयवस्तु एवं प्रक्रिया का अभिनवीकरण (Reorienting the content and process of Education) -

- **मूल्य शिक्षा** - शिक्षा के पाठ्यक्रम तथा प्रक्रियाओं में सांस्कृतिक पाठ्यवस्तु को सम्मिलित किया जायेगा । ऐसे सार्वभौमिक तथा सनातन मूल्यों को बढावा दिया जाएगा जिससे व्यक्तियों में एकता और समानता की भावना विकसित हो सके तथा अन्धविश्वास, भाग्यवादिता और धर्मोन्मतता का उन्मूलन हो सके ।
- **पुस्तकों की गुणवत्ता** - पुस्तकों तक सभी वर्गो के छात्रों की पहुंच आसानी से हो सके, इसके लिए प्रयास किये जायेंगे ।

पुस्तकों की गुणवत्ता सुधारने, अध्ययन आदतों को बढ़ाने, तथा रचनात्मक लेखन को प्रोत्साहित करने के उपाय किये जायेंगे । लेखकों के हितों का भी ध्यान रखा जाएगा ।

वर्तमान पुस्तकालयों के सुधार तथा नयों की स्थापना के लिए राष्ट्रव्यापी आन्दोलन चलाया जायेगा।

- **गणित एवं विज्ञान शिक्षण** - गणित को सोचने, विचारने, विश्लेषण करने तथा तार्किक तालमेंल के प्रशिक्षण का साधन समझना चाहिए। इसे न केवल एक विषय के रूप में वरन् विश्लेषण तथा तर्क से युक्त किसी भी विषय के सहगामी के रूप में स्वीकार करना चाहिए।

विज्ञान शिक्षा को इस तरह से सुदृढ़ करना होगा कि यह बालकों में जिज्ञासा, सृजनशीलता जैसी योग्यताओं तथा मूल्यों को विकसित करें। विज्ञान शिक्षा कार्यक्रम ऐसा हो जिससे छात्र समस्या समाधान तथा निर्णय लेने के कौशल को सीखने योग्य बन सके ।

- **क्रीडा और शारीरिक शिक्षा** - खेलकूद तथा शारीरिक शिक्षा अधिगम प्रक्रिया के अभिन्न अंग है तथा इनको मूल्यांकन में शामिल किया जाना चाहिए ।

- **मूल्यांकन प्रक्रिया और परीक्षा सुधार** - छात्रों के विकास का मूल्यांकन करने की वैध एवं विश्वसनीय विधि सुनिश्चित करने तथा शिक्षण अधिगम में सुधार का साधन बनाने के लिए परीक्षा प्रणाली में परिवर्तन करने होंगे । इसके लिए संयोग व विषय निष्ठता की अत्यधिकता को समाप्त करने, स्मरण पर कम बल देने, सतत व व्यापक मूल्यांकन लागू करने, मूल्यांकन प्रक्रिया का प्रभावशाली ढंग से उपयोग करने, परीक्षा संचालन में सुधार करने, माध्यमिक स्तर के सत्र प्रणाली शुरू करने, तथा अंको के स्थान पर ग्रेड का प्रयोग करने जैसे उपाय लागू करने होंगे ।

खण्ड नौ - अध्यापक (Teacher) -

- शिक्षक का स्तर सामाजिक-सांस्कृतिक लोकाचार को प्रतिबिम्बित करता है अत: शिक्षकों के लिए एक आचार संहिता का निर्माण किया जाऐगा, जिससे उनकी छवि उभरे । शिक्षकों की चयन विधि को योग्यता के आधार पर पुनर्गठित किया जाएगा । शिक्षक मूल्यांकन प्रणाली खुली सहभागिता युक्त होगी । वेतन, पदोन्नति, सेवा शर्तो के अवसरों में वृद्धि के साथ-साथ उत्तरदायित्वों के आदेशों के अनुसार होगी ।
- जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किये जायेंगे जो प्रारम्भिक विद्यालयों के अध्यापकों और अनौपचारिक एवं प्रौढ़ शिक्षा के कार्यरत कर्मचारियों के लिए पूर्व सेवा एवं सेवाकालीन पाठ्यक्रम आयोजित करेंगे ।
- राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् को आवश्यक संसाधनों एवं क्षमताओं से युक्त किया जायेगा जिससे वह शिक्षक शिक्षा संस्थानों को प्राधिकृत कर सके और उन्हें मार्गदर्शन दे सके ।

खण्ड दस - शिक्षा का प्रबंधन (Management of Education) -

- शिक्षा का विकेन्द्रीकरण करके शैक्षिक संस्थाओं में स्वायत्तता की भावना का विकास किया जायेगा जिला एवं स्थानीय स्तर पर उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के प्रबंध के लिए जिला शिक्षा परिषदों की स्थापना की जायेगी । स्थानीय समुदायों को विद्यालय सुधार कार्यक्रमों की भूमिका प्रदान की जायेगी ।
- राज्य स्तर पर राज्य सरकारें केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद (सी.ए.बी.ई.) के अनुरूप राज्य शिक्षा सलाहकार परिषद की स्थापना करेगी ।
- राष्ट्रीय स्तर पर केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद के भौतिक विकास का पुनरावलोकन करने, प्रणाली में सुधार करने आदि के लिए केन्द्रीय भूमिका का निर्वाह किया जायेगा ।

खण्ड ग्यारह - संसाधन व पुनरावलोकन (Resources and Review) -

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति में संसाधन हेतु यह प्रावधान किये गये कि दान, उपहार, शुल्क आदि की सहायता से संसाधनों को अधिकतम संभव बढ़ाया जायेगा । अनुसंधान तथा तकनीकी व वैज्ञानिक जनशक्ति के विकास में लगी हुई संस्थाएं, अपने उपभोक्ता के प्रतिष्ठानो पर कर लगाकर, संसाधन जुटा सकती है ।
- शिक्षा को राष्ट्रीय विकास एवं संघर्ष के लिए निवेश का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र माना जायेगा । आठवीं पंचवर्षीय योजना से शिक्षा निवेश को एकरूप ढंग से राष्ट्रीय आय के 6 प्रतिशत से अधिक करने को सुनिश्चित किया जायेगा ।

नई नीति के विभिन्न प्रावधानों के क्रियान्वयन की प्रत्येक पांच वर्ष के बाद समीक्षा की जानी चाहिए । क्रियान्वयन में हुई प्रगति तथा समय-समय पर सामने वाली प्रवृत्ति को जानने के लिए अल्प अन्तराल पर मूल्यांकन भी किया जायेगा ।

खण्ड बारह-भविष्य (The Future) -

भारत में शिक्षा के भावी स्वरूप की परिशुद्धता की परख अत्यन्त जटिल है फिर भी अपनी परम्पराओं को देखते हुए हम अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में अवश्य सफल होंगे । शिक्षा बहुमुखी भूमिका के निर्वाह से मानव संसाधन विकास के राष्ट्रव्यापी प्रयास को अधिक तीव्र बनाए जाने की आवश्यकता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. नवोदय विद्यालयों की अवधारणा क्या है? स्पष्ट कीजिये ।
   What is the concept of Navodaya Vidyalaya? Explain it.
2. 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति', 1986 की प्रमुख चुनौतियां स्पष्ट कीजिए ।
   Explain the main challenges of 'National Education Policy' of 1986.

3.6 प्रबुद्ध एवं मानवीय समाज की ओर : आचार्य रामामूर्ति कमेंटी-1989 (Towards an Enlightened and Humane Society)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) का शिक्षाविदों के व्यापक आधार पर निरूपण किया गया जिसमें समाज के सभी वर्गो ने सक्रिय योगदान दिया । इस नीति के क्रियान्वयन की कार्य योजना केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड गठित 'क्रियान्वयन समिति' ने अगस्त 1986 में तैयार की । इस शिक्षा नीति में यह प्रावधान किया कि प्रत्येक पांच वर्ष के कार्यकाल के दौरान इसकी समीक्षा की जाएगी । किन्तु निर्धारित समय से पूर्व ही राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार ने 7 मई 1990 को आचार्य रामामूर्ति की अध्यक्षता में समीक्षा समिति नियुक्त करने की घोषणा कर दी । इस समिति में आचार्य रामामूर्ति की अध्यक्षता में एक सत्रह सदस्यीय समीक्षा समिति का गठन किया । इस समिति में निम्न सदस्य थे -

अध्यक्ष - आचार्य रामामूर्ति

सदस्य -

1. प्रो.सी.एन.राव
2. डॉ. सुखदेव सिंह
3. डॉ. एम. सतप्पा
4. डॉ. आबैद सिद्दीकी
5. डॉ. भास्कर राय चौधरी
6. प्रो. उषा मेंहता
7. श्री एम.जी. भाटवाडेकर
8. प्रो. सच्चिदानन्द मूर्ति

9. डॉ. अनिल सद्गोपाल
10. फायद टी.वी कुनुकल
11. प्रो. मृणाल गिरि
12. डॉ. विद्यानिवास मिश्र
13. डॉ. एस.जेड. कासिम
14. श्री वेद व्यास
15. श्री मनुभाई पंचोली

सदस्य सचिव - श्री एस. गोपालन

इस समीक्षा समिति के विचारार्थ विषय निम्न थे -

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 1966 तथा इसके कार्यान्वयन की समीक्षा करना ।
2. नीति के संशोधन के सम्बन्ध में विचार रखना ।
3. संशोधित नीति के समयबद्ध कार्यान्वयन के लिये आवश्यक कार्यवाही सुझाना ।

आचार्य राममूर्ति समिति ने उसे सौंपे गये विभिन्न विषयों पर विचार करने के लिए निम्न छह उपसमितियों का गठन किया

1. पहुंच, समता तथा सर्वीकरण ।
2. शिक्षा और काम का अधिकार ।
3. शिक्षा की कोटि और मानदंड ।
4. राष्ट्रीय एकता, मूल्यशिक्षा और चरित्र निर्माण ।
5. संसाधन और प्रबन्ध ।
6. ग्राम शिक्षा ।

मुख्य समिति तथा उपसमितियों की बैठकों, शिक्षा विशेषज्ञों से परामर्श, नागरिकों के विचारों की समीक्षा एवं क्षेत्र अध्ययन के आधार पर समिति ने अपनी रिपोर्ट 26 दिसम्बर 1990 को प्रस्तुत की । "प्रबुद्ध और मानवीय समाज की ओर" शीर्षक से प्रस्तुत इस रिपोर्ट में निम्न समस्याओं पर ध्यान दिया गया -

1. सभी बालकों के लिए न्यूनतम गुणवत्ता वाली शिक्षा की व्यवस्था करना ।
2. निरक्षरता की समाप्ति करना ।
3. विचार संकीर्णता एवं पूर्वाग्रहों के विरोध में संघर्ष ।
4. समानता और सामाजिक न्याय ।
5. शिक्षा को कार्य तथा रोजगारोन्मुखी बनाना ।

आचार्य राममूर्ति समिति के द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रतिवेदन में मुख्य पाठ को निम्नांकित सोलह अध्यायों में बांटा गया है-

- कार्यविधि और प्रक्रिया
- दृष्टिकोण शिक्षा की भूमिका, उद्देश्य एवं मूल्य
- समता, सामाजिक न्याय और शिक्षा
- भाग क : शिक्षा और नारी समानता
- भाग ख : अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गो के लिए शिक्षा
- भाग ग : विकलांगो के लिए शिक्षा

- भाग घ : सार्वजनिक स्कूल प्रणाली
- भाग ड : नवोदय विद्यालय
- शिशु देखभाल और शिक्षा
- प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण
- प्रौढ़ और अनुवर्ती शिक्षा
- शिक्षा और काम का अधिकार
- उच्च शिक्षा
- तकनीकी और प्रबन्ध शिक्षा
- शिक्षा में भाषाओं का स्थान
- शिक्षक और छात्र
- विकेन्द्रीकरण और सहभागी प्रबंध
- शिक्षा की विषयवस्तु और प्रक्रिया शिक्षा के लिए संसाधन
- उपसंहार

इन अध्यायों में दिये गये सुझाव इस प्रकार थे -

शिक्षा की भूमिका, उद्देश्य एवं मूल्य (Role, Objective and Values of Education) - शिक्षा के उद्देश्य समायानुसार परिवर्तित होते रहते हैं किन्तु महात्मा गांधी का सूत्र वाक्य - 'शिक्षा का उद्देश्य अहिंसक एवं शोषण रहित सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्था की स्थापना करना है । "आज भी प्रासंगिक है ।

- शिक्षा को व्यक्ति की सूचनापरक तकनीकी ज्ञान का दृढ़ आधार प्रदान करना, छात्रों को विभिन्न प्रक्रियाओं व स्थितियों में डालकर कौशल प्राप्ति के अवसर प्रदान करने चाहिए, मूल्यों के संवर्धन का वातावरण प्रदान करना चाहिए ।
- शिक्षा एक बहुआयामी प्रक्रिया है । इसका उद्देश्य व्यक्ति के साथ-साथ राष्ट्रीय उद्देश्य तथा लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए छात्र की सहायता करना होना चाहिए ।
- शिक्षा विकास के साधन के रूप में सच्ची मुक्ति का अनुभव, मुक्त होने की प्रक्रिया होनी चाहिए ।

शिक्षा तथा नारी समानता (Education and Women Equality) - महिला निरक्षरता की अधिकदर उच्च शिक्षा में लड़कियों का कम प्रतिनिधित्व होने तथा महिला अध्यापक कम अनुपात में होने जैसी समस्याओं को दूर करने हेतु निम्न सुझाव दिये - लड़कियों के लिए शिक्षा की सुलभता निश्चित करने के लिए बाल्यावस्था में आरंभिक देखभाल व शिक्षा की व्यापक व प्रभावी सेवाएं उपलब्ध कराने व उनके आस-पास स्कूल की सुविधा उपलब्ध कराने के प्रयास किये जाने चाहिए ।

- संचार माध्यमों को राष्ट्रीय शिक्षा नीति में निरूपित लिंग सम्बधी समानता तथा महिलाओं के अधिकारों को प्रोत्साहित करना चाहिए ।
- महिलाओं के लिए व्यवसायिक प्रशिक्षण की योजना बनाई जाए ।
- लिंग आधारित पूर्वाग्रहों को शिक्षा व शिक्षण में दूर करना चाहिए ।
- विश्वविद्यालय स्तरीय पाठ्यक्रमों में महिलाओं के आयामों को जोड़ना चाहिए ।

- शैक्षिक व्यवस्था क्रम में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाने के लिए महिलाओं की भर्ती, सेवा प्रक्रिया, मूल्यांकन के मापदण्ड पदोन्नति, दिशा निर्देश आदि के लिए विशेष प्रावधान किये जाने चाहिए ।

अनुसूचित जाति, जनजाति व शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गो की शिक्षा (Education of SC, ST and Educationally Backward Classes) - अनुसूचित जाति व जनजातियों तथा अन्य पिछडे वर्गो की साक्षरता दरों, इनके नामांकन आदि का विश्लेषण कर समीक्षा समिति ने निम्न सिफारिशें की -

- विभिन्न राज्यों में क्रियान्वित योजनाओं में वर्तमान स्थिति की जांच की जाये ।
- ऐसी बस्तियों में विद्यालयी खोले जायें जहाँ अभी तक विद्यालय नहीं है ।
- बच्चों में सभी प्रकार की प्रतिभा तथा योग्यताओं का विकास करने के लिए विशेष कार्यक्रम आयोजित किये जायें ।
- अल्पसंख्यकों के द्वारा चलाये जा रहे शैक्षिक संस्थानों को मान्यता प्रदान करने तथा इनकी गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार को एक स्थायी मशीनरी स्थापित करनी चाहिए ।

विकलांगो की शिक्षा (Education of Handicappeds) - शारीरिक एवं मानसिक रूप से विकलांग बच्चों को शिक्षा देने के दौरान आने वाली समस्याओं तथा उनकी विशिष्ट विविध आवश्यकताओं पर विचार करने के लिए समिति ने निम्न सिफारिशें की -

- विकलांग बच्चों के लिए शैक्षिक तन्त्र लोचदार होना चाहिए । ऐसे बच्चों के लिए विशेष विद्यालयी तथा सामान्य विद्यालयों में विशेष कक्षाओं की व्यवस्था होनी चाहिए । औपचारिक, अनौपचारिक, खुला विद्यालय, होम डे स्कूल, व्यवसायिक केन्द्र आदि विभिन्न विकल्प होने चाहिए ।
- मानसिक रूप से मन्द बच्चों के लिए विशेष प्रकार की पाठ्यचर्या विकसित की जानी चाहिए ।
- सेवापूर्ण शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम में विकलांगों की शिक्षा को पाठ्यक्रम का अंग बनाना चाहिए ।

सार्वजनिक स्कूल प्रणाली (Common School System) - शिक्षा के क्षेत्र में समानता तथा सामाजिक न्याय लाने के कार्य में सार्वजनिक स्कूल प्रणाली को पहला कदम मानते हुए राममूर्ति समिति ने निम्न सुझाव दिये--

- प्राथमिक शिक्षा के लिए पर्याप्त धन की व्यवस्था की जानी चाहिए ।
- पिछड़े इलाकों, आदिवासी क्षेत्रों, पर्वतीय इलाकों, रेगिस्तानी इलाकों आदि में विद्यालयी तन्त्र में सुधार करने के लिए विशेष आवंटनों का प्रावधान करना चाहिए ।
- सार्वजनिक स्कूल प्रणाली को दस वर्ष की अवधि में चरणबद्ध ढग से कार्यान्दित किया जाना चाहिए ।
- प्रारंभिक स्तर पर बालकों के प्रवेश के लिए चयन प्रक्रिया, ट्यूशन फीस, आदि व्यवस्थाओं को समाप्त करने के लिए कानून का निर्माण करना चाहिए ।

नवोदय प्रणाली (Navodaya Vidyalayas) - नवोदय विद्यालय के सम्प्रत्यय पर पक्ष विपक्ष के संबंध में किये गये तर्कों पर विचार करके समिति ने निम्न उपाय सुझाये -

- भविष्य में नवोदय विद्यालय खोलने की आवश्यकता नहीं है । वर्तमान 261 नवोदय विद्यालयों का पुनर्गठन किया जाये तथा 1992-93 के अन्त में योजना की समीक्षा की जाये ।
- वर्तमान 261 नवोदय विद्यालयों को राज्यों को हस्तान्तरित कर दिया जाये तथा वे उन्हें आवासीय केन्द्रों के रूप में चलाये ।
- नवोदय विद्यालय योजना को एक व्यापक प्रतिभा विकास तथा गति निर्धारक विद्यालय कार्यक्रम में परिवर्तन कर दिया जाय ।

शिशु देखभाल तथा शिक्षा (Early Childhood Care and Education) - 0-6 आयु वर्ग के बच्चों के सर्वागीण विकास की आवश्यकता स्वीकार करते हुए समितिने निम्न सुझाव दिये -

- संतुलित विकास हेतु शिशु देखभाल और शिक्षा बालक का जन्मसिद्ध अधिकार है । अत: 14 वर्ष तक के बालकों को निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का संवैधानिक अधिकार दिया जाना चाहिए ।
- शिशु देखभाल तथा शिक्षा कार्यक्रम को शिक्षा के सभी क्षेत्रों में उचित स्थान मिलना चाहिए ।
- शिशु देखभाल तथा शिक्षा के लिए अध्यापक प्रशिक्षण का पूरा दायित्व केन्द्र तथा राज्यों के शिक्षा विभागों का होगा ।
- राष्ट्रीय स्तर पर बाल रक्षा सेवाओं के लिए एक केन्द्रीय निधि की स्थापना की जानी चाहिए ।

प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वजनीकरण (Universalization of Elementary Education)- भारत में शिक्षा के सार्वभौमिकरण हेतु समिति ने निम्न सुझाव दिये -

- राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के साक्षरता-कार्यक्रमों में सभी का योगदान आवश्यक है ।
- साक्षरता कार्यक्रमों को निर्धनता उन्मूलन, राष्ट्रीय एकता, परिवार नियोजन, महिला समानता शिक्षा के सार्वजनीकरण आदि राष्ट्रीय लक्ष्यों से जोड़ा जाये ।
- विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता के सुधार के लिये शिक्षक, समुदाय तथा सामाजिक पर्यावरण जैसे कारकों की भूमिका पर भी बल देना चाहिए ।
- ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड को प्रारम्भिक शिक्षा की एक प्रमुख योजना का रूप दिया जाना चाहिए ।
- प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण की प्रगति का आकलन करने के लिए यह आवश्यक होगा कि प्रवेशांकन व विद्यालय में बने रहने के साथ-साथ कक्षा में उपरिथत व अधिगम उपलब्धि के आंकडे संकलित किये जाये ।

प्रौढ़ तथा अनुवर्ती शिक्षा (Adult and Follow Up Education) - राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के अन्तर्गत संचालित प्रौढ़ साक्षरता के विकास हेतु समिति ने निम्न सुझाव प्रस्तुत किये -

- प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रमों को स्वास्थ्य पोषण, आवास तथा रोजगार सम्बन्धी आवश्यकताओं के संदर्भ में रखकर नियोजित करने चाहिए ।
- शिक्षा विभाग को ग्रामीण विकास विभाग तथा श्रम मन्त्रालय के साथ तालमेंल रखना चाहिए ।

- शैक्षिक नियोजन तथा संसाधनों के आवंटन के समय प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वजनीकरण को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए ।

शिक्षा तथा काम का अधिकार (Education and Right of Work) -

- व्यवसायिक पाठ्यक्रमों को प्रारंभ करने के संबंध में अनियमितताओं को समाप्त किया जाना चाहिए ।
- कक्षा 9 से 12 तक के लिए संचालित व्यवसायिक शिक्षा के एकीकृत स्वरूप की स्थापना की जानी चाहिए।
- माध्यमिक तथा उत्तर माध्यमिक दोनों ही स्तरों पर प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों का पुननिर्माण किया जाना चाहिए।

उच्च शिक्षा (Higher Education) -

- स्नातकोत्तर महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों की स्थापना को दृढ़ता से रोका जाना चाहिए ।
- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का पुनर्गठन करना चाहिए विभिन्न समस्याओं के विकेन्द्रीकृत समाधान के लिए आयोग के क्षेत्रीय कार्यालय भी होने चाहिए।
- विश्वविद्यालयों को स्नातक स्तरीय परीक्षाओं के संचालन के उत्तरदायित्व से मुक्त किया जाना चाहिए जिससे वे अनुसंधान के अतिरिक्त स्नातकोत्तर, डॉक्टरेट उपाधि, तथा अध्ययनों पर ध्यान केन्द्रित कर सके ।
- मौलिक अनुसंधानों हेतु क्षेत्रों के चयन में उत्कृष्टता प्राप्त करने के मानदंड बनाने चाहिए ।
- शैक्षिक संस्थाओं में परिष्कृत अनुसंधान सुविधायें उपलब्ध करानी चाहिये ।
- राष्ट्रीय परीक्षण सेवा को सुनियोजित तरीके से प्रारंभ करने की आवश्यकता है ।
- राज्य कृषि विश्वविद्यालयों को ग्रामीण विकास हेतु स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ।

तकनीकी और प्रबंध शिक्षा (Technical and Management Education) -

- तकनीकी रूप से विशेष महत्व के क्षेत्र की योजनाओं का विस्तृत मूल्यांकन एक राष्ट्रीय विशेषज्ञ समिति के द्वारा किया जाना चाहिए ।
- अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् के क्षेत्रीय कार्यालयों के अध्यक्ष वरिष्ठ व्यक्ति होने चाहिए ।
- सभी स्तर पर मानक तथा गुणवत्ता के सुधार की कार्यवाही की जानी चाहिए ।
- अनुसूचित जाति व जनजाति महिलाओं व विकलांगों के लिए विशेष कार्यक्रम चलाये जाने चाहिए ।

शिक्षा में भाषाओं का स्थान (Place of Language is Education) - भाषाओं को शिक्षा का मूलाधार मानते हुए शिक्षा नीति में भाषाओं के विकास की व्यवस्था हेतु निम्न सुझाव दिये -

- त्रिभाषा सूत्र को समान तथा बुद्धि संगत रूप से कार्यान्वित किया जाना चाहिए ।
- छात्रों को सभी स्तरों पर क्षेत्रीय भाषा माध्यम से परीक्षाएं देने की छूट दी जानी चाहिए ।
- हिन्दी की उन्नति तथा प्रसार के प्रयासों को मजबूत और स्वीकृत किया जाना चाहिए ।
- संस्कृत शिक्षा के विकास हेतु राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान को मजबूत किया जाना चाहिए ।

- भारत की अन्य भाषाओं जैसे उर्दू सिंधी, भोजपुरी, मैथिली आदि के विकास के प्रयास किए जाने चाहिए ।
- भारतीय भाषाओं के प्रौद्योगिकी विकास नामक परियोजना के तहत शिक्षा विभाग को भाषाओं के विकास हेतु प्रौद्योगिकी के प्रयोग की परियोजनाऐं प्रारंभ करनी चाहिए ।

शिक्षा की विषयवस्तु और प्रक्रिया (Content and Process of Education) -

- प्रजातंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, लिंग आधारित समानता, ईमानदारी, निष्ठा, वैज्ञानिक प्रकृति, निष्पक्षता जैसे आधारभूत मूल्यों को शिक्षा की विषयवस्तु में सम्मिलित किया जाना चाहिए ।
- मूल्य प्रधान शिक्षा को पूरी शिक्षा प्रक्रिया एवं स्कूल वातावरण का अभिन्न अंग बना देना चाहिए ।
- कम्प्यूटर शिक्षा का विस्तार करना आवश्यक है ।
- कार्यानुभव / समाजोपयोगी उत्पादक कार्य को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बनाया जाना चाहिए ।
- विज्ञान और गणित के शिक्षण को रुचिकर व ज्ञान प्राप्ति का साधन बनाना चाहिए ।
- परीक्षा सुधार में सेमेंस्टर पद्धति, अनवरत आतरिक मूल्यांकन, क्रेडिट संचयन प्रणाली को सम्मिलित किया जाना चाहिए ।
- सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को पुनर्गठित करके संज्ञानात्मक क्षेत्र के साथ-साथ भावात्मक व कौशल पक्ष पर भी बल दिया जाना चाहिए।

शिक्षक और छात्र (Teachers and Students) -

- शिक्षक शिक्षा के लिए छात्र का चयन कठोर अभिरुचि तथा उपलब्धि के द्वारा करना होगा ।
- सेवाकालीन तथा पुनश्चर्या पाठ्यक्रमों को अलग-अलग बनाया जाये तथा ये शिक्षक की विशिष्ट आवश्यकताओं से संबंधित हो ।
- शिक्षक प्रशिक्षण को नीति निर्माण, कार्यनीति बनाना, कार्यान्वयन व परिवीक्षण के साथ-साथ नेतत्व की भूमिका अदा करने के अवसर भी मिलने चाहिए ।
- जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थाओं को स्वयं संचालित अनुसंधान तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने की स्वायत्तता दी जानी चाहिए ।

विकेन्द्रीकरण तथा सहभागी प्रबंधन (Decentralization and Participatory Management) -

- प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण विद्यालयी शिक्षा के व्यावसायीकरण, निरक्षर प्रौढो के लिए शिक्षा की व्यवस्था जैसे व्यापक लक्ष्यों की प्राप्ति के लक्ष्य वर्ष निर्धारित करने होंगे ।
- आठवीं योजना के दौरान प्रत्येक जिले में कम से कम एक शिक्षा संकुल स्थापित किया जाये व इनके संचालन का दायित्व समुदाय व शिक्षकों पर हो ।
- स्वैच्छिक संगठनों की सहभागिता सुनिश्चित करने के लिए सरकार को उन्हें उनके कार्यों के अनुसार सहायता प्रदान करनी चाहिए ।

- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) को अपनी कार्यशैली में परिवर्तन करने चाहिए । इनकी भूमिका विभिन्न राज्यों में शिक्षा के क्षेत्र में समन्वयकारी विशेषज्ञता प्रदान करने वाली होनी चाहिए ।

शिक्षा के लिए संसाधन (Resources for Education) -

संसाधनों के आवंटन में शिक्षा को अपेक्षाकृत रूप से कम प्राथमिकता दिये जाने के तथ्य पर समिति द्वारा निम्न सुझाव दिये गये -

- शिक्षा के लिए सकल राष्ट्रीय उत्पादन में एक प्रतिशत की व्यवस्था होनी चाहिए ।
- सभी तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा स्वपोषी हो ।
- शिक्षण शुल्क में वृद्धि छात्रों के माता-पिता के आय के स्तर के अनुसार दी जाये ।
- शिक्षण शुल्क के अलावा प्रयोगशाला शुल्क, भवन शुल्क, पुस्तकालय शुल्क में भी तर्कसंगत वृद्धि करनी चाहिए ।
- उच्च शिक्षा के लिए ऋण की व्यवस्था करने के लिए राष्ट्रीयकृत बैंकों को एक कार्यक्रम प्रारम्भ करने की आवश्यकता है ।
- आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु समुचित छात्रवृत्ति की व्यवस्था की जाये।
- शिक्षा के लिए संसाधन जुटाने के अन्य उपायों के लिए सामुदायिक अंशदान, शिक्षा उपकर लगाने, परामर्श सेवा प्रदान करने आदि की व्यवस्था करनी चाहिए ।

इस प्रकार आचार्य राममूर्ति समिति ने शिक्षा के विभिन्न आयामों पर नई दृष्टि व नई कार्यविधि की सिफारिश करने का प्रयास किया । इस समिति ने उपलब्ध आधार संरचना के बेहतर प्रयोग के साथ-साथ लागत की दृष्टि से किफायत को ध्यान में रखकर सुझाव दिये । इस समिति द्वारा दिये सभी सुझावों को तो लागू करना संभव नहीं था लेकिन राष्ट्रीय शिक्षा नीति के संशोधन में इन्हें ध्यान रखा जा सकता था । इस दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण प्रतिवेदन है ।

इस समिति का गठन जनता सरकार के कार्यकाल में हुआ लेकिन रिपोर्ट प्रस्तुत होने से पूर्व ही केन्द्र में सरकार परिवर्तित हो गयी तथा मध्यावधि चुनावों के फलस्वरूप कांग्रेस फिर से सत्ता में आ गई । इस परिवर्तन का प्रभाव राममूर्ति समीक्षा समिति की रिपोर्ट पर पड़ा इसे लागू न करते हुए 1966 की शिक्षा नीति को ही पुन: लागू करने की घोषणा कर दी गई । इस प्रकार समिति के सुझावों की क्रियान्विति संभव नहीं हो सकी ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 आचार्य राममूर्ति समिति क्यों गठित की गई?
Why was Ramamurthi Committee constituted ?

2 आचार्य राममूर्ति समिति द्वारा शिक्षा के किन पक्षों पर अधिक बल दिया गया?
On what aspects of education did Ramamurthi Committee gives stress?

3.7 कार्यान्वयन कार्यक्रम---(1992)
(Programme of Action-1992)

भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात शैक्षिक विकास के क्षेत्र में 1966 की शिक्षा नीति मील का पत्थर कही जा सकती है । इस शिक्षा नीति में शिक्षा के विकास का एक विस्तृत ढांचा प्रस्तुत किया गया । इस शिक्षा नीति की समीक्षा हेतु 1986 में आचार्य राममूर्ति समिति गठित की गई जिसकी चर्चा हमने पिछले बिन्दु में की ।

सरकार के परिवर्तन के कारण इस रिपोर्ट पर कार्यान्वयन नहीं हुआ। नई सरकार ने सन् 1988 की राष्ट्रीय नीति की समीक्षा हेतु एक और समिति का गठन किया । इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए गठित समिति की अध्यक्षता आंध्रप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री जनार्दन रेड्डी को सौंपी गई ।

समिति ने यह निष्कर्ष निकाला कि सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में किसी बड़े परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है लकिन क्रियान्वयन पर पुन: विचार करने की आवश्यकता है । इसी क्रम में मई 1992 में एक संशोधित नीति का प्रारूप संसद के दोनों सदनों में रखा गया जिसके अनुसार संशोधित कार्यान्वयन कार्यक्रम तैयार किया गया जिसे कार्यान्वयन कार्यक्रम-1992 (POA-1992) कहा गया ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1988 में हुए संशोधन (Modification in National Policy on Education 1986) - सन् 1992 में 1986 की शिक्षा नीति के खण्डों में किए गए कुछ संशोधन निम्नलिखित है-

खण्ड तीन - राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली (National System of Education) -

1. सम्पूर्ण भारतवर्ष में 10+2 स्तर को विद्यालयी शिक्षा के अंग के रूप में स्वीकार कराने का संकल्प जोड़ा गया ।

खण्ड - चार समानता के लिए शिक्षा (Education for Equality) -

1. समग्र साक्षरता अभियान पर बल दिया जाये ।
2. राष्ट्रीय साक्षरता मिशन को गरीबी उन्मूलन, राष्ट्रीय एकता, पर्यावरण संरक्षण, लघु परिवार, नारी समानता को प्रोत्साहन प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण, प्राथमिक स्वारथ्य आदि मुद्दों से जोड़ने का सुझाव दिया गया ।
3. रोजगार स्वरोजगार केन्द्रित तथा आवश्यकता व रुचि आधारित व्यवसायिक व कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर बल दिया जायेगा ।
4. नवसाक्षरों के लिए सतत् शिक्षा हेतु व्यापक कार्यक्रम उपलब्ध कराये जोयेंगे ।

खण्ड पाँच - विभिन्न स्तरों पर शैक्षिक पुनर्गठन (Re-organisation of Education at Different Stages) -

1. ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड को अधिक व्यापक करके प्रत्येक विद्यालय में तीन बड़े कमरे तथा तीन अध्यापक की व्यवस्था की जायेगी ।
2. ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड को उच्च प्राथमिक स्तर तक विस्तृत किया जायेगा ।
3. शाला छोड़ देने वाले बालकों, दिन में विद्यालय जाने के असमर्थ बच्चों तथा लड़कियों के लिए अनौपचारिक शिक्षा के कार्यक्रम को विस्तृत व सुदृढ़ किया जायेगा ।

4. इक्कीसवीं शताब्दी में प्रवेश से पूर्व 14 वर्ष तक की आयु वाले सभी बच्चों को संतोषजनक गुणवत्ता वाली निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने के उद्देश्य हेतु एक राष्ट्रीय मिशन चलाया जायेगा ।
5. माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण पर जोर दिया जायेगा ।
6. माध्यमिक शिक्षा में कम्प्यूटर साक्षरता की सुविधा उपलब्ध करायी जायेगी ।
7. मुक्त अधिगम प्रणाली को सुदृढ़ किया जायेगा ।
8. परीक्षण तथा मापन में सुधार लाने के लिए राष्ट्रीय मूल्यांकन संगठन गठित किया जायेगा ।

खण्ड - छः तकनीकी तथा प्रबंध शिक्षा (Technical and Management Education) -

1. अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् को सुदृढ़ किया जायेगा तथा यह विकेन्द्रीकृत ढंग से राज्य सरकारों व उच्च गुणवत्ता वाली तकनीकी संस्थाओं की सहभागिता से कार्य करेगी ।

खण्ड आठ - शिक्षा के पाठ्यक्रम तथा प्रक्रिया का अभिनवीकरण (Reorientation the contents and process of Education) -

1. जनसंख्या शिक्षा को जनसंख्या नियंत्रक की राष्ट्रीय व्यूह रचना के एक महत्त्वपूर्ण अंग के रूप में देखा जायेगा तथा शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर पाठ्यक्रमों में इस विषय का समावेश करेंगे ।
2. परीक्षा संस्थाओं के दिशा निर्देश के रूप में राष्ट्रीय परीक्षा सुधार प्रारूप तैयार किया जावेगा ।

खण्ड दस - शिक्षा का प्रबंध (The Management of Education)

1. शैक्षिक प्राधिकरण (Educational Tribunals) की स्थापना राष्ट्रीय तथा राज्य स्तर पर की जायेगी ।
2. आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान तथा उसके बाद शिक्षा पर व्यय राष्ट्रीय आय के 6 प्रतिशत से अधिक होने को सुनिश्चित किया जावेगा ।

इन संशोधनों को कार्यान्वयन की दृष्टि से एक स्टीयरिंग कमेंटी बनाई गई । सभी टास्क फोर्स अलग-अलग क्षेत्र में कार्य करने हेतु निर्धारित थी यथा -

1. नारी समानता के लिए शिक्षा ।
2. अनुसूचित जाति जनजाति तथा पिछड़े वर्गो की शिक्षा ।
3. अल्पसंख्यकों की शिक्षा ।
4. विकलांगों की शिक्षा ।
5. प्रौढ़ एवं सतत शिक्षा ।
6. पूर्व बाल्यकाल परिचर्या एवं शिक्षा ।
7. प्रारम्भिक शिक्षा ।
8. माध्यमिक शिक्षा ।
9. नवोदय विद्यालय ।
10. व्यवसायिक शिक्षा ।
11. उच्च शिक्षा ।

12. मुक्त शिक्षा ।
13. उपाधि की रोजगार से विलगता एवं मानव शक्ति नियोजन ।
14. ग्रामीण विश्वविद्यालय एवं संस्थान ।
15. तकनीकी एवं प्रबंध शिक्षा ।
16. अनुसधान एवं विकास ।
17. सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य ।
18. भाषाओं का विकास ।
19. जनसंचार एवं शैक्षिक तकनीकी ।
20. खेल, शारीरिक शिक्षा एवं युवा ।
21. मूल्यांकन प्रक्रिया एवं परीक्षा सुधार ।
22. अध्यापक एवं उनका प्रशिक्षण ।
23. शिक्षा का प्रबंध ।

इस प्रकार 1992 का कार्यान्वयन कार्यक्रम द्वारा सरकार ने यह आशा की किरण दिखाई कि वह शिक्षा के प्रति सजग है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. 1992 के कार्यान्वयन कार्यक्रम में 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के किन प्रमुख बिन्दुओं में संशोधन सुझाए गए।
   On which main aspects of National Education Policy (1986) has been changed in 1992's programme of action.

3.8 यशपाल समिति 1992-93 (Yashpal Committee 1992-93)

छात्रों पर पढ़ाई का बोझ तथा उनके अधिगम का निम्न स्तर पिछले काफी समय से शिक्षाविदों के लिए चिन्ता का विषय बने हुए है । इस विचारणीय मुद्दे पर पटेल समिति (1977), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के कार्य दल (1984) तथा आचार्य रायमूर्ति समीक्षा समिति (1990) ने विचार विमर्श करते हुए अनेक सुझाव प्रस्तुत किये । छात्रों के शैक्षिक बोझ को कम करने तथा अधिगम का स्तर सुधारने संबंधी सुझावों से सभी पाठ्यक्रम विकसित करने वाली संस्थाऐं सहमत होती हैं, लेकिन नई पाठ्यचर्या बनाते समय इन सुझावों को ध्यान में नहीं रखा जाना राष्ट्रीय शिक्षा नीति के कार्यान्वयन कार्यक्रम (POA) के लिए तैयार की गई नई पाठ्यचर्या के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ । सरकार ने व शिक्षाविदों ने महसूस किया कि छात्रों, विशेषकर विद्यालय की निचली कक्षाओं के छात्रों पर पढ़ाई का बोझ काफी बढ़ चुका है तथा इस प्रकृति के चलते शिक्षण प्रक्रिया नीरस हो गई है । ऐसी स्थिति में भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रथम मार्च सन् 1992 को स्कूली छात्रों के शैक्षिक बोझ कम करने के तरीके सुझाने के लिए एक राष्ट्रीय सलाहकार समिति का गठन किया गया ।

इस आठ सदस्यीय समिति के सदस्य निम्न थे -

अध्यक्ष - प्रो. यशपाल, भूतपूर्व अध्यक्ष, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली ।

सदस्य -

1. प्रो. कृष्ण कुमार, सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली ।
2. प्रो. टी.एस. सरस्वती, प्रमुख बाल विकास विभाग, एम.एस. विश्वविद्यालय, बडौदा ।
3. सुश्री दीना गुहा, मनोवैज्ञानिक, बम्बई ।
4. श्रीमती विभा पार्थसारथी, प्राचार्य, सरदार पटेल विद्यालय, नई दिल्ली ।
5. डॉ. वी.जी. कुलकर्णी, निदेशक, होमी भाभा विज्ञान केन्द्र एवं टाटा मौलिक अनुसंधान संस्थान, बम्बई ।
6. प्रो. पोरोमेंश आचार्य, भारतीय प्रबंध संस्थान, कलकत्ता ।

सदस्य सचिव - डॉ. जी.एल. अरोड़ा, निदेशक, एस.सी.ई.आर.टी., डिफेंस कॉलोनी, नई दिल्ली ।

समिति के अध्यक्ष के नाम पर इस राष्ट्रीय समिति को प्रो. यशपाल समिति के नाम से संबोधित किया जाता है ।

इस समिति के लिए विचार-बिन्दु हेतु प्रमुख विषय था-

"जीवन पर्यन्त स्वास्थ्य तथा कौशल विकसित करने की क्षमता निर्माण सहित अधिगम की गुणवत्ता में सुधार करते हुए सभी स्तरों के स्कूली छात्रों, विशेषकर छोटे बच्चों पर पढ़ाई के बोझ को कम करने के उपायों के बारें में सलाह देना |"

इस विषय पर विचार करते समय समिति को -

1. पाठ्यचर्या, प्रवेश, मानदण्ड व विभिन्न स्तरों पर उपलब्धियों से संबंधित सभी पहलुओं की जाँच करने तथा
2. व्यवसायिक पाठ्यक्रमों सहित उच्च शिक्षा में प्रवेश व परीक्षाओं के प्रभाव को देखने की छूट भी सरकार के द्वारा दी गई ।

अपनी कार्य प्रणाली के संबंध में समिति ने निर्णय लिया कि-

अ. राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखने के लिए समिति केवल केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) या राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) की पाठ्यचर्याओं को ही नही बल्कि विभिन्न राज्यों तथा संघ शासित प्रदेशों की पाठ्यपुस्तकों को भी ध्यान में रखेगी ।

ब. समिति सर्वेक्षणों से प्राप्त आंकड़ों, शिक्षकों के साथ विचार विमर्श तथा पाठ्यपुस्तकों व अन्य शिक्षण सामग्रियों के विश्लेषण को अपने सुझावों का आधार बनायेगी ।

3. समिति नवाचार कार्यक्रमों से जुड़े संगठनों के क्रिया कलापों पर भी ध्यान देगी । इन बिन्दुओं को दृष्टिगत रखते हुए विभिन्न शिक्षाविदों, शिक्षकों, प्रधानाचार्यो, लेखकों, प्रकाशकों, अभिभावकों व छात्रों व आम जनता के सुझावों व प्रतिक्रियाओं के आधार पर समिति ने वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था को समझने का प्रयास किया । इस समिति ने 15 जुलाई सन् 1993 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसे "शिक्षा बिना बोझ के" (Educational without Burden) नामक शीर्षक दिया गया । इस प्रतिवेदन को निम्न पाँच खण्डों में बांटा गया -

- प्रस्तावना
- शिक्षाक्रम के भार की समस्या
- समस्या की जड़े
- सिफारिशें
- परिशिष्ट

प्रस्तावना में समिति के गठन के उद्देश्य उसकी कार्यविधि तथा धन्यवाद ज्ञापन को प्रस्तुत किया गया है ।

शिक्षाक्रम के भार के अन्तर्गत वर्तमान शिक्षा तथा उसकी समस्याओं की वस्तुस्थिति पर प्रकाश डाला गया है जिसे निम्न बिन्दुओं में प्रस्तुत किया गया-

- हमारी शिक्षा व्यवस्था की एक बड़ी कमी यह है कि पढ़ाई अधिक करायी जाती है परन्तु बच्चे बहुत कम सीखते हैं ।
- पब्लिक विद्यालयों की प्राथमिक कक्षाओं में स्कूल बैग का औसत भार चार किलोग्राम के लगभग होता है।
- बचपन के शुरू के दिनों से ही बच्चे विशेषकर मध्यम वर्गों के बच्चे, गृहकार्य, ट्यूशन तथा विभिन्न प्रकार के कोचिंग कक्षाओं में भाग लेने को विवश हो जाते हैं । अवकाश तो उनके लिए दुर्लभ हो गया है ।
- बच्चों को रोज की दिनचर्या में अपनी सहज प्रकृति या क्षमताओं को दिखाने का अवसर नहीं मिलता है । उन्हें खेलने व स्वभाविक विकसित होने, सोचने समझने का समय नहीं मिलता है ।
- पाठ्यक्रम को पूरा करना ही अपने आप में लक्ष्य बन गया है । शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करना महत्त्वपूर्ण नहीं रहा है ।
- स्कूल जाने वाले अधिकतर बच्चों के लिए स्कूली शिक्षा नीरस, बोझिल, अरुचिकर तथा कटु अनुभव प्रदान करने वाली प्रतीत होती है ।
- कक्षा का बड़ा आकार, भारी पाठ्यक्रम, कठिन पुस्तकों के कारण उत्पन्न परिस्थितियों में शिक्षक स्वयं को शिक्षा के व्यापक उद्देश्य बच्चे के समग्र व्यक्तित्व का विकास के लिए कुछ कर पाने में असमर्थ पाते हैं ।
- विद्यालयों में परीक्षा उत्तीर्ण करने पर अधिक महत्त्व दिया जाता है तथा हमारी परीक्षा प्रणाली केवल रहने की क्षमता को जांच कर पाती है । परीक्षा के द्वारा भय उत्पन्न होता है ।
- भाषा की पाठ्यपुस्तकों में बच्चों को आम तौर पर प्रयुक्त शब्दावली, मुहावरे तथा अभिव्यक्ति शैली का प्रयोग कहीं नहीं मिलता है । इससे बच्चे स्कूली ज्ञान को जुड़ाव महसूस नहीं कर पाते हैं ।
- पाठ्यपुस्तकों में प्राय: प्रकृति में किसी वस्तु का अवलोकन कराने के स्थान पर उस वस्तु के चित्र का अवलोकन करने के लिए कहा जाता है अनुभव के स्थान पर चित्र का प्रयोग करना पाठ्यलेखन में एक चिंताजनक प्रवृत्ति है जो बोझ की समस्या को अधिक गंभीर बनाती है ।
- पाठ्यक्रमों की विषयवस्तु में संगठन तथा तालमेंल की कमी है । अवधारणाओं और सूचनाओं की पुनरावृत्ति से भी बोझ की भावना उत्पन्न होती है ।

- पाठ्यक्रम के बोझ की समस्या केवल शहरी क्षेत्रों तक सीमित नहीं है । स्कूलों की उत्पन्न खराब हालत, शिक्षकों की अनुपस्थिति जैसी आधारभूत समस्याओं के बावजूद पाठ्यक्रम के बोझ की यह समस्या ग्रामीण भारत में भी बच्चों की शिक्षा की समस्या है ।

समस्या की जड़े -

- 'ज्ञान के विस्फोट' संबंधी मान्यता इस दृष्टिकोण पर आधारित है कि ज्ञान तथा सूचना एक दूसरे के पर्याय हैं । यह बात सत्य है कि बीसवीं शताब्दी में नये तथ्य प्राप्त करने तथा उन्हें सुरक्षित रखने की मानवीय क्षमता में व्यापक वृद्धि हुई है और सूचनाओं की प्राप्ति को ही गलती से ज्ञान मान लिया जाता है जबकि ज्ञान तथ्यों को समझने तथा उसका सूझबूझ से प्रयोग करने की क्षमता है । बच्चों की शिक्षा में विशाल सूचना की जानकारी रखने के स्थान पर सिद्धांत निर्माण तथा अवधारणाओं के विकास के लिए क्षमताओं की वृद्धि पर बल देना चाहिए ।
- पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों का संशोधन व नवीनीकरण करते समय सामान्यत: विभिन्न विशेषज्ञों के परामर्श से नये विषयों एवं सूचनाओं को जोड़ा जाता है । परन्तु बच्चों तथा उनकी शिक्षा के बारे में उनकी जानकारी बहुत कम होती है । स्कूलों तथा कक्षाओं की वास्तविकताओं से विशेषज्ञों की दूरी एक गंभीर समस्या है । पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तक लेखन को अंशकालीन उत्तरदायित्व के स्थान पर एक गंभीर कार्य समझना चाहिए ।
- पाठ्यक्रम निर्माण की प्रक्रिया का अनावश्यक रूप से केन्द्रीकृत होना एक समस्या है । शिक्षा स्तर की एकरूपता को सुनिश्चित करने के लिए सारे राज्य में, यहां तक कि सारे देश में एक ही पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तकें होने का तर्क दिया जाता है । इसके फलस्वरूप पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तकें तैयार करने का कार्य राज्यों की राजधानियों तथा दिल्ली तक सीमित रह गया है ।
- पाठ्यपुस्तक की विषयवस्तु को अपने कार्य की अंतिम सीमा तथा एकमात्र मार्गदर्शक मानकर शिक्षक भर की समस्या को ओर भी गंभीर बना देते हैं । वर्तमान शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम भी अध्यापकों में बच्चों की सीखने की प्रक्रियाओं को समझने की क्षमता का विकास करने में सक्षम नहीं रहा है । पूरा शिक्षक प्रशिक्षण ढांचा स्कूली शिक्षा की मुख्य धारा से अलग बना हुआ है । इस प्रशिक्षण नीति की समीक्षा की आवश्यकता है ।
- हमारा सामाजिक वातावरण प्रतियोगी भावना से ओतप्रोत है जो तेजी से हमारे जीने का तरीका बनती जा रही है । वर्तमान शिक्षा पद्धति इस प्रतियोगी भावना को रोकने व सही दिशा दिखाने की बजाय इससे प्रभावित हो गयी है । प्रतिभा खोज आदि प्रतियोगिताओं में असफल प्रतियोगी असफलता की शर्मिन्दगी उठाते हैं जो उनके आत्मविश्वास पर, व्यक्तित्व पर नकारात्मक प्रभाव डालती है ।
- शिक्षाक्रम को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए आवश्यक है कि पर्याप्त समय, स्टॉफ, भवन व उसका रखरखाव, विधियाँ, शैक्षिक सामग्री, खेल के मैदान आदि अनिवार्य रूप से उपलब्ध हो । लेकिन अधिकतर विद्यालयों में ये न्यूनतम आवश्यक सुविधायें उपलब्ध नहीं है लगन तथा व्यवसाय के प्रति प्रतिबद्धता की भावना शिक्षकों में भी लगातार कमी होती जा रही है । पर्याप्त सुविधाओं की कमी, कठोर प्रशासनिक संरचना तथा बढ़ता

निराशा की भावना अधिकांश स्कूलों में शैक्षिक परिवेश की अनुपस्थिति के लिए उत्तरदायी है ।

सिफारिशें (Recommendation)

1. स्कूलों में सहयोग पर आधारित शिक्षण प्रणाली को बढ़ावा देने के लिए सामूहिक गतिविधियों तथा सामूहिक उपलब्धियों को प्रोत्साहित करना चाहिये ।
2. पाठ्यक्रम निर्माण तथा पाठ्यपुस्तकों को तैयार करने की प्रक्रिया विकेन्द्रीकृत होनी चाहिये ताकि इन कार्यों में शिक्षकों की सहभागिता में वृद्धि हो सके ।
3. औपचारिक या अनौपचारिक नवाचारों के प्रति समर्पित स्वैच्छिक संगठनों को पाठ्यक्रम पाठ्यपुस्तकों तथा शिक्षक प्रशिक्षण के विकास में स्वतंत्रता का सहयोग प्रदान करना चाहिये ।
4. शैक्षिक उपकरणों की खरीद, मरम्मत तथा बदलाव के लिए स्कूल प्रधानाचार्य के अधिकार में पर्याप्त आकस्मिक राशि जो कम से कम विद्यालय के कुल वेतन बिल का दस प्रतिशत हो का प्रावधान होना चाहिये ।
5. ग्राम, ब्लाक तथा जिला स्तर पर शिक्षा समितियों का गठन किया जाना चाहिए जिससे वे अपने कार्यक्षेत्र में स्कूलों के नियोजन तथा परीक्षण का कार्य कर सकें ।
6. पाठ्यपुस्तक निर्माण की प्रक्रिया में परिवर्तन किया जाना चाहिए जिससे पाठ्यपुस्तकों के लेखन में अधिक अध्यापक भाग ले सकें । विशेषज्ञों को परामर्शदाता के रूप में सम्मिलित किया जाये तथा शिक्षकों को पुस्तक लेखन कार्य का प्रशिक्षण दिया जाये ।
7. नर्सरी विद्यालय खोलने तथा उनके संचालन को नियमित करने के लिए उचित कानूनी तथा प्रशासनिक उपाय अपनायें जाये । नर्सरी कक्षा में प्रवेश के लिए लिखित परीक्षा तथा साक्षात्कार का प्रचलन बन्द कर दिया जाये ।
8. केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अधिकार क्षैत्र को केन्द्रीय तथा नवोदय विद्यालयों तक ही सीमित रखा जाये तथा अन्य सभी विद्यालय राज्य बोर्डो से ही सम्बन्ध होने चाहिए ।
9. शिक्षक छात्र के मौजूदा अनुपात अर्थात् 1:40 को लागू किया जाये तथा प्राथमिक कक्षाओं में इसे घटाकर 1:30 कर दिया जाये ।
10. पाठ्यपुस्तकों को स्कूली सम्पत्ति समझा जाये । इस प्रकार बच्चों को व्यक्तिगत रूप से इन पुस्तकों को खरीदने तथा प्रतिदिन घर ले जाने की कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए । ग्रहकार्य के लिए तथा स्कूल में पाठ्यपुस्तकों व अभ्यास पुस्तिकाओं के प्रयोग के लिए अलग से समय सारिणी बनाई जाये ।
11. गृहकार्य की प्रकृति व स्वरूप में काफी बदलाव की आवश्यकता है । प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों को गृहकार्य नहीं दिया जाये । उच्च प्राथमिक तथा माध्यमिक कक्षाओं में आवश्यक हो तो पाठ्यपुस्तक से हटाकर गृहकार्य दिया जाये ।
12. बाल केन्द्रित सामाजिक वातावरण के निर्माण हेतु इलेक्ट्रानिक प्रचार माध्यमों का अधिकाधिक प्रयोग किया जाये । छात्रों, अभिभावकों व अध्यापकों के लिए शिक्षा दर्शन नामक एक नियमित दूरदर्शन कार्यक्रम शुरू किया जाये ।

13. भाषा की पुस्तकों में स्थानीय व बोलचाल के मुहावरों को उचित स्थान दिया जावे । पाठ्यपुस्तकों में बच्चों के अनुभव तथा सामान्य जनजीवन प्रकट होना चाहिये ।
14. बी.एड प्रशिक्षण कार्यक्रम में माध्यमिक, प्राथमिक तथा नर्सरी स्तर पर शिक्षण हेतु विशेषज्ञता प्राप्त करने का प्रावधान होना चाहिए । पत्राचार के माध्यम से प्रचलित बी.एड. डिग्री पाठ्यक्रमों की मान्यता समाप्त की जानी चाहिए ।
15. शिक्षकों की व्यवसायिक दक्षता में वृद्धि करने के लिए सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम की व्यवस्थित रूपरेखा तैयार की जाये ।
16. विद्यालय कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों तथा पाठ्यक्रमों की जांच करने के लिए प्रत्येक राज्य में एक परियोजना दल गठित किया जाये जो अपेक्षित न्यूनतम विषय, संकल्पनाओं की न्यूनतम संख्या तथा कार्यदिवसों का निर्धारण करें ।
17. दसवीं तथा बारहवीं कक्षा के अंत में ली जाने वाली सार्वजनिक परीक्षाओं की समीक्षा की जानी चाहिए ।
18. प्राथमिक कक्षाओं में विज्ञान पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों में प्रयोग करने की अधिक गुंजाइश होनी चाहिये। विज्ञान पाठ्यपुस्तकों से निरर्थक तथा महत्वहीन सामग्री हटा देनी चाहिए ।
19. माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में प्राकृतिक विज्ञान के पाठ्यक्रम में सम्मिलित अधिकांश विषयवस्तु को ऐसे प्रयोगों अथवा कार्यकलापों से जोड़ा जाना चाहिए जिन्हें बच्चें तथा अध्यापक स्वयं करें।
20. 6 से 10 कक्षा के सामाजिक विज्ञान पाठ्यक्रम में देश की सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक व्यवस्था को सम्मिलित किया जाये । कक्षा 9 व 10 के इतिहास पाठ्यक्रम में प्राचीन काल के इतिहास को तथा कक्षा 6 से 9 के इतिहास पाठ्यक्रम में स्वतंत्रता संग्राम तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात के घटनाक्रम को सम्मिलित किया जाये । नागरिक शास्त्र के स्थान पर सामाजिक अध्ययन को रखा जाये । भूगोल का अध्ययन समसामयिक वास्तविकता से सम्बन्धित हो ।

यशपाल समिति के द्वारा किये गये विचार विमर्श व दिये सुझावों से स्पष्ट होता है कि समिति ने शिक्षा व्यवस्था से जुड़े मूलभूत मुद्दों पर चिंतन करके इस दिशा में एक नई दृष्टि दी है । समिति द्वारा स्कूली बच्चों के बोझ को कम करते हुए अधिगम की गुणवत्ता में सुधार लाने के उपाय प्रदान करना सरल कार्य नहीं था । सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाये बिना शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन लाना असंभव सा कार्य है । आशा की जा सकती है कि समिति के सुझाव भारतीय शिक्षा व्यवस्था हेतु लाभप्रद सिद्ध हो सकेंगे ।

यशपाल समिति की उक्त रिपोर्ट को लागू करने की संभावना की जांच के लिए मानव संसाधन मंत्रालय ने शिक्षा विभाग के अपर सचिव वाई.एन. चतुर्वेदी की अध्यक्षता ने एक दस सदस्यीय दल का गठन 25 अगस्त 1993 को किया जिसने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए अधिकांश सिफारिशों पर अपनी सहमति व्यक्त की । दल की रिपोर्ट पर केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड की दो मार्च 1994 को हुई बैठक में विचार किया गया ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. प्रो. यशपाल समिति के निर्धारण का प्रमुख उद्देश्य क्या था?
   What was the main objective to determine Prof. Yashal Committee?
2. प्रो. यशपाल समिति द्वारा बस्ते के बोझ को कम करने हेतु क्या सुझाव दिये गये?
   What recommendation given by Prof.Yashpal Committee regarding to reduce the burden of school bags?

3.9 सारांश (Summary)

1. सन् 1952-53 में डॉ. लक्ष्मण स्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में गठित किए गए माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा में सुधार लाने के लिए अनेक सुझाव दिये । इस आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों, माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन, बहु-उद्देशीय विद्यालयों, त्रिभाषा सूत्र का पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकों, परीक्षा प्रणाली, अध्यापकों की सेवा शर्ते, निरीक्षण, न्यूनतम कार्यदिवस आदि से सम्बन्धित सिफारिशें की ।
2. सन् 1964-66 में डॉ. दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में शिक्षा आयोग का गठन किया गया था । इस आयोग ने सभी स्तरों की शिक्षा के संबंध में विचार विमर्श किया तथा भारत सरकार को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था । आयोग ने राष्ट्रीय विकास में शिक्षा को एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में विकसित करने के लिए राष्ट्रीय उद्देश्य बताये तथा सम्पूर्ण राष्ट्र में एक समान शिक्षा लागू करने की सिफारिश की । आयोग ने अध्यापक प्रशिक्षण, शैक्षिक समानता, स्कूल शिक्षा के विस्तार, पाठ्यक्रम, शिक्षण पद्धति व निरीक्षण, उच्च शिक्षा के उद्देश्यों व कार्यक्रम, विश्वविद्यालयों की व्यवस्था कृषि तकनीकी, व्यवसायिक व इंजीनियरिंग शिक्षा अनुसंधान, प्रौढ़ शिक्षा, नियोजन व प्रशासन तथा शैक्षिक वित्त प्रबन्ध जैसे विषयों पर विस्तार से अध्ययन करने के सुझाव प्रस्तुत किए।
3. स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारतीय शिक्षा के विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कदम सन् 1968 में भारत सरकार के द्वारा शिक्षा की राष्ट्रीय नीति की घोषणा करना था । कोठारी आयोग के सुझाव के अनुसार भारत सरकार ने इस नीति की घोषणा की थी । इस नीति में शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन करने तथा सभी स्तरों की शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने पर बल दिया । निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा के संकल्प को पूरा करने । अध्यापकों के स्तर व प्रशिक्षण में सुधार करने, त्रिभाषा सूत्र को लागू करने, कार्य अनुभव व राष्ट्रीय सेवा को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाने, विज्ञान, कृषि व उद्योगों की शिक्षा व अनुसंधान को प्रोत्साहित करने, परीक्षा प्रणाली को विश्वसनीय व वैध बनाने, अल्पसंख्यकों की शिक्षा को बढ़ाने तथा 10+2+3 के शैक्षिक ढांचे को सम्पूर्ण राष्ट्र में लागू करने जैसे संकल्प इस शिक्षा नीति में किये गये ।

4. सन् 1986 में राजीव गांधी सरकार द्वारा शिक्षा की नई नीति की राष्ट्रीय घोषणा की गई । इस नीति में राष्ट्रीय विकास में शिक्षा की भूमिका को विशेष महत्व दिया गया । इस नीति में 10+2+3 की राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली को अपनाने, शैक्षिक अवसरों की एक समान उपलब्धता सुनिश्चित करने, विभिन्न स्तरों पर शैक्षिक पुनर्गठन करने, तकनीकी व प्रबंध शिक्षा में सुधार करने, अध्यापकों के उत्तरदायित्वों को सुनिश्चित करने, सुधरी छात्र सेवाएँ, पाठ्यक्रमों के अभिनवीकरण करने, राष्ट्रीय सेवा प्रारंभ करने, अध्यापक शिक्षा में सुधार करने, शैक्षिक निवेश को बढ़ाने, नवोदय विद्यालय खोलने, उपाधि को नौकरी से विलग करने, स्वायत्तता को बढ़ाने, कम्प्यूटर, ज्ञान का विस्तार करने तथा शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने जैसे संकल्प किये गये है ।
5. आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में एक सत्रह सदस्यीय समिति की नियुक्ति सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति की समीक्षा हेतु मई 1990 में केन्द्र की जनता सरकार के द्वारा की गई थी जिसने दिसम्बर 1990 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की ।

समिति ने शिक्षा की भूमिका, शिक्षा व नारी समानता, अनुसूचित जाति, जनजाति व पिछड़े वर्गों की शिक्षा, विकलांगो की शिक्षा प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण, प्रौढ़ शिक्षा, उच्च शिक्षा, उच्च शिक्षा तकनीकी व प्रबंध-शिक्षा, शिक्षा में भाषाओं का स्थान, शिक्षा को विषयवस्तु व प्रक्रिया, शिक्षा व छात्र, विकेन्द्रीकरण व सहभागी प्रबन्ध, तथा शिक्षा के लिए संसाधन आदि के सम्बन्ध में अनेक महत्वपूर्ण सुधार करने की अनुशंसा की । परन्तु केन्द्र में सत्ता परिवर्तन के कारण इस समिति के सुझावों को क्रियान्वित किया जाना संभव नहीं हो सका ।

6. सन् 1986 में घोषित राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहा गया था कि प्रत्येक पांच-पांच वर्ष के बाद इस नीति की समीक्षा की जायेगी । सन् 1992 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की समीक्षा की गई तथा प्राप्त सफलताओं असफलताओं को ध्यान में रखकर इसमें अनेक संशोधन किये गये ।

साक्षरता अभियान पर बल देने, सतत् शिक्षा के व्यापक कार्यक्रम उपलब्ध कराने, ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड कार्यक्रम का विस्तार करने, अनौपचारिक शिक्षा पर अधिक बल देने, लडकियों व पिछडे वर्गों के बालकों के नामांकन पर अधिक बल देने, मुक्त अधिगम प्रणाली को सुदृढ़ करने, राष्ट्रीय मूल्यांकन संगठन गठित करने, जनसंख्या शिक्षा पर अधिक बल देने तथा परीक्षा सुधार प्रारूप तैयार करने जैसे अनेक संशोधन राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में किये गये।

इन संशोधनो को ध्यान में रखते हुए कार्यान्वयन कार्यक्रम तैयार किया गया । इस कार्यान्वयन कार्यक्रम में विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों तथा योजनाओं को तेईस खंडो में विभक्त करके प्रस्तुत किया गया है ।

7. सन् 1992 में प्रो. यशपाल की अध्यक्षता में नियुक्त की गई इस समिति ने 1993 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें स्कूली छात्रों के शैक्षिक बोझ की अधिगम की गुणवत्ता बनाये रखते हुए, कम करने के सम्बन्ध में अनेक सुझाव दिये गये।

3.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. चौबे, सरयू प्रसाद एवं पाण्डेय, राम शकल - भारत में शिक्षा का विकास, इलाहाबाद, सेंट्रल बुक डिपो

2. पाण्डेय, राम शकल - भारतीय शिक्षा की समस्यायें, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल बुक डिपो
3. सिंघल, महेश चन्द्र - भारतीय शिक्षा की वर्तमान समस्यायें, जयपुर राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी
4. नेशनल करीकुलम फॉर ऐलिमैन्टरी एंड सैकेण्डरी एजूकेशन: अ फ्रेमवर्क 1985, एन.सी.ई.आर.टी.
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति: 1986, शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली ।
6. प्रोग्राम ऑफ एक्शन: नेशनल पालिसी ऑन एजूकेशन 192, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार ।
7. गुप्ता एस.पी. - भारतीय शिक्षा इतिहास, विकास एवं समस्यायें, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन
8. शिक्षा मंत्रालय (भारत सरकार) एजूकेशन एंड नेशनल डवलपमेंन्ट: रिपोर्ट ऑफ एजूकेशन रिसर्च ट्रेनिंग नई दिल्ली - 1970

इकाई-4

विद्यालयी शिक्षा की संरचना

Structure of School Education

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

4.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and objectives)

4.1 नर्सरी स्तर पर शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education at Nursary Level)

4.2 प्राथमिक स्तर पर शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education at Primary Level)

4.3 माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर, पर शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education at Secondary and Senior Secondary Level)

4.4 कोठारी आयोग के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education Secondary to Kothari Commission)

4.5 व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education)

4.6 तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा का इतिहास (History of Technical and Vocational Education)

4.7 व्यावसायिक शिक्षा का महत्व (Importance of Vocational Education)

4.8 कार्यानुभव (Work Experience)

4.9 अनवरत शिक्षा (Continuing Education)

4.10 विद्यालय-शिक्षा का औपचारिक साधन (औपचारिक विद्यालय संरचना) (Formal School structure)

4.11 आधुनिक विद्यालयों की प्रमुख विशेषताएँ (Main Characteristics of Modern School)

4.12 विद्यालय के औपचारिक कार्य (Formal functions of a school)

4.13 विद्यालय के अनौपचारिक कार्य (Non-formal functions of a school)

4.14 खुला विद्यालय (Open School)

4.15 राष्ट्रीय खुला विद्यालय (National Open School)

4.16 सारांश (Summary)

4.17 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

विद्यालयी शिक्षा की सरंचना: शिक्षा के क्रमिक चरणों के लक्ष्य एवं उद्देश्य: नर्सरी, प्राथमिक, माध्यमिक उच्च माध्यमिक, उच्च, सामान्य एवं व्यवसायिक शिक्षा, अनवरत शिक्षा औपचारिक विद्यालय एवं खुले विद्यालय, राष्ट्रीय खुला विद्यालय

Structure of Schooling: Aims and Objectives of respective stages of education: Nursury, Primary, Secondary, Senior Secondary, Higher,

4.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप -

- विभिन्न स्तरों (नर्सरी, प्राथमिक, उच्च माध्यमिक) पर शिक्षा के उद्देश्यों से अवगत हो सकेंगे ।
- व्यवसायिक शिक्षा का अभिप्राय स्पष्ट कर सकेंगे ।
- अनवरत शिक्षा के उद्देश्यों का उल्लेख कर सकेंगे ।
- 'खुला विद्यालय' का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे ।
- 'राष्ट्रीय खुला विद्यालय' की विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगे ।

4.1 नर्सरी स्तर पर शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education at Nursury Stage)

नर्सरी शिक्षा बालक के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है । वह पहली बार घर-परिवार के माहौल से निकलकर औपचारिक शिक्षा के वातावरण में प्रवेश करता है ।

सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में औध्योगिक विकास के कारण नर्सरी विद्यालयों की आवश्यकता महसूस की गई थी क्योंकि वहाँ स्त्रियाँ भी पुरूषों के समान कार्य करने जाती थी परिणाम स्वरूप उनके छोटे बच्चों की देखभाल करने के लिए औध्योगिक क्षेत्र में नर्सरी स्कूल स्थापित किये गये ।

वर्तमान भारत में भी महिलायें कार्य पर जाती हैं तथा शिक्षा के बदलते स्वरूप के कारण आरम्भ से ही बालकों की शिक्षा पर ध्यान दिया जाने लगा है ।

नर्सरी विद्यालय में 3-4 वर्ष की आयु के बच्चों को प्रवेश दिया जाता है । इन विद्यालयों में बालकों की उपस्थिति ऐच्छिक होती है, अनिवार्य नहीं । बालकों पर विषय का कोई बोझ नहीं होता है उन्हें सामान्य ज्ञान की शिक्षा प्रदान की जाती है जैसे रंगों को पहचानना, कविताओं का स्मरण करवाना आदि ।

नर्सरी शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:-

1. विद्यार्थियों के स्वास्थ्य विकास में सहायता करना ।
2. विद्यार्थियों में अच्छी आदतों का विकास करना ।
3. विद्यार्थियों के पढ़ सकने योग्य वातावरण का निर्माण करना ।
4. विद्यार्थियों में अच्छे आचार-विचार व संस्कार विकसित करना ।
5. विद्यार्थियों में सामाजिक गुणों को विकसित करना ।
6. विद्यार्थियों में परस्पर मेंल जोल व समायोजन के गुण विकसित करना ।

4.2 प्राथमिक स्तर पर शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education at Primary level)

प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में उपयोगी नागरिक तथा उतरदायित्व पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण करना है । संविधान में 14 वर्ष तक के बच्चों के लिये शिक्षा की अनिवार्य व्यवस्था का है ।

प्राथमिक स्तर पर शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:-

1. शिक्षा के मूल आधारों की पर्याप्त जानकारी प्राप्त करना ।
2. बालक की भौतिक, मानसिक, सामाजिक, भावात्मक, नैतिक तथा आध्यात्मिक आवश्यकताओं को पूरा करके उसके व्यक्तित्व का विकास करना ।
3. वैज्ञानिक भाव उत्पन्न करना ।
4. विद्यार्थियों में देश प्रेम, अपने रीति-रिवाजों और संस्कृति के प्रति प्रेम-भाव तथा उसमें नागरिक गुण उत्पन्न करना ।

4.3 माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education at Secondary and Senior Secondary level)

शिक्षा समाज की उन्नति के लिये बहुत आवश्यक है । ब्रिटिशकालीन भारत में शिक्षा के क्षेत्र में उन्नति तो अवश्य हुई किन्तु उस समय की शिक्षा का कोई राष्ट्रीय उद्देश्य नहीं था, अंग्रेजों ने अपने हित के लिये शिक्षा की व्यवस्था की । अत: जब भारत स्वतन्त्र हुआ तो शिक्षा को भारतीय संस्कृति पर आधारित करने तथा नवीन लोकतन्त्रीय समाज के लिये नवीन शिक्षा एवं उसके उद्देश्यों के निर्माण की आवश्यकता महसूस की गई ।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education according to Secondary Education Commission 1952-53) आयोग ने भारतीय समाज की आवश्यकतओं को ध्यान में रखकर माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के निम्न उद्देश्य रखने का सुझाव दिया:-

1. लोकतान्त्रिक नागरिकता का विकास (Development of Democratic Citizenship)- भारत में जनता का राज अर्थात जनतन्त्र है और जनतन्त्र को सफल तभी बनाया जा सकता है जब वहाँ के सभी नागरिक शिक्षित हों । अत: शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य जनतान्त्रिक नागरिकता की शिक्षा देना है । नागरिकता के लिये प्रशिक्षित करने का अर्थ है नागरिकों में स्वतन्त्र एवं स्पष्ट चिन्तन करने एवं स्वतन्त्र रूप से निर्णय लेने की योग्यता का विकास करना जिससे वे देश की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक समस्याओं एवं प्रश्नों पर स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करके निर्णय ले सकें और स्पष्ट रूप से अपने विचार व्यक्त कर सकें ।

2. कुशल जीवन-यापन कला की दीक्षा (Training in the art of living efficiently)- शिक्षा का दूसरा उद्देश्य बालक को समाज में जीवन-यापन की कला में शिक्षित करना है । व्यक्ति का विकास समाज में रहकर ही हो सकता है अत: उसे दूसरों के साथ रहने एवं सहयोग के

आदान-प्रदान का महत्व समझना चाहिये । शिक्षा का यह उद्देश्य होना चाहिये कि वह बालकों में सहयोग, सहनशीलता, अनुशासन, सामाजिक चेतना आदि गुणों का विकास करें ।

3. व्यक्तित्व का विकास (Development of Personality)- शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य, बालक के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करना है । व्यक्तित्व के विकास से तात्पर्य व्यक्ति के बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक एवं व्यावहारिक आदि सभी पक्षों के विकास से है । इसके लिये शिक्षा द्वारा बालकों की क्रियात्मक एवं संरचनात्मक शक्तियों को विकसित किया जाना चाहिये । विभिन्न रूचियों का विकास उसकी आत्माभिव्यक्ति एवं व्यक्तित्व के चतुर्मुखी विकास में, अवकाश काल के उचित उपयोग व सांस्कृतिक विरासत की वृद्धि में सहायक सिद्ध होगा ।

4. नेतृत्व के लिये शिक्षा (Education for Leadership)- जनतन्त्र की सफलता के लिये आवश्यक है कि देश का नेतृत्व योग्य हाथों में हो । अत: शिक्षा द्वारा बालकों में अनुशासन एवं नेतृत्व के गुणों का विकास किया जाना चाहिये जिससे आगे चलकर वे अपने दायित्वों का निर्वाह कुशलतापूर्वक कर सकें और देश को भावी कुशल नेतृत्व मिल सके । शिक्षा द्वारा ऐसा नेतृत्व विकसित किया जा सकता है जो न केवल राजनैतिक क्षेत्र में वरन् विज्ञान, व्यवसाय, कला, संस्कृति, उद्योग आदि क्षेत्रों में बालक को नेतृत्व करने में सहायता प्रदान करे ।

5. व्यवसायिक कुशलता की उन्नति (Improvement of Vocational Efficiency)- देश की प्रगति व खुशहाली के लिये आवश्यक है कि लोग आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हो इस दृष्टि से शिक्षा का एक उद्देश्य बालकों को व्यावसायिक प्रशिक्षण देकर उनकी व्यावसायिक कुशलता पर ध्यान देना है । पाठ्यक्रम में विभिन्न व्यवसायों को भी उचित स्थान मिलना चाहिये जिससे बालक अपनी रूचि के अनुसार व्यवसाय चुन सकें ।

4.4 कोठारी आयोग के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य (Aims and Objectives of Education according to Kothari Commission 1994)

कोठारी कमीशन ने शिक्षा के उद्देश्यों को पंचसूत्री कार्यक्रम में निबद्ध किया है-

1. शिक्षा को उत्पादन के साथ जोडना ।
2. शैक्षणिक कार्यक्रमों के द्वारा सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकता को बल देना ।
3. शिक्षा के द्वारा प्रजातन्त्र को संगठित करना ।
4. सामाजिक, शतक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करना ।
5. जिज्ञासा, मनोवृत्ति और मूल्यों के द्वारा कौशल का विकास करते हुये समाज का आधुनिकीकरण करना ।

4.4.1 10+2+3 संरचना- कोठारी आयोग (1964-66) ने सम्पूर्ण शिक्षा को तीन स्तरों में बाँटा है, प्रथम स्तर पर पूर्ण स्कूलों तथा प्राथमिक शिक्षा, द्वितीय स्तर पर हाईस्कूल तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा तथा तृतीय स्तर पर अवर स्नातक, उत्तर स्नातक तथा शोध को सम्मिलित किया गया है ।

इस दृष्टि से 10+2+3 का स्वरूप यों प्रस्तावित किया गया-

1. 1 वर्ष से तीन वर्ष तक की पूर्ण स्कूली अवस्था ।

2. सात से आठ वर्ष तक की प्राथमिक अवस्था जिसके दो उपयोग हो, प्रथम चार से पांच वर्ष अवर अवस्था, द्वितीय 3 वर्ष की उच्चतर प्राथमिक अवस्था ।
3. अवर माध्यमिक अथवा हाईस्कूल अवस्था जिसमें 2 या 3 वर्ष की सामान्य शिक्षा हो अथवा 1-3 वर्ष की व्यावसायिक शिक्षा हो ।
4. उच्चतर माध्यमिक अवस्था जिसमें 2 वर्ष की सामान्य शिक्षा अथवा जिसमें 1-3 वर्ष की व्यावसायिक शिक्षा हो ।
5. उच्चतर शिक्षा की अवस्था जिसमें 3 या उससे अधिक वर्षों का प्रथम डिग्री पाठ्यक्रम हो तथा जिसके उपरान्त द्वितीय डिग्री अथवा 1 से कम डिग्रियों के पाठ्यक्रम हो जिनकी विभिन्न अवधियाँ हों ।

10+2+3 का मुख्य आधार है- व्यावसायिक शिक्षा/देश में एक आवाज उठती रहती है कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली छात्रों को रोजगार नही देती उनमें श्रम के प्रति निष्ठा उत्पन्न नहीं करती । शायद इसी चुनौती को कोठारी कमीशन ने स्वीकार करके शिक्षा का उद्देश्य राष्ट्र विकास निर्धारित किया ।

कोठारी आयोग ने नवीन शैक्षिक संरचना के सन्दर्भ में शिक्षा के उद्देश्यों की व्यवस्था करते हु ये कहा है कि-शिक्षा में जिस सबसे महत्वपूर्ण और जरूरी सुधार की आवश्यकता है, वह है इसका रूप बदलने की, उसे लोगों के जीवन की आवश्यकताओं, आकांक्षाओं से सम्बन्धित करने की और इस प्रकार उसे राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये आवश्यक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का एक शक्तिशाली साधन बनाने की, इस प्रयोजन के लिये शिक्षा का विकास इस तरह होना चाहिये कि उत्पादित बड़े सामाजिक और राष्ट्रीय एकीकरण सम्भव हो सके, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में तेजी आये और सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्य विकसित हो ।

इन उद्देश्यों तथा सामाजिक परिवर्तन के लिये 1023 में शिक्षा को उत्पादन से जोड़ने का संकल्प लिया गया । विज्ञान शिक्षा, शिल्प विज्ञान, तथा औद्योगीकरण, व्यावसायीकरण को कार्यानुभव से जोड़ने की बात कही गई है । सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकीकरण के लिये समान स्कूल, सामाजिक राष्ट्रीय सेवा, भाषानीति तथा राष्ट्रीय चेतना को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है । शिक्षा को आधुनिकीकरण के प्रवाह में ढालने तथा सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा, धर्म की शिक्षा व्यवस्था की गई है ।

सार संक्षेप (Summary) -

शिक्षा व्यक्ति को इस योग्य बनाती है कि वह परिस्थिति के अनुरूप अपने आप को ढ़ालकर स्वतन्त्र रूप से निर्णय लेने में समर्थ बन सके । शिक्षा सन्तुलित मानव का विकास करने और बालकों को समाज के लिये लाभप्रद कार्यों को करने और सामूहिक जीवन में भाग लेने के लिये तैयार करने की आशा से की जाती है ।

शिक्षा औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों साधनों द्वारा प्रदान की जा सकती है । औपचारिक साधन व्यवस्थित होते हैं तथा इनके लक्ष्य व उद्देश्य पूर्व निर्धारित होते हैं । इनके अपने नियम तथा निर्धारित कार्यक्रम होते हैं ।

नर्सरी, प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक आदि स्तरों पर शिक्षा के उद्देश्यों में भिन्नता होती है । देश, काल तथा परिस्थिति के अनुसार भी शिक्षा के उद्देश्य परिवर्तित होते रहते हैं । सभी स्तरों पर शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है ।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) के अनुसार-

(i) लोकतान्त्रिक नागरिकता का विकास ।

(ii) कुशल जीवन-यापन कला की दीक्षा ।

(iii) व्यक्तित्व का विकास ।

(iv) व्यावसायिक कुशलता की उन्नति ।

(v) नेतृत्व के लिये शिक्षा ।

कोठारी आयोग (1964) के अनुसार -

(i) उत्पादन में वृद्धि करना ।

(ii) सामाजिक व राष्ट्रीय एकता का विकास ।

(iii) प्रजातन्त्र को सुदृढ़ बनाना ।

(iv) देश का आधुनिकीकरण करना ।

(v) सामाजिक, नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करना ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. नर्सरी स्तर पर शिक्षा के उद्देश्य बताइये ।
2. प्राथमिक स्तर पर शिक्षा के क्या उद्देश्य हैं? उदाहरण देकर स्पष्ट करें ।
3. माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के क्या उद्देश्य हैं ।
4. लोकतान्त्रिक भारत में शिक्षा के क्या उद्देश्य होने चाहिए? अपने सुझाव दीजिये ।

4.5 व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education)

आज के समय में जीवन जीने के लिये शिक्षा को रोजगारोंमुखी होना आवश्यक है । शिक्षा ऐसी होनी चाहिये जो व्यक्ति को दो वक्त की रोटी उपलब्ध करवाने के योग्य बना सके ताकि वह अपने परिवार या समाज पर बोझ ना बने । व्यावसायिक शिक्षा के द्वारा हम बालक को उसकी रूचि, योग्यता व अभियोग्यता के अनुसार विभिन्न व्यवसायों से परिचित करवाते हैं । किसी व्यवसाय को चुनने में उसकी चाह है, उसका रास्ता दिखाते हैं, मार्गदर्शन करते हैं । व्यवसाय को चुनने से पूर्व उसे कैसे शैक्षिक पाठ्यक्रम का अध्ययन करना है इसका उसे ज्ञान करवाया जाता है ताकि वे उसी प्रकार के वैकल्पिक विषयों का अध्ययन करें । आरम्भ में बालक की राय अपने भावी व्यवसाय को लेकर उतनी स्पष्ट नहीं होती परन्तु जैसे जैसे वह बड़ा होता है किशोरावस्था में उसके कुछ सपने होते हैं वह अपनी पसंद-नापसंद को पहचानने लगता है वैसे-वैसे उसके सपने स्पष्ट आकार लेने लगते हैं उसे अपनी पसंद के व्यवसाय को जानने में मदद मिलती है यदि वह किसी उलझाव की स्थिति में होते है तो विद्यालय में उसे अध्यापक तथा परामर्शदाता से मार्गदर्शन मिलता है तथा घर-परिवार में अपने से बड़ों का तथा अभिभावकों का मार्गदर्शन प्राप्त होता है । विभिन्न वातावरण के सम्पर्क में आने से भी उसकी रूचियों में बदलाव आता है

जैसे-जैसे समझ विकसित होती है उसके जीवन लक्ष्य स्पष्ट होते जाते है जीवन में क्या बनना है? किस व्यवसाय को चुनना है? व्यवसाय हेतु कैसे पाठ्यक्रम का चयन करना है? किस संस्था में प्रवेश लेना है? परीक्षायें कब सम्पन्न होती है? आदि-आदि बातों को वह स्पष्ट रूप से समझने लगता है । इस प्रकार की शिक्षा से जीविका-उपार्जन की शिक्षा अर्थपूर्ण हो जाती है ।

व्यावसायिक शिक्षा द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को प्रगति करने के समान अवसर दिये जाते है । इसके अतिरिक्त वे विभिन्न प्रकार के व्यवसायों के बारे में जानकारी हासिल कर लेते हैं ।

4.6 तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा का इतिहास (History of Technical and Vocational Education)

प्राचीन भारत में व्यावसायिक शिक्षा पर अधिक ज़ोर नहीं दिया जाता था । पिता ही अपने पुत्रों को इन व्यवसायों की शिक्षा दिया करते थे । बालक अपने पिता के व्यवसाय को ही अपनाता था ।

विभिन्न कालों में तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा का इतिहास जानना जरूरी है:-

मुस्लिम काल- मुस्लिम शासकों के संरक्षण में ललित कलाओं और शिल्प कला को अधिक प्रोत्साहन मिला। उत्तम कारीगरों को पारितोषिक भी दिये जाते थे । इस काल में भी ललित कला और शिल्प कला में प्रशिक्षण देने के लिये व्यवस्थित विद्यालयों का अभाव था । दक्ष कारीगर अपने शिष्यों को इन कलाओं का प्रशिक्षण दिया करते थे ।

ब्रिटिश काल- ब्रिटिश काल में भारत के लगभग सभी कुटीर उद्योग, मिलों में निर्मित माल के आयात के परिणास्वरूप ठप्प हो गये । कम्पनी की सरकार ने व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा की ओर ध्यान नहीं दिया । अंग्रेजी सरकार ने अवश्य इन्जीनियरी शिक्षा के लिये सन् 1847 में उत्तर प्रदेश के रूड़की नगर और 1856 में कलकत्ता नगर में इन्जीनियरिंग कॉलेजों की स्थापना की है ।

1882 से 1902 तक- सन् 1882 में नियुक्त हण्टर आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षा को सम्मिलित करने का सुझाव दिया । सन् 1887 में कांग्रेस ने अपने तीसरे अधिवेशन में तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा की माँग की । सन् 1902 तक भारत में कुल 60 तकनीकी संस्थाएं स्थापित हुई थी ।

सन् 1902 से 1937 तक- लार्ड कर्जन ने तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा के प्रसार में विशेष रूचि दिखाई। उसने भारत में कृषि की शिक्षा के लिये प्रयास किये । कर्जन ने ग्रामीण विद्यालयों में कृषि को अनिवार्य विषय बनाया । सन् 1921 तक भारत में कानून के 13, चिकित्सा के 7, कृषि के 2 और इन्जिनियरिंग के 5 कॉलेज थे ।

सन् 1921 से 1937 तक- इस समय में भारत में तकनीकी तथा व्यावसायिक संस्थाओं की स्थापना के लिये सरकार से अनुरोध किया गया तथा कुछ विशिष्ट संस्थाओं जैसे बोस रिसर्च इंस्टीट्यूट, कलकत्ता, इम्पीरियल एग्रीकल्चर इंस्टीट्यूट, कानपुर की स्थापना हुई ।

सन् 1937 से 1947 तक- सन् 1937 तक ऐबट एण्ड बुड समिति ने व्यावसायिक शिक्षा के बारे में अनेक सुझाव दिये । जो निम्न हैं :-

1. व्यावसायिक शिक्षा को साहित्यिक शिक्षा के समान स्तर प्रदान किया जाए ।

2. व्यावसायिक शिक्षा के लिये पृथक विद्यालय स्थापित किये जाएं ।
3. इसके लिये पूर्ण कालीन और अंशकालीन पाठ्यक्रम चलाए जाएं ।
4. औध्योगिक एवं व्यापारिक परिस्थितियों के आधार पर व्यावसायिक शिक्षा का रूप निश्चित किया जाए ।

भारतवर्ष में प्रचलित शिक्षा का सबसे बड़ा दोष यह था कि यहाँ की शिक्षा पुस्तकीय ज्ञान अधिक प्रदान करती थी । अत: विद्यालयों से निकलने वाले विद्यार्थियों में आत्मनिर्भरता के प्रति आत्मविश्वास का अभाव रहता था । साथ ही ऐसी शिक्षा प्राप्त करने वाले नवयुवक हस्तकार्य के प्रति घृणा का भाव रखते थे और राष्ट्र के विकास में कोई सक्रिय योगदान नहीं दे पाते थे । इन बातों को ध्यान में रखकर शिक्षा आयोग (1964-66) ने लिखा है कि "शिक्षा को उत्पादन के निकट लाने का एक अन्य कार्यक्रम यह हो सकता है कि माध्यमिक स्तर पर शिक्षा में व्यावसायिक पक्ष को सुदृढ़ किया जाये और विश्वविद्यालय स्तर पर कृषि तथा तकनीकी शिक्षा पर अधिक बल दिया जाये । भारतीय स्थिति में इस कार्यक्रम का विशेष महत्व है क्योंकि भारतीय शिक्षा प्रणाली अभी तक नवयुवकों को प्राय: राजकीय सेवा और तथाकथित बौद्धिक व्यवसायों के लिये ही प्रशिक्षित करती रही है । शिक्षा आयोग ने देश में एक ही शिक्षा प्रणाली 10+2+3 लागू करने का सुझाव दिया था । आयोग का विचार था कि विद्यालयी शिक्षा 12 वर्ष की हो तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर का व्यावसायीकरण करने के लिये सभी प्रकार के प्रयत्न किये जाने चाहिये ताकि 50% छात्र इस स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रम में प्रवेश ले सकें । सन् 1968 में भारत सरकार ने शिक्षा आयोग द्वारा प्रस्तावित शिक्षा के रूप को राष्ट्रीय नीति के रूप में घोषित किया ।

इस नवीन शिक्षा प्रणाली में व्यावसायिक शिक्षा के दो रूप रखे हैं-

1. माध्यमिक स्तर तक कार्य जगत से परिचय या कार्यानुभव ।
2. उच्च माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा ।

4.7 व्यावसायिक शिक्षा का महत्व (Importance of Vocational Education)

आज के युग में सामान्य शिक्षा का कोई अर्थ नही हैं व्यक्ति के पास नौकरी पाने के लिये किसी भी प्रकार की व्यावसायिक डिग्री का होना आवश्यक है । दूसरे शब्दों में यह कहना गलत ना होगा कि व्यावसायिक शिक्षा के बिना शिक्षा का कोई मूल्य नहीं । व्यावसायिक शिक्षा का महत्व निम्न बिन्दुओं के आधार पर समझा जा सकता है:-

1. व्यक्तिगत भिन्नता- प्रत्येक बालक दूसरे बालक से भिन्न होता है । बालक की मानसिक व शारिरिक क्षमताएं भिन्न-भिन्न होती हैं । उनकी आदतें, रूचियाँ, अभिरूचियाँ भिन्न होती हैं । अत: व्यक्तिगत भिन्नता को समझते हुये प्रत्येक बालक को भिन्न-भिन्न व्यवसायों का चयन करना चाहिये ।

2. व्यवसायों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण- प्रत्येक व्यवसाय की अपनी विशिष्टता होती है । उसके लिये व्यक्ति में उसी प्रकार की कुशलता का होना अनिवार्य है । कोई कार्य छोटा या बड़ा

नही होता है । व्यक्ति हर क्षेत्र में अपनी योग्यता सिद्ध कर सकता है । अत: बालकों में व्यवसाय के प्रति सकारात्मक सोच उत्पन्न की जा सकती है ।

3. कार्य सन्तुष्टि- यदि व्यक्ति को अपनी पसंद का व्यवसाय मिलेगा तो उसे उस कार्य को करने में मजा आयेगा । उसे सन्तुष्टि मिलेगी । इसके विपरीत यदि उसका मन किसी अन्य व्यवसाय को करने का है जो उसे नहीं मिल पाया तो वह अपने वर्तमान कार्य को मन लगाकर नहीं कर पायेगा उसे खीझ या चिड़चिड़ाहट पैदा हो सकती है तथा आत्म सन्तुष्टि नहीं मिल पायेगी । अत: व्यावसायिक शिक्षा द्वारा उसे सही व्यवसाय के चयन में मदद मिलती है ।

4. व्यक्ति की प्रतिभा का उपयोग- यदि व्यक्ति अपनी रूचि व योग्यता से किसी व्यवसाय में प्रवेश करता है तो उसकी प्रतिभा का उपयोग समाज व राष्ट्र द्वारा किया जा सकता है । वह अपने कार्य-क्षेत्र में कुछ नया प्रयोग कर अपनी सृजनात्मकता प्रदर्शित कर सकता है ।

5. वास्तविक परिस्थितियों में सामंजस्य- विभिन्न व्यवसायों के बारे में जब छात्र को पूर्व में जानकारी हासिल हो जाती है तो वह उस व्यवसाय में जाने से पूर्व बहुत सी बातें जान लेते हैं । जैसे कार्य की प्रकृति क्या है? किस-किस तरह की चुनौतियों का सामना उन्हें करना पड़ सकता है? कार्य स्थल पर क्या-क्या परेशानियाँ आ सकती हैं? अत: वह मानसिक रूप से उन स्थितियों का मुकाबला करने के लिये खुद को तैयार कर लेता है और परिस्थितियों से सामंजस्य बैठाने का प्रयास करता है ।

सार-संक्षेप (Summary) :

व्यवसायिक शिक्षा वर्तमान शिक्षा की आवश्यकता है । व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता प्रत्येक व्यक्ति को है । समाज व राष्ट्र का उत्थान इससे संभव है । प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यता, रूचि, अभिरूचि के आधार पर व्यवसाय चयन करने में सहायता मिलती है । व्यक्ति की व्यक्तिगत भिन्नता का ध्यान रखा जाता है । व्यक्ति को कार्य-सन्तुष्टि मिलती है तथा वह वास्तविक परिरिथतियों में समायोजन करना सीख जाता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. व्यावसायिक शिक्षा से क्या अभिप्राय है?
2. व्यावसायिक शिक्षा का वर्तमान समय में क्या औचित्य है?
3. व्यावसायिक शिक्षा का महत्व स्पष्ट करें ।

4.8 कार्यानुभव (Work Experience)

माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य छात्रों में व्यावसायिक कुशलता की वृद्धि करना है । तत्कालीन शिक्षा में प्रयोगात्मक रूप का अभाव है । यदि हम विद्यार्थियों को व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करना चाहते हैं तो उन्हें कार्य अनुभव सम्बन्धित क्रियाओं से अवगत करवाना होगा । कार्य अनुभव के आधार पर शिक्षा देने की अनुशंसा कोठारी आयोग द्वारा भी की गई है । परन्तु फिर भी विद्यालयों में इस प्रकार के पाठ्यक्रमों का अभाव है । कार्य अनुभव पर आधारित विभिन्न प्रकार के कोर्सों जैसे मुर्गी पालन, बागवानी, टाइप, डेरी, फल-संरक्षण, साबुन बनाना, जिल्दसाजी,

मोटर मरम्मत आदि का अभाव है । अत: सरकार को वित्तिय सहायता प्रदान कर कार्य अनुभव सम्बन्धी शिक्षा व्यवस्था पर ध्यान देना चाहिये ।

कोठारी आयोग के अनुसार - कार्य अनुभव का उद्देश्य छात्रों को अपने हाथों के प्रयोग की शिक्षा देना तथा इसके माध्यम से उनके बौद्धिक तथा भावात्मक वृद्धि में सहायता प्रदान करना है।

कोठारी आयोग ने उच्च कक्षाओं में कार्यानुभव के माध्यम से श्रम के प्रति निष्ठा उत्पन्न करने पर बल दिया है । "उच्च कक्षाओं में यह कला शिक्षण का रूप धारण कर सकती है । जिससे विद्यार्थियों में सृजनात्मक योग्यता तथा प्राविधिक चिन्तन विकसित हो तभी कार्यानुभव जीवन की यथार्थ परिस्थितियों में प्रदान किया जा सकता है उदाहरण के लिये कटाई अथवा बुवाई के समय खेतों पर कार्य करना अथवा किसी परिवार की इकाई में कोई उत्पादन कार्य करना तथा इसी तरह के अवसरों का अधिक से अधिक उपयोग करना ।"

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि कार्य का अनुभव स्वयं करके देखने पर ही विद्यार्थी उसका अनुभव कर सकता है । श्रम के प्रति उसमें सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करना ही कार्य अनुभव का उद्देश्य है ।

4.9 अनवरत शिक्षा (Continuing Education)

शिक्षा जीवन-पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है । शिक्षा मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास करती है ।

"निरन्तर शिक्षा एक बढ़ती हुई फसल के समान है जिसका बीजारोपण तथा वृक्षारोपण का काम स्कूली या औपचारिक शिक्षा करती है"

- कोठारी आयोग

तीव्र परिर्वतनों की परिस्थितियों तथा ज्ञान के विकास को देखते हुये यह आवश्यक है कि जीवन को पूरी तरह से जीने के लिये मनुष्य को निरन्तर अध्ययन करना चाहिये । अध्ययन सभ्य जीवन का तरीका है ।

अनवरत शिक्षा को निरन्तर शिक्षा या अविरल शिक्षा या सतत् शिक्षा भी कहते है । निरन्तर शिक्षा को तीन विभिन्न स्तरों में प्रौढों की आवश्यकतानुकूल प्रस्तुत किया जा सकता है :-

1. उच्च शिक्षा प्राप्त ।
2. सामान्य नागरिक तथा कर्मचारी ।
3. स्कूल के बाहर का युवा वर्ग ।

कोठारी कमीशन के अनुसार सतत् शिक्षा दो विभिन्न समूहों की आवश्यकता के अनुकूल होनी चाहिये :-

1. प्रथम वह समूह जो दूसरों के साथ मिलकर संस्थाओं में जाकर अंशकालीन (Part-time) शिक्षा प्राप्त करता है । अथवा जो विभिन्न संस्थाओं, विभागों, विश्वविद्यालयों, सैकण्ड्री शिक्षा संस्थानों द्वारा विशिष्ट विषयों जैसे व्यावसायिक तकनीकी या कृषि के लिये दी जाने वाली अंशकालीन शिक्षा प्राप्त करता है ।
2. दूसरा समूह वह जो स्कूल के घण्टों में अपने घर में ही अध्ययन करता है । किन्तु जिसे अपनी सुविधा अनुसार सहायता की आवश्यकता होती है ।

इस प्रकार अनवरत शिक्षा का क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है । यह शिक्षा विभिन्न समूहों को शैक्षिक व्यावसायिक रूचि, सांस्कृतिक आकांक्षाओं और जनसाधारण के कार्यों की जिम्मेदारी की भावना की दृष्टि से सहयोग प्रदान करती है ।

इस दृष्टि से विश्वविद्यालयों को सतत् शिक्षा के विस्तृत और विभित्र स्वरूप के अध्ययन हेतु कार्य करना होगा ।

सतत् शिक्षा मनुष्य जीवन के मूल्य, उसकी आवश्यकता व उसकी समस्याओं के हर क्षेत्र से सम्बन्धित है। मनुष्य जीवन के लचीलेपन तथा सामाजिक बदलती हुई परिस्थितियों में सतत् शिक्षा के दर्शन को विचारपूर्ण व उद्देश्यपूर्ण बना दिया है । सतत् शिक्षा की अवधारणा के पीछे तीन तथ्य कार्य करते है जो इसके क्षेत्र का निर्धारण करने वाले महत्वपूर्ण तत्व हैं-

1. अध्ययन आजीवन चलने वाली क्रिया है । (Learning is a life long process)
2. प्रौढ़ व्यक्तियों को ज्ञान अपनी व्यक्तिगत रूचि और समाज के अनुकूल प्राप्त करना चाहिये । (Knowledge should be taken to the adult person both in his individual interest and that of the society)
3. विश्वविद्यालय ज्ञान देने की सबसे साधारण और सम्पन्न संस्थायें हैं ।

भारत में निरन्तर शिक्षा प्राचीनकाल से ही पायी जाती है एक कहावत है "प्रतिदिन अध्ययन करो" । इसका अभिप्राय निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है । पंचवर्षीय योजनाओं में भी इस बात का ध्यान रखा गया है । प्रौढ शिक्षा हेतु विभित्र कार्यक्रम चलाने हेतु राशि का प्रावधान किया गया है । निरन्तर शिक्षा के विकास हेतु खुले विश्वविद्यालयों का आरम्भ भी विशेष महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है । भारत में सर्वप्रथम दिल्ली विश्वविद्यालयों के पत्राचार निर्देशालय ने पत्राचार पाठ्यक्रम आरम्भ किये । कालान्तर में पंजाबी विश्वविद्यालय, मेंरठ, मैसूर, हिमाचल तथा राजस्थान विश्वविद्यालयों ने भी पत्राचार पाठ्यक्रमों को आरम्भ किया ।

4.10 विद्यालयशिक्षा का औपचारिक साधन - (Formal School Structure)

विद्यालय वह स्थान है जहाँ विद्या का आदान-प्रदान होता है । औपचारिक शिक्षा प्रदान करने के सक्रिय साधन हैं ।

जॉन ड्यूवी के अनुसार - "विद्यालय एक ऐसा विशिष्ट वातावरण है जहाँ बालक के वांछित विकास की दृष्टि से उसे विशिष्ट क्रियाओं तथा व्यवसायों की शिक्षा दी जाती है" ।

रॉस के अनुसार - "विद्यालय वे संस्थायें हैं, जिनकों सभ्य मानव ने इस दृष्टि से स्थापित किया है कि समाज में सुव्यवस्थित तथा योग्य सदस्यता के लिये बालकों को तैयार करने में सहायता मिले" ।

4.11 आधुनिक विद्यालयों की प्रमुख विशेषताएं (Main Characteristics of Modern Schools)

1. विद्यार्थियों के प्रति नवीन दृष्टिकोण (New attitude towards students) - प्राचीन मान्यता के अनुरूप यह माना जाता था कि बालक का मस्तिष्क एक कोरी स्लेट है जिस पर कुछ भी लिखा जा सकता है । जबकि आधुनिक मान्यता के अनुसार विद्यालय यह मानता है

कि प्रत्येक बालक का अपना व्यक्तित्व होता है जिसको लेकर वह विद्यालय में प्रवेश करता है साथ ही शिक्षण प्रक्रिया में बालक का सक्रिय योगदान बहुत महत्वपूर्ण है ।

2. शिक्षा में क्रिया के सिद्धान्त पर बल (Importance of the Principle of Activity in Education) - आधुनिक विद्यालय बालक को जीवनोपयोगी व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करते हैं । इन विद्यालयों में बालकों को रचनात्मक कार्य सिखाये जाते हैं । इन विद्यालयों में करके सीखने (Learning by doing) के सिद्धान्त पर बल दिया जाता है ।

3. सामुदायिक भावना का विकास (Development of Community Feeling) - जॉन ड्यूवी के अनुसार विद्यालय एक लघु-समाज है । इस कथन से यह अभिप्राय है कि विद्यालय को समाज का प्रतिनिधित्व करना चाहिये तथा साथ ही साथ विद्यालय का वातावरण इस प्रकार का होना चाहिये जो छात्रों में सामाजिक गुणों व दक्षता को उत्पन्न कर सके एवं बालक का समाज के साथ सामंजस्य कर सके ।

4. सक्रिय वातावरण होना (Have an Active Environment) - आधुनिक विद्यालयों का वातावरण उल्लास सक्रियता एवं स्फूर्ति से परिपूर्ण होता है । यह छात्र को एक निष्क्रिय श्रोता न समझकर शिक्षण प्रक्रिया में एक सदस्य के रूप में मानते हैं । यह विद्यालय को सिर्फ सूचना प्रदान करने तक ही सीमित नहीं रखते वरन् इनका यह मानना होता है कि शिक्षा को खेल के मैदानों, प्रयोगशालाओं, पिकनिक पर्यटन व अन्य सहभागी क्रियाओं के द्वारा भी गृहण करते हैं ।

5. परिवार तथा विश्व को जोड़ने वाली कड़ी (Connecting link between home and the world) - परिवार बालक में प्रेम, दया, सहानुभूति, सहनशीलता, सहयोग, सेवा, अनुशासन एवं निस्वार्थता आदि गुणों को विकसित करता है परन्तु परिवार में रहकर यह सारे गुण परिवार की चार दीवारी में उसके अपने सम्बन्धित तक ही सीमित रह जाते हैं । इससे उसका दृष्टिकोण संकुचित हो जाता है । विद्यालय बालक के पारिवारिक जीवन को बाह्य जीवन से जोड़ने वाली कड़ी है । विद्यालय में वह भिन्न-भिन्न विद्यार्थियों व अध्यापकों के सम्पर्क में आता है । उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन आता है ।

4.12 विद्यालय के औपचारिक कार्य (Formal functions of School)

विद्यालय के औपचारिक कार्यों का सम्बन्ध बालक के मानसिक विकास से है । अत: इस सम्बन्ध में विद्यालय के निम्नलिखित कार्य हैं-

1. मानसिक शक्तियों का विकास (Development of Mental Powers) - विद्यालय का प्रथम औपचारिक कार्य बालक का मानसिक एवं बौद्धिक विकास करना हैं जिससे बालक में तर्क कल्पना, चिन्तन एवं निर्णय शक्ति का विकास हो सके तथा वह स्वतन्त्रतापूर्वक पूर्ण विवेक से विचार कर निर्णय ले सकने में समर्थ हो सके ।

2. चारित्रिक विकास (Character Development) - बालक का चारित्रिक विकास करने में सहायता देना किसी भी विद्यालय का महत्वपूर्ण कार्य होता है । सामाजिक व्यवस्थाओं के जटिल होने के फलस्वरूप बालक के चरित्र निर्माण घर-परिवार व धार्मिक संस्थाओं के अलावा विद्यालय की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती जा रही है । विद्यालयों को बालकों के चारित्रिक एवं

नैतिक विकास हेतु उपयुक्त सामाजिक वातावरण की रचना तथा सामाजिक क्रियाओं की व्यवस्था करनी चाहिये जिनके माध्यम से बालक के चरित्र का विकास किया जा सके ।

3. नागरिकता के गुणों का विकास (Development of Citizenship) - विद्यालय का एक प्रमुख कार्य यह भी है कि वह बालक में नागरिकता के गुणों का विकास करें जिससे भविष्य में वे देश के आदर्श नागरिक बन सके । इस दृष्टि से विद्यालय बालकों को समाज में अपना स्थान समझने की, अपने कर्त्तव्य एवं अधिकार समझकर उनका सही उपयोग करने की शिक्षा प्रदान करता है ।

4. सामाजिक भावना का विकास (Development of Social Feeling) - विद्यालय वातावरण में बालकों की सामाजिक भावना का विकास होता है वह अन्य साथी समूह के साथ रहकर सामाजिक गुणों का विकास करते हैं । छात्रों में एक दूसरे से सहयोग करना, त्याग करना, सहानुभूति, सामाजिक जागरूकता, स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना का उदय होता है ।

5. स्वास्थ्य विकास (Physical Development) - विद्यालय का एक महत्वपूर्ण कार्य यह भी है कि इसमें शिक्षा प्राप्त करने वाले बालक अपने शारीरिक विकास व स्वास्थ्य के प्रति पूर्णरूप से सजग हो । वस्तुतः मानव का मानसिक विकास शारीरिक विकास पर निर्भर है । कहा भी जाता है "स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है ।"

6. सांस्कृतिक विकास (Cultural Development) - विद्यालय समाज के लघु रूप होते है । अतः प्रत्येक विद्यालय को समाज की संस्कृति एवं सभ्यता की रक्षा करने का जिम्मा दिया जाता है । विद्यालय संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्थानान्तरण करने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं ।

7. व्यावसायिक एवं औद्योगिक शिक्षा (Vocational and industrial Education) - शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाना होता है । वर्तमान समय में व्यवसायों की विभिन्नता व जटिलता को देखते हुये यह आवश्यक हो जाता है कि बालक माध्यमिक स्तर के उपरान्त अपने भावी व्यवसाय के बारे में जानकारी हासिल करें तथा रूचि के व्यवसाय के अनुसार ही प्रशिक्षण प्राप्त करें । अतः विद्यालय का यह कार्य होता है कि वे छात्रों को विभिन्न व्यावसायिक क्षेत्रों की जानकारी दें तथा पाठ्यक्रम के माध्यम से उनकी रूचि के शिक्षण की व्यवस्था करें ।

4.13 विद्यालय के अनौपचारिक कार्य (Informal functions of School)

- छात्रों को विभिन्न सामाजिक उत्सवों के माध्यम से सामाजिक प्रशिक्षण देना ।
- खेल-कूद, स्काउटिंग, गाइडिंग, घुड़सवारी आदि की व्यवस्था कर उन्हे शारीरिक प्रशिक्षण देना ।
- उनकी रचनात्मक क्रियाओं को प्रोत्साहित करना ।
- उनमें राष्ट्रीय एकता की भावना को विकसित करना ।
- वाद-विवाद प्रतियोगिताओं, नाटकों, प्रदर्शनियों, चित्रकलाओं तथा संगीत सम्मेलनों आदि की व्यवस्था कर उन्हें भावात्मक प्रशिक्षण देना ।

थॉमसन (Thomson) के अनुसार- विद्यालय का कार्य छात्रों को निम्न प्रकार से प्रशिक्षण देना है-

1. मानसिक प्रशिक्षण ।
2. चारित्रिक प्रशिक्षण ।
3. सामुदायिक जीवन का प्रशिक्षण ।
4. राष्ट्रीय गौरव एवं देशभक्ति का प्रशिक्षण ।
5. स्वास्थ्य एवं स्वच्छता का प्रशिक्षण ।

ब्रूबेकर (Brubacker) के अनुसार:- विद्यालय के निम्नलिखित कार्य हैं-

1. **संरक्षण कार्य (Conservation function) -** विद्यालय का प्रमुख कार्य संस्कृति का संरक्षण है । अत: पूर्वजों की संस्कृति का ज्ञान करवाना विद्यालय का उत्तरदायित्व है ।

2. **प्रगतिशील कार्य (Progressive function) -** संस्कृति के साथ-साथ विद्यालय का यह भी कार्य है कि वह समाज की प्रगति में अपना योगदान दे । नवीन विचारों व कार्यक्रमों को अपनाकर विद्यालय समाज की प्रगति में अपना सहयोग दे सकता है ।

3. **निष्पक्ष कार्य (Neutral function) -** समाज में विद्यालय का स्थान उच्च होता है अत: विद्यालय को किसी भी विवाद में नहीं पड़ना चाहिये बल्कि मूल्यों व सत्य की शिक्षा को आगे बढ़ाने में अपना अमूल्य योगदान देना चाहिये ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. औपचारिक शिक्षा की दो विशेषताएं बताइये ।
2. शैक्षिक अभिकरण के रूप में विद्यालय की भूमिका स्पष्ट करिये ।
3. आधुनिक विद्यालय की प्रमुख विशेषताएं बताइये ।
4. विद्यालय से क्या अभिप्राय है? विद्यालय के कार्यो की विवेचना करिये
5. विद्यालय को प्रभावशाली शैक्षिक अभिकरण बनाने हेतु अपने सुझाव दीजिये ।

4.14 खुला-विद्यालय (Open School)

शिक्षा जगत में इवान इलिच की 'डी स्कूलिंग सोसाइटी' और एवर्ट रीमर की 'स्कूल इज डैड' पुस्तकों ने एक नयी विचारधारा को जन्म दिया । रीमर के अनुसार हमारी परम्परित विद्यालय पद्धति मर गई है और हमें शिक्षा के नये साधनों की खोज करनी है? इलिच के विचार के अनुसार हम विद्यालयों को विस्थापित कर सकते है अथवा हम अपनी संस्कृति को विद्यालय रहित बना सकते हैं क्योंकि विद्यालय अर्थहीन हो गये हैं । इलिच ने विद्यालयों को कारागह माना है इसीलिये वह खुले या स्वतन्त्र विद्यालयों की स्थापना करना चाहता है । उसके अनुसार स्वतन्त्र विद्यालयों की दो मुख्य आवश्यकताएं है-

1. उन्हें ग्रेडों और प्रमाण-पत्रों से मुक्त होना चाहिये ।
2. उन्हें समाज के छुपे हुये मूल्यों से स्वतन्त्र होना चाहिये ।

उसके अनुसार इस स्वतन्त्र और खुले विद्यालय में स्वतन्त्र अध्यापकों की आवश्यकता है । अभी अध्यापक का क्षेत्र पाठ्यक्रम और विद्यालय तक ही सीमित है इसे बढ़ाकर सम्पूर्ण मानव जीवन से सम्बन्धित करना है । संक्षेप में उनके विचारानुसार इस तकनीकी युग में कुछ चुने हुये

शक्तिशाली लोगों द्वारा वैज्ञानिक ज्ञान और संचार साधनों पर प्रभुत्व पा लेने के कारण जनसाधारण उन सुविधाओं से वंचित रहता है । अतः इस समाज-व्यवस्था में परिवर्तन की आवश्यकता है ।

एवर्ट रीमर के अनुसार जब छात्रों की संख्या अत्यधिक होती रही और शिक्षा के साधन न्यून है, तब किसी प्रकार की शिक्षा नही दी जा सकती है । उसके मतानुसार निःशुल्क शिक्षा का विचार दोषपूर्ण है। इस विचार के कारण असमानता का विकास होता है । साधनों की न्यूनता के कारण कुछ साधन-सम्पन्न व्यक्ति ही विद्यालयों का लाभ उठा पाते है और बचे हुये अन्य लोग समाज में निम्न स्तर बनाये रखने को बाध्य किये जाते है । भारत जैसे विकासशील देशों में अनेक वर्षो तक इस पद्धति के कारण केवल कुछ साधन सम्पन्न लोग ही शिक्षा प्राप्त करने की विलासिता का उपयोग कर सकते है । विद्यालयों और अच्छे वातावरण वाले बच्चों को पुरस्कार देने के समान है । विद्यालय में सीखने को कार्य करने और खेलने से पृथक किया जाता है । यह एक घातक प्रवृत्ति है । रीमर के अनुसार इस विद्यालयी व्यवस्था का विकल्प अधिक सस्ता होना चाहिये ताकि सभी उसका लाभ उठा सकें। एक विद्यार्थी किसी दूसरे का हक मार शिक्षा प्राप्त न करें । प्रत्येक व्यक्ति सीखने के लिये पूर्ण स्वतन्त्र हो ।

शिक्षा के इस बदलते हुये अर्थ और समाज तथा समाज की आवश्यकता के अनुरूप उसे ढालने के विचार से विश्व शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट 'लर्निंग टु बी' इसी बात को स्वीकार करते हुये लिखा है- "विद्यार्थियों के स्थान की व्यवस्था, समय-विभाग चक्र, अध्यापन-योजना, साधनों के वितरण, सभी क्षेत्रों में गत्यात्मता की तथा विद्यालयो के अधिक लचीलेपन की आवश्यकता है ताकि वे नयी सामाजिक आवश्यकताओं और तकनीकी विकास के अनुरूप ढाले जा सकें ।

माध्यमिक स्तर पर केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड दिल्ली द्वारा आयोजित खुला विद्यालय (ओपन स्कूल) का प्रयोग भी उल्लेखनीय है । इस योजना के अन्तर्गत 14 वर्ष की आयु से ऊपर के सब व्यस्कों के लिये माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करना तथा प्रमाण-पत्र प्राप्त करने की व्यवस्था है । माध्यमिक शिक्षा के लिये कोई पूर्व-प्रवेश योग्यता आवश्यक नहीं है । प्रवेशार्थी में केवल पढ़ने लिखने की क्षमता होनी चाहिये । विद्यालय से बाहर रह गये लोगों, शिक्षा छोड़ देने वाले व्यक्तियों, गहणियों तथा माध्यम्कि शिक्षा के आयुवर्ग में न आने वाले जनों के लिये एक ऐसी प्रणाली की आवश्यकता महसूस की गई जो लचीली हो, भविष्यान्मुखी हो और जो शिक्षा को छात्रों के द्वार तक ले जाने में समर्थ हो । ऐसी प्रणाली पर अनेक विचार-विमर्श के बाद केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) ने जुलाई 1979 में देश का पहला मुक्त विद्यालय दिल्ली में स्थापित किया ।

मुक्त विद्यालय स्थापना के उद्देश्य - औपचारिक माध्यमिक शिक्षा प्रणाली के विकल्प के रूप में विद्यालय स्तर पर मुक्त अधिगम व्यवस्था के रूप में शिक्षा प्रदान करने के ध्येय से मुक्त विद्यालय आरम्भ किये गये । यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत राष्ट्र के बहुत से लोगों की आवश्यकताएं जानने के बाद शुरू किये गये ।

मुक्त विद्यालय के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. औपचारिक विद्यालय प्रणाली के विकल्प के रूप में एक समानान्तर अनौपचारिक प्रणाली प्रस्तुत करना ।

2. विद्यालय प्रणाली में किसी वजह से प्रवेश से वंचित रह गये विद्यार्थियों, कार्यरत प्रौढ़ों, महिलाओं आदि के लिये शिक्षा के अवसर उपलव्य करवाना ।
3. दूरवर्ती शिक्षा की विधियों के द्वारा माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, तकनीकी, व्यावसायिक तथा जीवन को समृद्ध करने वाले पाठ्यक्रम संचालित करना ।
4. माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रमों तक ले जाने वाले ब्रिज (Bridge) या आरम्भिक पाठ्यक्रमों का आयोजन करना ।
5. अनुसंधान, प्रकाशन तथा सूचना के प्रसार के द्वारा शिक्षा की एक मुक्त तथा दूरवर्ती अधिगम पर आधारित प्रणाली को प्रोत्साहित करना ।

मुक्त विद्यालयों की प्रमुख विशेषतायें (Main Characteristics of Open School)- मुक्त विद्यालयों की निम्नलिखित विशेषाए हैं-

1. मुक्त विद्यालयों के द्वार प्रत्येक व्यक्ति के लिये खुले है । इसमें आयु सीमा का कोई बन्धन नहीं है ।
2. इसका कार्यक्षेत्र सीमित नहीं है, भारत या भारत से बाहर जिसे भी इसकी सेवा चाहिये उसके लिये यह खुला हुआ है ।
3. विद्यार्थियों को एक निश्चित सूची से अपनी पसन्द के विषय चुनने की स्वतन्त्रता है और अपनी सुविधानुसार पढ़ने की आजादी ।
4. पाँच वर्षो में तथा नौ प्रयासों में बारी-बारी से विभिन्न विषयों में या एक ही बार में पूरी परीक्षा पास की जा सकती है ।
5. भाषा का माध्यम, विद्यार्थियों की सुविधानुसार हिन्दी या अंग्रेजी हो सकता है ।
6. सरल, सुबोध तथा बोधगम्य पाठ्य सामग्री प्रत्येक विद्यार्थी तक पहुँचायी जाती है ।
7. विद्यार्थियों की कठिनाईयों के निवारण हेतु पूरे देश में अध्ययन केन्द्रों की सुविधा दी जाती है।
8. औपचारिक शिक्षा-प्रणाली की तुलना में अध्ययन शुल्क काफी कम होता है ।
9. विद्यार्थियों का लगातार मूल्यांकन होता रहे, ऐसी व्यवस्था बनाई जाती है इस हेतु Tutor Marked Assignement (TMA) दिये जाते है ।
10. अध्ययन-केन्द्रों पर व्यक्ति सम्पर्क कार्यक्रम (Personal contact programme) आयोजित किये जाते है ।
11. व्यावसायिक पाठ्यक्रम या तो एक विषय के रूप में अलग से अथवा व्यावसायिक पैकेज (Vocational Package) या एकेडमिक पाठ्यक्रम के साथ-साथ आवश्यकतानुसार लिये जा सकते हैं ।
12. यह आधुनिक शिक्षा, संचार तथा सूचना तकनीकियों के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करने के अवसर प्रदान करती है ।

4.15 राष्ट्रीय खुला विद्यालय (National Open School)

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने जुलाई 1979 में देश का पहला मुक्त विद्यालय दिल्ली में स्थापित किया । 1989 में यह विद्यालय मानव संसाधन मन्त्रालय के अधीन आ गया । मुक्त

विद्यालय की सफलता देखते हुये अक्टूबर 1990 में सरकार द्वारा इस राष्ट्रीय खुला विद्यालय (National Open School) के रूप में शुरू कर दिया गया । वर्ष 2003 के आरम्भ में इसका नाम बदल कर राष्ट्रीय विद्यालय संस्थान (N.I.O.S.) रख दिया गया ।

प्रवेश-प्रक्रिया (Admission) - N.I.O.S. में प्रवेश लेने के लिये न्यूनतम आयु 15 वर्ष निर्धारित की गई है । न्यूनतम आयु से ऊपर कोई भी विद्यार्थी इसमें प्रवेश ले सकता है । प्रवेश वर्ष में जुलाई से 1 सितम्बर के बीच होता है । N.I.O.S. को अपने को अपने यहाँ प्रवेश लेने वाले विद्यार्थी की परीक्षा लेने व प्रमाण पत्र देने का अधिकार है । इनके द्वारा दिये गये प्रमाण-पत्रों का उच्च-शिक्षा में प्रवेश लेने के लिए मान्यता मिली हुई है ।

विषय चयन तथा भाषा का माध्यम (Subject selection and language used for instruction) - N.I.O.S. के अन्तर्गत विद्यार्थी अपनी सुविधानुसार अपनी रूचि के विषयों का चयन कर सकता है । कला के साथ विज्ञान विषय भी ले सकता है । इसमें विद्यार्थी को हिन्दी या अंग्रेजी कोई सा भी माध्यम चुनने की स्वतन्त्रता है । किन्तु माध्यमिक स्तर पर अस्थायी रूप से बंगाली, तेलगू गुजराती, कन्नड व मराठी माध्यम लेने की सुविधा है ।

पाठ्यक्रम की अवधि एवं परीक्षा (Duration of course and examination) - N.I.O.S. में एक कक्षा उत्तीर्ण करने के लिये अधिकतम समय 5 वर्ष तथा परीक्षा के लिये अधिकतम 9 अवसर दिये जाते है । प्रति 6 माह बाद परीक्षा होती है जिसे C.B.S.E. बोर्ड आयोजित करता है । परीक्षा में विद्यार्थी किसी भी अवसर में कितने भी पेपर दे सकता है । सभी विषयों में उत्तीर्ण हो जाने के पश्चात् ही विद्यार्थी को प्रमाण-पत्र दिया जाता है ।

वर्ष भर के लिये बालकों की फीस एक हजार रूपये (Rs. 1000/-) बालिकाओं के लिये सात सौ पचास रू. (Rs. 750/-) एवं विकलाग विद्यार्थियों के लिये पाँच सौ पचास रूपये (Rs. 550/-) है ।

शिक्षण-विधि (Teaching-Method) -

1. स्वअधिगम हेतु मुद्रित सामग्री (Printed Material for self learning) - N.I.O.S. के अकादमिक स्टॉफ द्वारा स्तरीय स्वअधिगम हेतु मुद्रित सामग्री तैयार की जाती है । व इसे पैकेज के रूप में विद्यार्थियों को भेजा जाता है ।
2. दृश्य-श्रव्य कार्यक्रम (Audio-Visual Programme) - ये कार्यक्रम अध्ययन केन्द्रों पर उपलब्ध रहते हैं । अत: विद्यार्थी व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम में इन्हें देख व सुन सकते हैं । इन कार्यक्रमों की कैसेट डिस्क (CD) भी केन्द्रों में उपलब्ध रहती है । विद्यार्थी चाहे तो उन्हें खरीद सकते हैं ।
3. वैयक्तिक सम्पर्क द्वारा (Personal Contact) - मुक्त विद्यालयों द्वारा भारत में कई स्थानों पर अध्ययन केन्द्र स्थापित किये गये है । जिसमें जाकर विद्यार्थी स्वयं संपर्क कर सकता है तथा अपनी शैक्षिक समस्यायें सुलझा सकता है । इन केन्द्रों पर प्रायोगिक कार्य भी करवाये जाते हैं ।

मूल्यांकन (Evaluation) - विद्यार्थियों के मूल्यांकन की प्रकृति काफी लचीली है । विद्यार्थियों के लिये आन्तरिक और बाहरी दोनों प्रकार के मूल्यांकन की व्यवस्था है । परीक्षा वर्ष में दो बार, मई तथा नवम्बर में आयोजित की जाती है । कोर्स के दौरान विद्यार्थियों को अधिगम

सामग्री वितरित की जाती है । जिन्हें विद्यार्थियों को हल करके वापिस भेजना होता है । जिससे न केवल अधिगम में सहायता मिलती है वरन् ये विद्यार्थियों को वार्षिक परीक्षा के लिये भी तैयार करता है ।

4.16 सारांश (Summary)

विद्यालय एक ऐसा विशिष्ट स्थान है जहाँ विद्यार्थी अध्ययन करता है तथा जीवन से सम्बन्धित सभी शिक्षाओं और कौशलों को सीखता है । अधिगम द्वारा विभिन्न अनुभवों को प्राप्त करता है । उसके व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास विद्यालय में ही होता है । औपचारिक शिक्षा के केन्द्र बिन्दु विद्यालय ही है ये बालक को परिवार व समाज से जोड़ने में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । आज बढ़ती जनसंख्या व बदलते परिवेश के कारण ये संभव नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति औपचारिक शिक्षा ले । कुछ लोग किसी वजह से विद्यालय जाने से वंचित रह जाते हैं उन्हें विद्यालय छोड़ कर जीविकोपार्जन में जुटना पड़ जाता है या अन्य कारण भी हो सकते हैं । ऐसे विद्यार्थियों के लिये राष्ट्रीय खुला विद्यालय द्वारा शिक्षा प्राप्त की जा सकती है । यह राष्ट्रीय स्तर की संस्था है जहाँ विद्यार्थी अपनी रूचि के विषय लेकर अपनी सुविधानुसार अध्ययन कर सकता है । अधिकतम पाँच वर्ष में 9 अधिकतम अवसर दिये जाते हैं । अत: विद्यार्थी आसानी से उत्तीर्ण हो सकते हैं ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. विद्यालय से क्या अभिप्राय है ।
2. 'खुला विद्यालय से आप क्या समझते है? स्पष्ट करें ।
3. मुक्त विद्यालयों की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन करिये ।
4. मुक्त विद्यालयों में 'शिक्षण' किस प्रकार दिया जाता है? स्पष्ट करिये ।

4.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Verma, G.S.: Modern Indian Education and Problems, International Publishing House, Meerut, 2001.
2. अग्निहोत्री, आर: आधुनिक भारतीय शिक्षा की समस्यायें, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 1994.
3. Rajput, J.S.: Encyclopedia of Indian Education, Vol.II, NCERT Publication, New Delhi, 2004.
4. ओड, एल.के.: शैक्षिक प्रशासन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1994.

इकाई-5

विद्यालयी की एक संस्था के रूप में संभावनाएँ
Possibilities of School as an Institution

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

5.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and objectives)

5.1 विद्यालय की एक संस्था के रूप में सम्भावनाएं (Possibilities of School as an Institution)

5.2 विद्यालय में मुक्तता (Openness in School)

5.3 शिक्षा में नवाचार (Innovation in School)

5.4 भावी विद्यालय (Future School)

5.5 विद्यालयों का नेटवर्किंग (Networking of Schools)

5.6 सारांश (Summary)

5.7 संदर्भ गन्थ सूची (Bibliography)

विद्यालयी की एक संस्था के रूप में संभावनाएँ । विद्यालयों *में खुलापन, नवप्रवर्तन, भविष्य के विद्यालय,* विद्यालयों *में नेटवर्किंग* ।

Possibilities of School as an Institution: Openness in School, Innovation, Future School, Networking of Schools.

5.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप -

- विद्यालय की एक संस्था के रूप में सम्भावनाएँ को बता सकेंगे ।
- विद्यालय में खुलापन या मुक्तता का सम्प्रत्यय बता सकेंगे ।
- विद्यालय के नवाचारों को समझ कर उपयोग में ला सकेंगे ।
- विद्यालय पुस्तकालय में नियमित जाकर पाठ्य सामग्री का चुनाव कर सकेंगे ।

5.1 विद्यालय की एक संस्था के रूप में सम्भावनाएँ (Possibilities of School as an Institution)

कोठारी शिक्षा आयोग (1964-66) की प्रथम पंक्ति में लिखा हैं, 'भारत के भाग्य का निर्माण उसके अध्ययन कक्षों में हो रहा है ।' अध्ययन कक्ष विद्यालय रूपी यन्त्र अथवा संस्था के वो महत्वपूर्ण स्थान हैं, जहाँ पर बैठकर विद्यार्थी अपने भविष्य को बना रहे हैं । जिस प्रकार एक कुशल कारीगर अच्छी मशीन के द्वारा अपनी कुशलता का परिचय दे सकता है, उसी प्रकार

एक सुयोग्य अध्यापक विद्यालय रूपी 'संस्था' को उचित भौतिक साधनों जैसे भवन, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कार्यशाला, क्रीड़ा स्थल तथा छात्रावास आदि के उपलब्ध होने पर ही विद्यालयों द्वारा सही शिक्षा दे सकता हैं । विद्यालय यन्त्र अथवा संस्था के द्वारा ही शिक्षा का अति महत्त्वपूर्ण उद्धेश्य 'व्यक्तित्व का सर्वागीण' विकास (all round development of the personality) की पूर्ति कर सकता है । विद्यालय रूपी यन्त्र या संस्था में अनेक संसाधन एवं गतिविधियाँ विद्यार्थी के भावी जीवन को सुखद एवं सम्पन्न बनाते हैं । शिक्षा व्यवस्था की सफलता विद्यालयी शिक्षा रूपी यन्त्र के सही संचालन पर ही निर्भर करती है । नई शिक्षा नीति 1966 के अन्तर्गत भी न्यूनतम शैक्षिक साधनों की उपलब्धि पर बल दिया गया है । डॉ. डब्ल्यू. एम. बूच के अनुसार "शिक्षण संस्था द्वारा स्वानुभूत आवश्यकताओं तथा साधनों को प्राप्त करना उसके विकास की सम्भावना है ।" विद्यालय को एक संस्था उसमें उपलव्य विशेषताओं के आधार पर कहा जाता है । इन विशेषताओं को निम्न दो क्षेत्रो में बांटा जा सकता हैं :-

भौतिक क्षेत्र (Physical Area)	**अकादमिक क्षेत्र (Acadmic Area)**
(i) विद्यालय में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या में विस्तार (ii) विद्यालय का सौन्दर्यीकरण (iii) कक्षा भवन का निर्माण (iv) विद्यालय- पुस्तकालय का विस्तार (v) खेल के मैदानों का विस्तार (vi) विद्यालय केन्टीन का सुधार (vii) विद्यालय में पानी की व्यवस्था (viii) विद्यालय में हॉल के निर्माण की योजना (ix) विद्यालय में सुविधाएँ (x) विद्यालय में प्रयोगशालाएँ (xi) कॉमन रूम	(अ)पाठ्यक्रम सम्बन्धी (i) अच्छे अध्यापक की नियुक्ति (ii) विभिन्न विषयो के पक्ष में सुधार (iii) छात्रों के लेख में सुधार (ब) पाठ्य-सहगामी (Co-curricular) (i) विद्यालय अनुशासन में सुधार (ii) शिक्षक अभिभावक संघ की स्थापना (iii) विभिन्न क्रियाओ की आयोजना (iv) विद्यालय एवं समुदाय में सम्बन्ध बनाना

सारणी संख्या. 5.1

उपरोक्त क्षेत्रों को सुव्यवस्थित बनाने हेतु विद्यालयी संस्थागत योजना अत्यावश्यक है। इस योजना के द्वारा विद्यालयी संसाधनो एवं विशेषताओं का समुचित उपयोग किया जा सकता हैं । संस्थागत योजना के निर्माण से पूर्व तैयारी आवश्यक है जिसका विवेचन अग्रलिखित है-

विद्यालय योजना की तैयारी (Preparation of an Instititional Plan) - विद्यालयी योजना की तैयारी में निम्न बिन्दुओं के आधार पर पूर्व तैयारी की जानी चाहिए -

1. **विद्यालय के विभिन्न साधनों का परीक्षण करना (Assessment of Different Resources) -** विद्यालय में उपलब्ध मानवीय एवं भौतिक साधनो के चयन एवं परीक्षण पर सर्वप्रथम ध्यान आवश्यक है । इन साधनों के चयन करते समय यह विचार अवश्य करना चाहिए

कि किन साधनों के प्राप्त होने की सम्भावना अधिक है? इन साधनों पर विद्यालय की आर्थिक क्षमताओं को ध्यान में रखकर चिन्तन होना चाहिए ।

2. **विद्यालय की आवश्यकताओं का सर्वेक्षण (Survey of the Needs of the School) -** योजना के निर्माण से पूर्व यह सर्वेक्षण करना आवश्यक है कि योजना किस लिए बना रहे हैं? अथवा उस योजना का निर्माण करके हम किन समस्याओं का समाधान करना चाहते हैं? समस्याओं के अन्तर्गत भवन, प्रसाधान पुस्तकालय, प्रयोगशाला सम्बन्धी योजना पर चिन्तन किया जा सकता है । साथ ही योजना निर्माण से पूर्व विद्यालय में कार्यरत कर्मचारियों की राय भी आवश्य लेनी चाहिए । विद्यालय सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन करके उस समस्या को चुन लेना चाहिए, जो अधिक महत्त्वपूर्ण है ।

3. **योजना तैयार करना (Preparation of the plan) -** सम्बन्धित समस्या के समाधान के लिए एक विस्तृत योजना की तैयारी करना आवश्यक है । इस हेतु निम्न लिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना होगा:-

(i) योजना की अवधि

(ii) योजना का क्षेत्र (शैक्षिक, सहशैक्षिक भौतिक, नवाचार)

(iii) योजना में सभी की भागीदारी तय करना

(iv) योजना हेतु बजट बनाना

4. **योजना का मूल्यांकन (Evaluation of the plan) -** योजना को क्रियान्वित करने के बाद थोड़े अन्तराल में ही उसका मूल्यांकन करते जाना चाहिए ताकि इस बात का ज्ञान हो सके कि योजना कहीं तक सफल हुई हैं । मूल्यांकन के समय इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिए कि मूल्यांकन के आधार पर कार्य के गुणात्मक स्तर को कायम रखा जा सके । योजना का मूल्यांकन विभिन्न स्तरों पर किया जाये, जैसे-काम की प्रगति पर और योजना के पूर्ण होने पर ।

5. **योजना का क्रियान्वयन (Execuation of the plan) -** योजना को तैयार करने के बाद उसे वास्तविक परिस्थितियों में क्रियान्वित किया जाता है तथा यह प्रयास किया जाता है कि योजना के सैद्धान्तिक व व्यावहारिक प्रारूप में अन्तर न हो । योजना को क्रियान्वित करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वह अपने मूलभूत उद्धेश्यों पर टिकी रहे । यदि योजना मूलभूत उद्धेश्यों से हट जाएगी तो सही परिणाम प्राप्त नहीं हो सकेंगे ।

सक्षम प्रधानाध्यापक (Efficient Headmaster) - विद्यालय के एक संस्था के रूप में विद्यालयी व्यवस्था, शैक्षिक संसाधनों की उपलब्धता, भौतिक तथा अकादमिक सुविधाएं, विद्यालयी योजना की पूर्व तैयारी तथा उसके सही क्रियान्वयन के अतिरिक्त एक सक्षम प्रधानाध्यापक के आधार पर पहचान होती है । एक सफल प्रधानाध्यापक ही अपने सफल नेतृत्व, वैयक्तिक गुणों, अनुभव, योग्यता व कार्यकुशलता के आधार पर विद्यालय को निर्धारित लक्ष्य की और उन्मुख करता हैं । विद्यालय रूपी संस्था के हर अंग में प्रधानाध्यापक की छवि प्रतिबिम्बित होती हैं । वह शिक्षकों, विद्यार्थियो, कर्मचारियों व अभिभावकों का नेतृत्व करता हैं और विद्यालय की सभी गतिविधियों का संयोजन व मार्गदर्शन करता हैं । यही वह व्यक्ति है, जो विद्यालय की एक संस्था के रूप में पहचान बनाता है । विद्यालय प्रांगण की समस्याओ के निराकरण भी एक कुशल प्रधानाध्यापक अपनी दूरदर्शिता के आधार पर करता है । वह अपने कुशल संचालन से ही

विद्यालय का समाज के साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित करता हैं । प्रोफेसर रायबर्न के अनुसार "जिस प्रकार जहाज में कप्तान का प्रमुख स्थान होता हैं, ठीक उसी प्रकार विद्यालय में प्रधानाध्यापक का मुख्य स्थान होता हैं । प्रधानाध्यापक समन्वय स्थापित क्रने का अभिकरण है, जो सन्तुलन बनाये रखना है तथा समस्त संस्था के बहुमुखी विकास के प्रयास में संलग्न रहता है । वह विद्यालय की परम्पराओं का निर्धारण करता है व समय के साथ इन परम्पराओं को आवश्यक गति प्रदान करता है । (The Headmaster holds the key position in a school just as the caption on a ship. The headmaster is the co-ordinating agency which keeps the balance and ensures the harmonious development of the whole institution. He sets the traditions of the school and moulds the traditions which develop as the time goes on)

पी.सी. रेन के अनुसार "महान् प्रधानाध्यापक महान् विद्यालयों का निर्माण करते हैं तथा विद्यालय को विकास की और अग्रसर करते हैं । जो विद्यालय अंधकार के गर्त में विलीन हो जाता हैं, उसका कारण उसके प्रधानाध्यापक ही होते हैं ।" ("Great headmasters make great schools and schools rise to fame or sink to oblivion, the headmaster have charge of them") विद्यालय की एक संस्था के रूप में पहचान बनाने एवं विद्यालयी क्रियाओं के नियोजन में प्रधानाध्यापक द्वारा किये जाने वाले कार्यों को निम्न चार्ट में दर्शाया गया है-

विद्यालयी क्रियाओं के नियोजन में प्रधानाध्यापक के कार्य

(1) योजना निर्माण	(2) धन की व्यवस्था	(3) कार्यकर्ताओं की चयन तथा उनके मध्य कार्य का विवरण	(4) पाठ्यक्रम व अन्य कार्यकर्मों का मार्गदर्शन
(5) विद्यालय प्रणाली का संचालन	(6) विद्यार्थियों की विभिन्न दोना समस्याओं पर ध्यान देना	(7) विद्यालयी संगठन के उद्देश्य निर्धारित करना	(8) विद्यालय भवन व उपकरणों का परिनिरीक्षण

विद्यालय योजना की वर्तमान स्थिति (Present position of Institutional plan) - राजस्थान में विद्यालय योजना 1968 से चल रही है । इसके दो स्तर हैं-

1. विद्यालय स्तर पर विद्यालय योजना
2. जिलास्तर पर समेंकित जिला योजना

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में सूक्ष्म योजना और विकेन्द्रीकृत योजना (Micro-Planning & Decentralized planning) पर विशेष बल दिया गया है । इसी क्रम में विद्यालय योजना के निर्माण का अधिक महत्व बढ़ जाता है । विद्यालय योजना के द्वारा ही शिक्षा में नवाचारों का प्रभावी ढ़ग से उपयोग करना संभव होता हैं।

संस्थागत मूल्यांकन (Institutional Evaluation) योजना के साथ ही यदि संस्थागत मूल्याकंन भी कर लिया जाए तो विद्यालयी गतिविधियों की सफलता का पता चल जाता है । एक संस्था में जो कार्य योजना के अन्तर्गत लिया है यदि वह सही प्रकार सम्पन्न नहीं हो रहा है, तो उसका पता मूल्यांकन से चल जाता है और कमियों के आधार पर संस्था में सुव्यवस्थित कार्यक्रम को गति प्रदान की जा सकती है । संस्था की सही पहचान उसकी गतिविधियों में श्रेष्ठता के आधार पर होती हैं । संस्थागत योजना एवं मूल्यांकन संस्था की पहचान बनाते हैं एवं उसे गति प्रदान करते हैं ।

5.2 विद्यालय में मुक्तता (Openness in School)

इवान इलिच ने अपनी पुरतक में संस्थागत विद्यालय को समाप्त करके शिक्षा को खुले रूप में जनसुलभ बनाने का विचार दिया । उसके अनुसार सभी जिज्ञासुओं के लिए जब चाहे तब, जहाँ चाहे वहाँ, जितना ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, उतना ज्ञान प्राप्त करने के अवसर उपलब्ध होने चाहिए । इसके लिए वह ज्ञान प्राप्ति की 4 श्रंखलाओं की संस्तुति करना हैं:-

1. शैक्षिक सामग्री की सन्दर्भ सेवाओं का व्यापक प्रसार ।
2. दक्षताओं का आदान प्रदान ।
3. साथी युगलीकरण तथा
4. व्यापक रूप से शिक्षा शास्त्रीयों की सन्दर्भ सेवाएं ।

इलिच के समान ही अनेक अन्य विचारकों ने भी संस्थागत शिक्षा का खुलकर विरोध किया । इन लेखकों में एवरेट रेमर, पॉल गुडमेंन, जॉन हाल्ट, नीलपो स्टेमेंन, पाबले फेरे, चार्ल्स सिल्वरमेंन आदि ने स्वतन्त्र पुस्तकें लिखकर इवान इलिच के विचारों की परिपुष्टि की । बेरी एन स्वार्ट्ज ने उक्त क्रान्तिकारी लेखक के विचारों को एक स्थान पर संग्रहित करके वर्तमान संस्थागत शिक्षा को नकारात्मक शिक्षा की संज्ञा प्रदान की तथा विकल्प के रूप में सकारात्मक शिक्षा की कल्पना प्रस्तुत की । स्वार्ट्ज ने सकारात्मक शिक्षा के निम्न लिखित अभिलक्षण दिये:-

1. छात्र एवं शिक्षक दोनों के पारस्परिक सम्बन्धों पर आधारित सामूहिक अन्वेषण का परिणाम ही अधिगम है।
2. अधिगम की अन्तर्वस्तु निर्धारित पाठ्यक्रम न होकर अधिगम प्रक्रिया होती है ।
3. अनुशासन, पाठ्यक्रम, ग्रेड आदि विद्यालयी1 उपादान शैक्षिक अनुभव में अवरोध उपस्थित करते हैं?
4. शिक्षा जीवन अनुभवों से सम्बन्धित होती हैं । उसका लक्ष्य समस्या समाधान में निपुणता प्रदान करना हैं।
5. शिक्षक एवं छात्रों के पारस्परिक सम्बन्ध भावात्मक एवं बौद्धिक दोनों स्तरों की अन्तक्रिया पर आधारित होने चाहिए ।

   सार्वजनिक साक्षरता पर पहुँचने के लिए इस प्रकार का शैक्षिक मॉडल चाहिए जिसमें:-

   1. शिक्षा के साधन सहज तथा सुलभ हो
   2. साधनों के उपयोग में अल्प व्यय की अपेक्षा रहे ।

3. साधन समय की पाबन्दी की सीमा के बाहर हो तथा
4. साधनों में शिक्षा की उपयोगिता के लाभ काफी स्पष्ट हो ।

एवर्ट रीमर ने अपनी पुरतक 'स्कूल इज डेड' में एक नई विचारधारा को जन्म दिया । रीमर में अनुसार हमारी परम्परागत विद्यालय पद्धति मर गई है । हमें शिक्षा के नये रूप की खोज करनी है ।

खुला विद्यालय (Open School) - माध्यमिक शिक्षा स्तर पर केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड नई दिल्ली द्वारा आयेजित खुला विद्यालय (ओपन स्कूल) का प्रयोग भी उल्लेखनीय है । इस योजना के अन्तर्गत 14 वर्ष की आयु के ऊपर के सब बच्चों के लिए माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने तथा प्रमाण पत्र प्राप्त करने की व्यवस्था सुलभ कराई गई । इस शिक्षा के लिए कोई पूर्व-प्रवेश योग्यता आवश्यक नहीं है। प्रवेशार्थी में केवल पढने-लिखने की क्षमता होनी चाहिए। उच्चत्तर माध्यमिक पाठ्यक्रम के लिए माध्यमिक परीक्षा का प्रमाण पत्र आवश्यक है । माध्यमिक शिक्षा के लिए एक भाषा तथा अन्य कोई चार विषयों में परीक्षा उत्तीर्ण करना आवश्यक हैं । कोई परीक्षार्थी चाहे तो एक साथ में अथवा धीरे-धीरे करके एक-एक दो-दो विषयों की परीक्षा देता हुआ पाँच वर्ष में भी पाठ्यक्रम पूर्ण कर सकता है ।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय संस्थान (NIOS)- राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय संस्थान (NIOS) द्वारा भी देश भर में उन बच्चों को विद्यालयी शिक्षा से जोड़ा जा रहा है । जो किसी कारणवश विद्यालयी शिक्षा पूर्ण नहीं कर पाये हैं वे बालक जो पूर्ण समय विद्यालय नहीं जा पाते हैं अथवा विद्यालयी शिक्षा पूर्ण करने से पूर्व ही विद्यालय छोड़ दिया है, उन्हें इसमें प्रवेश दिये जाने की सुविधा है । इसमें 'A' 'B' 'C' स्तर का प्रमाण प्रदान किया जाता है । जिस स्तर पर बालक को भर्ती होना है, उसके प्रथम स्तर की अंकतालिका प्रस्तुत करने पर उसका प्रवेश अगले स्तर में होने का प्रावधान है । स्तर पूर्ण करने पर बालक औपचारिक विद्यालय के अगले स्तर में प्रवेश ले सकता है । राजस्थान राज्य में राज्य स्तर पर मुक्त विद्यालयी शिक्षा का शुभारंभ हो चुका है । इसमें राज्य के हर उस बच्चे को शिक्षा से जोड़े जाने की योजना है, जो विद्यालयी शिक्षा से वंचित रह गया है ।

5.3 शिक्षा में नवाचार (Innovations)

वर्तमान में आ रही चिन्तन-धाराओ के फलस्वरूप यह निष्कर्ष निकलता है, कि प्रचलित शिक्षा प्रणाली वर्तमान तथा भविष्य के परिप्रेक्ष्य में निरर्थक हो गई है तथा जनसमुदाय के जीवन की पूर्णता इसके द्वारा संभव नहीं है । संस्थागत औपचारिक शिक्षा के प्रति एक विचित्र कुण्ठा व्याप्त हो गई है तथा वैकल्पिक शिक्षा प्रणालियों की खोज की जाने लगी जिसके परिणाम स्वरूप निम्न विकल्प सामने आये-

(1). **अनौपचारिक शिक्षा (Non Formal Education) -** अनौपचारिक शिक्षा वैकल्पिक शिक्षा के रूप में सामने आयी । यह कई अर्थो में विद्रोह के रूप में उठाये गये प्रश्नों का उत्तर प्रस्तुत करती है । इस शिक्षा के विशिष्ट अभिलक्षण निम्नलिखित हैं:-

1. अनौपचारिक शिक्षा में सीखने के अवसर अनन्त हैं, उनमें कोई जड़ता नहीं हैं तथा उनमें लचीलापन है ।
2. अनौपचारिक शिक्षा के लिए किसी विशिष्ट अभिकरण का कधन नहीं है। परिवार, विद्यालय, धर्म संस्थान, सामुदायिक केन्द्र कोई भी अभिकरण इसका आयोजन कर सकता है।
3. अनौपचारिक शिक्षा में विद्यालय के औपचारिक नियमों का परिहार है । न आयु का बन्धन है, न निश्चित अध्ययन कालांशों का, न समय का और न निश्चित स्थल का ।

औपचारिक शिक्षा की अपेक्षा अनौपचारिक शिक्षा में अनौपचारिक तथा सहज शिक्षा पर अधिक बल दिया जाता हैं, क्योंकि अभी तक हम सभी बच्चों को कक्षा तक लाने में सफल नही हुए हैं । वर्तमान में भी अनौपचारिक शिक्षा द्वारा बच्चों को शिक्षा हेतु प्रेरित किया जाता है इससे मुख्य लाभ यही है, कि बालक किसी औपचारिकता के अनौपचारिक रूप में सीखता है ।

(2). **चल विद्यालय (Mobile School) -** चल विद्यालय का प्रत्यय काफी पुराना है । यदि हम भारत में विद्यालयों की स्थिति देखें तो ज्ञात होता है कि अभी भी कई गाँवों तथा शहर में दूर की बस्तियों में विद्यालयों की समुचित व्यवस्था नहीं हैं । विशेष रूप से पहाडी प्रदेशों में दो विद्यालयों के बीच की दूरी कभी-कभी इतनी अधिक रहती है कि बच्चे के माता पिता उसे विद्यालय भेजने में असमर्थ रहते हैं । ऐसे प्रदेशों में आवागमन के पर्याप्त साधनों का भी अभाव है । इसी प्रकार कई गाँवों के बीच में यदि एक ही अच्छा विद्यालय हो तो पंजीकरण के साथ-साथ दूरी की भी समस्या होती । अप्रशिक्षित प्रौढों के लिए भी पृथक विद्यालयों की सख्या तथा स्थिति सन्तोषजनक नहीं हैं । इन सभी प्रकार का निवारण चल विद्यालय से हो सकता हैं । चल विद्यालय द्वारा बच्चों को शिक्षण सामग्री प्रदान की जाती है साथ में चल वेन में आने वाला शिक्षक बच्चो का शिक्षण करता है तथा उसकी विषयगत समस्याओं को दूर करता है ।

(3). **शैक्षिक तकनीक (Educational Technology) -** शैक्षिक तकनीक के माध्यम द्वारा विद्यार्थी को संस्थागत औपचारिक शिक्षा के शिकंजे से मुक्त किया जा रहा है और सामूहिक तथा निवेयक्तिक शिक्षण विधि को व्यक्तिनिष्ठ बनाकर नवाचार जोडा जा रहा है । ब्रिटिश नेशनल कौन्सिल फॉर एज्युकेशनल टेक्नोलॉजी के अनुसार शैक्षिक तकनीक मानवीय अधिगम प्रक्रिया को सुधारने हेतु किये गये विकास कार्य हैं । इसके अन्तर्गत शैक्षिक उद्देश्यों तथा शिक्षण प्रक्रिया का निवेयक्तिक विश्लेषण, शैक्षिक प्रक्रिया का यन्त्रीकरण, वस्तुनिष्ठ मापन एवं मूल्यांकन तथा शैक्षिक संगठन में औध्योगिक निकाय के प्रयोग को समाविष्ट किया जा रहा है । इसके अनुसार जो कुछ शिक्षक नहीं कर सकता है उसे मशीन द्वारा किया जा सकता है ।

(4). **पाठयक्रम का नवीनीकरण (Innovations of Syllabus) -** नई शिक्षा नीति 1988 के अनुसार औपचारिक शिक्षा पद्धति तथा देश की समृद्ध एवं विविधता युक्त सांस्कृतिक परम्पराओं के बीच विद्यमान खाई को पाटना आवश्यक है । वर्तमान तकनीकी के नशे में नई पीढ़ी की जड़े भारतीय संस्कृति से नहीं कटनी चाहिए इसलिए विद्यालयी पाठ्यक्रम का नवीनीकरण निम्न रूप में करना होगा:-

1. भारत की समन्वय प्रधान संस्कृति का ज्ञान
2. मानवीय सांस्कृतिक तथा संवैधानिक मूल्यों का प्रतिष्ठापन
3. भारतीय स्वाधीनता के इतिहास से परिचय

4. त्रिभाषा सूत्र का कड़ाई से अनुपालन
5. पुस्तकालयों तथा पठन सामग्री का विकास
6. समाजोपयोगी उत्पादक कार्य
7. पर्यावरण संरक्षण शिक्षा
8. कम्प्यूटर उपयोग की शिक्षा
9. खेल और शारीरिक शिक्षा

(5). **ज्ञानवान समाज हेतु विद्यालयों का हस्तान्तरण (Transformation of School for the Knowledge Society) -** विद्यालय एक कार्य स्थान है जिसमें हर आयाम में हस्तान्तरण होता है । सीखने एवं सिखाने में निम्न रूपों में हस्तान्तरण की क्रिया सम्पादित होती है-

1. एक ज्ञान कार्यकर्ता के रूप में (As a Knowledge worker)
2. हर विद्यार्थी हेतु चुनौती प्रदान करना (Provide Challenge for every student)
3. कार्य की क्षमता (Capacity to work)
4. अधिगम नेटवर्क (Learning Network)

ज्ञान आधारित शिक्षा के अन्तर्गत समाज में ऐसा वातावरण निर्मित किया जाता है जिसके द्वारा ज्ञान को आगे बढाने में निरन्तर सकारात्मक विकास होता हैं । विद्यार्थियों को इस रूप में इप्तन का हस्तान्तरण किया जाता हैं जिससे विद्यार्थियों का ज्ञान बढ़े तथा प्रभावशाली शिक्षण अधिगम वातावरण निर्मित किया जा सके । इसके द्वारा सीखने के चार आयाम स्थापित होते है:-

1. हस्तान्तरण (Transforming)
2. उपलब्धि (Performing)
3. स्वीकृति प्रदान करना (Conforming)
4. यथास्थिति बनाये रखना (Resistence)

(6). **ई-अधिगम (E-Learning) -** यह सीखने का एक नया प्रारूप है । इसमें सीखने वाले की आवश्यकता को अधिक देखा जाता है, अनुदेशक की क्षमता पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है । सीखने के इस नवाचार में विद्यार्थी को सीखने के अनुभव प्रदान किये जाते हैं तथा सीखने के वातावरण को बनाया जाता है । ई-अधिगम तकनीक द्वारा निम्नलिखित लाभ होते हैं:-

1. सीखने का वातावरण निर्मित होता है ।
2. आवश्यकता अनुसार सामग्री निर्मित होती है ।
3. यह नई एवं अभ्यास आधारित विधि है ।
4. कुशलता में बढ़ोतरी होती है ।

(7). **वेब आधारित अधिगम (Web Based Learning) -** वेब आधारित अधिगम में तकनीकी के उपयोग द्वारा अधिगम कौशल का विकास किया जाता हैं । सूचना आधारित तकनीक से शिक्षा के उभरते हुए लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु अधिगम कौशल का विकास किया जाता हैं । वेब आधारित तकनीक द्वारा शिक्षा व्यवस्था सम्बन्धी आयामों पर बल दिया जाता है । इस तकनीक द्वारा किया गया शिक्षण विद्यार्थी, शिक्षक-वर्ग, पाठयक्रम एवं संस्था पर सीधा

प्रभाव डाला जाना है । वेब आधारित अधिगम में शिक्षा में गुणात्मकता बनाने पर विशेष प्रभाव डाला जाना है । इस अधिगम द्वारा सिर्फ समाज का ही पुननिर्माण नहीं होता है, वरन् शिक्षण तथा अधिगम दोनों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है ।

5.4 भविष्य विद्यालय (Future School)

1960 के पश्चात ऐसा चिन्तन आया कि स्वयं विद्यालय मानवकृत शोषण के साधन बन गए । युनेस्को द्वारा प्रकाशित प्रतिवेदन 'लर्निग टु बी' ने इस विचार को व्यापक रूप से शिक्षा जगत् के सम्मुख रखा । 20 वीं सदी की सातवीं दशाब्दी में कुछ ऐसी पुस्तकें प्रकाश में आयी जिन्होंने शिक्षा क्षेत्र में हलचल मचा दी । इस प्रकार के प्रकाशनों में इवान इलिच की 'डी स्कूलिंग सोसायटी; एवरेट रेमर की 'द स्कूल इज डेड; पालगुडमैन की 'कम्पलसरी मिस एज्युकेशन; पावले फेरे की 'पेडागॉजी ऑफ द ऑप्रेस्ड; स्वार्टज की 'अफरमेंटिव एजुकेशन' तथा जॉन हाल्ट की 'हाउ चिल्ड्रन फेल' इस प्रकार की पुस्तकें थी जिन्होंने शैक्षिक चिन्तन को झंझोड दिया । शिक्षक, शिक्षा आयोजक, शिक्षा प्रशासक सभी के मन में विद्यालयी शिक्षा के प्रति वितृष्णा जाग उठी । विकल्पों की खोज की जाने लगी । भविष्य विद्यालयों की और नये चिन्तन के रूप में एलविन टॉफलर की 'पयूवर शॉक' तथा स्वीडन के भविष्य शास्त्र विशेषज्ञ टास्टर्न हनूसन की पुस्तक 'एज्युकेशन इन द इयर 2000' आई ।

भविष्य शिक्षा में विद्यालयों को नजरअन्दाज किया गया तथा आजीवन शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, खुला विद्यालय, 10+2 की शैक्षिक संरचना, दलित वर्ग की शिक्षा आदि विचारधारा प्रमुख रूप से सामने आई । अध्यापन के क्षेत्र में नये सिद्धान्तों की स्थापना की गई । इस विचारधारा के अनुसार भविष्य में विद्यालयों की आवश्यकता नहीं हैं । **इवान इलिच** की पुरतक 'डी स्कूलिंग सोसायटी' में शिक्षा को खुले रूप से जन सुलभ बनाने तथा संस्थागन विद्यालय को समाप्त करने की बात कही गई । इसके बाद एवेरेट रैमर, पाल गुडमैन, जॉन होल्ट, निलपों स्टेमेंन, पावले फेरे, चार्ल्स सिल्वरमेंन आदि ने स्वत: पुस्तके लिखकर इवान इलिच की विचारधारा की पुष्टि की । **प्रो. आर. एच. हाचिन्स** द्वारा लिखित गन्ध 'द लर्निग सोसायटी' तथा एडगर फारे की अध्यक्षता में युनेस्को द्वारा नियुक्त शिक्षा आयोग का प्रतिवेदन 'लर्निग टु बी' में 21 राष्ट्रों की प्रचलित शिक्षा प्रणालियों का सर्वेक्षण करने के बाद 'जीवन पर्यन्त शिक्षा' तथा भविष्योन्मुखता को ध्यान में रखने हुए 'जीवन की पूर्णता के लिए शिक्षा' पर चिन्तन किया गया । इसमें छात्र को भविष्य की दृष्टि से तैयार करना पड़ेगा । इस शिक्षा में छात्र को इस प्रकार शिक्षित करना होगा, जिसमें वह भावी परिवर्तन का पूर्वानुमान लगाकर अपने आपको उसके अनुकूल बना सके। भावी विद्यालयों को सिर्फ ज्ञान न देकर भारतीय राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप छात्रों को बनाने में मदद करनी होगी ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के 1986 के दस्तावेज में भारतीय शिक्षा के बारे में एक भविष्य दृष्टि प्रस्तुत की गई, जो अपने आप में मानववादी आदर्शों से परिपूर्ण लक्षित होती है । इस दस्तावेज में लगभग 90 प्रतिशत बातें तो वही रही जो तीन आयोगों के प्रतिवेदनों एवं शिक्षा सम्बन्धी दस्तावेज में थीं । नई शिक्षा के दस्तावेज की क्रियान्विति भी नहीं हो पाई क्योंकि शिक्षा

विकास कार्य केवल सरकार द्वारा संभव नहीं है । जब तक समाज का प्रत्येक घटक इसके लिए अपना योगदान नहीं करता, तब तक क्रियान्विति असम्भव है ।

मुनिस रजा ने अपनी पुरतक 'शिक्षा और विकास के सामाजिक आयाम' में लिखा है :-

भविष्य की शिक्षा को संकीर्ण, रूढिबद्ध और संसारी बने बगैर विशिष्ट को समझने की चेष्टा करनी होगी । साथ ही पारलौकिक, वायवीय तथा दिव्य बने बिना सार्वभौम की खोज करनी होगी । इसे मानवीय, संवेदनशील और मानव जाति का अन्त: करण बन जाना चाहिए ।

मुनिस रजा के अनुसार शिक्षा की नीतियां समाज की बुनियादी संरचनात्मक परिवर्तनों से आंतरिक रूप से जुड़ी होनी चाहिए, क्योंकि इसके बिना नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था महज एक दिवास्वप्न बन कर रह जाएगी । इसे उन नियतिवादी विचारों का अवश्य सफाया कर देना चाहिए, जिनके अनुसार गरीबी प्रकृति की देन मानी जाती है और कहा गया है कि वंचित लोगों को गरीबी से वैसे ही समझौता कर लेना चाहिए जैसे प्राकृतिक विपदाओं से लोग समझौता कर लेते हैं । शिक्षा को उन लोगों के विचार जरूर सुधारने चाहिए, जो गरीबी की दूषित आध्यात्मिकता में शांति तलाशते हैं या जो जीवन का अर्थ और उद्देश्य समृद्धि के उपभोगवादी बाजारों में तलाशते हैं । भविष्य की शिक्षा को शहरी परिष्कार और देहाती सहजता को एक साथ जोड़ना होगा और देहात तथा शहर के रिश्ते को मानवजाति के जीवन व्यवहार का सामान्य अंग बनाना होगा ।

वास्तव में अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को विकसित करने में शिक्षा को जो महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी है, उसे देखते हुए यह ताज्जुब की बात लगती है कि शिक्षा में रोम के क्लब, जापानी क्लब या लियोतिएव के मॉडलों के लिए कोई जगह नहीं है । अगर हमारे भविष्य संबंधी मॉडलों की यह कमी दूर न की जाएगी तो जैसा कि युनेस्को के एक अध्ययन में कहा गया है, यह दुनिया दो के बजाए तीन हिस्सों में बंट जाएगी । इसका मतलब यह है कि बुनियादी संरचनात्मक परिवर्तन (नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था) के बगैर हम एक ऐसी दुनिया बनाएंगे जो तीन प्रकार के देशों में बंटी होगी । सबसे निचले स्तर पर वे देश होंगे, जिनमें सिर्फ प्राथमिक शिक्षा होगी और जिन्हें प्रत्यक्ष उत्पादन और निर्वाह स्तर का श्रम करना होगा । बीच में ऐसे देश होंगे जहाँ (पेशा परक शिक्षा समेंत) माध्यमिक स्तर की शिक्षा होगी और जहाँ सिर्फ साधारण स्तर के छात्र फटक (प्रोसेसिंग) का काम होगा । तीसरे और सबसे ऊपरी स्तर पर वे देश होंगे जहाँ का हर व्यक्ति विश्वविद्यालय का स्नातक होगा और बडे वैज्ञानिक तकनीकी संस्थानों से जुड़े अनुसंधान एवं बहुत से उद्योगों में काम करेगा ।

आधुनिक युग की यह त्रासदी है कि तीसरी दुनिया अभी तीसरी और चौथी दुनिया में विभाजित होती जा रही है और विकासशील देश कम और अति कम देशों में बंटते जा रहे हैं । दुर्भाग्य से विषमता की इस बढ़ती प्रक्रिया में शिक्षा की एक केन्द्रीय भूमिका रही है । स्वप्न दु:स्वप्न बनता जा रहा है ।

शिक्षा पर सर्वाधिक नवीन आयोग डेलर्स आयोग द्वारा भविष्य की शिक्षा को चार महत्वपूर्ण स्तम्भों के अन्तर्गत दर्शाया है । ये चार स्तम्भ है-

(i) करने का अधिगम (Learning to do)

(ii) जानने का अधिगम (Learning to know)

(iii) साथ-साथ रहने का अधिगम (Learning to live together)

(iv) बनने का अधिगम (Learning to be)

इन चार स्तम्भों के अन्तर्गत आयोग ने भविष्य के समाज की आवश्यकता तथा उसकी आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा को स्पष्ट किया है ।

(i) करने का अधिगम (Learning to do)- इसके अन्तर्गत करके सीखने पर बल दिया गया है । इस स्तम्भ के अनुसार विद्यार्थी को विषय वस्तु से इस प्रकार जोड़ा जाए कि विद्यार्थी स्वयं को पाठ्यक्रम का एक विशेष हिस्सा समझे । अधिक से अधिक करके सीखे । विभिन्न क्रियाओं में विद्यार्थी को स्वयं जु ड़ना पडेगा तभी करने के अधिगम से वे स्वयं को जोड़ सकेंगे।

(ii) जानने का अधिगम (Learning to know)- भविष्य के ज्ञान आधारित समाज (Knowledge based society) की कल्पना में शिक्षा द्वारा समाज में अधिक से अधिक ज्ञान बढाने का प्रयास रहेगा, विद्यार्थी में शिक्षा द्वारा अधिक से अधिक जानने का कौशल विकसित होगा, विद्यार्थी भविष्य में अधिक से अधिक जाने तथा ज्ञान आधारित समाज के निर्माण में योगदान दें, यह वर्तमान की सर्वाधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता है । इसके द्वारा भविष्य में ऐसी शिक्षा का रूप मिलेगा, जिससे ज्ञान आधारित समाज की स्थापना की जा सकेगी ।

(iii) साथ-साथ रहने का अधिगम (Learning to live together)- 'वसुधैव कुटुम्बकम' की भावना भारतीय संस्कृति में अति प्राचीन काल से विद्यमान है । भविष्य में ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है, जो समाज के लोगों को एक साथ जीवन जीने की कला सिखा सके । भविष्य में जो युद्ध का भय है, लोगों में तनाव दिखाई देता है, निश्चय ही युद्ध के इस भय से तथा बढ़ते तनाव से मुक्ति दिलाने हेतु भविष्य में ऐसी शिक्षा आवश्यक है जो परस्पर भाइचारे की भावना को विकसित कर सके । इससे भविष्य में ऐसा समाज विकसित होगा, जिसमें हर व्यक्ति परस्पर मैत्री भाव से रह सकेगा ।

(iv) बनने का अधिगम (Learning to be)- बनने के अधिगम के अन्तर्गत वे सभी बातें आएगी जिनसे विद्यार्थी स्वयं में बनने की भावना विकसित करे । भविष्य में ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है, जो विद्यार्थी को कौशल युक्त एवं जागरूक बना सके । हर विद्यार्थी में शिक्षा द्वारा ऐसी भावना भरी जाए, जिससे वो कुछ बनने हेतु प्रोत्साहित हो सके । उपरोक्त चार स्तम्भों के अन्तर्गत भविष्य में कैसी शिक्षा हो इसका विवेचन किया गया है।

5.5 विद्यालयो का नेटवर्क (Networking of Schools)

कोठारी शिक्षा आयोग (1964-66) ने शिक्षा में सुधार हेतु विद्यालयी नेटवर्क का सुझाव दिया । इस नेटवर्क के द्वारा विद्यालयों का आपस में जुड़ाव रहेगा, जिससे एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय के मध्य समन्वय बनेगा। इस समन्वय से विद्यालयों की कार्यकुशलता में बढ़ोत्तरी होगी । इससे विद्यालयों में शैक्षिक, सहशैक्षिक भौतिक तथा प्रशासनिक कार्यों को गति मिलने के साथ-साथ शिक्षा में गुणात्मक सुधार की भी संभावना बढ़ेगी ।

राष्ट्रीय शिक्षानीति 1986 में भी विद्यालयी नेटवर्किंग की बात कही गई है, जिससे अध्यापकों में व्यावसायिक निष्ठा पैदा की जा सकती है । पारस्परिक आदान-प्रदान से शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति भी सरलता से हो सकेगी । विद्यालयी नेटवर्क दो प्रकार से किया जा सकता है-

1. विद्यालयी संकुल द्वारा (Through School Complex)

2. सूचना तकनीक द्वारा (Through Information Technology)

(1). विद्यालय संकुल (School Complex) - विद्यालय सकुल की संकल्पना सर्वप्रथम कोठारी शिक्षा आयोग ने 1966 में की । शिक्षा विभाग राजस्थान द्वारा इसे सन् 1967 में 7 विद्यालयों से प्रारम्भ किया गया । इस नवाचार की उपलब्लियों को देखते हुए 1972 में निदेशालय ने स्थाई आदेश प्रसारित कर सभी विद्यालयों को इससे जोड़ दिया । विद्यालय संगम के पीछे भावना यही है कि विभिन्न स्तर के विद्यालयों में सामंजस्य स्थापित कर शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके । विद्यालय संकुल विद्यालयों में शैक्षिक, सहशैक्षिक भौतिक और प्रशासनिक कार्यों को गति प्रदान करने के साथ ही शिक्षा में गुणात्मक सुधार तथा विभिन्न स्तर के विद्यालयों में विद्यमान अलगाव को दूर करने की एक महत्वपूर्ण प्रवृति है । इसके अन्तर्गत प्रत्येक विद्यालयी समूह को एक इकाई मानकर महत्वपूर्ण कार्य सौंपे जाते हैं, जिन्हें शिक्षा विभाग के निरीक्षण अधिकारियों द्वारा पूर्ण किये जाते । इससे नेटवर्क विद्यालयों की शक्ति तथा अधिकार बढेंगे ।

विद्यालय संकुल सदस्यों की न्यूनतम संख्या 0 तथा अधिकतम 15 होनी चाहिए । इन सदस्य विद्यालयों की केन्द्रीय विद्यालय से दूरी 8 कि.मी. से अधिक नहीं होनी चाहिए । विद्यालय संकुल की एक परामर्श समिति बनाई जाती है, जिसकी वर्ष में तीन बैठकें आयोजित की जाती है । इन बैठकों के अन्तर्गत कुछ समितियों का गठन किया जाता है तथा वर्ष भर के कार्यों की योजना बनाई जाती है । विद्यालयी संकुल के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य सम्मिलित हैं-

(i) परिवीक्षण (Supervision)- मुख्य संकुल सहयोगी द्वारा सदस्य विद्यालयों का शैक्षिक परिवीक्षण सितम्बर, अक्टूबर व नवम्बर माह में किया जाता है । इस परिवीक्षण में संस्थागत व कार्यालय लेखा, शिक्षण कार्य, लिखित कार्य व सहशैक्षिक कार्यों का परिवीक्षण किया जाता है ।

(ii) शिक्षा का सार्वजनीकरण (Universalization of Education)- केन्द्रीय विद्यालय के अन्तर्गत कुछ प्राथमिक विद्यालय भी होते हैं । उनके माध्यम से शिक्षा के सार्वजनीकरण को गति दी जाती है । इसके लिए शत-प्रतिशत नामांकन, ठहराव एवं सार्वजनीन दक्षता हेतु प्रयास रहता है । सार्वजनिक नामांकन हेतु निम्न प्रयास रहते हैं:-

1. School Cluster का निर्माण
2. अधिग्रहण क्षेत्र (Catchment area): वह क्षेत्र जहाँ से छात्रा/छात्राएं विद्यालय आते हैं, की पहचान
3. विद्यालयी उम्र के बच्चों का सर्वेक्षण (Survey of School age children)
4. विद्यालयी नामांकन पूर्ण करने की योजना (Planning for Enrolment coverage)

(iii) भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का आदान-प्रदान (Exchange of Human and Physical Resources) - विद्यालय के मानवीय संसाधनों में प्रधानाध्यापक, अध्यापक, अन्य कर्मचारी व विद्यार्थी आते हैं । अध्यापक विद्यालय के मानवीय संसाधनों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण होते हैं । विद्यालय संकुल में शैक्षिक गुणवत्ता हेतु मानवीय संसाधनों के आदान-प्रदान की जब भी आवश्यकता महसूस होती है सम्बन्धित अध्यापक को कुछ समय के लिये दूसरे विद्यालय में भेज दिया जाता है ।

भौतिक संसाधनों में पुस्तके, पत्र-पत्रिकाएं, उपकरण, खेल सामग्री, सहायक शैक्षिक सामग्री आदि आते हैं । केन्द्रीय विद्यालय हर तरह से साधन सम्पन्न होता है और वह प्राथमिक, उच्च प्राथमिक तथा सहयोगी विद्यालयों के भौतिक साधनों की कमी को पूरा करने की क्षमता रखता है । इसमें जन समुदाय का सहयोग लेकर भी भौतिक संसाधनो की कमी को पूरा किया जा सकता है ।

(iv) क्षेत्र की स्वयं सेवी संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करना (Taking cooperation from Voluntary Agencies of the Region)- उद्देश्य पूर्ति हेतु क्षेत्र की स्वयंसेवी संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक है । इन संस्थाओं का पता लगाना, इनके सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी हासिल करना, इनके पास उपलब्ध संसाधनों का पता लगाना, उन्हें विद्यालय संकुल के कार्यक्रम में आमन्त्रित करना, संकुल की गतिविधियों से इन्हें परिचित कराना तथा संकुल केन्द्र के माध्यम से विभिन्न कमियों की पूर्ति करने की कुशलता हासिल करने पर ही इनसे पूर्ण सहयोग लिया जा सकता है ।

(v) संकुल के माध्यम से उत्सवों एवं पर्वों का आयोजन (Organization of different festivals) - संकुल के माध्यम से कुछ उत्सवों एवं पर्वो का सामूहिक रूप से संचालन किया जा सकता है: जैसे 14 नवम्बर को बाल दिवस मनाना, खेलकूद, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक प्रतियोगिताओं का आयोजन करना, 15 अगस्त एवं 26 जनवरी को राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाना।

(vi) संकुल के माध्यम से शैक्षिक एवं सह शैक्षिक गतिविधियों का आयोजन (Organization of curricular and Co-curricular Activities) - निम्नलिखित गतिविधियों को संकुल के माध्यम से कराया जा सकता है:

(अ) प्रदर्शन पाठ (Demonstration lesson)

(ब) क्विज प्रतियोगिता (Quiz competition)

(स) जनसंख्या शिक्षा (Population Education)

(द) विषय उन्नयन (Subject promotion)

उपरोक्त सभी गतिविधियों को आयोजित करने में विद्यालय संकुल द्वारा विद्यालयी नेटवर्क स्थापित किया जा सकता है ।

सूचना प्रोद्योगिकी द्वारा नेटवर्क (Network Through Information Technology) - शिक्षा एवं सीखने के विकास में सूचना प्रौद्योगिकी की अहम् भूमिका है । प्रौद्योगिकी आधारित नवाचार के द्वारा सीखने एवं सिखाने के नये सिद्धान्त विकसित हुए हैं । इसके द्वारा शिक्षक अपने दायित्व में सुधार कर सकते हैं तथा नवीन विषयवस्तु उपकरण एवं पद्धति से परिचित हो सकते हैं । इसी दृष्टि से सूचना प्रौद्योगिकी का विद्यालयी नेटवर्क अत्यधिक महत्वपूर्ण है । क्षेत्र विशेष के विद्यालय केन्द्रीय विद्यालय एव अन्य विद्यालय सूचना प्रौद्योगिकी नेटवर्क से जुड़े होते हैं । यह नेटवर्क अत्यधिक प्रभावशाली होता है । हर विद्यालय अपने स्थान पर रहते हुए नेटवर्क के माध्यम से अन्य विद्यालयों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकता है ।

सूचना प्रौद्योगिकी प्रभावशाली नेटवर्क के रूप में (Information Technology as an Effective Network) - सूचना प्रौद्योगिकी सीखने के वातावरण (Learning Environment) को बनाने में महत्त्वपूर्ण नेटवर्क का कार्य करती है । इन्टरनेट तथा एडवान्स नेटवर्किंग तकनीक द्वारा एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय का इस तरह जुड़ाव हो सकता है कि अनेक कक्षाओं में एक साथ टेलीकम्यूनिकेशन द्वारा सूचना का आदान-प्रदान एवं प्रभावशाली शिक्षण किया जा सकता है । टेलिकॉन्फ्रेंसिंग द्वारा एक स्थान से शिक्षक दूसरे स्थान पर विद्यार्थियों का प्रभावशाली अध्यापन कर सकता है, विद्यार्थियों के लिखित कार्य का निरीक्षण कर सकता है, उनकी जाँच कर सकता है, मूल्यांकन द्वारा विद्यार्थियों के सीखने का पता लगा सकता है । विद्यालय संकुल में 8 किलोमीटर तक की दूरी के विद्यालयों का एक नेटवर्क बनाकर काम किया जाता है तथा गुणात्मक सुधार हेतु प्रयास किया जाता है लेकिन सूचना तकनीक द्वारा दुनियाँ के किसी भी भाग के विद्यालय को नेटवर्क में सम्मिलित किया जा सकता है।

विद्यालयों का नेटवर्क कैसे? (How, the Network of School) - विद्यालयों का नेटवर्क केन्द्रीय विद्यालय समेंत अन्य सभी नेटवर्क के विद्यालयों के मध्य सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा परस्पर जुड़ाव स्थापित करके किया जाता है । केन्द्रीय विद्यालय द्वारा पलभर में सभी नेटवर्क विद्यालयों को कार्यक्रमों की सूचना उपलब्ध हो जाती है । किन विषयों में प्रदर्शन पाठ आयोजित होगें, प्रौद्योगिकी के माध्यम से कैसे प्रसारित किये जाएंगे, कब-कब टेलिकॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से शिक्षकों हेतु नवाचार के व्याख्यान आयोजित किये जाएंगे, किस विद्यालय को किस परियोजना पर कार्य करना है? सभी का निरन्तर प्रसारण नेटवर्क विद्यालयों में होता रहता है । व्याख्यान अथवा कार्यक्रम हेतु भी एकत्रित होने की आवश्यकता नहीं होगी । हर नेटवर्क विद्यालय अपने स्थान से ही सूचना तकनीकी के माध्यम से हर कार्यक्रम को देख सकता है । अपनी योजना बनाकर सूचना तकनीक द्वारा सभी नेटवर्क विद्यालयों को भेज सकता है । इस तरह बिना समय दिये ही अपने स्थान से पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकते हैं ।

सूचना प्रौद्योगिकी के विद्यालयी नेटवर्क से लाभ (Merits of School Network of Information Technology) - सूचना प्रौद्योगिकी ने शिक्षा जगत में क्रान्ति ला दी है । ज्ञान को शीघ्रता से आगे बढ़ाने में सूचना प्रौद्योगिकी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका रही है । सूचना प्रौद्योगिकी आधारित विद्यालयी नेटवर्क से निम्नलिखित लाभ होंगे-

(1). कम समय में अधिक जानकारी प्राप्त होगी ।

(2). ज्ञान को अधिक समय तक संचित रखा जा सकेगा ।

(3). नेटवर्क विद्यालय अपनी-अपनी सुविधानुसार विद्यालयों के छात्रों एवं शिक्षकों हेतु कार्यक्रम का प्रसारण कर सकेंगे ।

(4). इसमें नेटवर्क विद्यालयों के समय शक्ति एवं धन की बचत होगी ।

(5). एक ही विशेषज्ञ के व्याख्यान को सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा दूर एवं पास के नेटवर्क विद्यालय में प्रसारित किया जा सकता है ।

(6). विषय विशेषज्ञों की कमी नहीं रहेगी । यदि किसी नेटवर्क विद्यालय में किसी विषय का शिक्षक नहीं है, तो जिस-विद्यालय में उस विषय का शिक्षक है वहाँ से अपने व्याख्यान को सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा प्रसारित कर सकता है ।

(7). एक विद्यालय के मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का नेटवर्क क्षेत्र में आने वाले सभी विद्यालय लाभ प्राप्त कर सकते है ।

(8). सूचना प्रौद्योगिकी नेटवर्क से नेटवर्क विद्यालयों के वातावरण में सुधार किया जा सकता है ।

(9). सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा शिक्षकों तथा विद्यार्थियों के बहुत बड़े समूह को विषय सम्बन्धी जानकारी सहज एवं सरल तरीके से दी जा सकती है ।

(10). यदि किसी नेटवर्क विद्यालय में कोई नवाचार हो रहा है तो इसकी जानकारी सभी नेटवर्क विद्यालयों को मिल जाती है ।

(11). सभी नेटवर्क विद्यालय फाइल्स एवं संसाधन जो कम्प्यूटर पर नेटवर्क में हैं, उनका उपयोग कर सकते है। नेटवर्क विद्यालयों द्वारा कम्प्यूटर पर उपलब्ध जानकारी को प्रिंट करवाकर उन्हें भविष्य हेतु सुरक्षित भी रख सकते हैं ।

विद्यालयी नेटवर्क के प्रकार (Types of School Network) - इस हेतु अलग-अलग प्रकार के विकल्प हैं, जिनसे अध्यापन कक्ष, प्रयोगशाला तथा विद्यालयी कम्प्यूटर लाइन को अधिक प्रभावशाली बना सकते हैं-

(i) समान समूह के मध्य नेटवर्क (Peer to peer Networking)- इसके अन्तर्गत नेटवर्क के अन्तर्गत आने वाले विद्यालयी संसाधनों को नेटवर्क से शेयर कर सकते हैं । नेटवर्क विद्यालयों में से एक अथवा अधिक कम्प्यूटर केन्द्रीय सेवाएँ जैसे प्रिंटिंग तथा इन्टरनेट को उपयोग करना आदि ले सकते हैं । समान समूह के विद्यालयों का नेटवर्क छोटे नेटवर्क हेतु अच्छा रहता है । इस प्रकार का नेटवर्क कम खर्चीला रहता है । इसके लिए सिर्फ केबल तथा हार्डवेयर नेटवर्किंग हेतु सिर्फ कुछ अधिक खर्च ही लगता है ।

(ii) सर्वर नेटवर्क (Client Server Networking)- इस प्रकार के नैटवर्क के अन्तर्गत अधिक विशिष्ट सॉफ्टवेयर का उपयोग किया जाता है । इस नेटवर्क से यह लाभ है कि बिना नेटवर्क में परिवर्तन किये अन्य व्यवस्था का उपयोग किया जा सकता है । यह केन्द्रीकृत नेटवर्क प्रबन्धन एवं प्रशासन में अधिक आसान है । इस प्रकार के नेटवर्क में प्रारम्भिक खर्च अधिक आता है तथा इसमें बिना तकनीकी विशेषज्ञ के व्यवस्थित कार्य नहीं चलाया जा सकता है ।

(iii) बेतार लाइन (Wireless Lines) - इस व्यवस्था में कम्प्यूटर नेटवर्क स्थापित करने हेतु केबल की जरूरत नहीं है । इसके अन्तर्गत एक या अधिक वायरलेस ट्रान्समीटर से जोड़कर सर्वर से जोड़ दिया जाता है । इस प्रकार के नेटवर्क से निम्नलिखित लाभ हैं-

1. कम समय में यह नेटवर्क स्थापित किया जा सकता है ।
2. इसमें लचीलापन दिखाई देता है ।
3. बिना कनेक्शन को तोडे कम्प्यूटर एक कक्ष से दूसरे कक्ष में ले जाया जा सकता है ।
4. इन्हें लगाने हेतु कम खर्च लगता है । पारम्परिक केबल व्यवस्था में भी इसे लगाया जा सकता है ।
5. विद्यालय में बेतार लेन व्यवस्था की जा सकती है । एक विद्यालय अथवा सम्पूर्ण विद्यालय में आवश्यकतानुसार नेटवर्क स्थापित किया जा सकता है ।
6. केबल व्यवस्था से इसे संयुक्त भी किया जा सकता है तथा अधिक लचीलापन स्थापित किया जा सकता है ।

बेतार लाइन द्वारा नेटवर्क स्थापित करना श्रेष्ठ हल नहीं है, क्योंकि नेटवर्क की गति इस पर निर्भर रहती है कि कितने कम्प्यूटर इसके लिए एक साथ काम में लिये जा रहे हैं । ट्रांसमीटर तथा रिसीवर गति तथा गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं । इसी आधार पर नेटवर्क का सिगनल निर्भर करता है ।

(iv) शक्ति लाइन नेटवर्किंग (पी.एल.एन.) - शक्ति लाइन नेटवर्किंग विश्वासपद नेटवर्क संचरण है, जिसमें 250 के.बी.पी.एस. तथा 500 के.बी.पी.एस. की गति से 20 नेटवर्क पॉइन्ट रहते हैं । इसमें वायरलेस तकनीकी की तुलना में संसाधन खर्च अधिक आता है, लेकिन तकनीकी सुधार और विस्तृत-स्केल व्यवस्था में यह प्रणाली सफल नहीं हो पाई है ।

अनेक शैक्षिक संस्थानों में कम्प्यूटर इन्टरनेट को एक शक्तिशाली संचरण का साधन माना जाता है । वायरलेस तथा सेटेलाइट तकनीक का उपयोग दूर दराज के इलाकों में भी किया जा सकता है ।

(v) सेटेलाइट तकनीक (Salellite Technology) - इस तकनीक के अन्तर्गत उपलब्ध फोन लाइन में ही कनेक्शन जोड दिया जाता है । अनेक कम्पनियों के द्वारा संचालित संस्थाओं में इन्टरेक्टिव एक्सैस वी.एस.ए.टी. द्वारा (interactive internet access via satellite) का उपयोग किया जा रहा है । विद्यालयों की समस्याओं के हल हेतु यह तकनीक श्रेष्ठ मानी जाती है, क्योंकि यहाँ कोई अन्य संचरण विकल्प नहीं रहते हैं ।

सेटेलाइट द्वारा वृहद् मोबाइल व्यक्तिगत संचरण व्यवस्था भी नेटवर्क स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है ।

(vi) वायरलाइन तकनीकी (Wireline Technology) - टेलिफोन लाईन पर उच्च गति इन्टरनेट द्वारा उपलब्ध नेटवर्क को बढ़ाया जा सकता है । इस तकनीक को शहरी क्षेत्र में उपयोग में ली जा सकती हैं, क्योंकि इसमें बेसिक टेलिफोन सेवा उपलब्ध रहती है ।

अन्य तकनीकी नवाचार जो शैक्षिक संचरण हेतु उपयोग किये जा सकते हैं, वे अग्रलिखित हैं-

(vii) इंटरनेट टेलिफोनी (Interent Telephony) --पेकेज रूप में ध्वनि संचरण को हस्तान्तरित किया जा सकता है । इन्टरनेट कम खर्चीला नवाचार है । विद्यालय अपने इन्टरनेट के द्वारा ध्वनि संचरण हेतु अपने नेटवर्क का उपयोग कर सकता है ।

(viii) सामुदायिक रेडियो (Community Radio)- समुदाय को शिक्षा प्रदान करने हेतु छोटा सामुदायिक रेडियो प्रसारण का उपयोग किया जा सकता है । विद्यालय, घर तथा सामुदायिक केन्द्र पर शैक्षिक कार्यक्रमों का प्रसारण रेडियो द्वारा प्रभावशाली रूप में किया जा सकता है । कुछ विद्यालय तथा टेलिसेन्टर परियोजना को संयुक्त रूप से कम्प्यूटर एवं सामुदायिक रेडियो द्वारा प्रभावशाली रूप में प्रसारित किया जा सकता है । इससे सूचना विस्तृत रूप से संचरित की जा सकती है । कम्प्यूटर द्वारा उपभोक्ता पैसा बचा सकता है । यदि सूचना को ऑफ लाइन सुरक्षित किया जाए तथा ई-मेंल द्वारा भेजी जाए तो संचरण की राशि को भी बचाया जा सकता है ।

तकनीकी नेटवर्क द्वारा निश्चित ही विद्यालयी शिक्षा में एक महत्वपूर्ण आयाम स्थापित हुआ है । सीखने एवं सीखने (Teaching and Learning) के क्षेत्र में आई चुनौती का तकनीकी आधारित शिक्षा द्वारा सशक्तता पूर्वक सामना किया है । शिक्षा की व्यवस्था में

तकनीकी ने एक 'नवीन सीखने की व्यवस्था (New Learning System) दी जिसके द्वारा शिक्षा की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाया जा सकता है । तकनीकी नेटवर्क आधारित नवीन सीखने की व्यवस्था (Learning System) विद्यालयों में अध्यापक दायित्व, सीखने की विधि, मूल्यांकन, शिक्षक आदि के लिए की जा सकती है ।

5.6 सारांश (Summary)

विद्यालयी व्यवस्था, प्रबन्धन एवं नवाचार नामक इकाई के अन्तर्गत निम्नलिखित बिन्दुओं का विवेचन किया गया है :-

- विद्यालय की संस्था के रूप में सम्भावनाएँ
- विद्यालयी मुक्तता
- शिक्षा में नवाचार
- भविष्य के विद्यालय
- विद्यालयी नेटवर्क

1. विद्यालय एक संस्था के रूप में (School as an Institution) - विद्यालय एक संस्था के रूप में अति महत्वपूर्ण है । इसी संस्था में अध्ययन कक्षों में भारत के भावी नागरिक तैयार हो रहे हैं । विद्यालय की गतिविधियों एवं विद्यालयी प्रधान की कुशलता के आधार पर ही विद्यालय एक संस्था के रूप में पहचाना जाता है । यदि प्रतिवर्ष विद्यालय के विकास हेतु संस्थागत योजनाएं बनाई जाती है और मूल्याकंन के द्वारा अगले वर्ष की योजना में सुधार किया जाता है तो निश्चित ही विद्यालय एक संस्था के रूप उसे महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकेगा । एक संस्था के रूप में ही विद्यालय की संभावनाएं हैं ।

2. विद्यालय में मुक्तता (Openness in School)- शिक्षाशास्त्रियों के क्रान्तिकारी विचारों से विद्यालय में मुक्तता का सम्प्रत्यय आया । इस सम्प्रत्यय के अन्तर्गत शैक्षिक सामग्री की सन्दर्भ सेवाओं का व्यापक प्रसार, दक्षताओं का आदान-प्रदान, साथी युगलीकरण तथा व्यापक रूप से शिक्षाशास्त्रियों की सन्दर्भ सेवाएँ आती हैं । क्रान्तिकारी विचारकों में इवान इलिच, एवरेट रेमर, पाल गुडमेंन, जान हाल्ट, नीलपो स्टेमेंन, पॉवले फेरे, चार्ल्स सिल्वर मेंन आदि सम्मिलित हैं। स्वार्ट्ज ने सकारात्मक शिक्षा का सम्प्रत्यय दिया । एवर्ट रीमर के अनुसार परम्परागत विद्यालय शिक्षा पद्धति मर चुकी है ।

इस सन्दर्भ में माध्यमिक शिक्षा स्तर पर केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, नई दिल्ली द्वारा आयोजित खुला विद्यालय (Open school) का प्रयोग भी उल्लेखनीय है ।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान (NIOS) तथा राज्य स्तर पर प्रारम्भ हुई मुक्त विद्यालय शिक्षा इसी दिशा में महत्वपूर्ण प्रयोग है ।

नवाचार (Innovation)- वर्तमान में चल रही चिन्तन प्रक्रिया से यह स्पष्ट हो गया है कि प्रचलित शिक्षा प्रणाली वर्तमान तथा भविष्य के परिप्रेक्ष्य में निरर्थक हो गई है । संस्थागत औपचारिक शिक्षा के स्थान पर निम्न विकल्प ढूँढे गये:

1. अनौपचारिक शिक्षा (Non-Formal Education)
2. चल विद्यालय (Mobile School)
3. शैक्षिक तकनीक (Educational Technology)
4. पाठ्यक्रम का नवीनीकरण (Innovations in Syllabus)
5. समाज के ज्ञान हेतु विद्यालयों का हस्तान्तरण (Transformation in schools for the Knowledge Society)
6. ई-अधिगम (E-Learning)
7. वेब आधारित अधिगम (Web Based Learning)

भविष्य विद्यालय (Future Schools)- युनेस्को द्वारा प्रकाशित प्रतिवेदन द्वारा भविष्य के विद्यालयों पर प्रकाश डाला गया है । कुछ क्रान्तिकारी विचारधारा वाले शिक्षाशास्त्रियों ने अपनी पुस्तकों के अन्तर्गत भविष्य विद्यालयों पर चिन्तन किया है । इवान इलिच की पुस्तक 'डी स्कूलिग सोसायटी' में विद्यालय रहित समाज की कल्पना की है । एलविन टॉफलर ने अपनी पुस्तक 'पयुचर शोक' में भविष्य में शिक्षा की दृष्टि से जो आघात लगने वाला है, उसका विवेचन किया है । टार्स्टन हयूसन नेसन 2000 में शिक्षा कैसी होगी उसका विवेचन किया ।

शिक्षा का भविष्य कैसा हो? इस सन्दर्भ में जो विचारधारा आई उसमें विद्यालयों को नजर अन्दाज किया गया । शिक्षा के अनेक रूप (खुला विद्यालय, 10 + 2 की शैक्षिक संरचना, दलित वर्ग की शिक्षा) सामने आये । संस्थागत विद्यालय को समाप्त करने की बात आयी । 1986 की नई शिक्षा नीति में शिक्षा के बारे में एक भविष्य दृष्टि प्रस्तुत की गई जो स्वयं में मानववादी आदर्शों से परिपूर्ण है ।

भविष्य की शिक्षा को मानवीय तथा संवेदनशील बनाना पड़ेगा । शहरी परिष्कार और देहात शहर के रिश्ते को मानव जाति के जीवन व्यवहार का सामान्य अंग बनना होगा । डेलर्स आयोग द्वारा भविष्य में शिक्षा द्वारा चार स्तम्भों के अन्तर्गत करने का अधिगम, जानने का अभिगम, साथ-साथ रहने का अधिगम एवं बनने का अधिगम निश्चित ही भविष्य की शिक्षा को सही दिशा दे सकेगा । सही शिक्षा वो ही होगी जिसके द्वारा विद्यार्थी सीख सकेगा ।

विद्यालयों का नेटवर्क (Network of the school) - विद्यालयों में परस्पर समन्वय स्थापित करने हेतु नेटवर्क आवश्यक है 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में विद्यालयी नेटवर्क की बात कही गई । यह नेटवर्क दो प्रकार से किया जा सकता है:-

(1). विद्यालयी संकुल द्वारा (Through social complex)

(2). सूचना तकनीक द्वारा (Through Information Technology)

विद्यालयी संकुल के अन्तर्गत कुछ विद्यालयों का नेटवर्क बनाकर शिक्षा में गुणात्मकता लाने का प्रयास रहता है ।

सूचना तकनीक द्वारा विद्यालयों के मध्य प्रभावशाली नेटवर्क स्थापित किया जा सकता है । इन्टरनेट तथा एडवान्स नेटवर्किग तकनीक द्वारा एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय का जुड़ाव होता है । टेलिकम्युनिकेशन, टेलीकॉन्फ्रेंस द्वारा शिक्षा के वातावरण को अधिक से अधिक सीखने हेतु उपयोगी बनाया जा सकेगा ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. संक्षेप में विवेचन कीजिए कि विद्यालय एक संस्था कैसे है?
   How school is an institution describe in short.
2. विद्यालय को संस्था कहने वाले मुख्य क्षेत्र कौन से है?
   What are the different aspects which formulate the school as institution?
3. विद्यालय के विकास हेतु विद्यालयी योजना कैसे महत्वपूर्ण है?
   How is institutional plan important for the development of an Institution? Explain with suitable example.
4. संस्थागत योजना की तैयारी से सम्बन्धित चरणों का विवेचन कीजिए ।
   Describe, the steps related to preparation of an institutional plan.
5. ''सक्षम प्रधानाध्यापक के आधार पर विद्यालय की पहचान होती है ।'' इस कथन का विवेचन कीजिए ।
   'The school is identified on the basis of efficient Head Master". Explain the statement with suitable example.
6. विद्यालयी मुक्तता से आप क्या समझते हैं? इसमें ज्ञान की प्राप्ति कैसे होती है? उदाहरण देकर स्पष्ट करें।
   What do you mean by openness in school? How do students gain knowledge in this system?Explain with Example.
7. विद्यालयी शिक्षा में नवाचारों का विस्तृत विवेचन कीजिए ।
   Describe in detail the innovations in school education.
8. भविष्य विद्यालय का सम्प्रत्यय स्पष्ट कीजिए । वर्तमान में जो चिन्तन चल रहा है उसके अनुसार भविष्य विद्यालय कैसे होंगें?
   Clarify the concept of future schools, on the basis of current thinking how will be the future schools.
9. विद्यालयी नेटवर्क से आप क्या समझते हैं? विद्यालयी स्कूल तथा सूचना प्रौद्योगिकी आधारित नेटवर्क में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
   What do you mean by school network? Differentiate between school complex and Information Technology network.

5.7 संदर्भ ग्रंथ सूची)Bibliography(

1. एलविन टोफलर, फ्युचर शोक, बेन्टम बुक्स, न्यूयार्क 1971
2. बेरी एन. सेवर्टज, अफरमेंटिव एज्यूकेशन, प्रिन्टिसहाल, एगंलबुड क्लिफ, 1972
3. भारत सरकार, कोठारी शिक्षा आयोग (1964-66) शिक्षा मंत्रालय, नई-दिल्ली 1966
4. भारत सरकार; नई शिक्षा नीति 1986, शिक्षा मन्त्रालय, नई दिल्ली

5. बुकवेन, पेंटर (सम्पादक) एज्यूकेशन विदाउट स्कूल्स, रूपा एण्ड कम्पनी, कलकत्ता 1971
6. Brain Caldwan, future of public Education; A Policy Framework of Lasting reform Educational Management and Administration, Volume25, NO.4, October 1997, SAGE Publications, Birmingham, U.K
7. Cahoon, B-Teaching and Learning Internet Skills, in Adult Learning and the Internet, Jossey Bass, San Francisco,1998
8. सेंट्रल बोर्ड ऑफ सेकेन्ड्री एज्यूकेशन:
   (i) ओपन रकूल, प्रोस्पेक्टस फॉर सेकेण्डरी लेवल कोर्स, 1986
   (ii) स्कीम ऑफ स्टडीज फॉर सीनियर सेकेन्ड्री सर्टीफिकेट एक्जामिनेशन, 1966
9. Davis, L.E. and R.wells, Empowering the learning through Computer-mediated Communication, The American Journal of Distance Education 1991
10. दुबे, श्यामाचरण, शिक्षा समाज और भविष्य, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1994
11. इलिच इवान डी.; डी स्कूलिंग सोसायटी, हार्पर एण्ड रो पब्लिशर्स, 1971
12. इलिच इवान डी, सेलिब्रशन्स ऑफ अवेअरनेस, हार्मडेवर्थ मिडिल सेक्स, 1974
13. Goel, O.P.(Editor), School Organisation and Management, Isha Books, Delhi, 2005
14. Griffiths, Daniel, E.Administrative Theory; New York Appletion,1959
15. Gulik, Luthur & L-Urwick (ed s.) papers on the Science of Administration, Institution of Public Administration,New York
16. Mohanty, Jagannath, School management: New Trends and Innovations, Deep & Deep publications Pvt. Ltd., New Delhi, 2004
17. मूनिस रजा: शिक्षा और विकास के सामाजिक आयाम, ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली, 1999
18. ओड़, डॉ. लक्ष्मीलाल के. (सम्पादक), शिक्षा के नूतन आयाम, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1990

इकाई-6

मूलभूत शिक्षा का वैयक्तिक अध्ययन
Case Study of Basic Education

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

6.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and objectives)

6.1 मूलभूत प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता (Need of Basic Education)

6.2 प्राथमिक शिक्षा का संप्रत्यय (Concept of Basic Education)

6.3 प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Primary education)

6.4 प्राथमिक शिक्षा के संवैधानिक और कानूनी प्रावधान (Legal and Constitutional Provisions of Primary Education)

6.5 प्राथमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम (Curriculum of Primary Education)

6.6 प्राथमिक शिक्षा का नियन्त्रण व प्रशासन (Administration and Control of Primary Education)

6.7 राजस्थान विकास के सामाजिक सन्दर्भ में विद्यालयी शिक्षा में नवाचार (Innovations in School Education)

6.8 सारांश (Summary)

6.9 संदर्भ गन्थ सूची (Bibliography)

मूलभूत शिक्षा का वैयक्तिक अध्ययन/ राजस्थान के विकास एवं सामाजिक संदर्भ में नवप्रवर्तन, सफलतायें एवं असफलतायें

Case Study of Basic Education/Innovations in School Education in Rajasthan Development Social Context: Success/Failure

6.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप -

- शिक्षा/प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता को समझ सकेंगे ।
- भारत में प्राथमिक शिक्षा के संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों की जानकारी कर सकेंगे ।
- प्राथमिक शिक्षा के संप्रत्यय को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- सबके लिए शिक्षा प्रत्यय को समझ सकेंगे ।
- प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, नियन्त्रण व प्रशासन का विवेचन कर सकेंगे ।
- राजस्थान विकास के सामाजिक सन्दर्भ में विद्यालयी शिक्षा में नवाचारों से अवगत हो सकेंगे ।

6.1 मूलभूत/प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता (Need of Basic Education)

मूलभूत/प्राथमिक शिक्षा का विचार लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था की उपज है । लोकतन्त्र को सफलता व प्रभावशाली ढंग से चलाने के लिए आवश्यक है कि सभी नागरिक कुछ न कुछ स्तर तक की शिक्षा अवश्य प्राप्त करें जिससे वे सुयोग्य नागरिक बन सके । मूलभूत शिक्षा का नारा सबसे पहले उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में पश्चिमी देशों में दिया गया । सन् 1842 में स्वीडन ने प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की, इसके उपरान्त 1852 में अमेंरिका में, सन् 1860 में नार्वे में, सन् 1870 इंग्लैण्ड में, तथा सन् व 1905 में हंगरी, पूर्तगाल व स्विटजरलैण्ड आदि देशों में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य कर दिया गया । भारत में यह कार्य विलम्ब से प्रारम्भ हुआ क्योंकि उस समय विदेशी शासन का यहाँ पर आधिपत्य था । उस समय छुट-पुट प्रयास किये गये जिससे विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई । सन् 1882 में दादाभाई नौरोजी ने भारतीय शिक्षा आयोग (हटर आयोग) के सामने प्राथमिक शिक्षा की माँग रखी थी । उनकी इस माँग को स्वीकार नहीं किया । लेकिन भारतीयों के लिए मूलभूत शिक्षा की आवश्यकता की तरफ सभी का ध्यान आकर्षित किया । प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने की दिशा में प्रथम आशिक रूप से सफल प्रयास सर इब्राहिम रहीमतुल्ला व सर चिमनलाल सीतलवाड का रहा और इनके प्रयास से सन् 1906 में बम्बई में प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता पर विचार करने हेतु एक समिति का गठन परन्तु इस समिति का निर्णय प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने के पक्ष में नहीं रहा । सन् 1918 में श्री विट्ठल भाई पटेल ने बम्बई म्यूनिसिपल क्षेत्र में प्राथमिक शिक्षा रहो अनिवार्य कर दिया गया उसके बाद इसका अनुसरण अन्य राज्यों में किया गया । परिणाम स्वरूप प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता की दिशा में कोई विशेष प्रगति नहीं हो सकी । सन् 1947 में भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, तब स्वतन्त्र भारत के संविधान की धारा 45 में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य व निःशुल्क बनाने का संकल्प किया । इसमें कहा गया है कि "संविधान लागू होने के 10 वर्ष के अन्दर राज्य अपने क्षेत्र के सभी बालकों को 14 वर्ष की आयु होने तक निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा ।" इस संवैधानिक उत्तरदायित्व को पूरा करने के लिए अनेक राज्यों में प्राथमिक शिक्षा अधिनियम बनाये गये जिसमें प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य व निःशुल्क बनाने के कार्यक्रम व नीति निर्धारित की गई । परन्तु संवैधानिक निर्देश तथा राज्यों द्वारा पारित अधिनियमों के बावजूद भी प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य व निःशुल्क बनाने का प्रयास पूरा नहीं हो सका । पुन: 28 नवंबर, 2002 को 86वॉ संविधान संशोधन विधेयक पारित कर 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को उनके मौलिक अधिकार के रूप में धारा 21 -ए के तहत घोषित कर दिया गया। इस संकल्प को मूर्त रूप देने की दिशा में देशव्यापी कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं एवं अनेक नवाचारों का प्रयोग किया जा रहा है ।

6.2 प्राथमिक शिक्षा का संप्रत्यय
(Concept of Primary Education)

औपचारिक शिक्षा व्यवस्था के प्रथम स्तर को प्राथमिक शिक्षा स्तर कहा जाता है । बालक की प्राथमिक शिक्षा 6 वर्ष की आयु से 14 वर्ष तक चलती है ।

शिक्षा आयोग (1964-66) ने प्राथमिक शिक्षा को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया-

प्राथमिक शिक्षा

निम्न प्राथमिक शिक्षा	**उच्च प्राथमिक शिक्षा**
कक्षा 1 से 4 या 5 तक की शिक्षा	कक्षा 5 या 6 से कक्षा 8 तक की शिक्षा
6 से 11 वर्ष के आयुवर्ग के बालक के लिए।	11 से 14 वर्ष आयुवर्ग के बालकों के लिए।

अत: कक्षा 1 से लेकर 8 तक की शिक्षा को प्राथमिक शिक्षा कहा जाता है । प्राथमिक शिक्षा को प्रारम्भिक शिक्षा (Elementry Education) अथवा विद्यालयी शिक्षा (School Education) अथवा बुनियादी शिक्षा (Basic Education) के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है ।

सबके लिए शिक्षा (Education for All) - जोमटीन थाईलैण्ड में सन् 1990 में हुई सबके लिए शिक्षा विषय पर विश्व कांफ्रेंस में सभी व्यक्तियों की मूलभूत अधिगम आवश्यकताओं की पूर्ति करने पर जोर दिया गया जिससे सभी शिक्षा का लाभ उठाने में समर्थ हो सकें । सबके लिए शिक्षा पर विश्व घोषणा (World Declaration on Education for All) में कहा गया कि -

"मूलभूत अधिगम आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए उपलब्ध कराये जाने वाले शैक्षिक अवसरों का लाभ उठाने में प्रत्येक व्यक्ति समर्थ होना चाहिए । इन आवश्यकताओं में जीवन जीने, अपनी पूर्ण क्षमताओं का विकास करने, सम्मानपूर्वक जीने व कार्य करने, विकास में पूर्ण सहयोगी होने, अपने जीवन की गुणवत्ता को सुधारने से निर्णयों की सूचना पाने तथा अधिगम को जारी रखने के योग्य बनाने के लिए आवश्यक अनिवार्य उपकरण (जैसे साक्षरता, मौखिक अभिव्यक्ति, अंक ज्ञान तथा समस्या समाधान आदि) तथा मूलभूत अधिगम पाठ्यवस्तु (जैसे ज्ञान, कौशल, मूल्य व दृष्टिकोण) समाहित है ।"

Every person shall be able to benefit from educational opportunities designed to meet basic learning needs. These needs comprise both essential learning tools (such as literacy oral expression, numeracy and problem solving) and the basic learning content (such as Knowledge, Skills, Values and Attitudes) required by human beings to be able to survive, to develop their full capacitites to live and work in

dignity, to participate full in development, to improve the quality of their lives, to make informed decisions and to continue learning.

विश्व शिक्षा फोरम (2000) ने सबके लिए शिक्षा के छः लक्ष्यों के प्रति अपनी सहमति प्रदान की जो दृढ़ अन्तर्राष्ट्रीय वचनबद्धता तथा संकल्प के समक्ष अनिवार्य प्राप्त तथा वहनीय माने गये । डकार फ्रेम वर्क में समस्त देशों ने सार्वभौम, निःशुल्क, अनिवार्य और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा वर्ष 2015 तक उपलब्ध कराने का संकल्प लिया । डकार सम्मेलन के घोषणा पत्र में निम्नांकित छः लक्ष्य तय किये गये-

- व्यापक शिशु देखभाल तथा शिक्षा कार्यक्रम का विशेषतः सबसे अधिक निर्बल तथा सुविधावंचित वर्गो के बच्चों के लिए प्रसार करना तथा उसमें सुधार लाना ।
- वर्ष 2015 तक सभी बच्चों, विशेषतः बालिकाओं, विभिन्न परिस्थितियों में रहने वाले और अल्पसंख्यक वर्ग के बच्चों को निःशुल्क, पूर्ण तथा उत्कृष्ट गुणवत्तायुक्त अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की सम्प्राप्ति सुनिश्चित करना ।
- उपयुक्त अधिगम तथा जीवन कौशल सम्बन्धी कार्यक्रमों तथा समान रूप से पहुँच के माध्यम से सभी बालक-बालिकाओं तथा व्यस्कों की अधिगम आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित करना ।
- सन् 2005 तक प्रौढ़ साक्षरता के स्तरों, विशेषतः महिलाओं के लिए और सामान्यतः सभी व्यस्कों की बुनियादी तथा सतत शिक्षा तक समुचित शिक्षा के क्षेत्रों में लिंग असमानता को समाप्त करना और श्रेष्ठ गुणवत्तायुक्त बेसिक शिक्षा में सम्प्राप्ति तथा बालिकाओं की पूर्ण तथा समान पहुँच को सुनिश्चित करने हेतु उन्हें केन्द्र में रखकर 2015 तक शिक्षा में लिंग समानता प्राप्त करना ।

निश्चय ही विश्व घोषणा में समाहित मुद्दों में जनसंख्या, स्वारथ्य पोषण, पर्यावरण, ऊर्जा साधन तथा स्थानीय, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर होने वाला विकास तथा परिवर्तनो को मूलभूत अधिगम आवश्यकताओं के अंग के रूप में स्वीकार करना होगा । भारत में सबके लिए शिक्षा अभियान के प्रस्तुत लक्ष्य निम्न है-

- पूर्व बाल्यकाल परिचर्चा तथा विकास क्रियाओं का प्रसार ।
- प्रारम्भिक शिक्षा का सार्वजनिकरण करना ।
- शैक्षिक अवसरों का लाभ उठाने का प्रावधान करना ।
- नारी समानता के एक साधन के रूप में शिक्षा का उपयोग करना ।
- शिक्षा की पाठ्यवस्तु व प्रक्रियाओं में सुधार करना ।

इस कार्य प्रणाली के सभी पहलूओं पर ध्यान देकर मूलभूत अथवा प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता पर जोर दिया जाने लगा । इस प्रकार के संकल्पों को मूर्तरूप देने की दिशा में अनेक नवाचारों का प्रयोग किया गया ।

6.3 प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Primary Education)

प्रारम्भिक शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के ज्ञान, कौशल एवं आवश्यक मूल्यों को अर्जित करने योग्य बनाना है ताकि वह समाज के एक सदस्य और नागरिक के उत्तरदायित्व को सफलतापूर्वक सम्पादित कर सके ।

कोठारी आयोग (1964-66) ने अपने प्रतिवेदन में प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्यों के सम्बन्ध में विवेचन किया है कि आधुनिक प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य बालक को भावी जीवन की परिरिथतियों का सामना करने में समर्थ बनाने के लिए शारीरिक तथा मानसिक प्रशिक्षण देकर उसका इस प्रकार से विकास करना कि वह वास्तव में उपयोगी नागरिक बन सके ।

प्राथमिक शिक्षा बालकों को अपने वातावरण से अनुकूलन करने योग्य बनाती है, उसमें परस्पर सद्भावना व सहयोग की भावना विकसित करती है, उनका शारीरिक व मानसिक विकास करती है । भाषा, कला, संगीत आदि के द्वारा आत्म-अभिव्यक्ति की क्षमता विकसित करती है, उन्हें आत्मनिर्भर बनाती है, उनमें सामाजिकता व नागरिकता के गुण विकसित करती है तथा उनमें नैतिकता की भावना उत्पन्न करती है ।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT) के द्वारा सन् 1975 में तैयार किये गए दस्तावेज "The Curriculum for the Ten year School" में प्राथमिक शिक्षा के मुख्य उद्देश्यों को निम्न प्रकार विवेचित किया है-

- मातृभाषा का ज्ञान प्रदान करना ।
- जोड़, घटाव, गुणा व भाग की योग्यता प्रदान करना ।
- वैज्ञानिक खोज विधि को सिखाना ।
- विज्ञान व तकनीकी के महत्त्व को समझाना ।
- राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगान आदि राष्ट्रीय प्रतीकों तथा प्रजातांत्रिक विधियों व संस्थाओं के प्रति आदर भाव उत्पन्न करना ।
- भारत की मिली जुली संस्कृति से परिचय करना ।
- अस्पृश्यता, जातिवाद व साम्प्रदायिकता का विरोध करना सिखाना ।
- मानवश्रम के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करना ।
- सफाई तथा स्वस्थ जीवन की आदतें विकसित करना ।
- अच्छाई तथा सौन्दर्य की अभिरूचि को बढ़ाना ।
- सहयोग की भावना विकसित करना ।
- बालक का सर्वागीण विकास करना ।
- सृजनात्मक क्रियाओं के द्वारा स्वतन्त्र अभिव्यक्ति की योग्यता विकसित करना ।
- स्व अध्ययन की आदत डालना ।

6.4 प्राथमिक शिक्षा के संवैधानिक और कानूनी प्रावधान (Legal and Constitutional Provisions of Primary Education)

प्राथमिक शिक्षा में समय समय पर होने वाले संवैधानिक संशोधन और प्रावधान मुख्य रूप से इस प्रकार हैं:-

सविधान की धारा 63,64,65 और 66 की सूची प्रथम और धारा 25 की सूची तृतीय के अनुसार सन् 1976 तक शिक्षा मुख्य रूप से राज्य का विषय थी ।

1976 के संवैधानिक संशोधन के परिणाम स्वरूप शिक्षा पर केन्द्रीय व राज्य सरकारों अर्थात् दोनों का उत्तरदायित्व होगा । इस प्रकार शिक्षा एक समवर्ती विषय हो गया । जो कि संघ सरकार को विद्यालयी शिक्षा पर कानून बनाने में सक्षम होगी ।

भारतीय संविधान की धारा 30 के अनुसार - सभी अल्पसंख्यकों को चाहे वो धार्मिक रूप से या भाषायी रूप से उनको अपनी इच्छानुसार शिक्षा संस्थान स्थापित करने और उसके संचालन का अधिकार है और साथ में राज्य ऐसे शिक्षा संस्थाओं को इस आधार पर कि वे भाषायी अल्पसंख्यको के द्वारा संचालित है व अनुदान देने में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करेगा ।

धारा 45 के अनुसार - "संविधान के लागू होने के समय से 10 वर्षों में 6 से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बालक बालिकाओं के लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करने का सरकार प्रयास करेगी।

धारा 46 के अनुसार - "पिछड़े हुए तबके के हितों को देखते हुए राज्य उनके लिए विशेष शिक्षा को प्रोत्साहित करेगा, जिसमें मुख्य रूप से अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति शामिल है ।

धारा 350ए के अनुसार - "राज्य का यह दायित्व है कि वह भाषायी रूप से अल्पसंख्यक वर्ग के बच्चों के हितों के लिए उनको अपनी मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने की पूर्ण व्यवस्था करें।"

उपर्युक्त धाराओं से यह प्रदर्शित होता है कि 6-14 वर्ष की आयु वर्ग के बालक/बालिकओं की प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क हो । इस हेतु समय-समय पर शैक्षिक नीतियाँ बनी । भारत में निम्न शैक्षिक नीतियाँ बनी-

शिक्षा नीति	-	1968
शिक्षा नीति	-	1978
राष्ट्रीय शिक्षा नीति	-	1986
कार्य नीति	-	1992

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 एवं 1992 में इसकी समीक्षा के दौरान तैयार कार्ययोजना में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वजनीकीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निम्नानुसार मुख्य व्यूह रचना निर्धारित की गई थी :-

- शैक्षिक प्रबन्ध का विकेन्द्रीकरण ।
- जो बालक-बालिकाएं औपचारिक विद्यालयों में प्रवेश नहीं ले सकते उनके लिए वैकल्पिक शिक्षा व्यवस्था।

- प्रत्येक बालक-बालिकाओं को विद्यालय लाने में शिक्षक एवं समुदाय की भागीदारी ।
- पूर्व प्राथमिक शिक्षा के मध्य उचित समन्वय स्थापित करना ।
- विद्यालयी सुविधाओं में सुधार ।
- प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर न्यूनतम अधिगम स्तर लागू करना ।
- बाल केन्द्रित शिक्षण की व्यवस्था ।
- उपचारात्मक शिक्षण हेतु व्यापक एवं सतत मूल्यांकन ।

उपर्युक्त दायित्वों को पूर्ण करने के लिए राजस्थान सरकार ने भारत सरकार की साझेदारी में विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों का संचालन किया जैसे-

- ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड
- लोक जुम्बिश परियोजना
- शिक्षा कर्मी योजना
- गुरू मित्र योजना
- शिक्षा आपके द्वार
- जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम
- जनशाला कार्यक्रम

इन योजनाओं की क्रियान्विति से राजस्थान के शैक्षिक परिदृश्य में काफी परिवर्तन हुआ जो सारणी के अन्तर्गत प्रदर्शित है:-

सारणी संख्या 6.1

विद्यालय	वर्ष 1950-51	वर्ष 2003-04
प्राथमिक विद्यालय	4336	55757
उच्च प्राथमिक विद्यालय	732	23942
प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापक	8700	120338
उच्च प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापक	6600	154921
नामांकन	3.9 लाख	141.50 लाख

उपरोक्त सारणी से यह प्रदर्शित होता है कि शैक्षिक संस्थाओं, शिक्षकों एवं नामांकन में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है । उसके पश्चात् भी विद्यालय नहीं जाने वाले बालक-बालिकाएं प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राज्य को अभी लम्बी यात्रा पूरी करनी है ।

6.5 प्राथमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम (Curriculum of Primary Education)

पाठ्यक्रम उन सभी क्रियाकलापों का एक समूह है जिन्हें अध्यापक तथा छात्र एक साथ मिलकर शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आयोजित करते है । पाठ्यक्रम के आधार पर ही विद्यालयों में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का समुचित ढ़ग से आयोजन करना सम्भव है । इसलिए

किसी भी स्तर का पाठ्यक्रम बनाते समय उस स्तर के उद्देश्यों को ध्यात्व किया जाना तथा उद्देश्यों के अनुरूप पाठ्यक्रम का निर्धारण करना ।

कोठारी आयोग ने प्राथमिक स्तर पर एकीकृत उपागम की सिफारिश की थी । एकीकृत उपागम से अभिप्राय सम्पूर्ण प्राथमिक शिक्षा को एक इकाई के रूप में मानकर छात्रों को शिक्षा प्रदान की जाये तथा प्राथमिक कक्षाओं के सभी विषयों की समस्त पाठ्यक्रम को क्रमबद्ध रूप में अनेक छोटी-छोटी इकाईयों में बाँटा जाये । इस उपागम में अपेक्षा की जाती है कि छात्र अपनी रूचि, सामर्थ्य तथा योग्यता के अनुसार स्व-गति से एक के बाद एक इन इकाईयों को पूरा करेंगे । किन्तु यह सिफारिश साकार रूप देने में असमर्थ रही । आयोग ने प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम की कटु शब्दों आलोचना की आयोग ने प्राथमिक स्कूल पाठ्यक्रम के पुनर्गठन की तीव्र आवश्यकता पर बल दिया तथा पुनर्गठित पाठ्यक्रम का प्रारूप भी तैयार किया था । इस प्रकार विभिन्न आयोग, परिषद्, समिति आदि ने प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर निम्नवत पाठ्यक्रम की रूपरेखाएँ प्रस्तुत की -

सारणी संख्या 6.2

निम्न प्राथमिक शिक्षा (1 से 5 तक) के पाठ्यक्रम की प्रस्तावित रूपरेखाएँ

कोठारी आयोग (1966)	NCERT (1975)	पटेल समिति (1977)	NCERT (1985)
1. प्रथम भाषा-मातृ भाषा या प्रादेशिक भाषा 2. गणित 3. सामाजिक अध्ययन 4. सृजनात्मक क्रियाएँ 5. कार्यानुभव तथा समाज सेवा 6. स्वास्थ्य सेवा	1.प्रथम भाषा-मातृ भाषा 2. गणित 3. वातावरणीय अध्ययन (सामाजिक अध्ययन) 4. वातावरणीय अध्ययन II (सामान्य ज्ञान) 5. कार्यानुभव व कला 6. स्वास्थ्य शिक्षा तथा खेल नोट - कक्षा 1 व 2 में वातावरणीय अध्ययन एक विषय के रूप में रहेगा ।	1. मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा 20% 2. गणित 20% 3. वातावरणीय अध्ययन 20% (सामाजिक अध्ययन प्रकृति अध्ययन व स्वास्थ्य शिक्षा) 4. समाजोपयोगी उत्पादक कार्य 20% 5. खेल तथा सृजनात्मक क्रियाएँ 20%	1. मातृभाषा या क्षेत्रीय 30% 2. वातावरणीय अध्ययन 15% 3. वातावरणीय अध्ययन 15% 4. कार्यानुभव/SUPW 20% 5. कला शिक्षा 10% 6. स्वास्थ्य व शारीरिक शिक्षा 10%

सारणी संख्या 6.3

उच्च प्राथमिक शिक्षा (6 से 8 तक) के पाठ्यक्रम की प्रस्तावित रूपरेखाएँ

कोठारी आयोग (1966)	NCERT (1975)	पटेल समिति (1977)	NCERT (1985)
1. प्रथम भाषा- मातृ भाषा या प्रादेशिक भाषा 2. द्वितीय भाषा - हिन्दी या अंग्रेजी 3. गणित 4. विज्ञान 5. सामाजिक अध्ययन 6. कला 1. कार्यानुभव तथा समाज सेवा 2. शारीरिक शिक्षा 3. नैतिक शिक्षा 4. तृतीय भाषा (ऐच्छिक)	1. प्रथम भाषा- मातृ भाषा 2. द्वितीय भाषा - हिन्दी या अंग्रेजी 3. गणित 4. सामाजिक विज्ञान (इतिहास, नागरिक शास्त्र, अर्थ शास्त्र 5. विज्ञान 6. कला 7. कार्यानुभव 8. शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा व खेल ।	1. प्रथम भाषा- मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा 2. द्वितीय भाषा - हिन्दी या अंग्रेजी 3. गणित 4. इतिहास, नागरिक शास्त्र, भूगोल 5. विज्ञान 1. कला 2. सामाजोपयोगी उत्पादक कार्य (SUPW) तथा सामुदायिक सेवा 3. खेल, शारीरिक शिक्षा तथा निर्देशित अध्यन्न कुल 32 घण्टा	1. मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा 32% 2. द्वितीय भाषा - हिन्दी या अंग्रेजी 3. तृतीय भाषा हिन्दी या आधुनिक भारतीय भाषा 4. विज्ञान 12% 5. गणित 12% 6. सामाजिक अध्ययन 7. कार्यानुभव/ SUPW 12% 8. कला शिक्षा 10% 9. स्वास्थ्य व शारीरिक शिक्षा 10%

राष्ट्रीय पाठ्यचर्याओं की रूपरेखाएँ देने के पश्चात् राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 का विकास किया जिसने निम्न महत्वपूर्ण मार्गदर्शक सिद्धान्तों का प्रस्ताव रखा-

- ज्ञान को स्कूल के बाहरी जीवन से जोड़ना ।
- पढ़ाई रटंत प्रणाली से मुक्त हो, यह सुनिश्चित करना ।
- पाठ्यचर्या का इस तरह से संवर्धन कि बालकों को चहुँमुखी विकास के अवसर मुहैया करवाए बजाय इसके कि वह पाठ्य पुस्तक केन्द्रित बन कर रह जाए ।
- परीक्षा को अपेक्षाकृत लचीला बनाना और कक्षा की गतिविधियों को जोड़ना ।
- एक ऐसी अधिभावी पहचान का विकास जिसमें प्रजातांत्रिक राज्य व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रीय चिंताएँ समाहित हो ।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 बालकों के चहुँमुखी विकास पर बल देते हुए कुछ अन्य क्षेत्रों जैसे काम, कला और पारंपरिक दस्तकारियों, स्वास्थ्य तथा शारीरिक शिक्षा एवं शांति के लिए शिक्षा को हर स्तर पर सभी विषयों में जोड़ने की बात करती है ।

6.6 प्राथमिक शिक्षा का नियन्त्रण व प्रशासन (Control and Administration of Primary Education)

भारतीय संविधान में प्राथमिक शिक्षा को राज्य का उत्तरदायित्व माना गया है, इसलिए प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करना मुख्य रूप से राज्य के अधीन है तथापि केन्द्र सरकार भी समय-समय पर प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध में राज्यों को सहयोग प्रदान करती है । राज्य स्तर पर शिक्षा प्रशासन व नियन्त्रण को दो भागों में बाँटा गया है -

1. शिक्षा सचिवालय तथा
2. शिक्षा निदेशालय

शिक्षा सचिवालय - शिक्षा सचिवालय में शिक्षामंत्री तथा शिक्षा राज्यमंत्री या उप शिक्षा मंत्री होता है । इसका मुख्य अधिकारी शिक्षा सचिव या शिक्षा आयुक्त होता है । इसके अधीन कुछ उपसचिव तथा सहायक सचिव होते हैं। शिक्षा सचिवालय का संगठनात्मक चार्ट अधोलिखित है -

शिक्षा मंत्री

|

राज्य शिक्षा मंत्री

|

शिक्षा कमिश्नर या सचिव

|

उप शिक्षा सचिव

|

सहायक शिक्षा सचिव

|

ग्रूप ऑफिसर

|

विभागीय या सैक्शन ऑफिसर

शिक्षा निदेशालय - शिक्षा निदेशालय एक कार्यपालिका संस्था है । यह सचिवालय द्वारा निर्मित नीतियों को लागू करती है । वस्तुतः यह राज्य सरकार तथा विद्यालयों को जोड़ने वाली कड़ी है, जो राज्य के विभिन्न भागों में फैले हुए होते है । वह राज्य में शिक्षा की प्रगति, शैक्षिक आवश्यकता की सूचनाएँ तथा राज्य में प्रचलित शिक्षा सम्बन्धी कार्यकलापों के बारे में जन समुदाय की प्रतिक्रियाओं से सरकार को सूचित करता रहता है । शिक्षा निदेशक राज्य का सबसे उच्च शिक्षा अधिकारी है तथा निदेशालय का सर्वोच्च अधिकृति होता है । शिक्षा निदेशालय का संगठनात्मक चार्ट निम्न प्रकार है :-

शिक्षा निदेशक

शिक्षा उपनिदेशक

क्षेत्रीय शिक्षा निदेशक

जिला विद्यालय निरीक्षक

बेसिक शिक्षा अधिकारी

जिला स्तर पर प्राथमिक शिक्षा का प्रशासन व नियन्त्रण बेसिक शिक्षा अधिकारी के अधीन होता है ।

प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था को अधिक प्रभावी बनाने के लिए केन्द्र सरकार के द्वारा जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) प्रारम्भ किया गया । उसके प्रबन्धन का ढांचा निम्न प्रकार है-

डीपीईपी का प्रबन्धन ढाँचा

चित्र संख्या 6.1

शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए एवं शिक्षा संस्थाओं के समुचित संचालन की दृष्टि से यह वर्गीकरण किया जाना समुचित है ।

6.7 राजस्थान विकास के सामाजिक संदर्भ में विद्यालयी शिक्षा में नवाचार (Innovation in School Education in Rajasthan Development Social Context)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण को प्राथमिकता दी गई है । राज्य में वर्ष 2010 तक 6 से 14 वर्ष आयु के बालक-बालिकाओं को समुचित शिक्षा प्रदान करने हेतु सर्व शिक्षा अभियान शुरू किया गया है । सर्व शिक्षा अभियान का उद्देश्य बच्चों को उनके नैसर्गिक वातावरण में इस प्रकार तैयार करना है ताकि वे मानव क्षमता का पूर्ण विकास कर सकें। शिक्षा के क्षेत्र में इन अभिनव प्रयोगों की एक श्रृंखला रही है । जिसके निम्नलिखित नवाचार उल्लेखनीय हैं :-

1. शिक्षाकर्मी योजना (1987) :- दुर्गम व दूरस्थ क्षेत्रों में नामांकन, उपस्थिति और ठहराव में जनसहभागिता से सुधार लाने तथा शिक्षा की गुणवत्ता में अभिवृद्धि करने के उद्देश्य से यह योजना प्रारंभ की गई ।

योजना की सफलता एवं असफलता:- राज्य के पिछड़े एव, दूरस्थ इलाकों में प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने में यह योजना लाभप्रद रही ।

वित्तिय अभाव के कारण यह योजना बंद कर दी गई और सर्व शिक्षा अभियान में इस कार्य की क्रियान्विति पर जोर दिया गया है ।

2. ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड (1987-88) :- प्राथमिक शिक्षा के प्रचार प्रसार हेतु प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना की गई, विद्यालयों की संख्या में वृद्धि हुई और उनकी गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा । अधिकांश विद्यालयों में टाट पट्टी, पीने का पानी, भवन, श्यामपट्ट, शैक्षिक उपकरण, खेल के मैदान जैसी आवश्यक सुविधाओं का अभाव । इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु देश के सभी प्राथमिक स्कूलों में उपलब्ध मानवीय एवं भौतिक संसाधनों में सुधार लाना था । ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड एक सांकेतिक शब्द है, जो प्राथमिक स्कूलों के संदर्भ में ब्लैक बोर्ड के अतिरिक्त अनेक बातों को स्वयं में समाहित किए हुए है । ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड का उद्देश्य प्राथमिक विद्यालयों में न्यूनतम आवश्यक सुविधाओं की व्यवस्था को सुनिश्चित करना । ऑपरेशन ब्लैक-बोर्ड शब्द युग्म का प्रथम शब्द ऑपरेशन इस बात को इंगित करता है कि -

1. इस कार्यक्रम से सम्बन्धित उद्देश्य स्पष्ट तथा सुनिश्चित हैं, तथा
2. केन्द्र व राज्य सरकार तथा जनता इन उद्देश्यों को निर्धारित समय में प्राप्त करने के लिए दृढ़ संकल्पित है। ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड के अन्तर्गत प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय के लिए निम्नलिखित न्यूनतम आवश्यक सामग्री होना आवश्यक बताया है-

सारणी संख्या 6.4

प्राथमिक विद्यालय में न्यूनतम आवश्यक सुविधाएँ

क्रम	सुविधा
1.	**अध्यापक सामग्री (Teacher's Equipment)** • पाठ्यक्रम • पाठ्य पुस्तकें • अध्यापक निर्देशिकाएं
2.	**कक्षा शिक्षण सामग्री (Classroom Teaching Materials)** • मानचित्र-जिला, राज्य व राष्ट्र के • प्लास्टिक ग्लोब • शैक्षिक चार्ट
3.	**खेल सामग्री (Play Material)** • लकड़ी के गुटके • फुटबाल • वॉलीबाल • पम्प • रिंग • कूदने की रस्सी
4.	**पुस्तकालय सामग्री (Library Books)** • संदर्भ पुस्तकें (शब्द-कोष आदि) • बच्चों की पुस्तकें (कम से कम 200) • पत्रिकाएँ तथा समाचार पत्र
5.	**वाद्य यन्त्र (Musical Instruments)** • ढोलक या तबला • हारमोनियम • मंजीरा
6.	**भवन (Building)** • दो बड़े कमरे • शौचालय (एक लड़कों के लिए तथा एक लड़कियों के लिए) • दरी व फर्नीचर
7.	**स्कूल घंटी**
8.	**श्यामपट्ट**
9.	**चाक व डस्टर**
10.	**जल सुविधा**
11.	**कूड़ादान**
12.	**प्राथमिक विज्ञान किट**
13.	**औजारों का छोटा किट**

14.	**रेडियो कम टेपरिकॉर्ड**

योजना की सफलता एवं असफलता :- इस योजना से प्राथमिक शिक्षा के भौतिक एवं मानवीय संसाधनों में सुधार हुआ । लेकिन 2002-03 में इस योजना को सर्व शिक्षा अभियान में शामिल कर दिया गया ।

3. **भामाशाह सम्मान योजना (1991) :-** इस योजना का उद्देश्य दानदाताओं को अभिप्रेरित कर शाला के शैक्षिक एवं भौतिक विकास के लिए योगदान प्राप्त करना है ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- इस योजना से विद्यालय के भौतिक संसाधनों में काफी सुधार हुआ है । यह योजना अभी भी चालू है ।

भामाशाहों को प्रेरित करना मुश्किल है । वे अपने रुपये शैक्षिक व्यवस्थाओं की अपेक्षा अन्य व्यवस्थाओं में खर्च करते हैं ।

4. **लोक जुम्बिश परियोजना (1992) :-** लोक जुम्बिश का शाब्दिक अर्थ है - "जन आंदोलन" । इस प्रकार इस योजना में जन आंदोलन के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण का प्रयास किया गया है । इस योजना के अन्तर्गत सहज शिक्षा केन्द्र, शिक्षा मित्र योजना, अपना घर मुक्तांगन व मदरसा शिक्षा योजनाएँ चलाई गई । 2003-04 के प्रगति प्रतिवेदन के अनुसार 13 जिलों में लोक जुम्बिश परियोजना चलाई जा रही है जिनमें पूर्व प्राथमिक विद्यालय 8 व प्राथमिक विद्यालय 55767 व उच्च प्राथमिक विद्यालय 23942 कुल 79717 विद्यालय इस योजना में संचालित है । जिसमें 6 से 11 आयु वर्ग के 9404001 बालक व बालिकाएँ नामांकित है व 11 से 14 आयुवर्ग के 2443205 बालक व बालिकाएँ नामांकित है । इस प्रकार इस योजना से काफी बालक/बालिकाएँ नामांकित किये गए व उनके ठहराव पर भी जोर दिया गया ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- परमाणु परीक्षणों की वजह से सीडा ने सहयोग देना बंद कर दिया । अतः इसका तीसरा चरण ब्रिटेन के अन्तरराष्ट्रीय विकास विभाग भारत सरकार व राज्य सरकार के 3:2:1 वित्तीय सहयोग से राज्य के 13 जिलों के 102 विकास खण्डों में चलाया गया । इसमें मुख्यतः सहशिक्षा केन्द्र, शिक्षामित्र योजना, अपना घर, मुक्तांगना व मदरसा शिक्षा योजनाएँ चलाई जा रही थी । 30 जून 2004 को इस योजना को समाप्त कर सर्व शिक्षा अभियान में शामिल कर दिया गया है ।

5. **जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डी.पी.ई.पी- 1994) :-** प्राथमिक शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने के उद्देश्य से देश में जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम 1994 में 7 राज्यों के 42 जिलों में शुरू किया गया । अब 8 राज्यों के 273 जिलों में फैल चुका है । राजस्थान में 2 अक्टूबर 1999 में प्रारंभ किया गया । इस योजना का प्रमुख उद्देश्य 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बालक-बालिकाओं के लिए शिक्षा की गुणवत्तापूर्ण व्यवस्था करना, विद्यालय में उनका नामांकन, ठहराव सुनिश्चित करना तथा शिक्षातंत्र का सुदृढ़ीकरण करना । इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बालिका शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए बालिका प्रेरक और बालिका मंचों का गठन किया गया । बालिका प्रेरक (जी.सी.एम) शिक्षा से वंचित बालिकाओं को शिक्षण केन्द्रों से जोड़ने ड्रापआउट कम करने तथा शिक्षा केन्द्र तक आने में बालिकाओं की बाधाओं को दूर करने में अहम भूमिका निभाते हैं । इस योजना के अन्तर्गत पूर्व प्राथमिक शिक्षा हेतु ई.सी.ई केन्द्र, ई.सी.ई प्रेरक, आगनबाड़ी केन्द्रों का सम्बलन, प्रशिक्षण एवं समन्वय बैठक आदि कार्यक्रम क्रियान्वित किए जाते हैं । प्राथमिक

शिक्षा के नियोजन, प्रबंधन एवं मूल्यांकन के लिए राष्ट्र, राज्य एवं जिले की संस्थाओं एवं संगठनों की क्षमताओं का सम्बलीकरण करना ।

राजस्थान ने "प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण" (यू.पी.ई.) के लक्ष्य प्राप्ति के लिए जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डीपीईपी) को एक साधन एवं प्रभावी व्यूह रचना के रूप में अंगीकार किया है ।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम की समयावधि निम्न प्रकार है-

प्रथम चरण - 30 सितम्बर 1999 से 31 दिसम्बर 2004 तक

द्वितीय चरण - 5 सितम्बर 2001 से 31 दिसम्बर 2006 तक

योजना की सफलता एवं असफलता :- यह योजना सर्व शिक्षा अभियान में शामिल कर दी गई है । इस योजना से बालक-बालिकाओं के नामांकन, ठहराव में काफी सुधार हुआ है ।

6. **सरस्वती योजना (1994-95) :-** इसमें 6 से 14 वर्ष की ग्रामीण बालिकाओं के घर के नजदीक औपचारिक प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना । कक्षा 5 उत्तीर्ण इच्छुक महिलाओं को सरस्वती बहिनों के रूप में उन्हीं के निवास पर सरस्वती शालाओं की स्थापना की गई ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- ग्रामीण बालिकाओं को शिक्षा प्रदान करने में यह योजना सफलीभूत रही है ।

7. **बालिका शिक्षा फाउण्डेशन (1994-95) :-** इस फाउण्डेशन के माध्यम से आर्थिक दृष्टि से निर्धन परिवारों की प्रतिभावान बालिकाओं को उच्च व तकनीकी शिक्षा हेतु आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- बालिका शिक्षा फाउण्डेशन के द्वारा निर्धन बालिकाओं को उच्च एवं तकनीकी क्षेत्र में आगे बढ़ाने हेतु अभी भी आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है ।

निर्धन परिवारों की बालिकाएँ उच्च व तकनीकी शिक्षा में बहुत कम जा पाई हैं ।

8. **राजीव गांधी स्वर्ण जयन्ती पाठशाला (1 जुलाई, 1999) :-** 6 से 14 वर्ष के शिक्षा से वंचित बच्चों को राजीव गांधी स्वर्ण जयन्ती पाठशालाएँ खोली जिसमें दूरस्थ एव दुर्गम स्थानों पर रहने वाले बच्चों को शिक्षा सुविधाएँ मुहैया कराना । ये पाठशालाएँ 1 कि.मी. के दायरे में न्यूनतम 40 बच्चों के लिए कोई पाठशाला न होने वाले क्षेत्रों में खोली जा रही है ।

एजूकेशन गारन्टी स्कीम (ई.जी.एस.) के अन्तर्गत राजीव गाँधी पाठशालाएँ संचालित की जा रही हैं । वर्ष 2003-04 के आंकड़ों के अनुसार 32 जिलों में 21306 केन्द्रों पर ये पाठशालाएँ संचालित हैं, जिनमें 25183 पैराटीचर्स कार्यरत हैं एव 1334435 बालका/बालिकायेँ नामांकित हैं ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- इस योजना में शिक्षा से वंचित काफी बच्चों को शिक्षा प्रदान करने का कार्य प्रदान किया । वर्ष 2003-04 के अन्तर्गत 21306 ई.जी.सी केन्द्रों (राजीव गाँधी पाठशालाओं) का संचालन किया गया जिसमें लाभान्वित की संख्या 1334435 थी । अत: बच्चों के ठहराव में एक उपयुक्त व्यूह रचना सिद्ध हुई है । अब सर्वशिक्षा अभियान में समाहित कर लिया गया है ।

9. **जनशाला कार्यक्रम (1999-2000) :-** जनशाला सामुदायिक भागेदारी पर प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम है। जिसका उद्देश्य बड़े शहरों की घनी कच्ची बस्तियों में रहने वाले समाज के अन्तिम और पिछड़े वर्गों, विशेष रूप से लड़कियों और बच्चों, अनुसूचित जाति-जनजाति के काम करने

वाले बच्चों और विशेष देखभाल की जरूरत वाले बच्चों को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना है । 1 दिसम्बर 2004 से यह योजना समाप्त कर दी गई है ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- इस परियोजना से शहर के निम्न वर्ग व कच्ची बस्तियों में रहने वाले बच्चों को लाभ मिला है ।

गरीबी में पलने वाले बच्चों को समुचित रूप से शिक्षा का लाभ नहीं मिल पाया है । अब यह योजना समाप्त कर दी गई है ।

10. **शिक्षा दर्पण योजना (15 मई से 31 मई, 2000) -** राज्य में शिक्षा से वंचित बालक-बालिकाओं की संख्या का ज्ञान प्राप्त करने हेतु राज्य सरकार द्वारा किया गया सर्वेक्षण । शिक्षा दर्पण 2000 तथा 2002 में अपडेटेड रिकार्ड के आधार पर चार प्रकार के ग्राम शिक्षा रजिस्टर्स / वासस्थान / ग्राम / वार्डवार सूचना समेंकित की गई थी । उक्त ताजा सर्वे के आधार पर मार्च 2004 में अनामाँकित बालक व बालिकाओं की सख्या इस प्रकार थी :-

- वर्ष 2004 में 6 वर्ष पूर्ण करने वाले बच्चे जो कक्षा 1 में प्रवेश लेंगे - 1155042
- 6-14 आयुवर्ग के ड्रापआउट बच्चे - 254909
- स्कूल में कभी भी नामांकित नहीं होने वाले 6-14 आयुवर्ग के बच्चे - 153762
- कुल अनामाँकित बालक व बालिकाएँ - 1563713

योजना की सफलता एवं असफलता :- इसमें शिक्षा से वंचित बालकों का सर्वेक्षण कराया गया जिसमें 1563713 बच्चे शिक्षा से वंचित हैं । इनके प्रवेश हेतु कार्य योजना तैयार की गई है व प्रत्येक बच्चे का प्रवेश कराना सुनिश्चित किया गया ।

11. **शिक्षा आपके द्वार (2001) :-** "शिक्षा आपके द्वार" के तहत 6 से 14 आयु वर्ग के जो बालक-बालिकाएं अभी तक शिक्षा से नहीं जुड़े हैं उन्हें उनके द्वार पर जाकर शिक्षा की दस्तक दी जा रही है । शिक्षा की दस्तक से जो किवाड़ खुलेंगे वे उन्मुक्त हवा तो देंगे ही, हर एक को सर्वागीण विकास का अवसर प्राप्त होगा । इस अभियान की संकल्पना, उद्देश्य एवं रणनीति वर्ष 2003 तक शिक्षा से वंचित सभी बच्चों को विद्यालय में प्रवेश ही नहीं दिलाना है बल्कि उन्हें वर्ष 2010 तक आठवीं कक्षा उत्तीर्ण भी करवानी है । क्योंकि शिक्षा जीवन की बुनियाद है, शिक्षा शिक्षित और अशिक्षित में अन्तर स्पष्ट करती है, अत: शिक्षा प्रत्येक बच्चे को किसी न किसी रूप में अवश्य मिलनी चाहिए ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- शिक्षा दर्पण के अन्तर्गत मई 2000 में कराये गये शैक्षिक सर्वे के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में 6 से 14 आयु वर्ग के 18 लाख व शहरी क्षेत्र के 5 लाख कुल 23 लाख बच्चे विद्यालय नहीं जा रहे थे । इस अभियान के बाद 11 लाख बच्चे ही विद्यालय नहीं जा रहे हैं । शेष सभी बच्चों को विद्यालय से जोड़ दिया गया ।

12. **शिक्षा गारंटी योजना तथा वैकल्पिक व नवाचारी शिक्षा (2001 -02) :-** यह योजना उन इलाकों में संचालित की जहाँ 1 कि.मी. के दायरे में कोई स्कूल न हो व कम से कम 25 बच्चे स्कूल से वंचित हों । जिसमें भारत सरकार व राज्य सरकार द्वारा 3:1 के अनुपात में व्यय वहन किया जायेगा ।

राजस्थान राज्य की जनसंख्या में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा अल्पसंख्यकों सहित सभी समुदाय के लोग हैं । यह जनसंख्या दूर-दूर तक छितरी हुई है तथा इसका 30 प्रतिशत भाग छोटी-छोटी ढ़ाणियों में रहता है जो गाँवों से बहुत दूर स्थित है । राजस्थान में प्रारम्भिक शिक्षा में कम नामांकन, उच्च ड्रॉप आउट एवं असंतोष पर शैक्षिक

उपलब्धि की समस्या है । अत: नामांकन के लक्ष्य को पूरा करने हेतु वैकल्पिक शिक्षा की आवश्यकता है । इसके लिए विभिन्न परियोजनाओं का संचालन राज्य के सभी जिलों में किया जा रहा है ।

योजना की सफलता व असफलता - इन सभी व्यूह रचनाओं का संचालन सर्वशिक्षा अभियान के मानदण्ड एवं निर्देशों के अनुसार किया जायेगा ।

13. **आपणा टाबर उपहार योजना (2001 -02) :-** राज्य की शालाओं में जनसहयोग आमंत्रित कर उनका उपयोग विद्यार्थी हित में करना । इसमें बालकों को गांव के लोग उनके जन्म दिन या अन्य विशेष अवसरों पर उपहार के रूप में नकद धनराशि या सामग्री दे सकते हैं । जनवरी 2005 से भामाशाहों को शालामित्र की उपाधि से नवाजा जायेगा ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- इस योजना में भामाशाह द्वारा राशि दी जाती है। यह योजना अभी भी क्रियान्विति के रूप में है ।

14. **आदर्श विद्यालय वाटिका योजना (2001 - 02) :-** राज्य सरकार द्वारा सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत राज्य के प्राथमिक और उच्च प्राथमिक विद्यालयों में न्यूनतम सुविधा दिया जाना सुनिश्चित है । इस हेतु आदर्श विद्यालय वाटिका योजना तैयार की गई । जिसमें मुख्यालय स्तर पर इसका मॉडल और कार्ययोजना तैयार की गई है । इसमें अग्रांकित सुविधाएँ सुनिश्चित की जाएगी - विद्यालय भवन, स्वच्छ पेयजल योजना, अलग-अलग सुविधाएँ, रैलिंग और रैम्प, आनंददायी शिक्षण कक्ष खेल-कूद सुविधाएँ, जल सग्रहण, विद्यालय वाटिका आदि ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- इस योजना के अन्तर्गत कुछ विद्यालयों को मॉडल के रूप में बनाया गया है । काफी विद्यालयों में अभी मूलभूत सुविधाएँ भी उपलब्ध नहीं है।

15. **सर्व शिक्षा अभियान (2001 -02) :-** राजस्थान सरकार, भारत सरकार की साझेदारी में 14 वर्ष तक के सभी बालक-बालिकाओं को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करवाने के संवैधानिक दायित्व को पूर्ण करने के लिए सर्व शिक्षा अभियान के तहत "शिक्षा आपके द्वार" "चल विद्यालय" आदि गतिविधियों के जरिये गाँव, ढाणी के वंचित बच्चों को शिक्षा से जोड़ा जा रहा है । राज्य सरकार का उद्देश्य केवल भौतिक आधारभूत सुविधाएँ उपलब्ध कराना मात्र नहीं बल्कि गुणवत्तापूर्वक शिक्षा के लिए क्षमताएँ विकसित करने एवं प्राथमिक शिक्षा के विकास में सामुदायिक सहभागिता को बढ़ावा देना है । प्रारम्भिक शिक्षा के सर्व सुलभीकरण के तहत ही सर्व शिक्षा अभियान का आगाज पूरे देश में किया गया है । इस अभियान के तहत लडकियों, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों और कठिन परिस्थितियों में पड़े अन्य बच्चों पर विशेष बल देते हुए समूचे देश में शत-प्रतिशत शिक्षा के प्रयास किये जा रहे हैं तथा विद्यालयों में बालक-बालिकाओं का नामांकन, ठहराव व गुणावत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है ।

सर्व शिक्षा अभियान के उद्देश्य में सभी 6- 14 आयु वर्ग के बालक-बालिकाओं को 2007 तक पाँच वर्ष की प्राथमिक शिक्षा पूर्ण कराना, सभी नामांकित बालकों को वर्ष 2010 तक आठ वर्षीय प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण कराना, जीवनोपयोगी संतोषजनक स्तर की गुणात्मक शिक्षा उपलब्ध कराना, समस्त लिंगभेद एवं सामाजिक वर्गों के विभेद को प्राथमिक स्तर पर 2007 तक तथा उच्च प्राथमिक स्तर पर 2010 तक कम करना, सभी बालकों का सार्वभौमिक ठहराव वर्ष 2010 तक सुनिश्चित करना ।

सर्व शिक्षा अभियान एक वृहत योजना है । यह जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, लोक जुम्बिश शिक्षाकर्मी बोर्ड इत्यादि जैसी सभी बडी शैक्षिक व्यूह रचनाओं एवं सभी कार्यक्रमों को अपने अन्तर्गत समाहित कर रखा है । ये सब परियोजनाएँ वंचित एवं प्रतिकूल परिरिथति वाले वर्गों के हार्ड कोर बच्चों के लिए शिक्षा की सुविधाएँ उपलब्ध करा रही है ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- इस योजना में बालक-बालिकाओं को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने पर जोर दिया जा रहा है । सभी अनामाँकित बच्चों को इस योजना में शिक्षा दी जाने का लक्ष्य है । इस योजना में अनेक नवाचारों का समावेश कर लिया गया है । यह योजना वर्तमान में व्यापक स्वरूप में अपना कार्य कर रही है।

16. **कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय :-** सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत यह योजना चलाई जा रही है । इसके अन्तर्गत प्राथमिक स्तर पर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं के लिए आवासीय विद्यालय खोले गये हैं । एन.पी.ई.जी.ई.एल. योजना के अन्तर्गत चयनित ब्लॉकों में जो शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हैं तथा जहाँ का लैंगिक अन्तर राष्ट्रीय औसत से कम है तथा ग्रामीण महिला साक्षरता दर से कम है तथा एस.सी., एस.टी. तथा ओ.बी.सी. वर्ग की 10 प्रतिशत से अधिक है, वहाँ ये विद्यालय चलाये जा रहे हैं । इन विद्यालयों का उद्देश्य वंचित वर्ग की उन बालिकाओं को जोड़ना है, जो कठिन परिस्थितियों और दुर्गमवास स्थानों में रहते हुए किसी कारणवश विद्यालय नहीं जा सकीं अथवा पढ़ई की उम्र पीछे छोड़ चुकी हैं । इन आवासीय विद्यालयों में प्रति छात्रा हेतु प्रति माह 750/- व्यय किए जाने का प्रावधान है । इसमें छात्रा को पोशाक, दैनिक वस्तुओं और रहन-सहन संबंधी व्यय हेतु यह राशि होती है । सर्व शिक्षा अभियान में एन.पी.ई.जी.ई.एल. के अन्तर्गत प्रत्येक जिलें में प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर एक-एक कस्तूरबा गांधी विद्यालय प्रस्तावित है ।

योजना की सफलता एवं असफलता - कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय की 2005-06 की रिपोर्ट

सारणी संख्या 6.5

मॉडल	ब्लॉक	गाँव	नामांकन
मॉडल I	29	29	2094
मॉडल II	27	27	1277
कुल	56	27	3371

इस कार्यक्रम में पिछडी हुई बालिकाओं को काफी लाभ मिलता है ।

17. **चाइल्ड ट्रैकिंग सिस्टम :-** प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वजनीकरण की दिशा में अनूठा नवाचार है। इसमें 0 से 14 आयु वर्ग की प्रदेश के तमाम बच्चों के विद्यालय में नामांकित, विद्यालय से बाहर या अनामाँकित ड्रापआउट तथा भविष्य में आने वाले वर्षों में कौनसे बच्चे किस स्थान में विद्यालय जाने योग्य हो सकेंगे तथा इनके लिए संभावित व्यवस्थाएँ की जा सकेगी आदि का समस्त विवरण कम्प्यूटर से संचालित किया गया है । इसके अन्तर्गत डेटा विद्यालय विकास एवं प्रबंध समिति की बैठक में उपस्थित व्यक्तियों द्वारा संकलित किया गया है । संकलित आंकडों के आधार पर राज्य में वर्ष 2004 में 15.63 लाख बालक-बालिकाओं को नामांकित कराये जाने

का लक्ष्य था । 15 अक्टूबर, 2004 तक इस अभिनव प्रयोग में 81.34 प्रतिशत उपलब्धि हासिल की । इस कार्यक्रम के निम्नांकित उद्देश्य हैं-

- 6-14 आयुवर्ग के अनामांकित बच्चों की पहचान
- वर्ष 2007 तक सभी नामांकित बच्चों की 5 वर्षीय प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने हेतु योजना निर्माण में मदद करना ।
- वर्ष 2010 तक सभी नामांकित बच्चों की 8 वर्षीय प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण करने के लिए योजना निर्माण हेतु मदद ।
- हार्ड कोर बालक व बालिकाओं के लिए शैक्षणिक व्यवस्थाएँ सुनिश्चित करना ।
- ड्रॉप आउट बच्चों को शिक्षा से जोड़ने के प्रयास करना तथा प्रभावी प्रबोधन / मॉनीटरिंग करना ।
- शिक्षा की प्रभावी व्यवस्थाओं हेतु प्रयत्न करना ।

योजना की सफलता एवं असफलता :- यह योजना ड्राप-आउट बालक-बालिकाओं को रोकने में काफी सफल रही है ।

18. **प्रारम्भिक स्तर पर बालिकाओं की शिक्षा के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम (एन.पी.ई.जी.ई.एल.):-** भारत सरकार ने प्रारम्भिक स्तर पर बालिकाओं को शिक्षा में अतिरिक्त घटक प्रदान करने के लिए सर्व शिक्षा अभियान के संशोधन के रूप में सुविधाविहीन एवं वंचित वर्गों की बालिकाओं को कक्षा 1 से 8 तक शिक्षा प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम को पृथक तथा विशिष्ट लैंगिक घटक योजना के रूप में प्रतिपादित किया है । यह कार्यक्रम शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े उन बालकों में संचालित किया जा रहा है, जहाँ ग्रामीण महिला साक्षरता का स्तर राष्ट्रीय औसत से कम तथा स्त्री पुरूष साक्षरता अन्तर्राष्ट्रीय से अधिक हों, वहाँ अनुसूचित जाति जनजाति की 5 प्रतिशत जनसंख्या रहती है और अनुसूचित जाति, जनजाति की महिलाओं की साक्षरता दर 10 प्रतिशत कम हो ।

इस कार्यक्रम में सिविल कार्य कराना, शिक्षण अधिगम उपकरण उपलब्ध कराना, संकुल में मॉडल क्लस्टर विद्यालय का विकास, स्कूल कोचिंग व्यवस्था, शाला और शिक्षकों को प्रोत्साहन, संकुल स्तर पर मुक्त विद्यालय की स्थापना, शिक्षक प्रशिक्षण, आंगन बाड़ी केन्द्र न होने पर एक संकुल में दो बाल संभाल केन्द्र खोलने का प्रावधान रखा गया है ।

योजना की सफलता व असफलता - इस कार्यक्रम की प्रभावी क्रियान्विति हेतु जिला स्तर पर एन.पी.ई.जी.ई.एल. कार्यक्रम का दायित्व जिला परियोजना समन्वयकों को सौंपा है तथा जिला स्तर पर एक प्रभारी इस कार्यक्रम हेतु नियुक्त किया गया है । वे इस कार्य को पूर्ण दायित्व के साथ निर्वहण कर रहे हैं ।

इस नवाचार के कुछ कार्यक्रम में व्यावहारिक कठिनाईयाँ उपस्थित होती हैं जैसे भवन निर्माण, शौचालय निर्माण के कार्य करने के बाद उन्हें स्वच्छ रखना, शिक्षण अधिगम उपकरण का समुचित उपयोग होना ।

6.8 सारांश
(Summary)

शिक्षा समाज का दर्पण है । बालक विकास में शिक्षा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, क्योंकि शिक्षा हमारी संस्कृति के संरक्षण, परिपोषण, उन्नयन और अगली पीढ़ी के हस्तान्तरण की एक प्रक्रिया है । स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा के सार्वजनीकरण के प्रयासों को पर्याप्त गंभीरता से लिया गया और देश की पंचवर्षीय योजनाओं में समुचित प्रावधान किए गए । निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा के संबंध में विश्व स्तर पर जोमतियन कांफ्रेस 1990 में सभी के लिए शिक्षा की विश्वव्यापी घोषणा की गई । तत्पश्चात् 10 वर्ष बाद 2000 में इसकी समीक्षा की गई । समीक्षा में छः मुख्य लक्ष्य निर्धारित किए गए जिनमें पहले दो लक्ष्य 14 वर्ष तक सभी बच्चों को खास तौर से लडकियों को या कठिन परिस्थितियों में रहने वाले बच्चों को, अल्पसंख्यकों को 2015 तक उत्तम गुणवत्ता की अनिवार्य और निःशुल्क प्रारम्भिक शिक्षा उपलब्ध किए जाने से संबंधित थे । भारत के संविधान में दिशा-निर्देशक सिद्धान्तों के अंतर्गत 45 वें अनुच्छेद में 14 वर्ष तक बच्चों की अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की गई थी । पुन 28 नवम्बर, 2002 को 88वां संविधान विधेयक पारित कर 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को उनके मौलिक अधिकार के रूप में धारा 21ए के तहत घोषित कर दिया गया ।

इस संकल्प को मूर्तरूप देने के लिए विद्यालयी शिक्षा में विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन किया जैसे- शिक्षाकर्मी योजना, ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड, लोक जुम्बिश परियोजना, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, राजीव गाँधी स्वर्ण जयन्ती पाठशाला, जनशाला कार्यक्रम, शिक्षा दर्पण योजना, शिक्षा आपके द्वार, शिक्षा गारण्टी योजना तथा वैकल्पिक व नवाचारी शिक्षा, आदर्श विद्यालय वाटिका योजना, सर्व शिक्षा अभियान आदि । इन सभी नवाचारों से बुनियादी शिक्षा की पुरजोर हिमायत की गई है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. भारत में प्राथमिक शिक्षा के संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों का उल्लेख कीजिए ।
2. बुनियादी शिक्षा से क्या तात्पर्य है?
3. प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य क्या-क्या होने चाहिए? विवेचना कीजिए ।
4. प्राथमिक शिक्षा का प्रशासनिक ढाँचा समझाइये ।
5. राजस्थान विकास के सामाजिक संदर्भ में विद्यालयी शिक्षा में नवाचार की सूची बनाइये ।

6.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

1. वार्षिक प्रतिवेदन राजस्थान प्राथमिक शिक्षा परिषद्, डी.एस.राधाकृष्णन शिक्षा संकुल, ब्लॉक नं-5 जवाहर लाल नेहरू मार्ग, जयपुर-17.

2. सर्व शिक्षा अभियान, त्रैमासिक पत्रिका, राजस्थान प्राथमिक शिक्षा परिषद डी.एस.राधाकृष्णन शिक्षा संकुल, जयपुर
3. सर्व शिक्षा पत्रिका, राजस्थान प्राथमिक शिक्षा परिषद डी. एस.राधाकृष्णन शिक्षा संकुल, जयपुर, मई 2004.
4. एस.पी.गुप्ता व अलका गुप्ता, आधुनिक भारतीय शिक्षा की समस्यायें, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2002
5. प्राथमिक शिक्षक, शैक्षिक संवाद की पत्रिका, त्रैमासिक पत्रिका, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् 2006
6. वार्षिक प्रतिवेदन, राजस्थान प्राथमिक शिक्षा परिषद्, जयुपर, 2003
7. एन.सी.ई.आर.टी. 1993 सिक्स्थ ऑल इण्डिया एज्यूकेशनल सर्वे वॉल्यूम III, "टीचर्स इन स्कूल्स" न्यू देहली
8. शिक्षा चिंतन, शैक्षिक त्रैमासिक पत्रिका, त्रिमूर्ति संस्थान, कानपुर, 2004
9. नई शिक्षा (राष्ट्रीय शैक्षिक पत्रिका), 12, उगमपथ, बनीपार्क, जयपुर 2006
10. डाटा फोर एलेमेंट्री ऐजूकेशन, डिपार्टमेंन्ट ऑफ स्कूल एजूकेशन, राजस्थान प्राथमिक शिक्षा परिषद, जयपुर, 2005
11. मल्होत्रा, पी.एल.: भारत में विद्यालयी शिक्षा, एन.सी.ई.आर.टी. दिल्ली, 1986

इकाई - 7

विद्यालयी प्रबन्ध

(School Management)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

7.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

7.2 अध्यापक की विभिन्न भूमिकायें (Different Role of Teachers)

7.3 समस्याओं व आवश्यकताओं की पहचान (Identifying Problems and Needs)

7.4 विद्यालयी गतिविधियों का आयोजन (Planning of School Activities)

7.5 निर्णय लेना (Decision Making)

7.6 कार्य का संगठन एवं वितरण (Organisation & Distribution of Work)

7.7 विभिन्न गतिविधियों में समन्वय (Co-ordination of Different Activities)

7.8 सम्प्रेषण (Communication)

7.9 सहयोग (Co-operation of Colleagues, Students & Parents)

7.10 विद्यालयी गतिविधियों का मूल्यांकन (Evaluation of School Activities)

7.11 बजट बनाना (Budgeting)

7.12 अभिलेख संधारण (Record Keeping and Maintenance)

7.13 सारांश (Summary)

7.14 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

विद्यालयी प्रबन्ध, विद्यालयी प्रबन्ध अध्यापक की विभिन्न भूमिकायें : समस्याओं एवं आवश्यकताओं की पहचान विद्यालयी गतिविधियों का आयोजन निर्णय लेना कार्य का सगंठन पद एवं वितरण, विभिन्न गतितिधियों का समन्वयन सहकर्मियों अभिभावकों व विद्यार्थियों का सहयोग | विभिन्न स्तरों पर सम्प्रेष्ण-अध्यायपकों विद्यार्थियों अभिभावकों व सत्ता एवं विद्यालय गतिविधियों का मूल्यांकन |

School management. Different roles of teachers in school management. Identifying problems and needs : Planing School activities, decision making, organisation and distribution of work, co-ordination of different activities, Co-operation of colleagues, students, parents etc. Communication at different stages-learners collegues, parents, authorities. Record keeping and maintenance, budgeting evaluation of school activities.

7.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप-

अध्यापक की विभिन्न भूमिकाओं से अवगत हो सकेंगे ।

विद्यालय प्रबंध में आवश्यकताओं व समस्याओं को पहचान सकेंगे ।

विद्यालयी गतिविधियों की योजना बना सकेंगे ।

विभिन्न गतिविधियों में विभिन्न पर्णधारियों का सहयोग प्राप्त, कर सकेंगे ।

विद्यालयी गतिविधियों का मूल्यांकन कर सकेंगे ।

गतिविधियों हेतु बजट बना सकेंगे ।

विभिन्न गतिविधियों के प्रत्येक पक्ष का अभिलेख संधारण कर सकेंगे ।

7.1 प्रस्तावना
(Introduction)

किसी भी विद्यालय का स्तर उसके अध्यापकों पर निर्भर करता है, या यूं कहें कि यदि विद्यालय का स्तर उठाना है तो अध्यापकों की विभिन्न योग्यताओं का अधिकतम लाभ लिया जाए । "अध्यापक एक प्रबन्धक के रूप में" सम्प्रत्यय भारत में नया है । प्रबन्धक के मूल तत्व निम्न है-

1. उद्देश्यों, लक्ष्यों व दिशा का निर्धारण
2. योजना बनाना
3. उपलब्ध संसाधनों (व्यक्ति, समय, अन्य संसाधन) के आधार पर प्रबन्ध करना
4. प्रक्रिया का नियन्त्रण करना (योजनारूप उपलब्धि का मूल्यांकन व रूपान्तरण)
5. प्रबन्धकीय व शैक्षिक स्तर की गुणात्मक वृद्धि करना

अध्यापक को उपरोक्त तत्वों में समस्त अथवा कुछ तत्वों को अपने कार्यों में सम्मिलित करना ही पड़ता है अत: अध्यापक को मैनेजर कहना तर्क संगत है ।

यूनेस्को द्वारा प्रकाशित डेलर शिक्षा आयोग (1996) ने ज्ञान देना ही विद्यालयों व विश्व विद्यालयों का काम नहीं माना है वरन् रिपोर्ट के अनुसार शिक्षा के चार आधार स्तम्भों का विकास करना माना है ये आधार स्तम्भ हैं (1) ज्ञान को सीखना (2) कार्य को सीखना (3) जीवन जीने को सीखना (4) स्वयं को जानना । अत: आज विद्यालय प्रबन्धन का कार्य मात्र सूचनाओं का संप्रेषण मात्र नहीं है वरन् भावी उपयोगी नागरिक निर्मित करने के लिए जीवन जीने के कौशलों से पारंगत करना व स्वयं के अन्दर अन्तर्निहित शक्तियों को पहचाने योग्य बनाना भी है । शिक्षक का कार्य भाषण देना ही नहीं है बल्कि बच्चों की अन्तर्निहित शक्तियों का पता चलाकर उस अनुरूप अधिगम संस्थितियों का निर्माण करना है जिससे छात्र अपनी योग्यतानुरूप अधिगम कर सकें ।

प्रबन्धक संगठन के प्रभावी संचालन के लिए उत्तरदायी होता है । वास्तव में प्रबन्धक ही अन्य कर्मचारियों व समुदाय के प्रति जवाबदेह है ।

7.2 अध्यापक की विभिन्न भूमिकायेँ
(Different Role of Teachers)

अध्यापक मात्र अध्यापन कार्य तक की सीमित नहीं है वरन् उसे बहु आयामी भूमिकाओं का निर्वहन करना पड़ता है । वह एक कुशल अध्यापक के साथ कुशल मार्ग दर्शक, मनोवैज्ञानिक, प्रशासक आदि भी है ।

द्रुत गति से होने वाले परिवर्तनों के साथ-साथ अध्यापक की भूमिकाओं में भी बहुत परिवर्तन आ रहा है । जो कार्य परिवार व समाज के होते थे वे कार्य भी अब अध्यापक के कंधे पर लाद दिए गए । बच्चे में मूल्यों के विकास, आचरण व समाजीकरण का कार्य भी अब विद्यालय के जिम्मे है । दूसरी तरफ बच्चे के सीखने के अनेकानेक स्त्रोत उपलब्ध हो गए हैं जैसे- टी.वी., रेडियो, समाचार-पत्र, पत्रिकाएं जिनसे बच्चा अनचाही जानकारी भी प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार अन्य स्त्रोतों के कारण व्यवहार में आए त्रुटिपूर्ण बदलाव के लिए भी अध्यापक को ही दोषी ठहरा दिया जाता है ।

बच्चे का समाजीकरण, बच्चे का सर्वागीण विकास व वैश्वीकरण के साथ कदम से कदम मिलाकर उसी रफ्तार से भागने के लिए तैयार करना भी शिक्षक से ही अपेक्षित है । व्यावसायिक अवसरों की विभिन्नताओं को छात्र तक पहुँचाना तथा छात्र को उसकी प्राकृतिक शक्तियों से अवगत करवा कर उचित व्यवसाय चयनित करने के मार्गदर्शन का कार्य भी शिक्षक को ही करना है।

ऐसे में एक शिक्षक और विभिन्न बुद्धिस्तर, रूचि, योग्यताओं के छात्रों को एक साथ शिक्षित करना कम चुनौतीपूर्ण नहीं है । अध्यापक को अध्यापन की योजना इस प्रकार तैयार करनी होगी कि तिक्षण बुद्धिस्तर के छात्रों के लिए भी कठिन सामग्री मिल जाए, साथ ही धीमी गति से सीखने वाले छात्रों को मूर्त, आसान सामग्री उपलब्ध हो सके जिससे पाठ के विकास में उनका योगदान भी सुनिश्चित हो सके।

अक्सर बच्चे माता-पिता से ऊपर शिक्षक को स्थान देते है । अत: शिक्षक को सिर्फ अपना पाठ ही तैयार नहीं करना है वरन् पूरे व्यक्तित्व को सूक्ष्मता व सचेतना से संवारना है तभी छात्रों का व्यक्तित्व निर्मित करना सम्भव हो सकेगा । जब छात्र शिक्षक की कथनी व करनी में भिन्नता देखता है तो उसकी शिक्षक के प्रति श्रद्धा खत्म होने लगती है व असन्तोष का जन्म होता है ।

समय-समय पर पाठ्यक्रम में उचित परिवर्तन करने का कार्य शिक्षक को ही करना है ।

मूल्यांकन पद्धति में भी पहले की अपेक्षा काफी परिवर्तन आया है, परिवर्तित पद्धति के अनुरूप छात्रों का मूल्यांकन करना, कमजोर छात्रों की कमजोरी का निदान व उपचारात्मक शिक्षण व्यवस्था का नियोजन भी शिक्षक को ही करना है ।

शिक्षा में पाठ्येत्तर (पाठ्य सहगामी) क्रियाओं का भी उतना ही महत्व है जितना पाठ्य क्रियाओं का । अत: इन क्रियाओं का आयोजन, संगठन, योजना व क्रियान्वयन शिक्षक द्वारा ही सम्पन्न किया जाता है ।

इतने तरह के दायित्वों को निर्वहन करने में स्वयं को तनाव मुक्त रखना भी आवश्यक है अत: "तनाव-प्रबन्धन" में कुशल होना भी अध्यापक के लिए जरूरी है ।

सर्व-शिक्षा अभियान में शिक्षकों से और भी अधिक अपेक्षाएं है । विद्यालय में छात्रों की उपस्थिति सुनिश्चित करना, चाहे इसके लिए शिक्षकों को छात्रों के घर-घर जाकर लाना पड़े, अपेक्षित हैं । बच्चों के ठहराव का उत्तरदायित्व, कमजोर छात्रों के लिए उपचारात्मक कार्यक्रमों का आयोजन, शारीरिक रूप से विकलांग छात्रों के लिए पृथक शिक्षा व्यवस्था, मंद बुद्धि बालकों की शिक्षा व्यवस्था आदि अतिरिक्त कार्य भी शिक्षक के जिम्मे ही है । बल्कि सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में भी यथा पल्स-पोलियो अभियान, जन-गणनाएं, पशु-गणनाएं, चुनावी ड्यूटी आदि में भी शिक्षक को ही घसीटा जाता है । यही कारण है कि इक्कीसवीं शताब्दी में अध्यापक को प्रबन्धक (मैनेजर) माना गया है जो शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रबन्धन भूमिकाओं का निर्वाह करता है ।

(अ) अध्यापक की प्रबन्धक के रूप में भूमिका (Role of the Teacher as a Manager) - एक कुशल प्रबन्धक नियोजन करता है, निर्णय लेता है, संसाधनों का अधिकतम उपयोग करता है तथा स्थितियों पर नियन्त्रण रखता है । अब शिक्षक अपनी भूमीकाओं में उपरोक्त प्रबन्धक के तत्वों को कहीं तक प्रयुक्त करता है इसे सूक्ष्मता से देखें ।

(अ) पूर्व-शिक्षण काल में अध्यापक की भूमिका (Role of the Teacher in Pre-Teaching Phase) - वास्तविक शिक्षण के पूर्व अध्यापक शिक्षण की योजना, उद्धेश्यों का निर्धारण तथा उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उचित तकनीक, विधि-प्रविधि व आव्यूह से सम्बन्धित निर्णय लेता है । योजना निर्माण में निम्न गतिविधियां सम्मिलित है -

- विषय वस्तु विश्लेषण ।
- छात्र स्तर ।
- छात्रों की सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि ।
- उपलब्ध समय ।
- उद्देश्यों का निर्धारण ।
- उद्देश्य प्राप्ति हेतु विभिन्न अधिगम अनुभवों का अध्ययन ।
- छात्र स्तरनुकूल श्रव्य-दृश्य सामग्री का सुनिश्चितीकरण ।
- मूल्यांकन विधि का चयन ।

इस प्रकार उपरोक्त कार्य में शिक्षक शिक्षण नहीं कर रहा है अपितु शिक्षण की गहन योजना विभिन्न आयामों को ध्यान में रखकर तैयार कर रहा है ।

(ब) शिक्षण काल में शिक्षक की भूमिका (Role of Teacher-in Teaching Phase) - अध्यापक पूर्व-शिक्षण काल की योजना को कक्षा में लागू करता है तब कई बार उसे महसूस होता है छात्र पूरी तरह समझ नहीं पा रहा है या रूचि नहीं ले रहा है, रूचि नहीं होने के कारण बाते कर रहे हैं, ऐसी स्थिति पैदा होते ही शिक्षक शीघ्रता से अपनी अध्यापन शैली में परिवर्तन लाता है व पाठ की प्रभावशीलता को बनाए रखने के लिए अन्य तरीके को अपनाने का निर्णय लेता है । कई बार छात्रों की पूर्व के कालांश की थकान के मद्देनजर पाठ योजना को पूरी तरह बदलने का निर्णय लेना पड़ता है । इस प्रकार अध्यापक एक 'निर्णायक' की भूमिका का निर्वाह करता है ।

(स) पश्च-शिक्षण काल में शिक्षक की भूमिका (Role of Teacher in Post Teaching Phase) - अध्यापन काल के पश्चात अध्यापक स्वयं के अध्यापन का तथा उद्देश्यों का मूल्यांकन करता है । मूल्यांकन के परिणामों का विश्लेषण करता है व यह जानने का प्रयास

करता है कि छात्रों को कौन सी विषय-वस्तु में कठिनाई आयी है, कौन से उद्देश्य पूर्णरूपेण प्राप्त नहीं किए जा सके और इस विश्लेषण की आधार पर भावी योजना में परिवर्तन करेगा जिससे अध्यापन प्रभावी बना रहे व उद्देश्य प्राप्त किए जा सकें ।

पूर्व शिक्षण काल	शिक्षण काल	पश्च–शिक्षण काल
अधिगम हेतु सूक्ष्म पाठ योजना तैयार करना	परिस्थिति अनुरूप त्वरित निर्णय लेना व दिशा निर्देश देना	मूल्यांकन करना, विश्लेषण करना तथा समस्या व कठिनाई के आधार पर अधिगम संस्थितियों में परिवर्तन

चित्र संख्या 7.1

शिक्षण के विभिन्न कालों में शिक्षक की मैनेजर के रूप में भूमिका (Role of Teacher as Manager in different Phase of Teaching) - इस प्रकार अध्यापक की विभिन्न भूमीकाओं व उत्तरदायित्वों पर प्रकाश डाला गया है पर इसके अतिरिक्त भी स्थानीय परिस्थिति अनुरूप उसे कई कार्य करने पड़ सकते हैं। ग्रामीण परिसर में जहाँ माता-पिता की शिक्षा बहुत कम हैं, गरीबी है, बच्चे स्वयं कार्यरत हैं, बच्चे की व्यक्तिगत समस्याएं हैं तब शिक्षक के उत्तरदायित्व और बढ़ जाते हैं।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. अध्यापक की विविध भूमिकाओं का वर्णन कीजिए ।
   Describe different roles of Teacher
2. अध्यापक की मैनेजर के रूप में भूमिका की पुष्टि कीजिए ।
   Justify, role of teacher as a Manager

7.3 समस्याओं व आवश्यकताओं पहचान (Identifying Problems and Needs)

अध्यापक नित नए परिवर्तनों के अनुरूप स्वयं को समायोजित कर उनके व शिक्षण में समाहित कर सके इसके लिए आवश्यक है उसका समय-समय पर प्रशिक्षण ।

जहाँ अध्यापक डॉक्टर, इंजीनियर, वकील आदि बनने की नींव निर्मित करता है उसी नींव को वो सम्मान क्यों नहीं प्राप्त होता। अधिकांश अध्यापक बुझे मन से कहते हैं "मैं अध्यापक हूँ"। अध्यापक को भी अपने व्यवसाय पर गर्व महसूस करना चाहिए तथा समाज को भी इस व्यवसाय के प्रति सकारात्मक दृष्टि रखनी चाहिए ।

अध्यापक की भूमिका एक प्रबन्धक (मैनेजर) के रूप में होती जा रही है । अत: आवश्यक है प्रबन्धन सम्बन्धी प्रशिक्षण की जिसमें अध्यापक को प्रबन्धन के सम्प्रत्यय, मूल सिद्धान्तों व तकनीकों से परिचित करवाया जाए।

अध्यापक को अपनी क्षमताओं को खुलकर खिलने के लिए स्वायतता आवश्यक है। उसे अपने उत्तरदायित्वों से सम्बन्धित निर्णय लेने का अपने अनुरूप कार्य करने की स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। शिक्षा विभाग से प्राप्त कार्यक्रमों में थोड़ा लचीलापन होना चाहिए। इससे अध्यापक की सृजनात्मक शक्ति का लाभ छात्रों व समुदाय को प्राप्त हो सकेगा।

अध्यापक पर अत्यधिक कार्य भार रहता है और यदि कुछ पद रिक्त हैं तो यह भार और बढ़ जाता है । उसे अपनी व्यावसायिक वृद्धि के लिए समय ही प्राप्त नहीं हो पाता ।

अध्यापकों को समय-समय पर अनुसन्धान, क्रियात्मक अनुसंधान आदि के बारे में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ।

अध्यापक का अभिन्न मित्र "पुस्तकें" हैं । सामान्यतया सरकारी विद्यालयों में बहुत ही सीमित संख्या में पुस्तकें उपलब्ध होती है और अध्यापक चाहकर भी अच्छी पुस्तकों के अध्ययन से वंचित रह जाता है । उसे पाठ्य-पुस्तकों पर निर्भर रहने की मजबूरी है ।

जब अध्यापक स्थानान्तरण से ऐसी जगह जाता है जहाँ कि स्थानीय भाषा से वह परिचित नहीं है तब छात्र व अध्यापक दोनों ही प्रभावित होते है।

ग्रामीण विद्यालयों में माता-पिता का शिक्षा के प्रति उचित दृष्टिकोण नहीं होने से शिक्षक का कार्य और चुनौतीपूर्ण हो जाता है ।

अध्यापकों के पद अनेकों विद्यालयों में लम्बे समय से रिक्त चल रहे हैं । एक अध्यापक दो-दो कक्षाओं को साथ बैठाता है पर अध्यापकों का बहु-कक्षा शिक्षण का प्रशिक्षण न होने के कारण वास्तव में शिक्षण व अधिगम नहीं हो पाता । प्राथमिक व मिडिल कक्षाओं में अध्यापक को बहु कक्षीय प्रबन्धन का कौशल विकसित करने का प्रशिक्षण अति आवश्यक है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 अध्यापकों को अपने व्यवसाय में किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है ?
What are the main problems teachers face in his Profession?

2 अध्यापक का कार्य चुनौतीपूर्ण कैसे है?
How is teacher's work challenging?

3 सुदूर ग्रामीण विद्यालयों में अध्यापक की क्या समस्याएं है?
What are the problems of teachers in school remote area?

7.4 विद्यालयी गतिविधियों का आयोजन (Planning of School Activities)

शिक्षा का उद्देश्य बच्चे का सर्वागीण विकास करना है । अर्थात विद्यालय में विभिन्न प्रकार की गतिविधियों का आयोजन किया जा सके जिससे बालक का न सिर्फ मानसिक अपितु शारीरिक संवेगात्मक व सामाजिक विकास भी हो सके । विद्यालय का तथा शिक्षा का कर्तव्य है कि व्यक्ति में अन्तर्निहित श्रेष्ठ को बाहर लाकर उसके अधिकतम विकास में मदद करे । इस प्रकार बालक के सर्वागीण विकास के लिए आवश्यक है पाठ्यक्रियाए तथा पाठ्य-सहगामी क्रियाएं ।

यहाँ बोर्ड व विश्वविद्यालयों द्वारा निर्दिष्ट प्रवृत्तियों को पाठ्य-क्रियाएं कहा है जबकि अन्य क्रियाएं व प्रवृत्तियां जिनका आयोजन तो किया जाता है पर उनकी उपलब्धियों का प्रभाव परीक्षा पर नहीं पड़ता पाठ्य सहगामी क्रियाएं कहा गया है ।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने पाठ्य सहगामी क्रियाओं के सम्बन्ध में सुझाव दिया है कि "ये पाठ्य-सहगामी क्रियाएं विद्यालयी क्रियाओं का वैसे ही अभिन्न अंग है जैसे पाठ्यक्रम क्रियाएं । इसलिए उनके उचित गठन के लिए भी उसी सावधानीपूर्वक विचार की आवश्यकता है। ये क्रियाएं स्कूल की स्थिति, उनके संसाधनों, स्टाफ और छात्रों की रूचि के अनुसार अलग-अलग होनी चाहिए।

पाठ्य-सहगामी क्रियाएं देश के विकास में तथा बेरोजगारी की समस्या हल करने में बड़ा योगदान दे सकती है। सभी छात्र बौद्धिक कार्य करने की क्षमता नहीं रखते हैं वे हस्तकला, शारीरिक कार्य, खेल - दौड़, संगीत, नृत्य, कला अभिनय आदि प्रवृत्तियों की और उन्मुख होकर, स्वयं की क्षमता व योग्यता के अनुरूप कार्य चुन कर जीविकोपार्जन तथा आनन्द प्राप्त कर सकते हैं जिससे व्यक्ति तथा समाज दोनों का विकास होगा ।

पाठ्यसहगामी क्रियाओं का महत्व (Importance of Co-curricular Activities) - पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के सम्बन्ध में राष्ट्रीय शिक्षा आयोग ने लिखा है- "हम स्वीकार करते हैं कि विद्यालय के पर्यवेक्षण में चलने वाली प्रवृत्तियों जिनसे विद्यार्थियों को महत्वपूर्ण अनुभव प्राप्त होते हैं, वे विद्यालय के अन्दर हो अथवा बाहर, पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग है । कुछ प्रवृत्तियां ऐसी भी होती है, जिनमें बजाय खेल के कार्य के गुण अधिक होते हैं । विविध प्रकार की हॉबी, वाद-विवाद, नाट्य आदि जिसमें विद्यार्थियों की सृजनता और अभिव्यक्ति के विकास को प्रोत्साहन मिलता है । प्रत्येक विद्यालय को विविध प्रकार की प्रवृत्तियों का संचालन करना चाहिए ताकि प्रत्येक विद्यार्थी अपनी रुचि और क्षमता के आधार पर कुछ प्रवृत्तियों में भाग ले सकें।" इस प्रकार पाठ्य-सहगामी गतिविधियों के निम्न महत्व दृष्टिगोचर होते हैं -

1. बालक का सर्वागींण विकास ।
2. आत्म विश्वास में वृद्धि ।
3. नेतृत्व गुणों का विकास ।
4. सामाजिक गुणों का विकास ।
5. करके सीखना ।
6. दल-भावना का विकास ।
7. अन्तर्निहित अभियोग्यताओं का विकास ।
8. स्वरोजगार के अवसर ।
9. संवेगात्मक सन्तुलन ।
10. आत्म-संतोष ।
11. देश का विकास ।
12. सिद्धान्त व व्यवहार की खाई कम होगी ।
13. लोकतान्त्रिक गुणों का विकास ।
14. सृजनात्मकता का विकास ।
15. स्व-अनुशासन का विकास ।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं के आयोजन सम्बन्धी सिद्धान्त (Principal of organising co-curricular activities) - पाठ्य सहगामी आयोजन में निम्न सिद्धान्तों को ध्यान रखा जाए -

1. छात्रों को किसी भी क्रिया में भाग होने के लिए बाध्य न करें । छात्र स्वेच्छा से उनकी रूचि व योग्यतानुसार जिनमें भाग लेना चाहे, उसमें लेने दिया जाए । किसी भी गतिविधि का महत्व अवश्य बताना चाहिए ।
2. सभी बालकों में समस्त योग्यताएं नहीं होती है अत: बच्चे की योग्यताओं का पता लगाया जाए तथा योग्यतानुसार गतिविधि चयन करने में मार्गदर्शन दिया जाए ।
3. गतिविधियों का संचालन प्रशिक्षित अध्यापक के नेतृत्व में किया जाना चाहिए । लगातार पर्यवेक्षण किया जाना चाहिए ताकि गतिविधि सही दिशा में अग्रसर हो सके ।
4. किसी गतिविधि के संचालन का दायित्व उसी अध्यापक को दिया जाना चाहिए जिसमें उसकी दक्षता, योग्यता व रूचि हो ।
5. अध्यापकों को गतिविधि विशेष के संचालन का समय-समय पर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये ।
6. विभिन्न गतिविधियों की वार्षिक योजना तैयार करनी जानी चाहिए ।
7. प्रधानाध्यापक का कर्तव्य है कि वह प्रभारी अध्यापक को उत्पेरित करे तथा अध्यापक का कर्तव्य है वह बच्चों को उनकी निष्पत्ति के लिए उत्प्रेरित करता रहे ।
8. शिक्षा विभाग से भी उदारनीति अपनाने की अपेक्षा की जाती है । विभिन्न गतिविधियों के संचालन हेतु धन की व्यवस्था शिक्षा विभाग द्वारा की जानी चाहिए ।
9. विभिन्न गतिविधियों के संचालन का कार्य शिक्षक के कार्यभार में जुड़ना चाहिए जिससे अध्यापकों को यह कार्य अतिरिक्त भार न लगे ।
10. गतिविधियों के संचालन में समुदाय को भी कहीं न कहीं जोड़ना चाहिए । इससे समुदाय के साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित होंगे व अच्छा तादम्य बन सकेगा ।
11. यदा-कदा अंतरविद्यालयी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाना चाहिए पर निष्पक्षता का ध्यान रखा जाए । विजेताओं को प्रमाण पत्र,दिए जाने चाहिए ।
12. समय-चक्र में गतिविधियों को यथोचित स्थान दिया जाना चाहिए ।

पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के प्रकार (Types of Co-curricular Activities) - पाठ्य सहगामी गतिविधियों की कोई निर्धारित सूची नहीं है । विद्यालय के पास उपलब्ध संसाधन, समय, धन व विद्यालय के प्रकार के आधार पर तय किया जाता है कि कौन सी गतिविधि विद्यालय में रखी जाए । जैसे कुछ विद्यालय ऐसे भवनों में चल रहे हैं जहाँ खुला मैदान ही नहीं है वहाँ बाह्य खेल (Outdoors games) सम्भव ही नहीं है । बालिका विद्यालयों में बालिकाओं से सम्बन्धी क्रिया कलाप ही करवाए जाएंगे । दो पारी विद्यालयों में अन्य समस्याएं होती हैं । फिर भी सामान्यतया संचालित होने वाली गतिविधियों को निम्नानुसार वर्गीकृत कर सकते हैं -

1. **शारीरिक गतिविधियाँ (Physical Activities)-** इसके अन्तर्गत विभिन्न खेल, पी.टी., जिम्नास्टिक, योग, एन.सी.सी., तैरना, दौड़, परेड, श्रमदान आदि आते हैं ।

2. **आध्यात्मिक विकास सम्बन्धी (Spiritual Activities) -** प्रार्थना सभा, ध्यान, प्रवचन, भजन, अनमोल वचन, जन्माष्टमी, आदि पर्वों का आयोजन सम्मिलित है ।
3. **सांस्कृतिक गतिविधियाँ (Cultural Activities) -** लोक नृत्य, गीत, ड्रामा, अन्य मनोरजनात्मक कार्यक्रम आदि आते हैं ।
4. **साहित्यक गतिविधियाँ (Literary Activities) -** आशु भाषण, वाद-विवाद, काव्य-गोष्ठी, पत्र-वाचन, लेखन, आदि आते है ।
5. **मानसिक विकास सम्बन्धी गतिविधियाँ (Activities related to intellect) -** पोस्टर देखकर कहानी लिखना, शीर्षक देना, बौद्धिक खेल आदि ।
6. **सामुदायिक विकास सम्बन्धी गतिविधियाँ (Activities related to Community development) -** सर्वेक्षण, शैक्षिक भ्रमण, पिकनिक, वनशाला टूर, मेंला, फेक्ट्री या उद्योग का भ्रमण, म्यूजियम, भ्रमण, पर्यावरण रैली, प्रदर्शनी, स्काउट, गाइड केम्प आदि।
7. **राष्ट्रीय भावना के विकास सम्बन्धी गतिविधियाँ (Patriotic Activities) -** स्वतन्त्रता दिवस, गणतन्त्र दिवस, गाँधी जयन्ती, बाल दिवस आदि पर्वों का आयोजन ।
8. **नागरिकता सम्बन्धी गतिविधियों (Activities related to citizenship) -** विद्यार्थी यूनियन, विद्यार्थी सलाहकार समिति, विद्यार्थी सहकारी भण्डार आदि ।
9. **सृजनात्मक गतिविधियाँ (Creative Activities) -** व्यर्थ सामग्री से उपयोगी सामग्री निर्मित करना, एस यू पी डब्लू के क्रिया कलाप, रंगोली, चित्रकला, सॉफ्ट टॉयज बनाना, मिट्टी कुट्टी से विभिन्न सामग्री बनाना आदि ।
10. **सौन्दर्यानुभूति सम्बन्धी गतिविधियों (Aesthetic Activities) -** बागवानी, पेन्टिंग, नकली फूल, कविता, कहानी लिखना आदि ।

पाठ्य-सहगामी गतिविधियों के आयोजन में गतिरोध (Hurdles in organising co-curricular Activities) - पाठ्य-सहगामी गतिविधियों के संचालन की अनुशंसा तो सभी ने की है व सभी शिक्षाविद् इसके महत्व से सहमत हैं फिर भी निम्न गतिरोध इन गतिविधियों के संचालन को प्रभावी नहीं होने दे रहे हैं -

1. शिक्षा विभाग पाठ्य क्रियाओं के समान पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को न महत्व देता है न धन की व्यवस्था करता है ।
2. अध्यापक पाठ्यक्रम पूरा करवाने में ही अपने कार्य की इतिश्री समझते हैं । पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के प्रति उचित दृष्टिकोण का अभाव है ।
3. अधिकांश विद्यालयों में शारीरिक शिक्षक का अभाव है ।
4. पाठ्य-सहगामी गतिविधियों के लिए समय-चक्र में स्थान नहीं दिया गया है ।
5. स्थान, खेल मैदान की उपलब्धता का अभाव ।
6. माता-पिता भी पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के आयोजन को समय का व्यय मानते हैं ।
7. परीक्षा-परिणाम में इन गतिविधियों को स्थान नहीं दिया जाता है ।
8. अध्यापक इन गतिविधियों के संचालन हेतु प्रशिक्षित नहीं है ।

9. भारी भरकम पाठ्यक्रम के बाद, इन गतिविधियों के लिए समय नहीं मिलता है ।

विद्यालय की कतिपय महत्वपूर्ण गतिविधियाँ (Some Important School Activities) - सभी गतिविधियों की चर्चा करना तो सम्भव नहीं है पर कुछ महत्वपूर्ण विद्यालयी गतिविधियों के संचालन सम्बन्धी बिन्दुओं पर चर्चा की जा रही है ।

1 प्रार्थना सभा (Prayer Assembly) - विद्यालयी दिनचर्या का प्रारम्भ शांत, सौम्य वातावरण में ईश्वर की स्तुति के साथ किया जाता है जिसका प्रभाव छात्र के मानस पटल पर काफी समय तक व्याप्त रहता है ।

प्रार्थना सभा का प्रशासनिक, सामाजिक व मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी कम नहीं है । सभी शिक्षक, छात्र व प्रधानाध्यापक निर्धारित समय पर एकत्रित होकर एक साथ वन्दना करते हैं । छात्रों में रच-अनुशासन की भावना व समय पाबन्दी की आदत विकसित होती है । साथ नेतृत्व व सहभागिता के गुण भी विकसित होते हैं । राष्ट्रगाने व राष्ट्रगीत के माध्यम से राष्ट्रीयता के भाव भी विकसित होते हैं । छात्र इस समय में स्वयं को संयमित रखते हैं । कुछ क्षण के ध्यान के दौरान वे अपने मन को संयमित रखने का प्रयास करते हैं, अच्छी बातों का मनन करते हैं तथा अपने अन्त: मन में झांकने का प्रयास करते हैं । ये सभी नैतिक मूल्यों के विकास की ओर कदम बढ़ाने की पहल है ।

वैसे तो सभी विद्यालयों की प्रार्थना सभा में कुछ न कुछ समानता व भिन्नता होती है पर सामान्यतया निम्न प्रवृत्तियाँ सम्मिलित की जा सकती हैं -

1. छोटे से बड़े कद के क्रम में छात्रों का पंक्तिबद्ध होना ।
2. हाथ जोड़ कर ईश वन्दना करना ।
3. ध्यान या मौन ।
4. अध्यापक अथवा छात्रों द्वारा अनमोल वचन या प्रेरक प्रंसग सुनाना ।
5. छात्रों द्वारा समाचार के मुख्य अंश सुनाना ।
6. प्रधानाध्यापक द्वारा कोई संदेश या निर्देश देना ।
7. पी.टी. या योगासन ।
8. राष्ट्र गान ।

विद्यालय प्रार्थना आयोजन में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सकता है ।

खेलकूल सम्बन्धी गतिविधियाँ (Physical Activities) - प्रसिद्ध कहावत है "स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का वास होता है ।" किसी भी उपलब्धि के लिए सर्व प्रथम स्वस्थ शरीर आवश्यक है । स्वस्थ शरीर के लिए आवश्यक है खेलकूद । खेलकूद विद्यालय की महत्वपूर्ण गतिविधि होनी चाहिए । खेलकूद का जितना शारीरिक प्रभाव है उतना ही मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, बौद्धिक व संवेगात्मक प्रभाव भी है । छात्र खेल द्वारा तनावमुक्त हो जाते हैं व उनमें नयी ऊर्जा का संचरण होने लगता है पर यह खेदजनक स्थिति है कि प्रशासन खेल के महत्व को नजर अन्दाज कर रहे हैं । समय-चक्र में खेल के लिए कोई स्थान नहीं होता । कई विद्यालयों में तो खेल मैदान व खेल सामग्री का भी नितान्त अभाव होता है ।

खेल से निम्न उद्देश्य पूरे होते हैं–

1. शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक व सामाजिक विकास होता है ।
2. सहभागिता की भावना का विकास होता है ।

3. दल-भावना का विकास होता है ।
4. अर्जुन की आँख की तरह उद्देश्य पर दृष्टि रखना व उसे प्राप्त करने के लिए प्रेरित होता है ।
5. मानसिक रूप से स्वस्थ रहता है ।
6. साहस, धैर्य व सूझबूझ का विकास होता है ।
7. आत्मविश्वास में वृद्धि होती है ।
8. किशोरावस्था में अपार शक्ति का सही दिशा में उपयोग होता है ।

खेल संचालन के लिए आवश्यक बिन्दु -

- खेल के नियम होते हैं । अत: प्रशिक्षित शिक्षक के नेतृत्व में खेल का आयोजन होना चाहिए ।
- वित्त का कुछ भाग खेलों व खेल सामग्री पर व्यय किया जाना चाहिए ।
- समच चक्र में खेल को स्थान दिया जाना चाहिए ।
- अग्रणी छात्रों को गहन प्रशिक्षण के लिए जिला व राज्य स्तर पर भेजना चाहिए ।

3. विभिन्न क्लबों का आयोजन (Organising Different Clubs) - कक्षा शिक्षण में अध्यापक व छात्र पाठ्यक्रम तक सीमित होकर रह जाते हैं जबकि विभिन्न विषय से सम्बन्धित अन्य गतिविधियों के लिए या नयी जानकारी के लिए कोई मंच नहीं रहता है । इसका मध्यम मार्ग है 'क्लब' जैसे विज्ञान क्लब, गणित क्लब, साहित्यिक क्लब, पर्यावरण क्लब आदि । क्लब समान रूचि व आवश्यकता रखने वाले छात्रों का समूह होता है जो किसी उद्देश्य से समय समय पर एकत्रित होते हैं ।

क्लब की सफलता उसके स्पष्ट नियमों, संविधान, क्रियाकलाप पर निर्भर करती है ।

सामान्यतया विषयाध्यापक क्लब का संयोजक होता है तथा अन्य प्रतिनिधि छात्र ही होते हैं । क्लब का संचालन छात्र प्रतिनिधियों द्वारा किया जाता है, शिक्षक मार्गदर्शन करता है । मुख्य पदाधिकारी निम्न होते है--

अ	अध्यक्ष	ब	उपाध्यक्ष
स	सचिव	द	सह-सचिव
य	कोषाध्यक्ष	र	अन्य कार्यकारिणी सदस्य

पदाधिकारी का चयन जनतान्त्रिक प्रणाली से किया जाता है । पदाधिकारी विषय अध्यापक के परामर्श में निम्न बातें तय करेंगे -

- क्लब के उद्देश्य
- क्लब के नियम व संविधान
- सदस्यता शुल्क
- सदस्यता नियम
- गतिविधियाँ
- वार्षिक कार्यक्रम (सम्भावित तिथियों के साथ)

क्लब की सामान्य गतिविधियाँ-

- विशेषज्ञ वार्ता ।
- भित्ति पत्रिका जिसमें नवीनतम जानकारी का समावेश हो ।
- बुलेटिन प्रकाशन (मासिक अथवा त्रैमासिक) ।
- प्रतियोगिता आयोजन ।
- मेंला आयोजन ।
- शैक्षिक भ्रमण व पिकनिक ।
- गोष्ठी का आयोजन करना या विचार विमर्श ।
- सृजनात्मक कार्य ।
- लघु पुस्तकालय का निर्माण (विषय-सम्बन्धी) ।

विषय क्लब के लाभ-

- छोटे क्लब में अन्तर्मुखी छात्रों की प्रतिभा विकसित होने का अवसर प्राप्त होता है ।
- अपने विषय की गहनता में जाने का अवसर प्राप्त होता है ।
- विचार-विमर्श का मंच मिलता है ।
- नेतृत्व गुणों का विकास होता है ।

अन्य गतिविधियाँ - कई अन्य गतिविधियाँ जैसे सांस्कृतिक कार्यक्रम (संगीत, नृत्य, नाटक), साहित्यिक गतिविधियाँ (काव्यपाठ, पत्र-वाचन, वाद-विवाद, आशु भाषण), चित्रकारी, रंगोली, विचित्र वेशभूषा, विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन समय समय पर विद्यालय में होता है । किसी आयोजन की सफलता सुनियोजित योजना पर निर्भर करती है । प्रत्येक गतिविधि का प्रभारी होना चाहिए जो उस गतिविधि में रूचि रखता हो । प्रभारी का दायित्व है कि वह कार्यक्रम की सूक्ष्मता से योजना बनाए तभी गतिविधि अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर सकेगी ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. पाठ्य-सहगामी गतिविधियों के महत्व पर प्रकाश डालिए ।
   What is the importance of co-curricular activities?
2. पाठ्य-सहगामी गतिविधियों के आयोजन में आने वाली बाधाएँ क्या हैं? आप इन बाधाओं को कैसे दूर करेंगे?
   What problems do you face in organising co-curricular activities? How will you overcome these problems?
3. प्रार्थना सभा के क्या महत्व हैं? What is the importance of prayer?
4. क्लब में होनें वाली सामान्य गतिविधियों का विवरण कीजिए ।
   Describe common activities of club.

7.5 निर्णय लेना
(Decision Making)

व्यक्ति को अपनी जिन्दगी में पग-पग पर छोटे अथवा बड़े निर्णय लेने पड़ते हैं । जो व्यक्ति जितने सुविचारित तरीके से निर्णय लेता है वह उतना ही सफल होता है । एक गलत निर्णय व्यक्ति की जिन्दगी की दिशा बदल सकता है । यह एक व्यक्ति की बात थी । किसी संगठन में उद्देश्य प्राप्ति के लिए अनेकानेक त्वरित व सुविचारित निर्णय लेने पड़ते हैं वे चाहे योजना बनाने से सम्बन्धित हो, चाहे कार्यक्रम के क्रियान्वचन से सम्बन्धित हो और चाहे संगठन के लक्ष्य निर्धारण से सम्बन्धी हो । ये बात अलग है कि वे निर्णय किसके द्वारा लिए जाते हैं अर्थात नेता द्वारा या समूह द्वारा या प्रशासकों द्वारा पर निर्णय लेने की क्षमता के अभाव में किसी संगठन की कल्पना ही नहीं की जा सकती है । निर्णय लेने की क्षमता प्रशासनिक प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु है ।

समस्या समाधान प्रक्रिया में अनेक विकल्पों में से एक विकल्प चुनने के लिए स्वयं के विवेक व समूह बुद्धि का प्रयोग करते हुए निर्णय लिया जाता है ।

व्यक्तिगत अथवा सामूहिक निर्णय लेते समय साइमन[5] ने निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देने का सुझाव दिया--

- संगठन के उददेश्यों के मद्देनजर निर्णय लेना ।
- समस्या सम्बन्धित समस्त तथ्य व सूचनाएं एकत्र करना ।
- समस्या के सम्बन्ध में अन्य लोगों की राय जानना ।
- तथ्यों व सूचनाओं का विश्लेषण करना ।
- समस्या समाधान के विकल्पों की खोज करना ।
- सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प का चयन करना ।

इस प्रकार निर्णय लेने की यह व्यवस्थित व वैज्ञानिक पद्धति है । विद्यालय भी एक संगठन है जहाँ वर्ष पर्यन्त विभिन्न गतिविधियों का संचालन होता है । प्रधानाध्यापक को गतिविधियों को विकेन्द्रीकरण से सम्बन्धित निर्णय लेने पड़ते हैं, गतिविधि प्रभारी बनाने के निर्णय, गतिविधि के प्रकारों के निर्णय, तिथियों को तय करने के निर्णय, आयोजन सम्बन्धी निर्णय, वित्तीय व्यवस्था सम्बन्धी निर्णय लेने पड़ते हैं । कुछ निर्णय उसे व्यक्तिगत रूप से लेने पड़ते हैं तो कुछ जनतान्त्रिक ढंग से सामूहिक निर्णय लिए जाते हैं । यह निर्विवाद है कि निर्णय लेने की क्षमता किसी संगठन को आगे बढ़ाने की पहली शर्त है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 निर्णय एलईटीई समय किन बिन्दुओं का ध्यान रखा जाना चाहिए?
Which points are to be kept in the mind while making decision?

2 "किसी संगठन की पहली शर्त निर्णय करने की क्षमता है" स्पष्ट कीजिए |
"Decision Making ability is the first requisite of an organisation" Justity.

7.6 कार्य का संगठन एवं वितरण (Organisation & Distribution of Work)

जार्ज "जब एक समूह द्वारा समान लक्ष्य प्राप्त करना हो तो संगठित संरचना आवश्यक है"

"An organisational structure is necessary when any group has a common task"

ग्रेग "संगठन का अभिप्रेत है समान लक्ष्य की पूर्ति हेतु संगठन व्यक्तियों के समूह की समन्वित क्रियाएं"

वाल्टन "संगठन कार्यरत व्यक्तियों का समूह है जो समान उद्देश्यों की पूर्ति के लिए साथ-साथ मिलकर कार्य करते हैं।"

मुखर्जी "संगठन में कार्य करने वाले सभी व्यक्ति आम उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक दूसरे को सहयोग करते हैं"

उपरोक्त संगठन की परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि संगठन में कुछ व्यक्तियों का समूह है जिनके समान उद्देश्य हैं । ये समूह मिलजुलकर उन उद्देश्यों की प्राप्ति की ओर अग्रसर होते हैं ।

समूह चाहे सरल हो या जटिल निम्न बातों का समावेश अवश्य होना चाहिए-

1. समूह का नेतृत्व करने वाला ।
2. समूह के प्रत्येक सदस्य की भूमिका का स्पष्टीकरण ।
3. समूह के लक्ष्य व उद्देश्यों का निर्धारण ।
4. लक्ष्यों को प्राप्त करने के तरीकों का निर्धारण ।

समूह के नेता के चयन के भिन्न-भिन्न तरीके हैं, कभी उम्र के आधार पर, अनुभव के आधार पर, ताकत के आधार पर अथवा लोकतान्त्रिक तरीके से समूह सदस्यों द्वारा चयन किया जा सकता है । नेता की भूमिका समूह या संगठन के आकार व जटिलता के आधार पर भिन्नता लिए है ।

समूह के प्रत्येक सदस्य को संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए योगदान देना होगा । यह योगदान अधिकतम तब दे सकेगा जब उसे अपनी भूमिका की स्पष्टता होगी । कार्य का विवरण नेता द्वारा भी किया जा सकता है, समूह सदस्य अपनी वरीयता व पसन्द से भी चयन कर सकते हैं तथा मिश्रित स्वरूप भी अपनाया जा सकता है । यह निर्णय संगठनं के लक्ष्यों व परिस्थिति पर निर्भर करेगा ।

संगठन के समूह के कुछ सदस्य अनुभवी हो सकते हैं तो कुछ नये या कम अनुभवी । साथ ही कुछ सदस्य अधिक गत्यात्मक है तो कुछ शिथिल प्रव्रत्ति के । इस आधार पर संगठन में स्तरीकरण तथा अधिकृतियाँ करना आवश्यक है ।

कुछ बड़े संगठनों में कई उप-प्रणालियाँ कार्यरत रहती हैं । इन उप-प्रणालियों तथा विभिन्न स्तरों में समन्वय अति आवश्यक है क्योंकि सभी उप-प्रणालियाँ एक ही संगठन के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रयासरत है । समन्वय के साथ स्पष्ट संप्रेषण भी जरूरी है ।

संगठन के प्रकार

1. **औपचारिक संगठन -** निश्चित उद्देश्य, समय व नियमों के पालन की बाध्यता
2. **अनौपचारिक संगठन -** समान रूचियों के आधार पर बने समूह जो क्रिसी उद्देश्य, नियम से बंधे नहीं है।

यदि अनौपचारिक संगठन की विचारधारा औपचारिक संगठन के विपरीत है तो इसका दुष्प्रभाव स्पष्टत: संगठन पर देखा जा सकता है । उदाहरणार्थ यदि प्रधानाध्यापक का किसी शिक्षक समूह के साथ मतभेद है तो इसका सीधा प्रभाव विद्यालय की लक्ष्य प्राप्ति (परीक्षा परिणामों) पर दृष्टिगोचर होगा । प्रशासक अपनी सूझबूझ, विवेक व चातुर्य से ऐसे समूह पर दृष्टि रखते हुए लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में जोडता है । जबकि अकुशल प्रशासक ऐसे अनौपचारिक समूहों से त्रस्त हो जाते हैं ।

विद्यालय संगठन (School Organisation) - विद्यालय किसी भी स्तर का हो प्राथमिक, उच्च प्राथमिक, माध्यमिक या उच्च माध्यमिक, यह एक औपचारिक संगठन है । यहाँ विद्यालय प्रधान से दो मूलभूत अपेक्षाएं रखी जाती हैं

1. विद्यालय के वर्तमान स्तर को बनाए रखना
2. विद्यालय में नए कीर्तिमान स्थापित करना अर्थात विद्यालय की नयी ऊंचाईयों की ओर बढ़ाना। एण्ड्रेयू हाल्पिन ने विद्यालयी वातावरण को सुखद बनाने के लिए संगठनात्मक पर्यावरण का सिद्धान्त प्रतिपादित किया जिसके मुख्य कारक निम्न हैं -

   अ. नेतृत्व व्यवहार ।

   ब. शिक्षकों का परस्पर व्यवहार ।

   विद्यालय प्रधान व शिक्षकों के भिन्न-भिन्न प्रकार से सम्बन्ध से विद्यालयी पर्यावरण बनते है । जितना जनतान्त्रिक वातावरण रहेगा उतने ही सौहार्द पूर्ण सम्बन्ध स्थापित होंगे तथा विद्यालय विकास की दिशा में बढेगा।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 संगठन को परिभाषित कीजिए | संगठन के मूल तत्व कौन से हैं ?
Define organisation. What are the basic elements of an organinsation.

2 कार्य वितरण के भिन्न भिन्न स्वरूप क्या हो सकते हैं ?
What could be the different forms of work distribution?

7.7 विभिन्न गतिविधियों में समन्वय (Co-ordination of Different Activities)

संगठन से समन्वय का भी अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है । समन्वय के अभाव में धन व श्रम का हास भी होगा तथा लक्ष्यों की प्राप्ति भी प्रभावित होगी । विद्यालय सम्बन्धी एक छोटे से उदाहरण से स्थिति स्पष्ट होती है। विद्यालय में शनिवार को बाल सभा का आयोजन होता है जिसमें सांस्कृतिक व साहित्यिक गतिविधियाँ होती हैं। माना कि 24 दिसम्बर को क्रिसमस

कार्यक्रम आयोजित करने की तैयारी बाल सभा प्रभारी द्वारा की जा रही है । दूसरी तरफ परीक्षा प्रभारी ने उसी दिन, उसी समय में परीक्षा कॉपियाँ दिखाने के लिए अभिभावक परिषद् रखना तय किया। दोनों प्रभारी लक्ष्यों की दिशा में कार्य कर रहे हैं पर दोनों के बीच समन्वय न होने के कारण ऐसी भ्रम की स्थिति उत्पन्न हुई ।

सगंठन जितना बड़ा व जटिल है, समन्वय की उतनी ही अधिक आवश्यकता है । प्रशासन की अपने कार्यकर्ताओं से लक्ष्य प्राप्ति के लिए कुछ अपेक्षाएं होती है, साथ ही कार्यकर्ताओं की अपने समर्पण भाव से कार्य के बदले कुछ अपेक्षाएं रहती हैं (प्रशंसा, प्रमोशन, नाम आदि) जबकि इन दोनों के बीच समन्वय का अभाव रहता है तो असन्तोष पैदा होता है । ऐसी स्थिति प्राय: प्रशासनिक स्तर पर देखी जाती है जब कार्यकर्ता पर्याप्त श्रम व समर्पण से कार्य करता है पर पदोन्नति नहीं मिलने पर कार्यकर्ता का उत्साह कम होने लगता है ।

विभिन्न गतिविधियों में समन्वय (Co-ordination of different activities) - विभिन्न गतिविधि प्रभारी अपनी वार्षिक योजनाएं अपने सदस्यों के साथ मिलकर तैयार करें तथा इसे संकाय सदस्यों की बैठक में प्रस्तुत करें । संकाय सदस्यों तथा विद्यालय प्रधान के सुझावों के आधार पर परिष्कृत किया जाए । सभी गतिविधियों का एक पंचाग तिथिवार तैयार कर संस्था प्रधान सभी सदस्यों को वितरित करें । इस प्रकार सम्पूर्ण सत्र का विभिन्न गतिविधियों का प्रारूप सभी अध्यापकों के समक्ष रहेगा तो किसी भी भ्रम की स्थिति पैदा होने की गुंजाइश नहीं रहेगी ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 विभिन्न गतिविधियों में समनव्य क्यों आवश्यक है ?
Why is coordination needed in different activities?

7.8 सम्प्रेषण (Communication)

सम्प्रेषण दो व्यक्तियों के बीच विचारों के आदान प्रदान का महत्वपूर्ण माध्यम है । मनुष्यों में ही नहीं पशु-पक्षी व जानवरों में भी सम्प्रेषण होता है, यह बात अलग है कि उनमें सम्प्रेषण भिन्न-भिन्न प्रकार की ध्वनि के आधार पर किया जाता है । सम्प्रेषण के बिना किसी समूह या संगठन द्वारा उद्देश्य प्राप्ति असम्भव है । इसके बावजूद सम्प्रेषण को परिभाषित करना कठिन है ।

विद्यालय में प्रधानाध्यापक, अध्यापक, छात्र व प्रशासकों में लगातार सम्प्रेषण बना रहता है । इस आधार पर सम्प्रेषण का अर्थ निम्न दिया जा सकता है।

"संदेश भेजने वाले व संदेश पाने वाले के बीच संदेश, विचारों, निर्देशों का आदेशों का आदान-प्रदान ही सम्प्रेषण है ।"

सम्प्रेषण हेतु न्यूनतम दो व्यक्तियों का होना आवश्यक है (1) सन्देश भेजने वाला (2) सन्देश पाने वाला। अच्छा सम्प्रेषण वह है जो सन्देश भेजने वाले व प्राप्त करने वाले के बीच में संदेश सामग्री (विचार, भाव) स्पष्ट हो । जैसे विद्यालय प्रधान ने अपने कार्यकर्ता को कोई निर्देश दिए, कार्यकर्ता उस निर्देश को समझ नहीं पाया व कार्य सही नहीं कर पाया तो यह अस्पष्ट

सम्प्रेषण है जबकि प्रधान के निर्देश को वैसा ही समझ कर सही कार्य करना अच्छे सम्प्रेषण का द्योतक है । सम्प्रेषण मौखिक या लिखित, औपचारिक या अनौपचारिक हो सकता है । अच्छे व बुरे सम्बन्धों की जड़ भी सम्प्रेषण ही है ।

किसी संगठन में समूह सदस्यों को संगठन के लक्ष्यों, लक्ष्यों को प्राप्त करने के साधनों, निर्णय लेने, सदस्यों की रूचियों व क्षमताओं का पता लगाने के लिए सम्प्रेषण का ही सहारा लेना पड़ता है । सम्प्रेषण जहाँ कला है वहीं इसे प्रशिक्षण द्वारा विकसित भी किया जा सकता है । एक अच्छा प्रशासक अपने विरोधी समूह को सम्प्रेषण कला से सम्मोहित कर लेता है |

लोकतान्त्रिक व निरंकुश शासन व्यवस्था में सम्प्रेषण में पर्याप्त अन्तर होता है । लोकतान्त्रिक प्रणाली विभिन्न स्तरों पर चाहे ऊपर से नीचे, नीचे से ऊपर, क्षैतिज व लम्बवत सभी स्तरों पर खुल कर सम्प्रेषण की संभावना रहती है । इससे विभिन्न स्तर के सदस्यों में अच्छी समझ विकसित होती है संगठन का वातावरण सौहार्दपूर्ण बनता है । वैसे लोकतान्त्रिक संगठन में सम्प्रेषण के कई स्तर (चेनल) है पर निम्नतर स्तर का व्यक्ति सीधा सबसे ऊपर स्तर पर बैठे व्यक्ति से सीधे भी सम्प्रेषित करने की सभावना रखता है । यहाँ सम्प्रेषण हर दिशा में अर्थात लम्बवत, क्षैतिज (समान स्तर पर) तथा वृत में हो सकता है । इसे एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है । एक चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी 15 वर्ष से संगठन में कार्यरत है । इस बीच उसने प्राइवेट स्नातक डिग्री प्राप्त कर ली । अब वह पदोन्नति की अपेक्षा रखता है । इसके लिए वह सीधे प्रशासक से ही बात कर सकता है । (निम्नतम स्तर से सीधे उच्चतम स्तर में सम्प्रेषण) वो चाहे तो अपनी बात कार्यालय अधीक्षक से कहे जो उच्चतम अधिकारी तक निर्णय हेतु सम्प्रेषित करे (निम्नतम स्तर से-मध्यम स्तर-उच्चतम स्तर) । एक ,ऐसी भी स्थिति हो सकती है जब कर्मचारी अपने ही स्तर के कर्मचारी से अपनी समस्या के बारे में सम्प्रेषण करता है (क्षैतिज सम्प्रेषण) ।

निरंकुश शासन व्यवस्था में उच्चतम स्तर से मध्यम व मध्यम से निम्न स्तर पर ही सम्प्रेषण होता है । निम्नतम स्तर का सदस्य सीधे उच्च स्तर के व्यक्ति से सम्प्रेषण नहीं कर सकता । ऐसी स्थिति में संगठन के कर्मचारी अपनी बात उच्च अधिकारी तक नहीं पहुँचा पाते हैं, दोनों के बीच कोई सीधा सम्पर्क या संवाद नहीं होता है व काफी दूरियां होती हैं ।

सम्प्रेषण प्रक्रिया (Process of Communication) - सम्प्रेषण प्रक्रिया में मुख्यरूप से निम्न तत्वों का समावेश होता है:

1. सन्देश भेजने वाला (Sender of Communicator)
2. सन्देश भेजने के उद्देश्य (Objective of Communication)
3. सन्देश का विषय (Content of Communication)
4. सन्देश का माध्यम (Medium of Communication)
5. सन्देश की श्रृंखलाए (Channels of Communication)
6. सन्देश पाने वाला (Reciever of Communicator)

सन्देश भेजने का कोई न कोई उद्देश्य होता है उद्देश्य के अनुसार ही भेजने की प्रक्रिया तय की जाती है अर्थात लिखित या मौखिक, फोन द्वारा अथवा पत्र द्वारा ।

सम्प्रेषण की बाधाएँ (Barriers of Communication) - सम्प्रेषण का महत्व तब है जब सन्देश को सही समय कर क्रियान्वित किया जाए पर कई बार कुछ बाधाएँ सन्देश को स्पष्ट रूप से सन्देश पाने वाले तक नहीं पहुँचने देती है । ये बाधाएँ निम्न हो सकती हैं -

1. **व्यक्तिगत (Personal) -** सन्देश प्राप्त करने में व्यक्तिगत कारणों से आने वाली कठिनाई जैसे कम सुनाई देना, संदेश भेजने के प्रति नकारात्मक रवैया होना आदि ।
2. **भौतिक बाधाएँ (Physical)-** अत्यधिक शोर अस्पष्ट लेखन, फोन पर स्पष्ट आवाज न आना आदि भौतिक बाधाएँ है ।
3. **शब्दार्थ बाधाएँ (Semantic) -** सन्देश भेजने वाले की भाषा नहीं समझ पाना, सम्प्रेषण के कोड को समझने की असमर्थता इसके अर्न्तगत आती है ।

प्रशासक द्वारा सम्प्रेषण बाधाओं को दूर करने के उपाय

(Measures to overcome barriers of communication)

1. लोकतान्त्रिक प्रणाली अपनाएँ ।
2. विभिन्न अधिकारिक स्तर पर अन्तःक्रिया करें ।
3. सम्प्रेषण के बाधक तत्वों का विश्लेषण कर दूर करे ।
4. सम्प्रेषण कला विकसित करने के लिए सेवारत कार्यक्रम आयोजित करें ।
5. समय समय पर निम्न स्तर के सदस्यों से सम्पर्क करते रहे ।

विद्यालय संगठन में सम्प्रेषण के विभिन्न स्तर हैं । प्रधानाध्यापक को नीति निर्धारण हेतु प्रबन्धक से सम्प्रेषण करना पड़ता है । दूसरी तरफ विद्यालय बच्चों के लिये है । बच्चों से सम्बन्धित अनेकानेक समस्याओं के लिए अभिभावकों से सम्प्रेषण करना पड़ता है । यहाँ प्रधानाध्यापक शिक्षकों को निर्देश देते हैं कि वे माता पिता से सम्पर्क स्थापित करें व समस्या के कारणों का पता लगाए । माता पिता तक सन्देश बच्चों के माध्यम से लिखित या मौखिक भेजा जाता है । ग्रामीण क्षेत्रों में इस सन्देश को नजर अन्दाज कर दिया जाता है तब शिक्षक स्वयं उनके पास जाकर प्रत्यक्ष सम्प्रेषण करता हे । कई बार माता पिता को कोई बात सम्प्रेषित करनी होती है तो वह सीधे प्रधानाध्यापक से सम्प्रेषण भी कर सकता है अथवा कक्षाध्यापक से । कई बार जब बच्चा आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत है तो माता पिता फोन अथवा पत्र के माध्यम से सम्प्रेषित करते है ।

चित्र संख्या 7.2

विभिन्न स्तरों पर सम्प्रेषण (Communication at Different Level)

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 सम्प्रेषण के मूल तत्व क्या है ?
What are the important elements of communication?

2 सम्प्रेषण में क्या क्या बाधाएं आ सकती है ?
What could be the barriers of communication?

3 प्रधानाध्यापक सम्प्रेषण की बाधाओं को कैसे दूर कर सकता है ?
How can a headmaster overcome barriers of communication?

7.9 सहयोग (Co-operation of Colleagues, Students & Parents)

कार्यकर्ताओं का सहयोग (Cooperation of Subordinates) - कोई भी शैक्षिक संगठन अपने लक्ष्यों की प्राप्ति तभी कर सकता है जब उस संगठन के विभिन्न सदस्य उद्देश्य प्राप्ति में पूर्ण सहयोग प्रदान करें । वर्तमान में कार्यकर्ताओं का सहयोग प्राप्त करने के लिए लोकतान्त्रिक तरीका अपनाना आवश्यक है । कार्यकर्ताओं के सहयोग से प्राप्त उपलब्धि का श्रेय स्वयं लेने की बजाय उनका उत्साह बढ़ाना चाहिए व उनके सहयोग की प्रशंसा की जानी चाहिए । फिर कोई कारण नहीं कि कार्यकर्ता प्रशासक को सहयोग प्रदान न करें ।

प्रशासक जितना स्पष्ट निष्पक्ष व पारदर्शी होगा उतना कार्यकर्ताओं के मन पर विजय प्राप्त करने में सफल होगा । प्रशासक शिथिल होकर कार्यकर्ताओं को त्वरित नहीं कर सकता ।

कार्यकर्ताओं से अधिकतम सहयोग प्राप्त करने के लिए समय समय पर उनकी गतिविधियों का पर्यवेक्षण, सम्प्रेषण करते रहना चाहिए ।

प्रशासक का स्नेहपूर्ण, मित्रवत व्यवहार सहयोग प्राप्त करने में सहायक होता है वहीं तानाशाही से विरोधी प्रवृत्ति बढ़ती है ।

छात्र सहयोग (Student Cooperation) - अध्यापक के स्नेहपूर्ण, सहानुभूति पूर्ण पितृवत व्यवहार से छात्रों का सहयोग प्राप्त करना आसान है । अध्यापक का भी दायित्व है छात्रों की परेशानियों, आवश्यकताओं को समझे । छात्र अध्यापक के बीच मधुर तादम्य से छात्रों का सहयोग प्राप्त किया जा सकता है वह चाहे शैक्षिक कार्यों से सम्बन्धित हो अथवा सह-शैक्षिक गतिविधियों के आयोजन से सम्बन्धी । शिक्षकों को मधुर व्यवहार से छात्रों का पढ़ाई व स्कूल की ओर आकर्षण बढ़ता है जो अन्ततोगत्वा बेहतर परिणाम में सहायक होता है ।

अभिभावक का सहयोग (Cooperation of Parents) - शहरी क्षेत्र अभिभावकों का सहयोग कुछ हद तक प्राप्त हो जाता है पर ग्रामीण क्षेत्रों में अभिभावक शैक्षिक संगठन को पूरा सहयोग नहीं दे पाते चाहे उसका कारण गरीबी, व्यस्तता अथवा शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव है । ग्रामीण क्षेत्र में अभिभावक यहाँ तक समझते है कि बच्चे को स्कूल भेजने व नामांकन की गरज अध्यापक को है । छात्रों को नियमित स्कूल भेजने में भी सहयोग नहीं देते । गहकार्य व स्व-अध्ययन के लिए बच्चे को समय नहीं देते । कुछ अभिभावकों की मजबूरी है तो कुछ जागरूकता का अभाव । अभिभावक परिषद् की बैठकों में भी उपस्थिति न्यून ही रहती है ।

अभिभावकों को समझाने पर कुछ बदलाव अवश्य आया है पर अभी अभिभावकों के सहयोग का इन्तजार है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. विद्यालय में अभिभावकों का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करने के लिए क्या करेंगे ।
   What measure will you take to get parents cooperation?
2. सहकर्मियों का सहयोग प्राप्त करने के लिए आप क्या नीति अपनाएगें?
   What policy will you adopt to get cooperation of colleagues?

7.10 विद्यालयी गतिविधियों का मूल्यांकन (Evaluation of School Activities)

जैसा कि पूर्व में चर्चा की जा चुकी है कि विद्यालय का कार्य मात्र विभिन्न विषयों की विषय-वस्तु में छात्रों को दक्ष कर देना नहीं है अपितु छात्र को सर्वागींण विकास के लिए विभिन्न प्रकार की गतिविधियों का आयोजन भी करना है । आज शिक्षा के उद्देश्य पहले से बहुत व्यापक हो चुके हैं जिन्हें विद्यालय के मानवीय संसाधनों व भौतिक संसाधनों की सहायता से प्राप्त किए जाने हैं । लक्ष्यों की शत प्रतिशत प्राप्ति आदर्श स्थिति है। वास्तव में लक्ष्य किस हद तक प्राप्त करने में सफल हुए, क्या बाधाएं आयीं, क्या परिवर्तन भविष्य में किया जाए, इन प्रश्नों का उत्तर तभी प्राप्त होगा जब संगठन में उचित मूल्यांकन पद्धति विकसित कर रखी हो । मूल्यांकन वर्ष पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है । छोटी से छोटी गतिविधि का भी मूल्यांकन किया जाना चाहिए । विभिन्न गतिविधियाँ योजनानुरूप चल रही है अथवा नहीं । मूल्यांकन में निम्न प्रश्नों का समावेश होना चाहिए-

1. किसी गतिविधि के किन-किन पक्षों का मूल्यांकन किया जाना है?
2. यह मूल्यांकन कौन करेगा?
3. मूल्यांकन प्रक्रिया क्या होगी?
4. मूल्यांकन से प्राप्त दत्तों का विश्लेषण कैसे करेंगे?
5. निष्कर्षों को कैसे प्रयुक्त करेंगे?

मिलर तथा स्पाल्डिंग ने मूल्यांकन प्रक्रिया के निम्न सोपान प्रस्तावित किए है -

1. मूल्यांकन की जाने वाली गतिविधि का चयन एवं परिभाषीकरण ।
2. मूल्यांकन उपकरणों का विकास ।
3. उपकरण द्वारा दत्तों का संग्रह ।
4. दत्तों का विश्लेषण एवं निष्कर्ष ।

संयुक्त राज्य शैक्षिक फाउण्डेशन ने मूल्यांकन के निम्न उद्देश्य प्रस्तावित किए-

1. संगठन का वर्ष के अन्त में उसकी कार्य प्रणाली का मूल्यांकन किया जाए ।
2. नवीन उद्देश्यों का निरूपण, पुराने उद्देश्य जो प्राप्त नहीं हो पाए उनकी पुनर्रचना, निरर्थक उद्देश्यों को हटा दिया जाए ।
3. संगठन में उद्देश्य प्राप्ति में अलग-अलग समूहों का कितना योगदान रहा ।

4. नए उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में नयी कार्य-योजना तैयार की जाए ।
5. संगठन के कार्यकर्ताओं के व्यावसायिक विकास को प्रोत्साहन दिया जाए ।
6. कार्यकर्ताओं में स्वस्थ मनोबल का विकास किया जाए ।

वैसे मूल्यांकन जितना आवश्यक है शैक्षिक संगठन में मूल्यांकन करना उतना ही कठिन है क्योंकि शैक्षिक संगठन के लक्ष्य या परिणाम काफी समय बाद प्राप्त होते हैं ।

शैक्षिक संगठनों के मूल्यांकन हेतु विभिन्न पद्धतियाँ प्रस्तुत की जाती है जैसे- साक्षात्कार, निरीक्षण अवलोकन, केस अध्ययन, रिकॉर्ड व परिणाम, सेल्फ अप्रेजल फार्म आदि ।

1. मूल्यांकन स्पष्ट व व्यापक हो व संगठन के समस्त पक्षों को समाहित किया जाना चाहिए ।
2. मूल्यांकन शैक्षिक उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में किए जाने चाहिए ।
3. मूल्यांकन सतत व निरन्तर होता रहना चाहिए ।
4. मूल्यांकन वस्तुनिष्ठ सहयोगी होना चाहिए ।

इस प्रकार किसी भी शैक्षिक संगठन की विभिन्न गतिविधियों का जितना गहन व सतत् मूल्यांकन होगा उतना ही संगठन विकसित होता चला जाएगा ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 "किसी भी गतिविधि का मूल्यांकन भावी विकास के लिए अवशयक है" स्पष्ट कीजिए |
Evalution of an activity is important for future prospects" Justity.

2 शैक्षिक संगठन में प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न मूल्यांकन पद्धतियाँ कौन सी है?
Which are the different techniques of evaluation in an educational organisation?

7.11 बजट बनाना (Budgeting)

कोई भी शैक्षिक संगठन चाहे छोटे स्तर का हो या बड़े स्तर का वित्तीय संसाधनों के अभाव में जीवित नहीं रह सकता । शिक्षा के लिए जो वित्त जुटाया जाता है उसे विभिन्न मदों में व्यय किया जाता है । आय व व्यय का ब्योरा व लेखा ही बजट कहलाता है । सामान्यतया एक वर्ष का आय के स्त्रोतों का विवरण तथा विभिन्न मदों में व्यय वितरण का लेखा एक शैक्षिक बजट में आता है ।

विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए वित्त की आवश्यकता होती है जैसे अध्यापकों के वेतन, विद्यालय भवन, खेल सामग्री, प्रयोगशाला, श्रव्य-दृश्य सामग्री, शैक्षिक उपकरण आदि । बजट में विभिन्न मदों में प्राथमिकता के आधार पर धन का वितरण इस प्रकार

करता है कि धन का अपव्यय न हो या ऐसा न हो जाए कि जहाँ वित्त की अधिक आवश्यकता थी वहाँ तो अपर्याप्त वित्त प्राप्त हो जाए । बजट विभिन्न क्रियाकलापों में वित्त वितरण पर नियन्त्रण रखने की यांन्त्रिकी है । बजट धन का लाभकारी, योजनाबद्ध, नियन्त्रित वितरण व्यवस्था है । बजट में आय-व्यय का विवरण, बचत, लागत आदि की जानकारी होती है ।

बजट की जानकारी (Knowledge of Budgeting) - शिक्षा विभाग शिक्षा का बजट तैयार करता है तथा वित्तीय विभाग धन उपलब्ध करवाता है । वित्त विभाग शिक्षा विभाग द्वारा चाही राशि में कटौती कर सकता है । धन का उपयोग स्वीकृत मदों पर पहले किया जाता है । माध्यमिक शिक्षा निदेशालयों में एक लेखा उप विभाग होता है जिसका मुखिया वरिष्ठ लेखा अधिकारी होता है ।

बजट-निर्माण प्रक्रिया (Budgeting Process) - विद्यालयों में बजट निर्माण का कार्य आकलन अधिकारी (Estimation Officers) करते है । माध्यमिक उच्च माध्यमिक विद्यालयों में आकलन अधिकारी संस्था प्रधान होता है । प्राथमिक व उच्च प्राथमिक विद्यालय का आकलन अधिकारी जिला शिक्षा अधिकारी द्वारा होता है । संस्था प्रधान भी अपने बजट का जिला शिक्षा अधिकारी को भेजते हैं । जिला शिक्षा अधिकारी प्राथमिक, उच्च प्राथमिक तथा संस्था प्रधान से प्राप्त बजटों का एकत्र कर शिक्षा निदेशालयों को भेज दिए जाते हैं । शिक्षा निदेशालय में ये आकलन विभिन्न मदों में कर राज्य सरकार को भेज दिया जाता है ।

विधान सभा में बजट शिक्षा मंत्री द्वारा प्रस्तुत किया जाता है तथा पारित होने पर शिक्षा निदेशक स्कूल, कॉलेजों, जिला शिक्षा अधिकारी को बजट विमोचन कर देते हैं ।

विद्यालयी बजट (School Budget) - विद्यालय बजट मात्र आय व व्यय का लेखा ही नहीं है अपितु यह एक शैक्षिक पूर्वानुमान होता है जो अग्रिम वर्ष के लिए बनाया जाता है । यह विद्यालय क्रियाकलापों को व्यवस्थित रूप देता है । इसका उद्देश्य अधिकाधिक शैक्षिक लाभांश प्राप्त करना है । कई बार वित्तीय वर्ष खत्म होने वाला होता है तब आनन-फानन में ऐसी चीजें खरीद लेते है जिनका उपयोग ही नहीं है अथवा अनुदान को उपयोग नहीं करते है तथा वित्तीय वर्ष के अन्त में व्ययगत (Lapse) हो जाता है ।

एक अच्छा बजट धन के दुरूपयोग को रोकने में सहायक होता है । यदि बजट बनाने का कार्य वित्तीय अधिकारी की परामर्श से किया जाए तो विद्यालय के विकास में सहायक होता है ।

विद्यालय में सामान्यतया निम्न प्रकार के व्यय होते है जिनका समावेश बजट में आ जाना चाहिए-

1. कर्मचारियों का वेतन व भत्ते ।
2. पुस्तकों व श्रव्य-दृश्य सामग्री पर व्यय ।
3. उपकरण व फर्नीचर ।
4. विद्यालय भवन, खेल मैदान व इनकी मरम्मत पर होने वाला व्यय ।
5. खेल सामग्री ।
6. मध्यान्ह भोजन ।
7. छात्रवृत्तियाँ ।
8. परीक्षा सम्बन्धी व्यय ।
9. बस व आवागमन के साधन ।

10. समाजोपयोगी कैम्प हेतु सामग्री ।

11. अन्य पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के लिए ।

प्रत्येक विद्यालय की भिन्न-भिन्न आवश्यकताएं होती है, उपरोक्त सूची में अन्य व्यय जोड़ने की सम्भावना है । ये व्यय आवर्ती तथा अनावर्ती वर्गों में विभाजित किए जा सकते हैं ।

बजट स्वीकरण- विद्यालय राज्य सरकार द्वारा निर्धारित फार्म पर बजट प्रस्ताव बनाते है । इसे प्रबन्ध समिति अथवा जिला शिक्षा अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है । अन्त में बजट प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा विचार-विमर्श के पश्चात् स्वीकरण कर लिया जाता है ।

बजट के स्वीकरण के पश्चात यह विद्यालय को पुन: भेजा जाता है, उसके पश्चात् क्रय प्रक्रिया प्रारम्भ होती है । व्यय सरकारी व गैर-सरकारी अनुदानित संस्थाओं में वित्तीय नियमों के अनुसार ही किए जाते हैं ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. विद्यालय बजट स्वीकरण की क्या प्रक्रिया है?
   What is the process through which budget passes?

7.12 अभिलेख संधारण
(Record Keeping and Maintenance)

"किसी भी संगठन के वित्तीय कार्य सम्पादन के विधिवित आलेखन,प्रस्तुतीकरण तथा अर्थपूर्ण बनाए की कला को लेखांकन कहते हैं ।"

विद्यालय में समय समय पर विभिन्न मदों में शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न उपकरणों व फर्नीचर, दरी, श्रव्य-दृश्य सामग्री आदि का क्रय किया जाता है । ऐसी सभी सामग्री का लेखा स्टॉक रजिस्टर में दर्ज होना चाहिए जिसमें सामान खरीदने की तारीख, कीमत, सामग्री का नाम (मॉडल नम्बर सहित) तथा खरीदने वाले व्यक्ति का नाम ब्योरा होना चाहिए । समय-समय पर (कम से कम वर्ष में एक बार) संस्था प्रधान द्वारा इस रजिस्टर का भौतिक सत्यापन किया जाना चाहिए तथा रजिस्टर में दर्ज प्रवेशिकाओं व वास्तव में उपलब्ध सामग्री में अन्तर पाया जाता है तो उसका जवाब मांगा जाना चाहिए । भौतिक सत्यापन को सरल करने के लिए कमरों का क्रम से सत्यापन करना चाहिए जिससे एक वस्तु दुबारा नहीं देखी जाए (Duplicate) । सत्यापित करते समय उपलब्ध सामग्री को पेन्सिल से/का निशान लगा देना चाहिए । लेखा संचालक से अपेक्षा की जाती है कि वह वित्तीय रिकार्ड नियमानुसार रखें ।

इसी प्रकार जो भी फीस ली जाए, उसकी रसीदें, काटी जाएगी व लेखा फीस रजिस्टर में रखा जाएगा । प्रत्येक विद्यालय में एक केश-बुक भी रखनी होती है । इसमें प्रतिदिन का आय-व्यय का ब्यौरा तथा उसमें सन्तुलन रखना होता है ।

विद्यालय में अचल सम्पति का विवरण रजिस्टर में स्पष्ट होना चाहिए । प्रत्येक विभाग की चल सम्पति का लेखा तथा जो वस्तुएं उपयोगी नहीं हो उनका नियमानुसार निस्तारण (right off) किया जाना चाहिए व निस्तारित वस्तुओं का ब्योरा रजिस्टर में दर्ज होना चाहिए ।

ऑडिटिंग (Auditing) - विद्यालय के वित्तीय आलेख का निरीक्षण ऑडिट कहलाता है । विद्यालय में समय-समय पर संस्था प्रधान द्वारा वित्तीय व्यवस्था को सुचारू बनाए रखने के लिए ऑडिट किया जाता है । कई बार एक वर्ष भर में एक बार सरकार की ओर से भी ऑडिट नियुक्त किए जाते हैं जो यह देखते हैं कि क्रय नियमानुसार किया गया या नहीं । सभी बिल व रसीदें जाँची जाती है तथा कहीं अपव्यय तो नहीं हुआ यह देखा जाता है ।

वस्तुएं क्रय करते समय निम्न बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए-

1. क्रय करने वाली वस्तुओं का निर्णय व प्राथमिकताएं
2. क्रय की जाने वाली वस्तु का शैक्षिक लाभांश के परिप्रेक्ष्य में निर्णय लेना ।
3. विद्यालयी बजट बनाने में क्रय की जाने वाली वस्तुओं का विस्तृत विवरण तथा अनुमानित लागत प्रस्तुत करना ।
4. क्रय की जाने वाली वस्तुओं के लिए सील लिफाफे में निविदाएं आमन्त्रित करना ।
5. निश्चित समय व तारीख को निविदाकर्त्ता के समक्ष निविदाएं खोलना व न्यूनतम निवेदित मूल्य वाले निविदाकर्ता से वस्तु का क्रय करना ।
6. क्रय की गयी वस्तुएं विशिष्ट विवरण के अनुसार होनी चाहिए ।
7. क्रय की गयी वस्तुओं का रजिस्टर में लेखा ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. स्टॉक रजिस्टर की क्या आवश्यकता है?
   Why is stock register needed?
2. ऑडिटिंग से क्या आशय हैं? ऑडिटिंग का क्या उद्देश्य है?
   What do you mean by auditing? What is the purpose of auditing?

7.13 सारांश
(Summary)

अध्यापक की भूमिकाएं)Roles of Teacher(– इस इकाई में छात्रों को यह जानकारी देने का प्रयास किया गया है कि अध्यापक का कार्य मात्र अध्यापन ही नहीं है अपितु उसे विभिन्न भूमिकाओं का निर्वाह करना पड़ता है । साथ ही उसे अपने कार्य को श्रेष्ठ स्तर का करने के लिए समय समय पर प्रशिक्षण की भी आवश्यकता होती है । अध्यापक की समस्याओं के समाधान के प्रति भी शिक्षा विभाग का ध्यान जाना चाहिए ।

विभिन्न विद्यालयी गतिविधियों का आयोजन (Organising Various School Activities) - वैसे तो पाठ्यचर्चा शब्द में विभिन्न गतिविधियाँ सम्मेलित है किन्तु बोर्ड व विश्वविद्यालय अंकतालिका में जिन गतिविधियों का उल्लेख किया जाता है वे पाठ्यक्रियाएं है तथा अन्य विद्यालयी गतिविधियाँ पाठ्येत्तर (Co-curricular activities) क्रियाएं कहलाती हैं जैसे प्रार्थना सभा, खेलकूद, विज्ञान क्लब, साहित्यिक व सांस्कृतिक गतिविधियाँ आदि ।

निर्णय करना (Decision Making) - किसी भी शैक्षिक संगठन का उत्थान संस्था प्रधान द्वारा सही निर्णय लेने की शक्ति पर निर्भर करता है । निर्णय स्वयं अथवा कार्यकर्ताओं के सहयोग से लिया जा सकता है ।

कार्य का संगठन एवं वितरण (Organisation & Distribution of work) - संस्था प्रधान द्वारा कार्यकर्ताओं की रूचियों व क्षमताओं के अनुरूप कार्य का वितरण किया जाना चाहिए।

समन्वय (Coordination) - विभिन्न गतिविधियों के बीच में उचित समन्वय के अभाव में भ्रम की स्थिति पैदा हो जाएगी ।

सहयोग (Co-operation) - कोई भी संगठन सहयोगियों के सहयोग से उन्नति करता है। लोकतान्त्रिक पद्धति से बेहतर सहयोग प्राप्त किया जा सकता है ।

सम्प्रेषण (Communication) - विभिन्न अधिकृतियों (स्तरों) पर सम्प्रेषण आवश्यक है। अस्पष्ट सम्प्रेषण भ्रमण की स्थिति पैदा करता है वहीं स्पष्ट सम्प्रेषण संगठन को उन्नत करने में मदद करता है ।

लेखांकन (Stock Register) - विद्यालय में होने वाले समस्त क्रय व खर्च का लिखित व्यौरा पारदर्शिता के लिए अति आवश्यक है ।

मूल्यांकन (Stock Register) - वर्ष पर्यन्त चलने वाली विभिन्न गतिविधियों की सफलताओं व कमी का सतत् आकलन ।

7.14 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

1. UNESCO, Report of the International Commission on Education for the Twenty First Century, Learning the treasure within, 1996
2. Govt. of India, The Report of Sec. Education Commission, Ministry of Education, New Delhi.
3. Govt. of India, The Report of Education Commission (1964-66) Ministry of Education, New Delhi
4. R.T Gregg, Administrative Behaviour in Schools Prentice Hall, Inc. Engle Wood Cliff, N.J. 1970.
5. Harbert A. Simon, Administration Behaviour, A Study of Decision Making Process in Administrative Organisation, New York, Macmilan Co.
6. George C. Homans,"The Human Group New York; Harcourt, Brace & Company.

7. John W. Walton, Administration and Policy Making in Education, Baltmore, John Hopkins Press.
8. S.N. Mukherji, Administration of Education, Planning and Finance, Baroda, Acharya Book Depot.
9. Hagman & Schwartz, Administration in Profile for School Executives, New York, Harper and Brother.
10. Van Millan and N.D. Spacing, The Public Administration of Americal School, Youkers, N.V. World Bank.
11. Oad, L.K., Shaikshik Prashasan, Rajasthan Hindi Granth Academy, Jaipur.

इकाई 8

विभिन्न निकायों के लिये क्रियाओं का आयोजन

Organising Activities For Various Bodies

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

8.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

8.1 क्रियाओ कां महत्व (Importance of Activities)

8.2 स्टाफ परिषद् (Staff Council)

8.3 अध्यापक अभिभावक परिषद् (Parent-Teacher Association)

8.4 विद्यार्थी परिषद् (Student Association)

8.5 पाठ्य सहगामी क्रियाएं (Co-curricular Activities)

8.6 परीक्षा संचालन (Conduct of Examination)

8.7 सामुदायिक सेवा (Community Services)

8.8 सारांश (Summary)

89 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

विभिन्न निकायों के लिये गतिविधियों का संगठन: स्टाफ परिषद, अध्यापक अभिभावक परिषद,विद्यार्थी परिषद, पाठ्य सहगामी क्रियाएँ, परीक्षाओं का संचालन ,सामुदायिक सेवाएं|

Organising Acitivities of various bodies: Staff Council, Parent-Teacher Association, Student Council, Co-curricular Activities, Conducting Examination, Community Services.

8.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इकाई की सम्प्राप्ति पर आप -

- विभिन्न निकायों के लिये आयोजित क्रियाओं के महत्व को समझ सकेंगे ।
- स्टाफ परिषद के निर्माण की प्रक्रिया व उसके कार्यों से अवगत हो सकेंगे ।
- अध्यापक अभिभावक परिषद के प्रति सम्यक् एवं संतुलित दृष्टिकोण बनाकर विद्यालय व समुदाय की सन्निकटता स्थापित कर सकेंगे ।
- विद्यार्थी परिषद के उद्देश्य, गठन व विद्यार्थी परिषद के संचालन में प्रयुक्त सावधानियों से अवगत हो सकेंगे ।
- पाठ्य सहगामी क्रियाओं की आवश्यकता व महत्व से अवगत होकर विभिन्न क्रियाओं का संगठन व आयोजन कर विद्यार्थीयों में उत्तरदायित्व व नेतृत्व की भावना का विकास कर सकेंगे ।

- परीक्षा संचालन की प्रक्रिया को वैज्ञानिक व प्रामाणिक बनाने हेतु अपना सक्रिय योगदान दे सकेंगे|
- विद्यालय व सामुदायिक संबंधों की वर्तमान स्थिति का अवलोकन कर उनको सशक्त बनाने का प्रयास कर सकेंगे ।

8.1 क्रियाओं का महत्व (Importance Of Activities)

वैज्ञानिक व तकनीकी विस्फोट के इस युग में समान राष्ट्र व वैश्विक स्तर पर तिव्रता से परिवर्तन हो रहे है। अत: इस युग की चुनौतियों का सामना करने हेतु हमें अपनी शिक्षण व्यवस्थाओं को भी परिवर्तित तथा विकसित करना होगा । क्योंकि शिक्षा बालक के संपूर्ण विकास का आधार है, शिक्षा के माध्यम से ही बालक की संवेदनशीलता तथा प्रत्यक्षीकरण की क्रिया में परिमार्जन होता है। अत: शिक्षा के विभिन्न निकायों के माध्यम से क्रियाओं का आयोजन होना चाहिए। इन विभिन्न क्रियाओं का प्रयोजन बालकों में व्यक्तिगत विभिन्नता एवं रूचियों की विविधता के पोषण हेतु समुचित अवसर प्रदान करना है और विद्यार्थीयों के संपूर्ण व्यक्तित्व के विकास हेतु प्रयास करना है। विभिन्न क्रियाओं के आयोजन से विद्यार्थी वर्ग की अन्तर्निहित शक्तियों और प्रतिभाओं को पोषण का अवसर मिलता है। अभिभावकों की अपेक्षाओं को पूर्ण करने में शिक्षकों व प्रशासकों को सहायता मिलती है। विद्यार्थीयों की उपलब्धियों द्वारा अभिभावकों को संतोष मिलता है। इन विभिन्न क्रिया-कलापों के माध्यम से शिक्षक अपनी मौलिकता के आधार पर विद्यार्थीयों के विकास में सक्रिय योगदान देते है तथा वे उनकी महत्वाकांक्षाओं, लक्ष्यों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति में भी सहायक होते हैं। शिक्षक उच्च परिणामों के लिये विद्यार्थीयों के बौद्धिक स्तर व कौशल क्षमता को उन्नत करने हेतु अध्ययन व अध्यापन की रूचिपूर्ण शैलियों को विकसित करते हैं।

विद्यालयों में आयोजित होने वाली विभिन्न क्रियाओं के माध्यम से विद्यार्थीयों की निष्पत्ति में सकारात्मक अभिवृद्धि होती है ।

8.2 स्टाफ परिषद (Staff Council)

शिक्षक संस्कृति के हस्तांतरण एवं संवर्धन का प्रमुख संवाहक है| शिक्षक ही अपनी शिक्षण प्रक्रिया के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को संस्कृति, बौद्धिक परम्पराएं और तकनीकी कौशल पहुंचाने का केन्द्र है। डॉ. पेरिस के अनुसार - "जिस श्रेणी के राष्ट्र के अध्यापक होंगे उसी श्रेणी का राष्ट्र होगा" इस तथ्य को मुदालियर कमीशन ने दोहराया" देश की पुन:रचना में अध्यापक एक मुख्य घटक है ।

प्रो. हुमायूं कबीर के अनुसार - "अच्छे अध्यापकों के बिना शिक्षा की सर्वोत्तम पद्धति भी सफल नहीं हो सकती । अच्छे अध्यापकों से शिक्षा पद्धति के दोषों को भी दूर किया जा सकता है।

"Without good teachers even the best system is bound to fail, with good teachers even the defects of a system can largerly be overcome."

यह सर्वथा सत्य है कि शिक्षा का पुननिर्माण है । अध्यापक के वैयक्तिक गुण उसकी शैक्षिक योग्यतायें, उसका व्यावसायिक प्रशिक्षण शिक्षा के स्तर को प्रभावित करता है । अध्यापक का दायित्व केवल कक्षा में पढ़ाना और विद्यार्थीयों को परीक्षा के लिये तैयार करना मात्र नहीं है वरन् उसे अन्य दायित्वों की पूर्ति भी करनी पड़ती है। अत: इन दायित्वों की पूर्ति हेतु स्टाफ परिषद् का निर्माण किया जाता है । जिससे कि स्टाफ परिषद् के समस्त सदस्य आपसी सहयोग के द्वारा उन विद्यार्थीयों के उन्नयन में अपना सक्रिय सहभागित्व दे सकें ।

स्टाफ परिषद् का निर्माण (Formation of Staff Council) - विद्यार्थीयों को समुचित शिक्षण प्रदान करने हेतु शिक्षकों की उपलब्धियों, योग्यताओं, क्षमताओं तथा गुणवत्ताओं के आधार कार्य करना आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है । अत: विद्यालय के प्रधानाध्यापक अपने शिक्षण स्टाफ परिषद का निर्माण करते है । जिनकी कार्य कुशलता और आपसी सहयोग पर प्रशासनिक संगठन की सफलता निर्भर करती है । स्टाफ परिषद के कार्य इतने संबंधित व एक दूसरे पर आश्रित है कि एक की निष्क्रियता का दूसरे पर निश्चित प्रभाव पड़ता है । स्टाफ परिषद ही विद्यालय में शिक्षक के उत्तरदायित्व (Accountability of a teacher in a School) तथा शिक्षक निष्पादन का आंकलन (Perfomance Appraisal of a Teacher) करती है ।

स्टाफ परिषद् के उद्देश्य (Objectives of a Staff Council) - स्टाफ परिषद के सभी सदस्य विद्यार्थीयों के संपूर्ण विकास को दृष्टि में रखकर निम्नांकित उद्देश्यों की पूर्ति करते है -

1. **विकासात्मक उद्देश्य (Developmental Objectives**) - विद्यालय में विभिन्न कक्षाओं में शिक्षण प्रक्रिया में सुधार हेतु अध्यापन कौशल का विकास, अनुदेशनात्मक प्रणाली का विकास, समुचित शिक्षण पद्धतियों का उपयोग एवं पाठ्यवस्तु को मनोवैज्ञानिक क्रम से व्यवस्थित किया जाता है।
2. **गुणात्सक उद्देश्य](Qualitative Objectives)** - इसमें उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था तथा उसका उपयोग, अध्यापन प्रक्रिया में सुधार तथा विद्यार्थीयों में सृजनात्मकता का विकास किया जाता
3. **नवाचार उद्देश्य (Innonative Objectives)** - इसमें अध्यापन के नये पक्षों को समझना तथा अध्यापन विधि में प्रयोग, नयी युक्तियों का प्रयोग तथा वैज्ञानिक ढंग से शिक्षण से संबंधित समस्याओं का समाधान किया जाता है ।
4. **संगठनात्मक उद्देश्य (Organizational Objectives) -** विभिन्न शैक्षिक समस्याओं की पहचान, निदान तथा उसका समाधान ढूंढने हेतु प्रधानाध्यापक-शिक्षक, शिक्षक-विद्यार्थी, शिक्षक-अभिभावक सबको संगठनात्मक दृष्टिकोंण अपनाना चाहिए ।

इस प्रकार से आज ज्ञान-विज्ञान के विस्फोटक युग में यदि स्टाफ परिषद् में सभी सदस्य इन उद्देश्यों को कार्यरूप में प्रयुक्त करें तो विद्यार्थीयों का भली प्रकार से विकास हो सकेगा और वे उनको अपने सच्चे मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार करेंगें ।

स्टाफ परिषद् के कार्य (Tasks of Staff Council) - स्टाफ परिषद् के प्रमुख कार्य है - शिक्षा-निर्धारण, शिक्षा योजना, शिक्षा संगठन, शिक्षा-निर्देशन, शिक्षा-विधियों का निर्धारण तथा शिक्षा पर्यवेक्षण स्टाफ परिषद् के समस्त सदस्य मिलकर यह प्रयास करते हैं कि शैक्षणिक प्रक्रिया के लक्ष्य प्रभावशाली ढंग से प्रप्ति हो सकें । विद्यार्थी विद्यालय के प्रभावी वातावरण में ज्ञान को व्यावहारिक परिस्थितियों में सीख सकें। स्टाफ परिषद् के कार्यों को सामान्यत: निम्नांकित ढंग से व्यक्त किया जा सकता है -

1. योजना बनाना (Planning) - स्टाफ परिषद् के द्वारा योजना बनाने में किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये किये जाने वाले कार्य, उसकी कार्यप्रणाली और सहयोगी व्यक्तियों, परिस्थितियों तथा सहायक सामग्री की रूपरेखा का निर्माण करना सम्मिलित है । शैक्षिक योजना में न केवल वर्तमान का ही ध्यान रखा जाता है बल्कि भविष्य की शिक्षा को भी ध्यान में रखते हुए योजना बनायी जाती है । योजना का आधार लोकतंत्रीय रखना चाहिए, जिसके अनुसार सभी सहयोगियों को स्वतंत्रतापूर्वक अपने मौलिक विचारों को अभिव्यक्त करने का पर्याप्त अवसर प्राप्त हो सकें । योजना का निर्माण करते समय इन तथ्यों पर भी ध्यान रखना चाहिए । निर्धारित योजना के लक्ष्यों को प्राप्त करने में कठिनाई उत्पन्न होने पर आवश्यकतानुसार संशोधन व परिवर्तन किया जाना संभव हो, जिससे

- योजना में उपलब्ध सभी संसाधनों का उपयोग किया जा सके ।
- शैक्षिक योजना वर्तमान स्थिति तथा भावी परिवर्तनों को ध्यान में रखकर बनानी चाहिए।

2. संगठन स्थापित करना (Organising) - स्टाफ परिषद् का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य योजना संगठन स्थापित करना होता है । संगठन से तात्पर्य उस ढांचे से है जो मानवीय तथा भौतिक संसाधनों द्वारा एक विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिये स्थापित किया जाता है । कार्य का विभाजन करना तथा विभाग को उपविभागों में विभाजित करना भी संगठन की प्रक्रिया के विभिन्न अंग होते है । स्टाफ परिषद् प्रधान को शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अधिक से अधिक लोगों अर्थात् अध्यापक, छात्र, अभिभावक एवं समुदाय को सम्मिलित करना चाहिए । विद्यालय के विभिन्न कार्यों के लिये सलाहकार-समितियों तथा विद्यालय की विशिष्ट सेवाओं के लिये समितियों का गठन किया जाना चाहिए । इस प्रकार से अच्छा संगठन वह है जिसमें संगठन के लक्ष्य प्रभावी ढंग से पूर्ण हो तथा स्टाफ में परस्पर स्नेह व सहयोग हो । स्टाफ परिषद् के सभी सदस्य अपने उत्तरदायित्व को समझें तथा समर्पण की भावना से कार्य सम्पादन करें ।

3. संचालन करना (Executing) - स्टाफ परिषद् का योजनानुसार कार्य का व कार्य को स्थूल व व्यावहारिक रूप देना ही संचालन कहलाता है । संचालन की क्रिया में तीन महत्वपूर्ण कार्य होते है यथा -

(अ) निर्देशन (Directing) - स्टाफ परिषद का महत्वपूर्ण कार्य निर्देशन देना है । यह निर्देशन कार्य की आवश्यकता, बालकों की रूचि तथा कार्य करने की क्षमता पर निर्भर करता है । इस प्रकार निर्देशन देना कोई सरल कार्य नहीं है । इसके लिये उच्च स्तर का योग्यतम ज्ञान, नेतृत्व शक्ति, दूरदर्शिता, अनुभव आदि का होना आवश्यक है ।

निर्देशन, स्टाफ परिषद् का महत्वपूर्ण कार्य है जो निर्णय को प्रभावित करता है, कार्य करने की सूचना प्रदान करता है तथा यह भी इंगित करता है कि कार्य को किस प्रकार से प्रारम्भ करना तथा समाप्त करना है ।

(ब) सामंजस्य स्थापित करना (Coordinating) - इस प्रक्रिया के अंतर्गत प्रशासन के विभिन्न भागों को संबंधित कर उनमें सामंजस्य या समन्वय स्थापित करना होता है । स्टाफ परिषद् शिक्षा संबंधी विभिन्न क्रिया-कलापों में परस्पर संबंध स्थापित करती है । इसके अलावा वह स्टाफ, विद्यार्थीयों एवं अभिभावक वर्ग में समन्वय स्थापित करती है । स्टाफ परिषद् का सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह है कि वह भौतिक तथा मानवीय शक्तियों का ठीक ढंग से प्रयोग करें जिससे शिक्षा के निर्धारित उद्देश्य की प्राप्ति हो सकें ।

(स) नियंत्रण कार्य (Controlling) - शैक्षिक क्रिया-कलाप जटिल होते है, उन्हें नियंत्रित करने के लिये कई प्रकार की युक्तियों एवं शक्तियों की आवश्यकता होती है । क्योंकि नियंत्रण के अभाव में किसी भी क्रिया को ढंग से करना असंभव होता है । उदाहरणार्थ समय विभाग चक्र के अभाव में विद्यालय का भली प्रकार से संचालन करना संभव नहीं हो पाता है । अत: स्टाफ परिषद् विद्यालय की सुव्यवस्था हेतु पहलुओं को यथा शिक्षण उद्देश्य, बजट, वेतन खाता, भवन, उपकरण, समय विभाग चक्र, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधियों आदि पर नियंत्रण रखती है ।

4. निष्पत्ति मूल्यांकन (Assessing Achievment) - निष्पति मूल्यांकन शैक्षिक प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण अंग है । स्टाफ परिषद् कार्य की निष्पत्ति के आधार पर विद्यार्थीयों की उपलब्धि का मूल्यांकन करती हैं । नियमित मूल्यांकन से छात्रों की कमजोरियों को दूर करने का प्रयास किया जाता है । उपलब्ध रिकार्ड के आधार पर त्रुटियों व कमियों के लिए उपचारात्मक शिक्षण का प्रावधान किया जाता है । इस प्रकार निष्पत्ति मूल्यांकन से विद्यार्थीयों में आत्मविश्वास व आत्मसंप्रत्यय का विकास होता है ।

5. अनुदेशन कार्यक्रम (Instructional Programme) - स्टाफ परिषद् का मुख्य लक्ष्य विद्यार्थीयों को प्रभावी अनुदेशन करना होता है । प्रभावी अनुदेशन प्रदान करने हेतु विद्यालय में शैक्षिक पर्यावरण सृजित होना चाहिए । अनुदेशन कार्यक्रम नियमित होना चाहिए । स्टाफ परिषद् के सदस्यों को इतना जागरूक होना चाहिए कि वे पुरानी शिक्षण विधियों एवं उपागमों की अच्छाइयों को अपनाते हुए नवीन शिक्षण प्रतिमानों, तकनीकों, दृश्य-श्रव्य साधनों, मल्टीमीडिया को भी अनुदेशन में प्रयुक्त करें ।

6. संसाधन विकास (Resource Development) - स्टाफ परिषद् के महत्वपूर्ण कार्यों में से एक प्रमुख कार्य उपलब्ध भौतिक व मानवीय संसाधनों को विद्यालयी लक्ष्यों के अनुरूप नियोजित करना है । परिषद् के सदस्य आवश्यकता होने पर समुदाय के संसाधनों विशेषज्ञों, सामुदायिक भवनों, अभिकरणों के संसाधनों का भी उपयोग करते है । इसका सुखद परिणाम यह होता है कि विद्यालय व समुदाय के अच्छे संबंध बनते है ।

प्रभावी विद्यालय प्रणाली में प्रधानाध्यापक समग्र स्टाफ के सहयोग से स्टाफ परिषद का निर्माण करता है। परिषद् के सदस्य परस्पर सहयोग से विद्यालय विकास के वास्तविक लक्ष्य तय करते हैं । ये लक्ष्य विगत सत्र के कार्यों के मूल्यांकन पर आधारित होते है । स्टाफ परिषद् के सामूहिक निर्णय एक स्वस्थ विद्यालय पर्यावरण को जन्म देते है जो विद्यार्थीयों की निष्पत्ति के लिये उत्तरदायी (Accountability) होते है । स्टाफ परिषद् के सदस्यों की पररपर समझ, समान लक्ष्य विद्यालय में आयोजित किये जाने वाले विभिन्न कार्यक्रमों की उत्कृष्टता के प्रति समर्पण के भाव उत्पन्न करते है तथा विद्यालय को श्रेष्ठता के स्तर पर पहुंचा सकते है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 स्टाफ परिषद के मुख्य उद्देश्य क्या है ?
What are the main objectives of Staff Counil ?

2 स्टाफ परिषद के प्रमुख कार्य क्या है ? संक्षेप में समझाये |
What are the main tasks of Staff Council? Discuss in brief.

3 "सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया का मूलाचार स्टाफ परिषद है |" इसकी व्याख्या कीजिए|
"Teachers is the pivot of whole educational activities" Explain it .

8.3 अध्यापक-अभिभावक परिषद (Teacher-Parent Council)

यह ऐसा संगठन है जिसमें वियलय में पढ़ने वाले छात्रों के अभिभावक और वहाँ के शिक्षक सदस्य होते हैं । यह एक ऐसे मंच का कार्य करता है 1 जहां दोनों घटक मिलकर पारस्परिक विचार विनिमय, सलाह एवं परामर्श द्वारा विद्यार्थीयों के प्रति अपने-अपने दृष्टिकोंण से एक दूसरे को अवगत कराते हैं, विद्यार्थीयों की प्रगति की समीक्षा करते हैं तथा उनकी समस्याओं का मिलकर समाधान करते हैं ।

अध्यापक अभिभावक परिषद् की आवश्यकता (Need for Teacher-Parent Council) -

- अध्यापक के लिये यह आवश्यक है कि वह विद्यार्थीयों की शिक्षा में गुणवत्ता लाने के लिये अभिभावकों का सहयोग ले क्योंकि विद्यार्थीयों अपना अधिकांश समय परिवार में व्यतीत करता है और समय-समय पर अपने माता-पिता से राय ग्रहण करता है ।
- विद्यार्थीयों के शैक्षिक विकास हेतु शिक्षकों व अभिभावकों की कुछ अपेक्षायें होती है यदि इन अपेक्षाओं में भिन्नता हो जाती है तो विद्यार्थीयों के लिये समस्या उत्पन्न हो जायेगी । इस कारण यह आवश्यक है कि इन समस्याओं में परस्पर सामंजस्य स्थापित करने की दृष्टि से अध्यापक-अभिभावक परिषद् की स्थापना की जायें ।
- शिक्षक अभिभावकों की राय के आधार पर विद्यार्थीयों की योग्यताओं, क्षमताओं व रूचियों की जानकारी प्राप्त कर सकता है और इनसे अवगत होकर वह उसके समवर्द्धन हेतु उसे समुचित निर्देशन प्रदान कर सकता है ।
- अध्यापक - अभिभावक परिषद् के द्वारा विद्यालय व समुदाय में सन्निकटता स्थापित कर सकना संभव होता है । अभिभावक विद्यालय की स्थिति व प्रगति की जानकारी समाज को देते हैं और विद्यालय अभिभावकों की योग्यताओं व विचारों का लाभ समाज के सदस्य के रूप में उठा सकते हैं।
- जब अभिभावकों द्वारा विद्यालय की प्रगति व श्रेष्ठता के विषय में विद्यालय के स्टाफ व प्रधानाध्यापक की प्रशंसा की जाती है तब शिक्षक उत्तम कार्य करने के लिये

अभिप्रेरित होते हैं तथा विद्यालय के स्तर को और ऊंचा उठाने के लिये प्रयासरत हो जाते हैं ।

अध्यापक अभिभावक परिषद् के क्षेत्र
(Areas of Teacher Parent Council)

चित्र संख्या : 8.1

अभिभावक-अध्यापक परस्पर मिलकर उपरोक्त वर्णित बिन्दुओं के क्षेत्र में अपना सक्रिय योगदान दे सकते है ।

अध्यापक अभिभावक परिषद् के कार्यक्रम
(Programme of Teacher-Parent Council)

- **अध्यापकों द्वारा छात्रों के घर जाना (To visit the home of students) -** अध्यापकों को बिना किसी भेदभाव के आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए विद्यार्थीयों के घर जाना चाहिए । इससे अध्यापकों को विद्यार्थीयों की सामाजिक व आर्थिक स्थिति का वास्तविक ज्ञान हो जाता है। विद्यार्थी चिन्तन करने लगते है कि यदि मैं विद्यालय में कुछ गलत कार्य करूँगा उसकी जानकारी मेरे माता-पिता को हो जायेगी । इसके साथ ही शिक्षक शैक्षिक अपव्यय व अवरोधन के संबंध में भी माता-पिता को उचित परामर्श दे सकते हैं ।
- **अभिभावकों का नियमित रूप से विद्यालय जाना (Parent should regularly visit the school) -** विद्यालय का यह दायित्व है कि वह अभिभावकों को मिलने के लिये उचित समय व सुविधा प्रदान करे । कुछ विद्यालय प्रतिमाह (Parents-Teachers Meeting) अभिभावक-अध्यापक मीटिंग रखते है । जिसमें विद्यार्थीयों की प्रगति व व्यवहार के संबंध में विचार-विमर्श किया जानता है । अध्यापक द्वारा प्रदत्त सूचना को अभिभावकों को आलोचनात्मक दृष्टि से न लेकर सुधारात्मक दृष्टिकोंण से लेना चाहिए ।
- **शैक्षिक कार्यक्रम व अभिभावक सहकारिता (Educational Programme and Parents Participations) -** शैक्षिक कार्यक्रम को सफलता से संचालन हेतु यह आवश्यक है कि अभिभावकों को शैक्षणिक कार्यक्रम परामर्श समिति में प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाये । अभिभावकों द्वारा दिये गये सुझावों की अनुपालना की जायें । साथ ही

विभिन्न कौशलों में दक्ष अभिभावकों को विद्यार्थीयों को प्रशिक्षण देने हेतु आमंत्रित किया जायें ।

- **अभिभावक समूहों में शिक्षक सहभागिता (Teachers Participation in Parents Association) -** अभिभावक समूहों के गठन व संचालन आदि में शिक्षकों को सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए । इन समूहों का विशेष प्रयोजन यह होना चाहिए कि वे विद्यालय के कल्याणकारी कार्यक्रमों में अपना सक्रिय योगदान दे सकें । यह संघ सामुदायिक मेंले, सांस्कृतिक कार्यक्रमों आदि को व्यवस्थित कर सकता है ।
- **अभिभावक दिवस का आयोजन (Organise of Parents Day) -** समुदाय का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिये यह आवश्यक है कि विद्यालय में अभिभावक दिवस मनाया जाये । यह दिवस इस उद्देश्य से मनाया जाये कि अध्यापकों व अभिभावकों में मधुर संबंध स्थापित किये जा सकें । अभिभावक विद्यालय की शैक्षिक प्रगति में योगदान दें सकें तथा विद्यालय के प्रति आस्था उत्पन्न कर सकें । इस दिवस का आयोजन करते समय निम्नांकित बिन्दुओं पर ध्यान रखा जाना चाहिये:-

– अभिभावकों का पूर्ण सत्कार व सम्मान करना ।
– बालकों की प्रगति को ध्यान में रखकर उनकी प्रशंसा करना ।
– समस्यात्मक बालकों के प्रति सुधारात्मक व सकारात्मक दृष्टिकोण रखना ।
– अभिभावकों द्वारा सुझाई गई समस्याओं पर तुरन्त ध्यान देना ।
– विद्यालय की प्रगति के संदर्भ में अभिभावकों का सहयोग लेना ।

अध्यापक अभिभावक परिषद् का महत्व (Importance of Teacher-Parent Council) - अध्यापक -अभिभावक परिषद् में निम्नांकित बिन्दु विचारणीय है, जो अभिभावक-शिक्षक सहयोग की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है -

- अध्यापक-अभिभावक परिषद् में विद्यार्थीयों के अनुत्तीर्ण होने की समस्या पर विचार विमर्श किया जा सकता है । अनुत्तीर्ण होने पर बालक को मानसिक कष्ट होता है और हीन भावना उत्पन्न होती है । यशपाल समिति ने संस्तुति की थी कि विद्यार्थीयों को अनुत्तीर्ण नहीं किया जाना चाहिए । इस विषय पर चिंतन करने हेतु अभिभावक-शिक्षक दृष्टि से कमजोर बालकों के लिए जिससे शैक्षिक दृष्टि से कमजोर बालकों के लिए नैदानिक व उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जा सकें ।
- विद्यार्थीयों के स्वास्थ्य, पालन-पोषण आदि के संबंध में विचार-विमर्श कर सकते है । अध्यापक-अभिभावक परिषद् विद्यार्थीयों की शैक्षिक उपलब्धि पर भी विचार कर सकती है ।
- अध्यापक-अभिभावक परिषद् बढ़ता छात्र-असंतोष, छात्र आदोलन उनकी बढ़ती आवश्यकताएं, अनुशासन आदि समस्याओं पर भी विचार-विमर्श कर सकती है ।
- शिक्षा के सार्वभौमीकरण का लक्ष्य बिना अभिभावकों के सहयोग के पूर्ण नहीं हो सकता है । अध्यापक-अभिभावक परिषद् इसकी योजना, कार्यविधि आदि पर चिंतन कर सकती है ।
- शैक्षिक निर्देशन, समस्याग्रस्त बालकों पर विचार, जीवनमूल्यों पर विचार आदि विषय भी अध्यापक-अभिभावक परिषद् में विचारणीय है ।

- अध्यापक-अभिभावक परिषद् विद्यार्थीयों पर पाठ्य-पुरत्तकों के बढ़ते बोझ की समस्या पर विचार

इस विषय में सर्वोदयी विचारक श्री मन्नारायण ने कहा है ' 'भारत में शिक्षा की पुनर्रचना जैसे महत्वपूर्ण कार्य में प्रत्येक स्तर पर अभिभावकों द्वारा सक्रिय रूप से भाग लेना एक आवश्यक कदम समझा जा रहा है । प्रारम्भिक स्तर से ही माता-पिता को अपने बच्चों की उन्नति हेतु उचित ध्यान देना चाहिये । इसके लिये अध्यापक व अध्यापक में घनिष्ठ संबंध आवश्यक है । शैक्षिक संस्थाओं के प्रधानों को विद्यार्थीयों के व्यवहार व अनुशासन के निर्माण के लिये अभिभावकों की सहायता लेनी चाहिए । वास्तव में प्रत्येक परिवार वास्तविक रूप से एक आधारभूत शैक्षिक इकाई के रूप में विकसित किया जाना चाहिए ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. अध्यापक अभिभावक परिषद से आप क्या समझते है?
   What do you understand by Teacher-Parent Council ?
2. विद्यालयों में अध्यापक अभिभावक परिषदों की क्या अवश्यकता है ? विवेचना कीजिए|
   What is the need of Teacher-Parent Council in school ? Discuss
3. अध्यापक अभिभावक परिषद का क्या महत्व है ? विद्यालयी बालकों के लिये यह किस प्रकार से महत्वपूर्ण है ?
   What is the importance of Parent -Teacher Council?How it is useful for school children?
4. अध्यापक-अभिभावक परिषद पर एक संक्षिप्त निबंध लिखिए|
   Write a brief essay on Parent-Teacher Council.

8.4 विद्यार्थी परिषद (Student Council)

विद्यालय में आयोजित होने वाले विभिन्न क्रिया-कलापों में विद्यार्थी परिषद् का बहुत महत्वपूर्ण स्थान- है । इस क्रिया के द्वारा विद्यार्थी को स्वशासन का प्रशिक्षण मिलता है । विद्यार्थी अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों का समुचित ज्ञान प्राप्त करते है । अत: विद्यार्थी-परिषद् के संगठन एवं संचालन द्वारा विद्यार्थीयों को नागरिकता की शिक्षा प्राप्त होती है यह विद्यालय में अनुशासन स्थापित करने में बहुत सहायक है ।

विद्यार्थी परिषद् को विभिन्न विद्यालयों में विभिन्न नामों से पुकारा जाता है । जैसे- विद्यार्थी संघ, विद्यार्थी पार्लियामेंन्ट, विद्यार्थी स्वशासन संगठन आदि । सन् 1955 में "सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ एजूकेशन" में विद्यार्थी-स्वशासन पर आयोजित सेमीनार में निर्णय लिया गया कि विद्यालय में एक 'विद्यालय सभा' होनी चाहिए, जिसका निर्माण विद्यार्थीयों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों तथा विनियुक्त सदस्यों (Co-opted Members) द्वारा हो । स्वतंत्रता के पश्चात्

देश में प्रजातंत्रात्मक प्रणाली को अपनाया गया और विद्यालयों के वातावरण में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन आया । इस काल में गठित विभिन्न शिक्षा आयोगों ने विद्यालयों में विद्यार्थी-समितियों (स्व-शासन) की स्थापना पर बल दिया । इससे विद्यालय के प्रशासन में विद्यार्थी का सहयोग आवश्यक माना जाने लगा ।

छात्र स्व-शासन का अर्थ है कि विद्यालय प्रबंध के लिये इस प्रकार की प्रणाली को अपनाया जाय । जिसमें छात्र अधिक से अधिक भाग ले सकें, और उसके प्रबंध का उत्तरदायित्व अपने कन्धे पर उठा सके ।

गुड के शिक्षा शब्द कोष (Good Dictionary of Education) में स्वशासन की परिभाषा इस प्रकार से प्रस्तुत की गयी है - "छात्र स्व-शासन समस्त विद्यार्थीयों में से स्वयं विद्यार्थीयों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा विद्यालय में प्रबंध एवं आचरण संबंधी मामलों का विनिमय करना है ।"

विद्यार्थी परिषद् के उद्देश्य (Objectives of Student Council) - विद्यार्थी परिषद की स्थापना के निम्नांकित उद्देश्य है, जिनसे विद्यार्थी एवं विद्यालय दोनों ही लाभान्वित होते हैं -

- **आदर्श नागरिकता का विकास (Development of ideal Citizenship)** - विद्यार्थी परिषद् का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थीयों में आदर्श नागरिकता का विकास करना है । इसके माध्यम से विद्यार्थीयों को प्रजातन्त्रात्मक प्रणाली का ज्ञान कराया जाता है ।
- **नेतृत्व के गुणों का विकास (Development of Leadership quality) -** विद्यार्थी परिषद् का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य विद्यार्थीयों में नेतृत्व शक्ति का विकास करना है । ये विद्यालय में विद्यार्थी परिषद् के सदस्य बनकर अपनी प्रतिभा का परिचय देने का प्रयास करते है तथा अपने साथियों के मध्य नेतृत्व करने की प्रतिभा का परिचय देते है ।
- **उत्तरदायित्व निभाने की क्षमता का विकास (Development of Feelings of Responsibility) -** विद्यार्थी परिषद् का संचालन करके विद्यार्थीयों में उत्तरदायित्व निभाने की क्षमता का विकास होता है । वे उनको सौंपे गये कार्यों को ठीक प्रकार से पूरा करने का प्रयास करते है । इस प्रकार से विद्यार्थी परिषद् के माध्यम से उनमें उत्तरदायित्व निभाने की क्षमता का विकास होता है ।
- **आत्म-नियंत्रण की भावना का विकास (Development of feeling of Self control) -** विद्यार्थी परिषद् के माध्यम से बालकों में आत्मनियंत्रण की भावना का विकास होता है । छात्र समझ और धैर्य से छात्र-संघ के नियमों का पालन करते है तथा अनुशासन के महत्व को समझते हैं । वे अपने साथियों को भी आत्मनियंत्रण की भावना का विकास करने हेतु अभिप्रेरित करते है ।
- **सहयोग की भावना का विकास (Development of Feeling of Co-operation) -** विद्यार्थी परिषद् विद्यार्थीयों को परस्पर सहयोग के महत्व का भी ज्ञान कराता है । वे परस्पर मिलकर कार्य करना सीखते हैं । विभिन्न समितियों का संचालन करते समय उन्हें यह ज्ञान होता है कि बिना परस्पर सहयोग के कोई कार्य ठीक प्रकार से नहीं हो सकता ।

- **संगठनकर्ता के गुणों का विकास (Development of Qualities of Organizer) -** विद्यार्थी परिषद् विद्यार्थीयों को संगठन करने की कला में दक्ष करता है । विद्यार्थी स्वयं विभिन्न पाठ्य-सामग्री क्रियाओं का संचालन कर संगठन और संचालन की शिक्षा प्राप्त करते हैं ।
- **नैतिक गुणों का विकास (Development of Moral Qualities)** - इससे विद्यार्थीयों के विभिन्न नैतिक गुणों का विकास होता है । विभिन्न नैतिक गुणों जैसे कर्तव्य परायणता, सहानुभूति, सद्भावना, धैर्य, ईमानदारी, सहनशीलता तथा निष्पक्षता आदि गुणों के विकास में छात्र परिषद् का विशेष योगदान रहता है ।
- **अध्यापकों-विद्यार्थीयों के पारस्परिक संबंधों में मधुरता (Healthy Relationship Between Teachers and Students)** - विद्यार्थी परिषद् की अधिकांश क्रियाएं अध्यापकों के मार्ग-दर्शन में आयोजित होती हैं । अत: जो छात्र अध्यापकों के संपर्क में आते है वे उनके गुणों व विशिष्टताओं से अवगत होते है एवं उनके पारस्परिक संबंधों में भी सुधार व मधुरता आती है ।
- **अनुशासन की समस्या का समाधान (Solutions of Problems related to Discipline) -** समुचित ढंग से संचालित स्व-शासन विद्यालय में अनुशासन की समस्या को जन्म ही नहीं लेने देता है । छात्र-परिषद् के सदस्य विद्यालय में अनुशासन स्थापना का उत्तरदायित्व स्वयं अपने ऊपर अनुभव करते हैं अत: वे ऐसा कोई भी कार्य नहीं होने देते, जिससे विद्यालय में अनुशासनहीनता की समरया उत्पन्न हो ।
- **विद्यार्थी परिषद् का संगठन (Organization of Student Council)** - स्वशासन को व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिये विद्यालय में एक छात्र-परिषद् होनी चाहिए, जिसके सदस्य विद्यार्थीयों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि तथा विनियुक्त सदस्य (Co-opted Members) हों । विनयुक्त सदस्यों की नियुक्ति अध्यापकों के माध्यम से हो । विद्यालय सभा के अधीन 5 मंडल हो, जिनके सदस्यों का निर्वाचन विद्यालय सभा द्वारा किया जायें । इन सदस्यों को निम्नलिखित उत्तरदायित्व सौंपे जायें-

1. अनुशासन
2. खेलकूद तथा व्यायाम
3. स्वास्थ्य संबंधी क्रियाऐं-स्वच्छता तथा पौष्टिक आहार
4. सामाजिक कल्याण और उससे संबंधित क्रियाएं जैसे-साक्षरता प्रसार, समाज-सेवा, बाढ़-पीड़ितों की सहायता, शरणार्थियों की सहायता ।
5. पाठ्य-सहगामी क्रियायें-साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा खेलकूद की प्रतियोगिताएं शैक्षणिक भ्रमण आदि ।

विद्यार्थी परिषद् के संचालन में प्रयुक्त सावधानियां (Precautions for Functioning of Student Council) - विद्यार्थी परिषद् के संचालन में निम्नलिखित सावधानियों को प्रमुख रूप से ध्यान में रखा जाये |

- विद्यार्थी परिषद् के हिसाब-किताब की समय-समय पर जांच की जायें ।

- संबंधित अध्यापकों को अपना दृष्टिकोंण सहानुभूति और सहयोग की भावना को ध्यान में रखकर रखना चाहिए । उन्हें प्रजातंत्रात्मक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए ।
- प्रधानाध्यापक को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि छात्र परिषद् किसी राजनैतिक दल के प्रभाव में न आ जाये।
- विद्यार्थी परिषद् का स्वरूप विद्यालय की आवश्यकता के अनुरूप हो ।
- विद्यार्थी परिषद् के चुनाव में किसी प्रकार का पक्षपात नहीं होना चाहिए । किसी वर्ग व जाति विशेष को महत्त्व नहीं देना चाहिए ।
- विद्यालय की ओर से छात्र-परिषद् को पर्याप्त सहायता प्रदान की जाये ।
- परिषद् के सदस्यों को उत्साहित करने के साथ-साथ उनको उत्तम कार्यों को करने के लिये प्रोत्साहित भी किया जाये ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. विद्यार्थी परिषद् से आप क्या समझते है?
   What do you understand by student Council?
2. विद्यार्थी परिषद् के मुख्य उद्देश्य क्या है?
   What are the main objectives of Student Council?
3. विद्यार्थी परिषद् का संगठन किस प्रकार से किया जाता है? विवेचना कीजिए ।
   How is the student Council organized?Discuss.
4. विद्यार्थी परिषद् के संचालन में कौन सी सावधानियाँ प्रयुक्त करनी चाहिए?
   Which precautions should be taken for proper functioning of Student Council?

8.5 पाठ्य सहगामी क्रियाएँ (Co-curricular activities)

विद्यार्थीयों के व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास के लिये पाठ्यगामी क्रियाओं के साथ पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का समावेश होना आवश्यक है । विद्यार्थीयों के विकास को प्रभावी व सकारात्मक गति प्रदान करने के लिये विद्यालय को महत्वपूर्ण गति प्रदान करने के लिये पाठ्य सहगामी क्रियाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है । विद्यालय में न केवल शैक्षिक क्रियाऐं ही होती है बल्कि सह-शैक्षिक क्रिया-कलापों को भी सुचारू रूप से चलाना आवश्यक होता है । ये सह-शैक्षिक क्रियाएँ पाठ्य सहगामी क्रियाओं के नाम से भी जानी जाती है । पाठ्य सहगामी क्रियाओं से अभिप्राय उन क्रियाओं से है जिनके सहयोग से शिक्षण कार्य एवं विद्यालय का वातावरण सजीव हो उठता है । ये क्रियाऐं विद्यार्थीयों की मूल प्रवृत्तियों का शोधन कर उसे सामाजिकता तथा नैतिकता से प्रिपूरित कर संस्कारित करती है । हरबर्ट स्पेन्सर के अनुसार, "बालक में अतिरिक्त ऊर्जा होती है जो प्रकृति प्रदत्त होती है । इस ऊर्जा या शक्ति को सकारात्मक दिशा में अग्रसर

करना उचित है । यही कारण है कि वर्तमान में पाठ्यगामी व पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को एक-दूसरे का पूरक माना जाता है जिससे बालक का संतुलित विकास हो।"

माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट में पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के संबंध में लिखा है कि - "ये विद्यालय की गतिविधियों का एक विशेष अंग है, क्योंकि पाठ्यक्रम का उचित प्रबंध अत्यन्त सावधानीपूर्वक होना आवश्यक है जिससे उसके संचालन द्वारा योग्यता की मात्रा में समुचित विकास हो जाता है ।"

अत: विद्यार्थीयों में स्वस्थ दृष्टिकोण के विकास हेतु अध्ययन के साथ-साथ कुछ ऐसी क्रियाओं का संगठन व संचालन किया जाना आवश्यक होता है जो उनके शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व नैतिक विकास में सहायक हो सके तथा जिनमें विद्यार्थी स्वेच्छा से भाग लेकर अनुशासित, संयमित, श्रमशील, समाज सेवा की भावना से ओत-प्रोत तथा देश प्रेम के प्रति निष्ठाभाव से युक्त नागरिक के रूप में विकसित हो सकें ।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं का महत्व (Importance of Co-curricular activities) - शिक्षा का लक्ष्य विद्यार्थीयों की अन्तर्निहित शक्तियों एवं क्षमताओं को श्रेष्ठतम रूप में विकसित करना है । अत: बालक के पास जो भी प्रतिभा व विशिष्टता है उसे उभरने के अवसर मिलने चाहिए । अत: पाठ्यसहगामी क्रियाओं द्वारा विद्यार्थीयों को यह अवसर प्रदान किये जाते हैं । पाठ्य सहगामी क्रियाओं को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है - 1 शारीरिक व 2. सृजनात्मक, शारीरिक से अभिप्राय ऐसी क्रियाओं से है जिनका संबंध मूलत: शरीर सौष्ठव और स्वास्थ्य से है जैसे खेलकूद, जिमनैस्टिक एन.सी.सी. आदि सृजनात्मक प्रवृत्तियों से अभिप्राय साहित्यिक, सांस्कृतिक, कला-कौशल संबंधित क्रियाओं से है ।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (Secondary Educational Commision) ने अपने प्रतिवेदन में लिखा है - “They are an integral part of the activities of a school as its curricular work and their proper Organization needs just as much care and forethought”

ये क्रियाऐं विद्यालयी पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग है । इनके उपयुक्त संचालन के लिये काफी ध्यान देने की तथा दूर-दृष्टि की आवश्यकता है । यदि इनका ठीक प्रकार रो संचालन किया जाय तो ये विद्यार्थीयों में अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण गुणों और अभिवृत्तियों का विकास कर सकती है ।

पाठ्य–सहगामी क्रियाओं से विभिन्न गुणों का विकास

चित्र संख्या : 8.2

उपरोक्त चित्र से स्पष्ट होता है कि विद्यालय में सहगामी क्रियाओं का बहुत महत्व है, इनके आयोजन से व्यक्तित्व का संतुलित तथा सर्वागीण विकास संभव है । इस प्रकार पाठ्य सहगामी क्रियाएं पाठ्यक्रम में बाधक न होकर उसकी पूरक तथा आवश्यक अंग है । पाठ्यसहगामी क्रियाओं के माध्यम से बालकों में निम्नांकित गुणों का विकास होता है -

- संतुलित व्यक्तित्व का विकास ।
- उत्प्रेरणा में सहायक ।
- करके सीखने के सिद्धान्त का व्यावहारिक प्रयोग ।
- सृजनात्मकता का विकास ।
- अच्छी आदतों का निर्माण ।
- सामाजिकता व नागरिकता का प्रशिक्षण ।
- समय का सदुपयोग ।
- नेतृत्व के गुणों का विकास ।
- अनुशासन का विकारा ।
- मूल प्रवृत्तियों का शोधन एवं मार्गान्तीकरण ।
- नैतिक मूल्यों का विकास ।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संगठन के सिद्धान्त (Principles for the organization of co-curricular activities) - पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का संगठन एवं संचालन उचित ढंग से किया जाना चाहिए तभी इन प्रव्रत्तियों को अधिक प्रभावकारी उपयोगी एवं सुलभ बनाया जा सकता है । अत: विद्यालय में सहगामी क्रियाओं के संगठन, व्यवस्था तथा प्रशासन के समय निम्नांकित सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए |

रूचि का सिद्धान्त	विविधता का सिद्धान्त	रचनात्मकता का सिद्धान्त	सहयोग का सिद्धान्त	निर्देशन का सिद्धान्त	निरीक्षण का सिद्धान्त

चित्र संख्या : 8.3

- रूचि का सिद्धान्त (Principle of interest)
- विविधता का सिद्धान्त (Principle of Variety)
- रचनात्मकता का सिद्धान्त (Principle of Constructiveness)
- सहयोग का सिद्धान्त (Principle of Co-operation)
- निर्देशन का सिद्धान्त (Principle of Guidance)
- निरीक्षण का सिद्धान्त (Principle of Supervision)

पाठ्य सहगामी क्रियाओं द्वारा विद्यार्थीयों में विभिन्न रूचियों का विकास किया जाता है । रूचि वह उत्प्रेरणात्मक बल है-जो किसी व्यक्ति, वस्तु या क्रिया की ओर ध्यान आकर्षित करती है । अत: इन क्रियाओं के माध्यम से इस बात का पता चल जाता है कि विद्यार्थीयों की

वास्तविक रूचियां क्या हैं? रूचियों का पता चल जाने पर उनकी रूचि के अनुसार पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन किया जा सकता है ।

– पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संगठन में विविधता (Variety) के सिद्धान्त को अवश्य अपनाना चाहिये । जिससे अधिकांश विद्यार्थी व्यक्तिगत विभिन्नता के आधार पर अपनी इच्छा, रूचि एवं योग्यता के अनुसार इन क्रियाओं में सहभागित्व प्रस्तुत कर सकें ।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (Report of the Secondary Education Commision) के अनुसार - 'In the planning of these activities,it is important to remember that they should be as varied as like resources of the school permit……."

– पाठ्य सहगामी क्रियाओं के माध्यम से बालक अनेक रचनात्मक कार्य करते है जिनसे उनकी सृजनात्मक प्रतिभा का परिचय मिलता है । शिक्षक तथा विद्यार्थीयों की एक कमेंटी निर्मित की जाये, जो इन प्रवृत्तियों के संबंध में नीति-निर्धारण, योजना-निर्माण एवं आवश्यक व्यवस्था के संबंध में विद्यार्थीयों को सुझाव दें ।

– सहगामी क्रियाओं के संगठन में विद्यार्थीयों का परामर्श लिया जाना चाहिये । अध्यापक इन क्रियाओं के क्रियान्वन में विद्यार्थीयों को स्वशासन प्रदान करें । जहां तक हो सके छात्र इन क्रियाओं का संचालन करें । विद्यार्थीयों का सहयोग (Students Co-operation) सक्रिय होना चाहिए ।

– शिक्षकों को इन क्रियाओं का उत्तरदायित्व उनकी योग्यता एवं रूचि को ध्यान में रखते हुए दिया जायें । जो भी शिक्षक संबंधित क्रिया को करने वाले विद्यार्थीयों की क्षमता में विश्वास रखे एवं समय-समय पर उनका पथ-प्रदर्शन करें ।

– प्रधानाध्यापक को समय-समय पर स्वयं पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का निरीक्षण करते रहना चाहिए । निरीक्षण (Supervision) उत्साहवर्द्धक तथा पथप्रदर्शक के रूप में होना चाहिए ।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं का संगठन (Organization of Co-curricular Activities) - विद्यार्थीयों के सर्वागीण विकास हेतु नितांत आवश्यक है कि प्रत्येक विद्यालय में कुछ पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाओं की व्यवस्था होनी चाहिए । यदि इन विभिन्न क्रियाओं का संगठन विधिवत् ढंग से कर दिया जाय तो सुखद व लाभप्रद परिणाम प्राप्त हो सकते हैं । प्रशासनात्मक दृष्टि से सहगामी क्रियाओं के संगठन में निम्नांकित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए -

- केन्द्रीकरण (Centralization)
- पर्यवेक्षण (Supervision)
- सहभागित्व (Participation)
- स्थान तथा सदस्यता (Place and Membership)
- वित्त व्यवस्था (Financial Arrangement)

- **शैक्षिक मूल्यांकन (Educational Evalution) - केन्द्रीकरण के अंतर्गत निम्नांकित बिन्दुओं का भी ध्यान रखना चाहिए-**

- प्रत्येक सहगामी क्रिया का संचालन केन्द्रीय समिति द्वारा किया जाये । केन्द्रीय समिति में विद्यार्थीयों के प्रतिनिधि और कुछ अध्यापक होने चाहिए ।
- विद्यार्थी अनुभवी अध्यापकों के निर्देशन में पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का संचालन करें ।
- केन्द्रीय समिति द्वारा काम का पूरा हिसाब-किताब रखा जाये ।

- **पर्यवेक्षण में इस संबंध में निम्नांकित लक्ष्यों की ओर ध्यान देना चाहिए -**

- पाठ्य सहगामी क्रियाओं के आयोजन में पूर्ण नियंत्रण के स्थान पर निर्देशन को अधिक महत्व प्रदान किया जाये।
- जहाँ तक संभव हो प्रत्येक अध्यापक किसी न किसी सहगामी क्रिया का संचालन अवश्य करे |
- छात्रों को प्रेरित करने हेतु विद्यालय में वातावरण का निर्माण करना चाहिए ।

- **सहभागित्व हेतु निम्नांकित बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए-**

- विद्यार्थी अपनी क्षमता के अनुसार किसी न किसी क्रिया में भाग अवश्य लें ।
- विद्यार्थी उन सहगामी क्रियाओं का चयन करें -
  - (i) जो उनकी आवश्यकता की पूर्ति करें ।
  - (ii) जिनमें उनकी रूचि हो ।
  - (iii) जिनका शैक्षिक महत्व हों ।

- **स्थान तथा सदस्यता के संबंध निम्न तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए -**

- पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन विद्यालय भवन तथा प्रांगण में ही होना चाहिए ।

- **पाठ्य सहगामी क्रियाऐं और वित्त व्यवस्था के संदर्भ में यह बिन्दु ध्यान देने योग्य है–**

- पाठ्य सहगामी क्रियाओं को विधिवत् संचालित करने हेतु संचित निधि आवश्यक है । संचित निधि का हिसाब ठीक प्रकार से रखा जाय । जहां तक संभव हो, मितव्ययता के सिद्धान्त का पालन किया जाये ।
- इससे छात्रों में उत्तरदायित्व तथा ईमानदारी की भावना का विकास होगा ।

- **विद्यालय के बजट में इन क्रियाओं के खर्च की पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिए ।**

- **शैक्षिक मूल्यांकन**

- इन प्रवृत्तियों के प्रजातंत्रात्मक पर्यवेक्षण एवं वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन की व्यवस्था होनी चाहिए, उनका मूल्यांकन नहीं होने से क्रियाओं के सफलतापूर्वक सम्पन्न किये जाने में संदेह रहता है ।
- पाठ्य सहगामी क्रिया-कलापों के मूल्यांकन हेतु संबंधित गतिविधि में विशिष्टता रखने वाले व्यक्तियों की सेवाएं भी ली जानी चाहिए । जो विद्यालय से बाहर के भी हो सकते है ।
- विभिन्न गतिविधियों के अवलोकन हेतु स्थानीय समाज एवं अभिभावकों को विद्यालय में आमंत्रित करना चाहिए जिससे समाज एवं संस्था में परस्पर संबंध बना रहें ।
- पाठ्य सहगामी क्रियाओं के आयोजन में पुरस्कार की व्यवस्था भी होनी चाहिए । श्रेष्ठ कार्य करने वाले व्यक्तियों को समारोह में पुरस्कृत करना चाहिए, जिससे उनको अपने कार्य का सही मूल्यांकन होने के कारण प्रसन्नता का अनुभव हो तथा प्रोत्साहन मिले ।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं के प्रकार (Types of Co-curricular Activities) - पाठ्य सहगामी क्रियाएं अनेक प्रकार की होती है । प्रत्येक विद्यालय अपने पास उपलब्ध मानवीय एवं भौतिक साधनों से विद्यालय की आवश्यकता एवं उद्देश्यों के अनुसार इन प्रवृत्तियों का नियोजन एवं संगठन करता है । इन क्रियाओं को निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है ।

चित्र संख्या : 8.4

पाठ्य सहगामी क्रियाओं के प्रकारों का भलीभाँति ज्ञान हो जाने के बाद इस बात की आवश्यकता होती है कि इन विभिन्न गतिविधियों का चयन इस प्रकार से करें जो उद्देश्यपूरक हो तथा हम अपने उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप प्रदान कर सकें । इन विभिन्न क्रिया-कलापों के आयोजन के संबंध में माध्यमिक शिक्षा आयोग (Report of the Secondary Education Commision) ने कहा है कि "विद्यालय केवल ऐसी औपचारिक शिक्षा का केन्द्र नहीं है जहां असीम ज्ञान प्रदान किया जाता है । यह एक सजीव एवं मूर्त स्थिति है जिसमें शिष्यों को प्रशिक्षित करके उन्हें सम्मान के साथ जीवन जीने की शिक्षा दी जाती है । समुचित ढंग से एकत्रित विद्या ग्रहण करना ही सब कुछ नहीं है । इसमें सामाजिक जीवन यापन करके तथा सामूहिक रूप से एक दूसरे की सहायता करके अपने स्वभाव परिवर्तन का प्रशिक्षण मिलता है । इसकी पूर्ति केवल सामाजिक जीवन के साथ पाठ्यक्रम समवर्ती गतिविधियों द्वारा संभव है जिनको विद्यालय में संचालित करना आवश्यक है ।"

विद्यार्थीयों की मानसिक परिपक्वता, निर्धारित उद्देश्य, समायावधि तथा साधन सुविधाओं को ध्यान में रखकर पाठ्य सहगामी क्रियाओं का चयन करना आवश्यक होता है, जिससे थोड़े समय में अधिकतम लाभ प्राप्त हो सकें । इन चयनित क्रिया-कलापों का आयोजन योजनाबद्ध एवं व्यवस्थित रूप से इस प्रकार हो कि उपलब्ध समय एवं साधनों का पर्याप्त उपयोग कर बालक के शारीरिक, मानसिक,सामाजिक, संवेगात्मक, नैतिक एवं सांस्कृतिक पक्षों का संतुलित विकास किया जा सकें ।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संचालक के रूप में अध्यापक (Teacher as an organizer of co-curricular activities) -

- **विद्यालय प्रधान के रूप में (As a Head of School) -**
- विद्यालय प्रधान अपने सहयोगियों से विचार-विमर्श करके पाठ्य सहगामी क्रियाओं की वार्षिक योजना तैयार करेंगे ।
- अध्यापकों की रूचि के अनुसार प्रवृत्ति प्रभारी व सहायक प्रभारी नियुक्त करेंगे ।
- विभिन्न क्रियाओं के संचालन का समय-समय पर निरीक्षण कर मार्ग-दर्शन करेंगे ।
- श्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थीयों को प्रमाण-पत्रों, प्रगति पत्रों व पारितोषिकों का समय पर वितरण करायेंगे ।
- **समन्वयक के रूप में (As a co-ordinator) -**
- विद्यालय प्रधान व प्रवृत्ति प्रभारी के बीच कड़ी का कार्य करेंगे ।
- पाठ्य सहगामी क्रियाओं के सफल क्रियान्वयन हेतु उत्तरदायी होंगे ।
- विभिन्न प्रवृत्ति प्रभारियों के कार्य संचालन में सहयोग करेंगे ।
- **कक्षा अध्यापक के रूप में (As a class Teacher)**
- कक्षा अध्यापक के रूप में यह देखेंगे कि कक्षा के प्रत्येक विद्यार्थी ने एक सृजनात्मक तथा खेलकूद से संबंधित प्रवृत्ति में भाग लिया है ।
- पांठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने से संकोच करने वाले विद्यार्थीयों को प्रोत्साहित करेंगे ।
- विद्यार्थीयों के वैयक्तिक, सामाजिक गुणों, अभिवृत्तियों, विशिष्ट गुणों व रूचियों का लेखा-जोखा रखेंगे ।
- विजेता छात्रों के प्रमाण-पत्र व प्रगति-पत्र तैयार कराएंगे ।
- **प्रवत्ति प्रभारी के रूप में (As a Head of Co-curricular activity) -**
- अपनी प्रवृत्ति से संबंधित विद्यार्थीयों की सूची बनायेंगे ।
- प्रवृत्ति से संबंधित साधन-सामग्री विद्यालय प्रधान से प्राप्त करेंगे ।
- विद्यार्थीयों को प्रवृत्ति में प्रशिक्षित करेंगे तथा उनके द्वारा किये गये कार्यों का लेखा-जोखा रखेंगे ।
- विद्यालय प्रधान व समन्वयक को समय-समय पर विभिन्न क्रियाओं की प्रगति से अवगत कराएंगे और निर्देश प्राप्त करेंगे ।
- छात्रों के अभिभावकों से संपर्क स्थापित करेंगे तथा विद्यालय में आयोजित कार्यक्रमों में अभिभावकों को आमंत्रित करेंगे ।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संचालन में आने वाली कठिनाइयाँ (Difficulties in organization of co-curricular activities) - पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संचालन में निम्नलिखित कठिनाइयाँ दृष्टिगोचर होती है -

- साधनों की अपर्याप्तता
- अत्याधिक कार्य भार से अध्यापकों में अरूचि
- छात्रों की अरूचि-छात्रों में पाठ्य सहगामी क्रियाओं के प्रति अरूचि होने के कई कारण हो सकते है -
  - (i) छात्रों की पढाई में बाधा आना ।
  - (ii) परीक्षा की तैयारी की ओर विशेष ध्यान देना ।
  - (iii) अभिभावकों की इन क्रियाओं के प्रति अरूचि ।
  - (iv) विद्यालय समय-सारिणी में इन क्रियाओं को महत्व न देना ।
- अधिकारियों का असहयोगात्मक दृष्टिकोण ।
- वित्तीय समस्या
- परीक्षा केन्द्रित शिक्षा प्रणाली
- अध्यापकों का प्रशिक्षित न होना ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. पाठ्य सहगामी क्रियाऐं किन्हें कहते हैं विद्यार्थीयों के लिये इनका क्या महत्त्व है?
   What are the co-curricular activities? What is the importance of these activities for students?
2. आप अपने स्कूल के लिये कौन-कौन सी पाठ्य सहगामी क्रियाओं का सुझाव देंगे?
   Which co-curricular activities would you suggest for your school?
3. विद्यालय में पाठ्य सहगामी क्रियाओं की व्यवस्था तथा संचालन करते समय किन-किन बिन्दु को ध्यान में रखना चाहिए?
   What points should be kept in mind while organizing and conducting the co-curricular Activities in school?
4. "पाठ्य सहगामी क्रियाएं अतिरिक्त नहीं है बल्कि स्कूल कार्यक्रम का एक अभिन्न अंग है, व्याख्या कीजिए।
   "Extra curricular activities are not extra but constitute a integral part of school work" Discuss.
5. पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संगठन के सिद्धान्त बताइये ।
   Explain the principles of the organization of co-curricular activities?

8.6 परीक्षा संचालन
(Conducting Examination)

शिक्षा की विभिन्न योजनाओं में से एक महत्वपूर्ण योजना प्रत्येक शैक्षिक सत्र में परीक्षा का आयोजन करना है । परीक्षा-आयोजन करना शिक्षा प्रणाली का केन्द्र बिन्दु है । परीक्षाऐं शिक्षा में दो प्रकार से बहुत सशक्त भूमिका निभाती है; प्रथम, अपने प्रमुख कार्य द्वारा, एक निर्दिष्ट अधिगम अनुभवों के पश्चात् विद्यार्थीयों की उपलब्धि का मापन करने में और दूसरे एक उचित दिशा में अधिगम को प्रेरित करने में । यही कारण है कि उत्तम शैक्षिक कार्यक्रमों की स्थापना हेतु और शिक्षा की तकनीकों और कार्यप्रणालियों के सुधार के लिये भी मूल्यांकन की एक सुनिश्चित प्रणाली की आवश्यकता पड़ती है ।

परीक्षाऐं एक देश की शैक्षिक प्रणाली में केन्द्रीय स्थान रखती है । इस कारण वे एक महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाती है । कई बार विशेषज्ञों ने और आम जनता ने परीक्षाओं की प्रणाली के विरूद्ध अपनी आवाज उठाई है, परन्तु सच्चाई यह है कि कोई भी देश चाहे, उसकी शिक्षा प्रणाली कितनी भी परिष्कृत (Sophisticated) क्यों न हो, परीक्षा-प्रणाली को समाप्त नहीं कर सका है । विद्यार्थी का भाग्य परीक्षाओं से जुड़ा रहता है इसलिये विद्यार्थी परीक्षाओं को भय को दृष्टि से देखते हैं जबकि परीक्षाऐं शिक्षा की योजना में अपनी केन्द्रीय स्थिति में विद्यमान है।

यह कितना कौतूहलपूर्ण विषय है, कि न केवल विद्यार्थी बल्कि माता-पिता, अध्यापक नीति-निर्माता और देश की शिक्षा प्रणाली से जुड़े अन्य व्यक्ति परीक्षाओं की संपूर्ण प्रणाली और बाहय परीक्षाओं को उत्सुकता की दृष्टि से देखते हैं । कई बार परीक्षा प्रणाली की आलोचना करते हैं और कई बार परीक्षा व्यवस्था के प्रति तीखी प्रतिक्रिया भी व्यक्त करते हैं ।

भारत में परीक्षाऐं : उनकी पृष्ठभूमि (Examination in india : Their Background) - भारतवर्ष में परीक्षा प्रणाली अंग्रेजों की देन है । इसका प्रारम्भ 1635 में लार्ड मैकाले ने किया था । इससे पहले प्राचीन काल में व मध्यकालीन युग में गुरूओं व अध्यापकों के द्वारा शिष्यों का शैक्षिक गतिविधियों का कठोर परीक्षण विभिन्न विधियों के माध्यम से लिया जाना था ।

प्रो. पी.डी.शर्मा, Improving Examination, DEPSE, New Delhi के अनुसार- "परन्तु वर्तमान परीक्षा प्रणाली की उत्पत्ति केवल अंग्रेजों द्वारा हमारे देश में लाई गई शिक्षा प्रणाली के कारण ही हुई ।"

सर चार्ल्स बुड के प्रसिद्ध 'डिस्पैच' में सिफारिश के आधार पर 1857 में देश में बम्बई, मद्रास और कलकत्ता के तीन विश्वविद्यालयों की स्थापना के साथ देश में लिखित बाहय परीक्षाऐं आरंभ हुई। विश्वविद्यालय की शिक्षा से पहले मैट्रिकुलेशन का स्तर एक महत्वपूर्ण स्तर था तथा विश्वविद्यालय में प्रवेश मैट्रिक परीक्षा के आधार पर था जो विश्वविद्यालयों द्वारा ली जाती थी।

लिखित परीक्षाएं किसी एक पाठ्यक्रम में विद्यार्थीयों की शैक्षिक उपलब्धियों के मूल्यांकन का महत्वपूर्ण साधन हैं परीक्षाओं के परिणाम साधारणतया अंकों के संदर्भ में दिए जाते है और विद्यार्थीयों को अगले अध्ययन के वांछित पाठ्यक्रम में स्थापना (Placement) के लिए होते हैं ।

लिखित परीक्षाओं के प्रकार (Types of Written Examination) - लिखित परीक्षा तीन प्रकार की होती है -

- निबंधात्मक परीक्षा (Essay Type Test)
- लघु-उत्तरात्मक परीक्षा (Short-answer type test)
- वस्तुनिष्ठ परीक्षा (Objectives type Test)

छात्रों की उपलब्धि का मूल्यांकन करने के लिये निबंधात्मक परीक्षाऐं लिखित परीक्षाओं का अत्यन्त लोकप्रिय स्वरूप रही हैं । इस परीक्षा में उत्तर देने में स्वतंत्रता रहती है । इसमें विद्यार्थीयों को किसी नवीन समस्या के प्रति नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाता है, क्योंकि उन्हें अपने विचार लिखकर प्रकट करने होते है । इनमें अनुमान से उत्तर नहीं दिया जाता है बल्कि सोचकर उत्तर लिखा जाता है यद्यपि निबंधात्मक परीक्षाओं से परीक्षार्थियों के अभिव्यक्ति कौशल एवं प्रवाह, विचारों के गठन तथा कक्षा में पढ़े गये विषयों तथा समसामयिक समस्याओं के प्रति उनके दृष्टिकोण की जांच होती है।

- **लघुत्तरात्मक परीक्षा (Short-answer Type Test) -** परीक्षा का यह स्वरूप दिन प्रतिदिन लोकप्रिय होता जा रहा है । इस परीक्षा में कुछ ही शब्दों या वाक्यों में उतर मांगते है । छात्रों के चिन्तन को अभिप्रेरित करते हैं और उनको प्रासंगिक जानकारी या तथ्यों का चयन करने के योग्य बनाते हैं जो एक विशिष्ट स्थिति को स्पष्ट करें । इस प्रकार विद्यार्थीयों को अप्रासंगिक उत्तर लिखने की बुरी आदत पड़ने से बचाते हैं ।
- **वस्तुनिष्ठ परीक्षाऐं (Objective Type Test)-** वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में प्रश्नों की संख्या पर्याप्त होती है । निबंधात्मक परीक्षणों की अविश्वसनीयता के कारण ही वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का प्रचलन हुआ है । इस प्रकार की परीक्षाओं का उपयोग विद्यार्थी की विषय ज्ञान की निष्पत्ति, बुद्धि आदि का मापन करने के लिये किया जाता है । परीक्षक दिए गये प्रश्नों में से सही उत्तरों का चयन करता है, उनकी गिनती कर परीक्षा के अंक दे दिए जाते है । ये परीक्षाऐं असंगत उत्तर देने के अवसरों से मुक्त होती है, इनका अंकन सरलता से किया जा सकता है तथा वे अधिक प्रामाणिक व विश्वसनीय होती है ।
- **परीक्षाओं की आलोचना (Criticism of Examination) -** वर्तमान परीक्षा प्रणाली दोषयुक्त है । कई शिक्षाविद् इसकी आलोचना करते है: उनका कहना है कि वर्तमान परीक्षा पद्धति शिक्षा को (ज्ञान के) बड़ी मात्रा में रटने का पर्याय बना देती हैं । परीक्षा की यह आलोचना न्यायोचित भी है क्योंकि हमारी परीक्षा प्रणाली में कुछ अन्तर्निहित कमियां भी है-
- वास्तविक ज्ञान परीक्षण में विफल (Fail to test real knowledge)
- संदर्शिकाओं और संक्षिप्त नोट्स के प्रयोग को प्रोत्साहन (Encourages use of guides and short notes)
- मूल्यांकन में व्यक्तिनिष्ठता से पीडित (Suffer from subjectivity in evalution)
- शिक्षण विधियों पर बुरा प्रभाव (Adverse effect on teaching method)
- दोषपूर्ण प्रश्नपत्र (Defective Question paper)
- परिणामों का दोषपूर्ण संकलन (Defective compilation of results)
- नैतिक पतन करना (Causes moral degradation)
- स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव (Adverse Effect on Health)

परीक्षा को वैज्ञानिक व प्रामाणिक साधन बनाना (Making the Examination Scientific and Valid Tool) - जहाँ तक संभव हो सके परीक्षा को एक वैज्ञानिक और प्रमाणिक साधन बनाना बहुत महत्त्वपूर्ण है । स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् परीक्षा प्रणाली में सुधार की आवश्यकता के बारे में प्रथम सशक्त कथन राधाकृष्णन आयोग (1948) ने दिया । राधाकृष्णन रिपोर्ट से परीक्षा सुधार (Examination Reform) कार्यक्रम ने एक आदोलन का रूप धारण कर लिया है । एक आंदोलन जो राज्य स्तर की समितियों के साथ आरंभ हुआ, उसने पिछले कुछ वर्षों में परीक्षा प्रणाली के सुधार के लिए कार्य करने की योजना के निर्माण हेतु क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर की कार्यशालाओं के रूप में चरम बिन्दु पर पहुंचा है । परीक्षा सुधार कार्यक्रम आरम्भ करने की परिचालन (Operational) मशीनरी आरम्भ में माध्यमिक शिक्षा की अखिल भारतीय परिषद में स्थित थी । इसे केन्द्रीय परीक्षा इकाई के नाम से जाना जाता था । 1961 में इस इकाई को शैक्षिक अनुसंधान व प्रशिक्षण की राष्ट्रीय परिषद् में स्थानान्तरित कर दिया गया । तब से परीक्षा सुधार कार्यक्रम को राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (N.C.E.R.T) के भीतर चलाया जा रहा है ।

परीक्षा सुधार कार्यक्रम के उद्देश्य (Objectives of the programme of Examination Reform) - परीक्षा सुधार के किसी भी कार्यक्रम का यह उद्देश्य होना चाहिये -

- व्यक्तिनिष्ठता के तत्वों को दूर करना (Removal of elements of subjectivity)
- रटने की आदत को कम करना (Minimize the Habit of Rote Learning)
- अवांछित अध्ययन और शिक्षण अभ्यासों को निरूत्साहित करना (Discouraging undesirable study and teaching practices)
- मूल्यांकन को सतत् बनाना (Making evalution continuous)
- आवर्ती परीक्षाओं द्वारा उत्पन्न तनाव में कमी लाना (Reducing the strain caused by periodic examination)
- विविध उद्देश्यों के लिये परीक्षा परिणामों का उपयोग (Using Examination results for a variety of purposes)
- परीक्षा संचालन की यान्त्रिकी में सुधार (Improving the mechanics of conducting examination)
- परीक्षा सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत कार्य के क्षेत्र (Areas of work under programme of Examination reform)

परीक्षा सुधार का कार्यक्रम एक बहु-आयामी (Multi-Dimesional) कार्यक्रम है । इस कार्यक्रम में कार्य के कई क्षेत्र सम्मिलित किए जा सकते हैं जैसे-

(i) **शोध अध्ययन व जाँच कार्य (Research studies and investigation)** - इनका उद्देश्य उन समस्याओं का समाधान करना है जो समय-समय पर परीक्षा सुधार कार्यक्रम को लागू करने में आती है ।

(ii) **प्रशिक्षण कार्यक्रम (Training Programmes) -** इन्हें राज्य स्तर व राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित किया जाता है । इस कार्यक्रम में प्रश्नपत्र निर्माताओं व मूल्यांकन-कर्ताओं को सम्मिलित किया जाता है ।

(iii) **सामग्री का निर्माण (Preparation of Material)** - इसके अंतर्गत संकल्पनात्मक साहित्य, छात्र विकास के लिये शैक्षिक पक्षों के मूल्यांकन सामग्री के प्रतिदर्श (Sample) पत्रिका प्रकाशन, सेमिनार, कार्यशालाओं की रिपोर्ट और परीक्षण समूह सम्मिलित होते हैं ।

(iv) परामर्श सेवाऐं (Counselling Services) - परीक्षा सुधार में सम्मिलित कई एजेन्सिया अपने कार्यक्रमों का विकास करने और उन्हें लागू करने में तकनीकी सहायता चाहती है और उन्हें प्राप्त करती हैं ।

(v) **समन्वयन और विवरण केन्द्र कार्य (Co-ordination and clearing house function)** - इसमें विभिन्न शिक्षा बोर्ड के अध्यक्षों और सचिवों के सम्मेलन, सेमिनार, परीक्षा सुधार कार्यक्रमों की प्रगति से संबंधित साहित्य और जानकारी का संकलन और वितरण सम्मिलित होता है ।

परीक्षा सुधार के उपाय (Measures for Examination Reform) - समस्त शिक्षाविद् परीक्षाओं की प्रचलित प्रणाली की कमियों पर एकमत हैं । यहां इस बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि यदि वर्तमान परीक्षा प्रणाली में सुधार लाना है तो परीक्षा की गुणवत्ता को सुधारना होगा जिससे परीक्षा अधिक प्रामाणिक और विश्वसनीय बन सके । निम्नांकित बिन्दुओं के माध्यम से परीक्षाओं के आयोजन में सुधार ला सकते हैं -

- प्रश्नपत्रों में सुधार
  (Improvement in Question Papers)
- वैज्ञानिक अंकन
  (Scientific Scoring)
- प्रमाणपत्रों में विभिन्न विषयों में निष्पादन को सम्मिलित करना
  (Certificates to include performance in different subjects)
- छात्रों को कार्य निष्पादन के सुधार के लिये अवसर प्रदान करना
  (To give oppurtunities to students for improving performances)
- छात्रों के संचयी अभिलेख के प्रावधान
  (Provision for cummulative records of schools)
- आंतरिक मूल्य निर्धारण
  (Internal assessment)
- गृह परीक्षा में सुधार
  (Improvement in home examination)

इस तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि परीक्षायें विद्यार्थीयों, अध्यापकों, माता-पिता, प्रशासकों और वास्तव में सारे समाज को प्रभावित करती हैं । इसलिए यह आवश्यक है कि परीक्षा को अवश्य ही छात्रों के समुचित विकास का मूल्यांकन करना चाहिए । परन्तु यथार्थ में हमारी

प्रणाली छात्रों की केवल शैक्षिक उपलब्धियां का परीक्षण करती है जिसमें परिवर्तन की आवश्यकता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. परीक्षा संचालन पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए|
   Write a short note on conducting examination.
2. लिखित परीक्षाओं के प्रश्नों को वर्गीकृत कीजिए |
   Classify the different types of written examination.
3. आधुनिक परीक्षा पद्धति की आलोचना क्यों की जाती है?
   Why the present examination system is so critisized?
4. परीक्षा सुधार कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्य क्या है ?
   What are the main objectives of the examination reform programme?
5. पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संगठन के सिद्धांत बताइये|
   Explain the principles for the organization of co-curricular activities.

8.7 सामुदायिक सेवा (Community Services)

सामुदायिक सेवा का शाब्दिक अर्थ 'समुदाय की सेवा' है । अत: सामुदायिक सेवा का अर्थ भली-भाँति समझने के लिये आवश्यक है कि समुदाय शब्द का अर्थ समझ लिया जाए । समुदाय शब्द लैटिन भाषा के Com और Munis शब्दों से मिलकर बना है । Com का अर्थ है एक साथ तथा Munis का अर्थ Serving या सेवा, इस प्रकार दोनों का संयुक्त अर्थ एक साथ मिलकर सेवा करना है ।

सामुदायिक सेवा (Community Services) वर्तमान समय में एक प्रचलित शब्द या धारणा है । यह एक योजना है जो स्व-सहायता (Self-help) व सहयोग के सिद्धान्तों के आधार पर स्वावलम्बी उपायों से सामाजिक और आर्थिक उन्नति पर बल देती है ।

संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O) के अनुसार "सामुदायिक सेवा योजना एक विधि है जो समुदाय के लिए उसके पूर्ण सहयोग से आर्थिक और सामाजिक विकास की परिस्थितियों को पैदा करती है और पूर्ण रूप से समुदाय की पहल पर निर्भर करती है ।"

सामुदायिक विकास रूढ़िवादी जीवन पद्धति को त्यागने की एक प्रक्रिया है, यह एक तरीका है जिसके द्वारा लोगों को अपने साधनों से ही उन्नति के लिए सहायता दी जाती है ।

सन् 1952 में भारत में प्रारम्भ सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को श्री वी.टी. कृष्णामंचारी ने राष्ट्रीय सेवा आंदोलन या जन आंदोलन की संज्ञा दी थी । उनके अनुसार "यह लोगों में एक

बेहतर जीवन की इच्छा पैदा करेगा जो लोगों में अपने ही प्रयासों द्वारा अपने पडोसियों की सहायता से अपना जीवन स्तर ऊंचा करने की आकांक्षा पैदा करेगा ।

सामुदायिक सेवा के उद्देश्य (Objectives of Community Services) - सामुदायिक सेवा एक व्यापक अवधारणा है । यह वर्तमान युग की मांग एवं आवश्यकता है । अत: शिक्षण संस्थाओं को सामुदायिक सेवा से जोड़ना उपयोगी समझा गया । "विद्यालय समुदाय का एक लघु रूप है "School is a miniature of society" जॉन ड्यूवी ने विद्यालय को एक सामाजिक संस्था के रूप में स्वीकार करते हुए कहा है कि विद्यालय एक सामाजिक संस्था है जो विद्यार्थी को प्रजाति (Race) की पैतृक सम्पत्ति से अपना भाग प्राप्त करने तथा उसे अपनी शक्तियों को सामाजिक हितों के लिये उपयोग में लाने हेतु तैयार करते है । जिससे वे श्रेष्ठ नागरिक के रूप में राष्ट्र व समाज के प्रति अपने दायित्वों को समझ सकें और उनका निर्वहन कर सकें । छात्रों में त्याग, सेवा, समर्पण, सहयोग, बंधुत्व एवं मानवीयता आदि गुणों का विकास सामुदायिक सेवा के द्वारा सरलता से किया जा सकता है ।

सामुदायिक सेवा के उद्देश्य
(Objectives of Community Services)

चित्र संख्या : 8.5

1 **सामाजिक भावना का विकास करना (To develop social feeling) -** आज का विद्यार्थी कल का नागरिक है । शिक्षा समाप्ति के पश्चात् वह समाज में विभिन्न पदों एवं भूमिकाओं का निर्वहन करता है । अत: विद्यार्थी जीवन में वह सामाजिक कार्यों का अभ्यास कर सकें इसके लिये सामुदायिक सेवा आवश्यक है । सामुदायिक सेवा का उद्देश्य विद्यार्थीयों में सामुदायिक एवं सामाजिक भावना का विकास करना है । जिससे उनको सामाजिक जीवन से जोड़ा जा सकें ।

2 **समस्याओं से अवगत कराना (To make them aware of problems) -** सामुदायिक सेवा का उद्देश्य समाज में व्याप्त बुराईयों एवं समस्याओं से विद्यार्थीयों को परिचित कराना है । वर्तमान भारत में निरक्षरता की व्यापकता, जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी, कुपोषण, साम्प्रदायिकता, बालश्रम एवं शोषण, लिंग भेद, भ्रूण हत्या, नारी उत्पीड़न आदि अनेक समस्याऐं एवं कुरीतियाँ व्याप्त हैं । सामुदायिक सेवा द्वारा विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करने के साथ ही इन समस्याओं से अवगत हो जाता है और इन समस्याओं के प्रति संवेदनशील हो जाता है ।

3 **जनसहयोग प्राप्त करना (To obtain public co-operation)-** सामाजिक जीवन पारस्परिक सहयोग पर निर्भर करता है । सामाजिक एवं सामुदायिक कार्यों को सम्पन्न करने में जनसहयोग एवं सहभागिता अतीव आवश्यक है । सामुदायिक सेवा करने पर ही विद्यार्थीयों को इस बात का अनुभव होता है कि किस प्रकार से जनसहयोग प्राप्त किया जा सकता है ।

4 **आत्म सहायता की भावना का विकास (To develop the feeling of self-help) -** आत्म सहायता की भावना का विकास करना, सामुदायिक सेवा का प्रमुख उद्देश्य है । विद्यार्थी जीवन में जब विद्यार्थी सामुदायिक कार्यों को सम्पन्न करता है तो स्व-सहायता व आत्मविश्वास की भावना विकसित होती है । उदाहरण के लिये राष्ट्रीय सेवा योजना शिविर में विद्यार्थी अपने दैनिक जीवन से संबंधित समस्त कार्य स्वयं करते है तथा आत्मनिर्भर बनते हैं ।

5 **सार्वजनिक कार्यों में रूचि उत्पन्न करना (To create interest for public work) -** सामुदायिक सेवा का लक्ष्य छात्रों में सार्वजनिक कार्यों में रूचि उत्पन्न करना है । सामुदायिक सेवा के द्वारा ही छात्रों को लोकहित के कार्यों को करने का अवसर मिलता है । विद्यार्थी राष्ट्रीय सेवा योजना, एन.सी.सी., रैडक्रास आदि के प्रशिक्षण के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों का निर्माण, जल निकास प्रणाली का निर्माण, स्वच्छता एवं सफाई आदि कार्य करते है । इससे उनमें सार्वजनिक कार्यों में रूचि उत्पन्न होती है ।

6 **राष्ट्रीय कार्यक्रमों का सफल बनाना (To make the National Programme successful) -** सामुदायिक सेवा का एक प्रमुख उद्देश्य राष्ट्रीय स्तर पर चलाये गये कार्यक्रमों को सफल बनाना है । देश का युवावर्ग ही अन्धता निवारण, कुष्ठ निवारण, पोलियो निवारण, एड्स व अन्य संक्रामक रोगों के विषय में जानकारी का प्रसार कार्य करने में सक्षम हो सकता है ।

7 **कल्याणकारी कार्यक्रमों का संचालन करना -** सामुदायिक सेवा के अन्तर्गत विद्यार्थी समाज में उपेक्षित जीवन व्यतीत करने वाले वंचितों, अपंगों एवं विकलांगों के लिये शिक्षा, स्वारथ्य एवं अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों का आयोजन व संयोजन करता है । वे विद्यालय में विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन कर उनके लिये वित्तीय व्यवस्था करने में भी सक्षम हो सकते हैं ।

सामुदायिक सेवा की प्रकृति एवं क्षेत्र (Nature and Scope of Community Services) - सामुदायिक सेवा की प्रकृति "आत्म सहायता द्वारा पारस्परिक सहायता (Self-help through mutul help) के सिद्धान्त पर आधारित सेवा भावना की है । शिक्षा के क्षेत्र में विद्यालयों में सामुदायिक सेवा का प्रयोग छात्रों में सामाजिक एवं सामुदायिक भावना का विकास करना है । विद्यालय में छात्रों को सामुदायिक जीवन से अवगत कराया जाता है जिससे वे समुदाय की समस्याओं को समझ सकें और उनके निवारण हेतु उपयुक्त योजना बना सके । के.जी सैय्यदन के अनुसार - "लोगों का स्कूल उन्हीं की आवश्यकताओं और समस्याओं पर

आधारित होना चाहिये । इसका पाठ्यक्रम उनके जीवन का आदर्श होना चाहिये । इसकी कार्यविधियां उनकी कार्यविधियों के अनुरूप होनी चाहिये । समुदाय की प्राकृतिक स्थिति में जो कुछ भी विशेष और महत्वपूर्ण है, वह सब स्कूल में प्रतिबिम्बित होना चाहिये" ।

"A people's school must obviously be based on the peoples needs and problems. Its curriculum should be an epitome of their lives. It's methods of work must approximate to theirs. It should reflect all that is significant and characteristic in the life of the community in its natural setting"-K.G Saiyidain

विद्यालयों एवं शिक्षा जगत् में सामुदायिक सेवा का क्षेत्र काफी व्यापक है । इसमें छात्रों को सैद्धान्तिक पक्ष पर सीमित न रखकर व्यावहारिक एवं क्रियात्मक पक्ष को विकसित करने पर बल दिया जाता है । यह कार्य एवं सेवाऐं समाज के पिछडे व दलित वर्गो, ग्रामीण क्षेत्रों, कच्ची बस्तियों, निरक्षर प्रौढ़ों, बालश्रमिक एवं कामकाजी महिलाओं के लिए विभिन्न कार्यक्रमों को अपने समाहित करती हैं । सामुदायिक सेवा के क्षेत्र में निम्नांकित क्रियाकलापों को सम्मिलित किया जा सकता है-

- समुदाय के लोगों के शैक्षिक उन्नयन का प्रयास करना । निरक्षरता उन्यूलन हेतु प्रौढ़ शिक्षा और अनौपचारिक शिक्षा के कार्यक्रम लागू करना ।
- स्वास्थ्य सेवा के कार्यक्रम चलाने में सहयोग देना, संक्रामक रोगों के संबंध में जानकारी देना, एडस जैसे रोगों के प्रति जागरूक करना ।
- ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामोत्थान एवं पुनर्निर्माण के कार्यक्रमों, यथा- सड़क, पुलिया, जल निकास प्रणाली, झुग्गी-झोपडियों की सफाई आदि की देख रेख ।
- पर्यावरण समृद्धि हेतु खाली भूमि में वृक्षारोपण करना, सामाजिक वानिकी कार्यक्रम का प्रसार करना । वन कटाव को रोकना आदि कार्यक्रमों का आयोजन करना ।
- शुद्ध पेयजल की आपूर्ति सुनिश्चित करने हेतु, कूप, तालाब व अन्य जल स्त्रोंतो की सफाई करना ।
- ग्रामीण क्षेत्रों में पुस्तकालयों व वाचनालयों की स्थापना एवं संचालन करना ।
- सामाजिक बुराइयों के विरूद्ध चेतना जागत करना । यथा-दहेज प्रथा, जाति प्रथा, बाल-विवाह प्रथा के उन्मूलन हेतु प्रयास करना ।
- राष्ट्रीय कार्यक्रमों जैसे अल्पबचत, जनसंख्या नियंत्रण, बालश्रम पर रोकथाम जैसे राष्ट्रीय कार्यक्रमों को सफल बनाने में योगदान देना ।
- सामुदायिक मनोरंजन की व्यवस्था हेतु सांस्कृतिक कार्यक्रम यथा - कवि सम्मेलन, नाटक, भजन संध्या, नुक्कड़ नाटक, कठपुतली प्रदर्शन आदि का आयोजन करना ।

विद्यालय में सामुदायिक सेवा का अभ्यास (Practice of Community Services in School) - मुदालियर शिक्षा आयोग के अनुसार, "सबसे पहले हमें यह तथ्य जान लेना चाहिये कि स्कूल बड़े समुदाय के अंतर्गत एक लघु समुदाय है और हमारे राष्ट्रीय जीवन में प्रचलित दृष्टिकोण, मूल्य, व्यवहार-अच्छे तथा बुरे-हमारे स्कूलों में प्रतिबिम्बित होने चाहिए।"

"We should in the first place, take due note of the fact that the school is a small community within a larger community and the attitudes,

values and modes behaviour good or bad which have currency in national life are bound to be reflected in the school." -Report of Secondary Education Commision

अत: विद्यालय का यह दायित्व बन जाता है कि वह विद्यार्थीयों को सामुदायिक सेवा का अभ्यास करावें ऐसे अभ्यास द्वारा विद्यार्थीयों में कार्य करने का कौशल, साहस, रूचि व चेतना विकसित होती है ।

सामुदायिक सेवा का अभ्यास दो प्रकार से होना चाहिये - प्रथम पूर्वाभ्यास कई अवसर तथा द्वितीय व्यावहारिक कार्य का अवसर प्रदान कर । सामुदायिक सेवा का पूर्वाभ्यास का अवसर छात्र को विद्यालय में ही मिलना चाहिए । ऐसे अभ्यास द्वारा छात्रों में सजगता व कार्य करने की कुशलता विकसित होती है -

- विद्यालय द्वारा अपने छात्रों को उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य सौंपना चाहिए । इन कार्यों में राष्ट्रीय पर्व, वार्षिक समारोह, व्याख्यान आदि के आयोजन की व्यवस्था का दायित्व, खेलों एवं पुरस्कार वितरण की व्यवस्था का दायित्व आदि कार्य आते हैं ।
- स्काउट गाइड, राष्ट्रीय सेवा योजना, एन.सी.सी. जैसी योजनाओं में सहभागिता एवं सदस्यता के लिये प्रोत्साहित करना । इन कार्यक्रमों का संचालन इस प्रकार से होता है कि छात्र को सामुदायिक सेवा के अवसर स्वत: प्राप्त हो जाते हैं ।
- विद्यालय परिसर में श्रममूलक कार्यों का आयोजन करना । इन कार्यक्रमों में विद्यालय उद्यान का रोपण व रखरखाव, खेल मैदान की सफाई आदि कार्य आते हैं । ऐसे कार्यों से छात्रों में श्रम के प्रति निष्ठा उत्पन्न होती है
- छात्रों द्वारा एस.यू.पी.डब्ल्यू कार्यक्रम के अंतर्गत निहित मॉडल, चार्ट तथा समाजोपयोगी उत्पादन कार्य की प्रदर्शनी का आयोजन करना ।
- सामाजिक समस्याओं यथा - मद्यपान, जाति प्रथा, दहेज प्रथा, बाल विवाह, बाल श्रम, जनसंख्या वृद्धि, लैंगिक भेदभाव आदि के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने के लिये वाद-विवाद, निबंध लेखन, पोस्टर प्रतियोगिता का आयोजन करना ।
- शैक्षणिक भ्रमण (Educational Tour) का आयोजन करना ।

सामुदायिक सेवा का व्यावहारिक अनुभव (Practical Experience of Community Services) - विद्यालय में छात्र को समाज सेवा का पूर्वाभ्यास कराने से वह समाज सेवा के प्रति इच्छुक व उत्साहित होता है । ऐसे छात्रों को विद्यालय में अध्ययन के साथ ही अनेक प्रकार के व्यावहारिक कार्यों द्वारा समाज सेवा का अवसर देना चाहिये । कुछ कार्य इस प्रकार से है -

- **शिक्षा प्रसार संबंधी कार्य (Task related to expansion of education)** - वर्तमान में निरक्षरता की समाप्ति के लिये प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम, जनसाक्षरता कार्यक्रम, अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं । छात्र इन कार्यक्रमों में सक्रिय सहायता कर सकते हैं व निरक्षरता के अभिशाप से मुक्ति दिला सकते हैं ।
- **स्वास्थ्य एवं चिकित्सा संबंधी कार्यों में सहयोग (Cooperation in Health and Medical Field)** - स्वास्थ्य एवं चिकित्सा संबंधी कार्यों में सहयोग विद्यालयों में विद्यार्थीयों को स्काउट, गाइडिंग, एन.सी.सी. आदि में प्राथमिक चिकित्सा की जानकारी

दी जाती है । वे इनका उपयोग सामुदायिक सेवा में कर सकते हैं । इसी प्रकार सरकार द्वारा चलाये जा रहे स्वास्थ्य महाअभियानों में भी छात्र यथा -पोलियो उन्मूलन, कुष्ठ उन्मूलन, एड्स के प्रति जागरूकता आदि कार्यक्रमों में सहयोग कर सकते है ।

- **जनसंख्या संबंधी जानकारी का विस्तार (Extension of knowledge related to Population Growth)** - भारत में बढ़ती जनसंख्या वर्तमान समय की सबसे बड़ी चुनौती है । छात्रों को कर्तव्य है कि वे नागरिकों को जनसंख्या नियंत्रण एवं परिवार कल्याण कार्यक्रमों की जानकारी प्रदान कर जनसंख्या वृद्धि कम करने में योगदान दें ।
- **यातायात संबंधी नियमों की जानकारी देना (Knowledge of Traffic Rules)** - भारत में अभी भी यातायात नियमों की जानकारी का अभाव है। विद्यार्थी सामान्य नागरिकों को यातायात के नियमों को बताकर, उसका कृत्रिम प्रदर्शन कर उन्हें जागरूक बना सकते है ।
- **पर्यावरण संरक्षण के प्रति सचेत करना (Awareness about Environmental Protection) -** पर्यावरण प्रदूषण मानव के लिये गंभीर समस्या के रूप में प्रकट हुआ है । अत: पर्यावरण प्रदूषण की विभिषिका एवं संभावित खतरों से बचाव के लिये छात्र जनमानस में पर्यावरण संरक्षण की चेतना जागृत कर सकते है । वृक्षारोपण कार्यक्रम में सक्रिय सहभागिता प्रदान कर सकते हैं ।
- **ग्रामीण पुनर्निर्माण संबंधी कार्य (Task related to Rulal re-development)** - ग्रामीण पुनर्निर्माण हेतु छात्र ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता एवं सफाई अभियान चलाकर स्वच्छ भारत की कल्पना साकार कर सकते हैं । कृषि संबंधी जानकारी देकर किसानों की सहायता कर सकते हैं, कुटीर उद्योग धंधों की जानकारी देकर सहायक रोजगार विकसित करने में योगदान दे सकते हैं । राष्ट्रीय सेवा योजना के ग्रामीण, पुननिर्माण शिविर इस दिशा में काफी सहायक रहे है |
- **सांस्कृतिक एवं मनोरंजन संबंधी कार्य (Cultural and Recreational Activities)** - गांवों में स्वस्थ मनोरंजन का अभाव है । विद्यार्थी गाँवों में भजन मंडल, युवक मंच एवं खेलकूद क्लबों का गठन कर स्वस्थ मनोरंजन प्रदान कर सकते हैं । वे नाटक, नुक्कड़ नाटक आदि का आयोजन कर मनोरंजन के साथ ही अनेक शिक्षाएं प्रदान कर सकते हैं ।
- ***अन्य कार्यक्रम*** - अन्य अनेक कार्य हैं जो छात्र सामुदायिक सेवा के अंतर्गत सम्पन्न कर सकते हैं । जैसे विकलांगों की सेवा, श्रमदान कार्यक्रम, भूकम्प, बाढ़ जैसे प्राकृतिक प्रकोपों के दौरान राहत कार्य करना, मेंला एवं बाजारों में सहायता शिविर लगाना आदि कार्य ।

विद्यालय और समुदाय का संबंध (Relation between school and community) - विद्यालय व समुदाय का घनिष्ठ संबंध रहा है यह एक दूसरे पर अन्योन्याश्रित है । समाज व समुदाय की संस्कृति का संरक्षण, प्रसार व स्थानान्तरण विद्यालयों द्वारा होता है । रायबर्न ने लिखा है कि "विद्यालयों में विद्यार्थीयों के जीवन तथा जिस समुदाय से वे आते हैं उनमें निकट का संबंध होना चाहिये ।" - “There must be a vital connection

between the life of the pupils in school and the life of the community from which they come." इससे वे आगे के उद्देश्यों में सफल हो सकते है और ऐसे विद्यार्थी तैयार कर सकते हैं जो भविष्य में समाज का मुकाबला कर सकें ।

जॉन ड्यूवी के अनुसार "सर्वश्रेष्ठ तथा अत्यन्त बुद्धिमान माता-पिता अपने बच्चे के लिये जो चाहते है, समुदाय सभी बच्चों के लिये वही चाहता है । स्कूलों के लिये अन्य कोई आदर्श संकीर्ण तथा असुन्दर होगा और उसे कार्यान्वित करना अपने लोकतंत्र को नष्ट करना होगा ।"

"What the best and wisest parents want for his own child- that must the community want for all its childrens. Any other ideal for school is narrow and unlovely, acted upon it destroys our democracy".

-John Dewey

आईवोल स्टेफर्ड के अनुसार - "अच्छा स्कूल कार्यक्रम समुदाय की आवश्यकताओं से उत्पन्न होता है, वह लोगों के जीवन का अभिन्न अंग होता है, स्कूल को जिन लोगों की सेवा करनी होती है, उन्हीं के द्वारा तथा उन्हीं के लिए स्कूल कार्यक्रम बनना चाहिए ।

"The good school Programme stems form community needs as an integral part of life of the people. It is made by, for and of those it would serve"

-Ivol Stafford

इस प्रकार विद्यालय समुदाय का घनिष्ठ संबंध है । इन संबंधों की व्याख्या हम इस प्रकार कर सकते है -

- **परस्पर स्वालम्बन की भावना का विकास (Development of the interdependance) -** यदि विद्यालय तथा समुदाय के कार्य तथा उद्देश्यों पर दृष्टि डालें तब ये परस्पर निर्भरता तथा स्थायित्व के लिये एक-दूसरे पर निर्भर है । विद्यालय तथा समुदाय दोनों ही सामाजिक संस्थायें है । समाज अपनी संस्कृति, परम्पराओं तथा मूल्यों के हस्तांतरण तथा परिमार्जन के लिये विद्यालयों की स्थापना करता है। विद्यालयों के स्वरूप, कार्य तथा उद्देश्य समुदाय के स्वरूप तथा आवश्यकताओं पर निर्भर करते है । इस प्रकार विद्यालय समुदाय पर निर्भर है किन्तु समुदाय की प्रगति, कार्य तथा पथ-प्रदर्शन विद्यालयों पर निर्भर है । विद्यालय में अभिभावक संघों का गठन, प्रबंध समितियों में समुदाय के वरिष्ठ एवं सम्मानित लोगों की सहभागिता तथा विद्यालय के समारोहों में समाज के लोगों को आमंत्रित करने से समुदाय और विद्यालय के मध्य संबंधों में प्रगाढ़ता बनी रहती है ।
- **अपनेपन की भावना का विकास (Development of sense of Belongingness) -** समुदाय और विद्यालय के मध्य पारस्परिक निर्भरता होती है । इसलिये जहां एक ओर समुदाय को विद्यालय के निकट लाने के प्रयास भी आवश्यक है । विद्यालय विद्यार्थीयों को समुदाय में ले जाकर सेवा कार्यों द्वारा, सामुदायिक कार्यक्रमों में भाग लेकर तथा समुदाय की समस्याओं का समाधान करके विद्यालय समुदाय के प्रति अपने पन की भावना का विकास कर सकता है । विद्यालय एवं परिवार

के लोग समाज के विभिन्न कार्यक्रमों-उत्सव, पर्वों एवं समारोहों में भाग लेकर विद्यालय व समुदाय में आयोजन अपनेपन की भावना का विकास कर सकेंगे । अपनेपन की भावना का विकास करने हेतु शिक्षकों व अभिभावकों को आपस में मिलते रहना चाहिए । शिक्षक अभिभावकों को विद्यार्थी की प्रगति से अवगत कराते रहें और उनसे सम्पर्क बनाये रखें ।

- **सामुदायिक केन्द्र के रूप में विद्यालय (School as a Community center) -** विद्यालय भवनों एवं परिवार का उपयोग सामुदायिक केन्द्र के रूप में किया जाना चाहिए। शैक्षिक अवधि के अतिरिक्त भवन एवं परिसर का उपयोग सामुदायिक कार्यों हेतु किया जा सकता है । विभिन्न प्रकार की सभायें, गोष्ठियाँ, टीकाकरण, दवा वितरण, राशन कार्ड का वितरण आदि कार्य इन स्थलों पर करने चाहिए । इसमें विद्यार्थी एवं अध्यापकों को सहायता करनी चाहियें ।
- विद्यालयों में स्वास्थ्य सेवाऐं भी उपलब्ध करायी जा सकती हैं । प्राय: रक्तदान शिविर, स्वास्थ्य परीक्षण शिविर भी आयोजित किये जाने चाहिए ।
- विद्यालय भवन को सामुदायिक वाचनालय के रूप में विकसित किया जा सकता है । विभिन्न पत्र-पत्रिकाऐ व पुस्तकें आदि जो छात्रों के लिये आती है, नागरिकों को पढ़नढ़ के लिये उपलब्ध करायी जा सकती हैं ।

एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल सांइसेज के अनुसार - "सचेतन रूप से संभावित व्यक्तियों का समूह समुदाय कहलाता है जो किसी निश्चित भू-भाग में रहता है तथा सीमित रूप में जिसे राजनैतिक स्वायत्ता भी प्राप्त होती है । यह समुदाय विद्यालय का धर्म संस्थान जैसे प्राथमिक संस्थाओं को संरक्षण प्रदान करता है जिनमें कि कुछ मात्रा में अन्योन्य निर्भरता को स्वीकार किया जाता है ।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि विद्यालय संस्था सामाजिक संस्था का ही एक अभिन्न रूप है और इसी कारण उस पर समाज में विद्यमान विभिन्न संस्थाओं का प्रभाव पड़ता है ।

विभिन्न सामाजिक संगठनों का प्रभाव

चित्र संख्या : 8.6

वास्तव में विद्यालय वह परिवेश प्रदान करता है जिसमें विभिन्न वर्गों, जातियों व सम्प्रदाय के व्यक्ति एक दूसरे के साथ रहते है, उनके साथ अन्तःक्रिया करते है व उन्हें समझने

का प्रयास करते है। यदि विद्यालय परिवेश बालक को सकारात्मक दिशा में कार्य करने के लिये उज़ख करता है तो निःसन्देह ही समाज का परिवेश भी सकारात्मक क्रियाकलापों को प्रेरित करेगा। अत: यह सत्य है कि विद्यालय समाज का प्रतिबिम्ब होते हैं ।

विद्यालय व समुदाय के संबंधों को सशक्त क्यों बनाया जाये? (Why to Establish Relationship between school and community?) - विद्यालय समुदाय का लघु रूप है । वर्तमान में सामुदायिक आवश्यकताओं के अनुरूप विद्यालय में सुधार की आवश्यकता है। विद्यालय व समुदाय के संपर्क से ही शिक्षा सुधार का कार्य प्रारम्म किया जा सकता है और जब तक दोनों में उचित संबध स्थापित नहीं होता तब तक शिक्षा प्रभावहीन बनी रहेगी । **डॉ. के.जी सेय्यदन** के अनुसार - स्कूल और समुदाय का सहयोग माता-पिता, अध्यापक या विद्यार्थी और समुदाय के परस्पर संबंध से भी अधिक बुनियादी वस्तु है। स्कूल के लक्ष्य और उद्देश्य उसकी शिक्षण विधियों और अनुशासन - सभी अन्तत: उस समुदाय के लिये जाते है जिसमें स्कूल स्थित है। यदि दोनों में सजीव और गतिशील संबंध नहीं है तो शिक्षा निर्जीव और अवास्तविक होगी तथा उसका बच्चों के मन और चरित्र पर कोई प्रभाव नहीं होगा । "

विद्यालय व समुदाय को सशक्त बनाने के प्रयास (Efforts to strengthen the relationship between school and society) -

- विद्यालय में शिक्षक व अभिभावक संघ स्थापित किये जाये और समय-समय पर अभिभावक दिवस आयोजित किये जाये ।
- शिक्षा का पूर्णरूपेण विकेन्द्रीकरण किया जाये और उसे समुदाय के नियंत्रण में रखा जायें।

विद्यालय व सामुदायिक संबंधों की वर्तमान स्थिति (Present position of the Relationship between school and society) - भारतवर्ष में यदि आज हम इन दोनों के परस्पर संबंधों की ओर दृष्टि डालें तो इन दोनों के परस्पर ताल-मेंल की स्थिति काफी दयनीय है । विद्यालय, समाज के आदर्शों का प्रसार करने वाली एक महत्वपूर्ण संस्था हुआ करते थे, और वहीं आज विद्यालय समाज के आदर्शों के विपरीत कार्य करने वाली संस्था बनते जा रहे है । आज शिक्षाविदों के समक्ष एक समस्या उत्पन्न हो रही है कि विद्यालय के परिवेश में बढ़ती हुई अनुशासनहीनता को कैसे नियंत्रित किया जाये? विद्यालयों को राजनैतिक अखाड़ा बनने से कैसे रोका जाये?

यदि वस्तुस्थिति पर- नजर डालें तो यह कहा जा सकता है कि विद्यालय शिक्षा प्रदान करने का औपचारिक साधन है तो समाज अनौपचारिक, दोनों का ही बालक के व्यक्तित्व पर पड़ता है । डॉ. के. जी. सैय्यदन ने ठीक ही कहा है, "भारत में स्कूल पद्धति की वर्तमान कमजोर स्थिति यह है कि लोग समझते नहीं कि स्कूल उन्हीं की संस्था है।"

विद्यालय व समुदाय के संबंधों पर यदि हम दृष्टि डालें तो ये तथ्य उभरकर हमारे समक्ष आते है-

- शहरों में स्थित सरकारी स्कूलों का समुदाय से औपचारिक संबंध होता है।
- प्राइवेट स्कूल और समुदाय में अपेक्षाकृत अधिक संबंध रहता है ।
- गांवों के स्कूल का समुदाय के साथ बहुत अच्छा संबंध होता है चूंकि इनमें भौतिक समीपता अधिक होती है।
- प्रत्येक विद्यालय की एक प्रबंध समिति हो जिसमें समुदाय के कुछ सदस्य रखे जायें ।

- विद्यालय में समुदाय के कुछ विशेषज्ञों को आमंत्रित किया जाना चाहिए जिनके समक्ष शिक्षकों व विद्यार्थीयों को भी अपने विचार व्यक्त करने चाहिएं ।
- विद्यालय भवन में सामुदायिक कल्याण के कार्यक्रमों को भी आयोजित किया जाना चाहिए जैसे प्रौढ़-शिक्षा कार्यक्रम आदि ।
- समुदाय में आयोजित विभिन्न समारोहों में छात्रों द्वारा स्वयं सेवकों की भूमिका का निर्वाह किया जाना चाहिए ।
- विद्यालय में आयोजित खेल-कूद संबंधी क्रियाओं के संचालन व निर्णय हेतु समाज के उन सदस्यों को आमंत्रित किया जाये जिनकी इसमें रुचि हो ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. सामुदायिक सेवा का अर्थ स्पष्ट कीजिए ।
   Clarify the meaning of community services.
2. सामुदायिक सेवा के मुख्य उद्देश्य क्या है?
   What are the main objectives of Community services?
3. सामुदायिक सेवा केन्द्र के रूप में स्कूल कैसे कार्य कर सकता है? स्कूल और समुदाय में निकटवर्ती संबंध विकसित करने हेतु एक योजना बनायें ।
   How can a school functions as a centre of community services? Draw up a scheme To develop intimate relationship between school and community.
4. आपके विचार के स्कूल और समुदाय में संतुलित संबंध स्थापित करने के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थितियां कौन-सी है ?
   What in your opinion, are the most significant conditions for ensuring harmonious school community relationship?
5. विद्यालय व समुदाय के संबंधों को सशक्त बनाने हेतु क्या प्रयास करने चाहिये?
   What efforts should be done strengthen the relationship between school and society ?

8.8 सारांश
(Summary)

राष्ट्रीय व सामाजिक विकास की दृष्टि से शिक्षा समाज के लिये अपरिहार्य है । निरन्तर ज्ञान, विज्ञान, तकनीकी व सूचना प्रौद्योगिकी विकास ने इसके महत्त्व को और बढ़ा दिया है । शिक्षा ही बालक के संपूर्ण विकास का आधार है । अत: शिक्षा के विभिन्न निकायों के माध्यम से क्रियाओं का आयोजन होना चाहिए । स्टाफ परिषद् व अध्यापक अभिभावक परिषद् एवं विद्यार्थी

परिषद् परस्पर सुनियोजित ढंग से कार्य करें तब विद्यालय में एक सुमधुर पर्यावरण का निर्माण हो जायेगा ।

स्टाफ परिषद् ही विद्यालय में शिक्षक के उत्तरदायित्व तथा शिक्षक निष्पादन का आंकलन करती है । स्टाफ परिषद् विद्यार्थीयों के संपूर्ण विकास को दृष्टि में रखकर विभिन्न उद्देश्यों यथा - विकासात्मक उद्देश्य, गुणात्मक उद्देश्य, नवाचार तथा संगठनात्मक उद्देश्य की पूर्ति करती है । अध्यापक अभिभावक परिषद् पारस्परिक विचार विनिमय एवं परामर्श द्वारा विद्यार्थीयों के प्रति अपने-अपने दृष्टिकोण से एक दूसरे को अवगत कराते है । विद्यार्थीयों की प्रगति की स्मीक्षा करते है तथा उनकी समस्याओं का मिलकर समाधान करते है । विद्यार्थी परिषद् के माध्यम से विद्यार्थी स्वशासन का प्रशिक्षण प्राप्त करते है । वे विद्यार्थी परिषद् के माध्यम से अनुशासन, खेलकूद तथा व्यायाम, सामाजिक कल्याण तथा पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन करते हैं । पाठ्य सहगामी क्रियाऐं पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग हैं । ये क्रियाऐं विद्यार्थी के समग्र व्यक्तित्व के विकास में सहायक हैं ।

विभिन्न क्रिया-कलापों के साथ-साथ विद्यार्थीयों की प्रगतिमान उपलब्धि का नियमित मूल्यांकन भी अपेक्षित है । नियमित मूल्यांकन हेतु परीक्षाओं का आयोजन किया जाता है । ये परीक्षाऐं विद्यार्थीयों की उपलब्धि का मापन करती हैं तथा उनकी दुर्बलताओं से अवगत होकर उनको दूर करने का भी प्रयास भी करती हैं । विद्यार्थीयों का उच्च आत्मविश्वास व आत्मसंप्रत्यय निश्चय ही विद्यालय की निष्पत्ति बढ़ाता है तथा सामुदायिक आवश्यकता व आकांक्षाओं की पूर्ति करता है ।

8.9 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

Agarwal, J.C : School Administration, Surya Publications, Meerut 1995

Delors, Jacques : Learning the treasure with in Report to UNESCO of the international commission education for the 21st century, 1996

Encyclopedia of Educational Research 3rd Volume, New York : Mac Mc Millian Co,1996

Hanson Mark : Educational Administration and organizational behaviour, Bosten, Allyn and Bacon,1979

Kochhar, S.K. : Secondary School Administration, Sterling Publishers, New Delhi 1970

Kabir Humanyun : Student Indiscipline, Ministry of Education Delhi, 1995

Mohiyaddin , M.S. : School organization and management, Govt of Mysore, Banglore, 1994

Mukhopadhyay Murmer : Total Quality Management in Education, NIEPA, Delhi 2001

National Society for The Study of Education : The community school fifty two years book ,University of Chicago press 1955

Pittenger ,B.E. : Local Public School Administration,Mcgraw Hill Book CO.New York.,1951

Robert Carnerio : Revitalizing community spirit ; A Glimpse of the socializing role of the school in the next century, UNESCO,1996

The Report of Education Commision, Govt of india , Ministry of Education ,1952-53, New Delhi

The Report of Secondary Education Commision Govt of india , Ministry of Education,1964-66

The Report of New Education Policy, Govt of india 1986 M.H.R.D, New Delhi

इकाई-9

विद्यालय शिक्षा की समस्याएँ
(PROBLEMS OF SCHOOL EDUCATION)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

9.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objective)

9.1 केन्द्रीकरण बनाम विकेन्द्रीकरण (Centralization v/s De-centralization)

9.2 शिक्षा का सार्वभौमिकरण (Universalization of Education)

9.3 संसाधन प्रबन्धन (Resource Management)

9.4 भारत में शिक्षा को वित्तिय समर्थन (Financial Support to Education in India)

9.6 सामुदायिक सहभागिता (Community Participation)

9.6 नौकरशाही (Bureaucracy)

9.7 सारांश (Summary)

9.8 सदंर्भ सूची (References)

विद्यालयी शिक्षा की समस्याएँ : केन्द्रीकरण बनाम विकेन्द्रीकरण, प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण नामांकन, ठहराव व छोड़ के जाने वाले विद्यार्थी व उपलब्धि के संदर्भ में संसाधन प्रबन्धन : भौतिक एवं मानव, सामुदायिक सहभागिता, नौकरशाही, वित्तिय समर्थन

Problem of School Education: Centralization v/s De-centralization. Universalisation of Education in relation to Enrolment, Retention, Dropouts, and Achievement. Resource Management: Physical and Manpower, Community Participation, Bureocratisation, Financial Support.

9.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objective)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप -

- केन्द्रीकरण व विकेन्द्रीकरण को परिभाषित कर सकेंगे ।
- केन्द्रीकरण एवं विकेन्द्रीकरण आधारित शैक्षिक व्यवस्थाओं की विवेचना कर सकेंगे ।
- भारत में विकेन्द्रित व केन्द्रीकृत शिक्षा व्यवस्था की समस्याओं का विश्लेषण करते हुए सम्भावित समाधान सुझा सकेंगे ।
- शिक्षा के सार्वभौमीकरण का अर्थ बता सकेंगे ।

- शिक्षा के सार्वभौमीकरण में 'सार्वभौमिक नामांकन, (Universal enrollment) सार्वभौमिक ठहराव (Universal retention) एवं विद्यालय बीच में छोडने की प्रवृति (Drop-out) स्थिति और उसके प्रभाव बता सकेंगे ।
- शिक्षा के सार्वभौमीकरण के उपाय सुझा सकेंगे ।
- शिक्षा के सार्वभौमीकरण के प्रयासों का समाकलन (Appraisal) कर सकेंगे ।
- मानवीय एवं भौतिक संसाधनों के सुप्रबन्धन की आवश्यकता विवेचित करते हुए भारत में संसाधन प्रबन्धन की स्थिति की समीक्षा कर सकेंगे ।
- शिक्षा के लिए वित्तिय समर्थन (Financial Support) की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकेंगे ।
- सामुदायिक सहभागिता का अर्थ बताते हुए शिक्षा हेतु सामुदायिक सहभागिता के उपयोगी कार्यक्रम प्रस्तुत कर सकेंगे ।
- शिक्षा में नौकरशाही की भूमिका की विवेचना कर सकेंगे ।

9.1 केन्द्रीकरण बनाम विकेन्द्रीकरण (Centralization v/s De-centralization)

किसी भी शैक्षिक व्यवस्थाओं का संचालन करने हेतु किसी न किसी प्रकार के प्रावधान होते है । इन प्रावधानों को लागू करने हेतु सत्ता (Authority) द्वारा निर्णय लिये जाते है व इन निर्णयों की क्रियान्विति या परिपालना के आदेश देते हुए उनकी अनुपालना सुनिश्चित की जाती है।

शिक्षा संगठन चाहे निजी हो, शासकीय हो या अर्धशासकीय, उसको अपने निर्धारित उद्देश्यों संरचनाओं, संसाधनों, कार्यकर्ताओं और लाभार्थी समूहों से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं को सक्रिय परिणाम देने या उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु निर्णय लेने व उन्हे क्रियान्वित करने की गत्यात्मक प्रक्रिया निरन्तर अपनानी पड़ती है ।

केन्द्रीकरण व विकेन्द्रीकरण का अर्थ (Meaning of Centralization and De-centralization) -

एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज में केन्द्रीकरण व विकेन्द्रीकरण की निम्न परिभाषा बताई गई है ।

"The process of decentralization denotes transfer of authority, legislative, judicial or administrative from a higher level of government to a lower. It is the converse of centralization a term generally used to denote the more delegation to a subordinate officer of capacity to act in the name of superior without a transfer of authority from him.

(Encyclopedia of social science, Vol-II, The Macmilon & co.)

अर्थात विकेन्द्रीकरण प्रक्रिया में सत्ता विधायी शक्ति (Legislative Power) न्याय या प्रशासन उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर हस्तांतरित होती है । केन्द्रीकरण इसके विपरीत है, जिसमें उच्च पदाधिकारियों को वास्तविक सत्ता को हस्तांतरित किये बिना ही कार्य सम्पादित

करने की शक्ति या क्षमता हस्तांतरित कर दी जाती है जिसका क्रियान्वयन नीचे के पदाधिकारी बिना सत्ता के हस्तांतरण के करते हैं ।

एक केन्द्रीकृत संगठन (Centralized Organization) में एक या अधिक प्रमुख व्यक्तियों में यह सत्ता' या निर्णय - निर्माण के अधिकार उच्च स्तर पर केन्द्रीभूत होते हैं जबकि विकेन्द्रीकृत शिक्षा व्यवस्था में यह शक्ति संगठन के निचले पद सोपानों (hierarchy) सहित विभिन्न सम्बद्ध समूहों या व्यक्तियों में विकेन्द्रित (decentralized) रहती है ।

दूसरे शब्दों में व्यक्ति या समूह में स्थानीय व्यक्ति व समूह जन प्रतिनिधि, अधीनस्थों सहित 'सत्ता' या व्यक्ति के केंन्द्र बिन्दु संगठन की सभी इकाइयों में निहित रहते हैं । यह प्रश्न उठते रहते हैं कि शिक्षा - संगठनों का संचालन 'केन्द्रित' हो या विकेन्द्रित'

केन्द्रीकरण क्यों? (Why Centralization) - आज शिक्षा का जो स्वरूप आप देख रहे हैं उसमें केन्द्रीकरण की बड़ी भूमिका रही है । पहले शिक्षा निजी स्तर पर गुरूओं, मौलवी या कारीगरों द्वारा उस्तादों की देखरेख में चलती थी । यह एक प्रकार से प्रत्यक्ष करके सीखने की 'Apprenticeship' प्रणाली थी । धीरे-धीरे इस पर सामुदायिक आधिपत्य बढता गया और धर्म, जाति या अन्य प्रभावी सामुदायिक संगठनों द्वारा शिक्षा दी जाने लगी । इस प्रणाली में प्रशिक्षित प्रशिक्षकों के उपलब्ध न होने से गुणवत्ता बनाए रखते हुए आवश्यकताओं की पूर्ति संभव नहीं हो पा रही थी । दूसरी ओर शिक्षा की बढ़ती उपयोगिता को देखते हुए विभिन्न देशों की सरकारों ने शिक्षा व्यवस्था को अपने अधिकार में लेना प्रारम्भ कर दिया । यूनेस्को की अन्तर्राष्ट्रीय शैक्षिक नियोजन संस्थान (Report of International Institute of Educational Planning) के अनुसार केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति के मूल में दो परिवर्तन थे -

(1). शिक्षा संचालन में केन्द्रीकरण की प्रक्रिया 19 वीं व 20 वीं शताब्दी में उदित राष्ट्रीय राज्यों और मजबूत सरकारों के कारण व्यापक पैमाने पर अपनाई जाने लगी ।

(2). शिक्षा क्षेत्र में शिक्षा का प्रसार, विद्यालयों की स्थापना एवं उनकी गुणवत्ता हेतु नियंत्रण बढ़ता गया । इस प्रकार "शिक्षा पर शासकीय नियंत्रण अभूतपूर्व गति से बढ़ता गया । (Control of education ended up more centralized than ever before)

विज्ञान की नई खोजों ने विश्वस्तर पर शिक्षा की स्थापना, मानकीकरण (Standardization) एवं गुणवत्ता को बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान दिया ।

शिक्षा के केन्द्रीकरण के लाभ (Merits of centralization of Education) -

एन. मैकजिन एवं वेल्श (N. Mcgenn and welsh, 1999) के अनुसार "व्यापक स्तर पर आज हम शिक्षा के गुणात्मक स्तरों में जो नवीनीकरण, उन्नयन देख रहे है वह केन्द्रीकृत शासकीय व्यवस्था के ही परिणाम है ।'

(It reminds us that what we have achieved today is a large measure of Standardization, made possible through centralization of the governance of education)

केन्द्रीय शैक्षिक व्यवस्था के निम्न लाभ देखे गये हैं-

(i) विशेषज्ञ एवं अनुभवी व्यक्तियों द्वारा शिक्षा का प्रबन्धन ।

(ii) केन्द्रिय शासन व्यवस्था में शिक्षा के उद्देश्यों का स्पष्ट व एकरूप निर्धारण संभव होता है और बिना स्थानीय दबावों से प्रभावित हुए निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने की प्रक्रिया का कड़ाई से अनुसरण किया जा सकता है ।

(iii) शिक्षा के स्तरों को मानकीकृत (Standardize) करते हुए समान गुणवत्ता प्राप्त करने की दृष्टि से यह व्यवस्था बेहतर है ।

(iv) आम नागरिकों की शिक्षा में भागीदारी बढ़ती है क्योंकि केन्द्रीकृत व्यवस्था में सार्वजनिक क्षेत्र की शिक्षा (Public sector) का विस्तार तीव्र गति से सम्भव है । यह शिक्षा के सार्वभौमीकरण (Universalization of education) का आधार बनता है ।

(v) शासकीय केन्द्रीकरण से शिक्षा में निवेश बढ़ता है । सरकारी 'रेवेन्यू' या आर्थिक संसाधनों से शिक्षा क्षेत्र में बड़ी राशि जुटाना और निवेश करना सम्भव हुआ है । परिणामत शिक्षा सुधार को बल मिला है ।

(vi) शिक्षा राष्ट्रीय विकास में सहायक बनती है । परिवर्तनों एवं आधुनिकीकरण के मूल्यों को आत्मसात् करते हुए अल्प समय में उन्हें लागू करना सम्भव है ।

(vii) भौगोलिक आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की अलग से समस्याओं को समझने व उन्हें शैक्षिक अवसर प्रदान करने के विशेष उपाय केन्द्रीकृत शैक्षिक व्यवस्था में अपनाने सुगम होते हैं ।

विकेन्द्रीकरण (Decentralization) - प्रश्न उठता है कि केन्द्रीकंरण में इतनी कुछ विशेषताएं हैं तो विकेन्द्रीकरण की क्या आवश्यकता है? वस्तुत: 1970 के दशक में तीन महत्वपूर्ण कारणों से विकेन्द्रीकरण का विकल्प शिक्षा के क्षेत्र में लोकप्रिय बनता गया -

प्रथम, 1970 से 1980 के दशकों में पश्चिम में केन्द्रीकरण समर्थकों में कमी आने लगी। सोवियत रूस ओर पूर्वी यूरोप में अति केन्द्रवाद के विरोध के स्वर उठने लगे और विकेन्द्रीकरण के विकल्प उभरने लगे ।

द्वितीय, आर्थिक और वित्तिय वैश्वीकरण से केन्द्र सरकारें निष्प्रभावी होने लगीं । राष्ट्रीय राज्यों के ऊपर वैश्विक संगठनों का प्रभाव बढ़ता गया और 'बाजारीकरण' की शक्तियों ने स्थानीय समूहों और 'निजीकरण' (Privatization) एवं गैर राजनैतिक संगठनो (NGO's) की महत्ता बढ़ा दी अर्थात वैश्वीकरण (Globalization), उदारीकरण (Liberalization) एवं निजीकरण (Privatization) के दौर में शिक्षा के केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति ने विकेन्द्रीकरण की ओर रूख कर लिया ।

तृतीय, विश्वभर में शिक्षा व्यवस्था के विस्तार एवं नामांकन संख्या में तिगुनी वृद्धि दर्ज हो चुकी थी । शिक्षकों एवं छात्रों की बढ़ती हुई संख्या एक केन्द्र के प्रशासन में रखना कठिन था । केन्द्रीय नौकरशाही द्वारा शिक्षा की गुणवत्ता बनाए रखना भी आसान नहीं रहा ।

उक्त कारणों के साथ-साथ नई संचार क्रान्ति (Communication technology) से यह सम्भव होने लगा कि स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने की क्षमता की सुदृढ़ व्यवस्था बन सके ।

विकेन्द्रीकरण का स्वरूप (Images of decentralization) - विकेन्द्रीकरण से अभिप्राय सत्ता को एक केन्द्र बिन्दु से अनेक स्तरों पर वितरण या हस्तांतरण हैं इसके अनेक रूप हो सकते है-

(1) पिरामिड स्परूप (Pyramid image of decentralization) : इसके अन्तर्गत सत्ता का केन्द्र कोई एक नेता या किसी शीर्षस्थ निकाय में निहित होता है जो समग्र संगठन के लिये निर्णय लेते है । इन संगठनों की रचना पदानुक्रमवत् (hierarchical) होती है । उच्च पदस्थ निम्न की (या शीर्ष से धरातल तक) सत्ता का विकेन्द्रण करता है । उदाहरणार्थ सत्ता के सर्वोच्च शिखर पर केन्द्र सरकार, राज्य सरकार जिला प्रशासक एवं स्थानीय शासन हेतु विभिन्न संस्थानों में शिक्षा प्रशासन व संगठन संचालित होता है । शक्ति का प्रचार केन्द्र से स्थानीय स्तर तक होता है ।

The Pyramid image of decentralisation

चित्र संख्या. 9.1

(2) औक्टोपस स्वरूप (Octopus image): प्रशासन व निर्णय शक्ति मध्य केन्द्र में स्थित होती है एवं उसका हस्तांतरण चारों ओर इस प्रकार किया जाता है कि केन्द्र अपने चारों ओर फैली शाखाओं से जुड़ा रहे व उन पर नियंत्रण रख सके । उदाहरणार्थ विद्यालयों सम्बन्धी निर्णय केन्द्र स्तर पर अलग होते है किन्तु शिक्षक या अध्यापक अपनी अपनी कक्षाओं में इन सुनिश्चित आधारों पर शिक्षण करने हेतु स्वायत है ।

अष्टवाही छवि

The Octopus Image of Decentralization

चित्र संख्या : 9.2

(3) संकेन्द्रण छवि (Concentric image) - के आधार पर विकेन्द्रण में प्रत्येक सत्ता केन्द्र की सुपरिभाषित अधिकार सीमा होती है किन्तु यह विभिन्न स्तरों पर एक दूसरे पर अर्न्तनिर्भर भी करती है जैसे भारत में केन्द्र सूची, राज्य सूची व समवर्ती सूचियों द्वारा प्रत्येक स्तर पर सत्ता संस्तरण का स्पष्ट उल्लेख है ।

चित्र 'अ'

(Figure 'A')

चित्र संख्या : 9.3

(4) परस्पर वरित स्वरूप (Overlapping Image): चित्र 9.4 में विकेन्द्रीकरण की विभिन्न स्तरों पर स्पष्टता निर्धारित है किन्तु केन्द्र, राज्य, स्थानीय व जिला प्रशासन किसी स्तर पर एक दूसरे में अर्न्तव्याप्त है व परस्पर निर्भर हैं ।

चित्र संख्या : 9.4

इस प्रकार विकेन्द्रीकरण किसी भी प्रकार का हो यह निश्चित है कि इसके दो मूल आधार होगें ।

(1). सत्ता का बँटवारा (dispersal)

(2). सत्ता के विभिन्न भागों के मध्य दूरी या अन्तराल

(increased space between the constituent parts)

(3). सत्ता के विभिन्न पक्षों में परस्पर कमजोर सम्बन्ध (Weekend relationship)

इस प्रकार सत्ता केन्द्रो का विभाजन/बाँटवारा या 'dispersal' तथा विभिन्न भागों में दूरी /अन्तराल या 'space' विकेन्द्रीकरण की ऐसी व्यवस्था बनाती है जहाँ विविधता पनप सके और निजत्व (individuality) या वैयक्तिक भिन्नताओं का विकास हो सके ।

प्राय: **समाजवादी व्यवस्थाओं** में पिरामिड रूपी शिक्षा प्रशासन प्रचलित है । चीन और रूस में शिक्षा मंत्रालयों के साथ साथ साम्यवादी दल का भी नियंत्रण हैं । इस दोहरे नियंत्रण के साथ साथ प्रादेशिक, स्थानीय व विद्यालय, स्तर पर केन्द्रीय नीतियों को लगभग समान रूप से लागू किया जाता हैं |

संयुक्त राज्य अमेरिका का शिक्षा प्रशासन भी केन्द्र, राज्य एवं स्थानीय स्तरों में संगठित है । जिला स्तर पर विद्यालय पर्याप्त स्वायत्तता रखते है एवं केन्द्र इनमें कम से कम हस्तक्षेप करता है ।

भारत में संघीय व्यवस्था को सुदृढ़ रखा गया है । परिणामत: नीति निर्धारण में केन्द्र अधिक शक्तिशाली है जबकि चुनिंदा विषयों पर राज्य स्वायत है ।

विकेन्द्रीकरण एवं शैक्षिक उन्नयन (Decentralization and Educational Improvement)

(1). विकेन्द्रीकरण से शिक्षा व्यवस्था में प्रत्यक्ष सुधार की सम्भावनाएँ हैं । उदाहरणार्थ इस व्यवस्था द्वारा

- विद्यालयों में प्रत्यक्ष सुधार के अवसर सम्भव हैं ।
- शिक्षा की पाठ्यचर्या को स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला जा सकता है ।
- शैक्षिक कार्यक्रमों में नवीनता को अपनाना सम्भव होता है ।
- छात्रों को विविधता पूर्ण शैक्षिक विकल्प उपलब्ध रहते हैं ।
- असमानता दूर करने व शैक्षिक अवसरों में समानता उपलब्ध कराने की दृष्टि से अधिक उपयुक्त व्यवस्था है ।
- सीखने की प्रक्रिया एवं परिणामों को प्रभावी बनाने में सहायक ।

(2). शैक्षिक व्यवस्था के संचालन में सुधार अर्थात् -

- उपलब्ध संसाधनों के वितरण (allocation) की व्यवस्था में सुधार
- संसाधनों का समुचित प्रयोग सुनिश्चित करना ।
- नियोजकों (employess) या नियोक्ताओं की आवश्यकता पूर्ति की उपयुक्त व्यवस्था सम्भव ।
- उपलब्ध तथ्यों, स्थानीय सूचनाओं, नई खोजो एवं नवान्वेषणों (research and innovations) को प्रयुक्त करने की अधिक सम्भावनाएँ ।

(3). उपलब्ध धन राशि एवं अन्य संसाधनों को उपादेयता के आधार पर पुनर्वेशित करना (Change and reallocate)

(4). केन्द्रीय प्रशासन या सरकार की दृष्टि से लाभप्रद अर्थात्

- केन्द्र सरकार की प्रशासनिक समस्याओं को दूर करने या कम करने में सहायक ।

- केन्द्र की वित्तिय समस्याओं को हल करना व उन्हें स्थानीय स्तर पर हस्तांतरित करना सम्भव ।
- शासकीय दायित्वों की निचले स्तर तक सहभागिता बढाने से उच्च स्तरीय भ्रष्टाचार को नियंत्रित रखना सम्भव ।

(5). स्थानीय शासन की दृष्टि से लाभप्रद: अर्थात् -

- स्थानीय स्तर के संसाधनों के शैक्षिक प्रयोग को बढ़ाना और वित्तिय स्थिति सुधारना (increase revenues)
- स्थानीय निकायों को सुदृढ़ करना ।
- स्थानीय आवश्यकताओं के प्रति केन्द्र को अधिक सतर्क व सहयोगी बनाना ।
- केन्द्रीकृत सत्ता को स्थानीय स्तर पर हस्तांतरित करते हुए विकेन्द्रित करना ।

भारत में शिक्षा का केन्द्रीकरण व विकेन्द्रीकरण (Centralization and De-centralizationin Indian Education)- स्वतन्त्र भारत में प्रारम्भिक वर्गो में शिक्षा के केन्द्रीकरण पर बल रहा समाजवादी शासन व्यवस्था के चलते शिक्षा को संविधान के द्वारा संरक्षण दिया गया एवं अनिवार्य निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा के संकल्प के साथ शिक्षा को केन्द्रीय, प्रान्तीय, और समवर्ती सूचियों में महत्त्व के आधार पर स्थान दिया गया हैं । केन्द्र सरकार शिक्षा में वित्तिय सहायता (Financial support) के माध्यम से नियंत्रित रखती है । अन्य प्रावधान आगे दिये जा रहे है- जो केन्द्र सरकार का शिक्षा में दखल के सूचक है ।

(i) केन्द्र शासित प्रदेश (Centrally administrative areas) देहली सहित अन्य केन्द्रशासित प्रदेशों पर पूर्णत: केन्द्र का प्रशासन रहता है ।
(ii) केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के संचालन द्वारा ।
(iii) अखिल भारतीय संस्थानों की स्थापना ।
(iv) वित्तिय सहायता द्वारा व राष्ट्रीय नियोजन द्वारा ।
(v) राष्ट्रीय शिक्षा सलाहकार संगठनों के माध्यम से ।

विकेन्द्रीकरण (De-centralization) - विकेन्द्रीकरण में मुख्य प्रशासनिक दायित्व स्थानीय प्रशासन और राज्य स्तर की सबसे निचली कड़ियों तक वहन किये जाने हेतु विकेन्द्रित होते हैं । राज्य सूची में संगठित व समवर्ती सूची के विषयों पर राज्य सरकार को कानून बनाने का और उन्हें नियन्त्रित करने का अधिकार प्राप्त है ।

पंचायती राज्य अधिनियम 1992 द्वारा शिक्षा के विकेन्द्रीकरण को गति मिली है । हर गांव या कुछ गांवो से मिलकर पंचायतें बनती है । प्रत्येक पंचायत में ग्राम शिक्षा समितियों (village education committees) का गठन एवं उन्हें पर्याप्त अधिकार दिये गये हैं गैर सरकारी क्षेत्र द्वारा उन्हें पर्याप्त अधिकार दिये गये हैं । गैर सरकारी क्षेत्र द्वारा शिक्षा दूरस्थ शिक्षा व खुले विद्यालयों (open schools and distance education system) ने शिक्षा की विकेन्द्रित प्रणाली को मजबूत किया है । शिक्षा में अधिकाधिक लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु विकेन्द्रित प्रबन्ध व्यवस्था (De-centralized organizational system) पर प्रतिबल दिया जा रहा है ।

प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम को सर्वसुलभ बनाने में सर्वशिक्षा अभियान को विकेन्द्रित संगठन की बुनियाद पर संचालित किया जा रहा है । केन्द्र तथा राज्य सरकार मिल कर स्थानीय

निकायों तथा समुदाय के सहयोग से इस लक्ष्य को प्राप्त करने तथा पंचायती राज्य संस्थाओं, गैर सरकारी संगठनों शिक्षकों, स्वयं सेवकों, कलाकारों, महिला संगठनो, को शामिल कर जवाबदेह (Accountable) बनाया जा रहा है ।

चित्र संख्या. 9.5

विकेन्द्रीकरण को सुनिश्चित करने हेतु स्कूल आधारित कार्यक्रमों को सामुदायिक स्वामित्व से और प्रभावी बनाने की अपेक्षा की गई है । सामुदायिक मॉनिटरिंग (monitoring) को सुनिश्चित किया गया है । जब तक स्थानीय स्तर पर अभिभावक छात्र एवं लोकतान्त्रिक संस्थाएं पूर्ण सजगता से स्थानीय इकाइयों की कार्यप्रणाली की 'मॉनिटरिंग; करते हुए शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति में सक्रिय नहीं होगी, विकेन्द्रित व्यवस्था से अपेक्षित लाभ प्राप्त नहीं हो सकता।

9.2 शिक्षा का सार्वभौमिकरण (Universalization of Education)

शिक्षा मानव के सर्वागीण विकास के साथ साथ राष्ट्र के विकास का भी आवश्यक जरिया है । सामाजिक-आर्थिक विकास के सूचकांक (indicators), जैसे अर्थ व्यवस्था की वृद्धि दर,

(growth rate of economy) जन्म-दर (birth rate), मृत्यु-दर (death rate), शिशु-मृत्यु-दर (infant mortality rate) एवं साक्षरता दर आदि परस्पर सहसम्बन्धित हैं । किन्तु उक्त सभी विकास के सूचकांक सर्वाधिक रूप से साक्षरता दर से प्रभावित होते हैं । भारत एवं विश्व में इस बात के पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि साक्षरता दर के बढ़ने पर महिलाओं में परिवार नियोजन करने और जन्म दर में कमी लाने, बाल मृत्यु दर में कमी होने, जीवन स्तर और आयु में वृद्धि होने से राष्ट्रीय विकास और जीवन की गुणवत्ता का उन्नयन होता है । शिक्षा के सार्वभौमीकरण के प्रयासों पर प्रतिबल (Thrust) आज सभी क्षेत्रों में दिया जा रहा है । प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण भारत की राष्ट्रीय प्राथमिकता बना हुआ है ।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण पर संवैधानिक, विधायी, राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय कर्तव्य (Constitutional, Legal, National and International Declaration of Education for all) -

- **संवैधानिक प्रावधान 1950**: संविधान की धारा 45 में उल्लेख है कि "राज्य इस संविधान के लागू होने से 10 वर्ष की अवधि में सभी बच्चों को, जब तक वे 14 वर्ष की आयु पूर्ण नहीं कर लेते, निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा ।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 बीसवीं सदी के अन्त तक निरक्षरता का कलंक देश के माथे पर नहीं रहेगा । "इक्कीसवीं शताब्दी में पहुँचने से पहिले यह देश 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को संतोषजनक कोटि की निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा सुनिश्चित करेगा ।'
- **उन्नीकृष्णन समिति निर्णय, 1993** : "चौदह वर्ष की आयु पूरी करने तक देश के प्रत्येक बालक / नागरिक को निशुल्क शिक्षा का अधिकार है ।"
- **शिक्षा मंत्रियों का संकल्प 1988** : "सर्व सुलभ प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के लक्ष्य को मिशन के रूप में पूर्ण किया जाएगा ।
- **राष्ट्रीय समिति 1999 का प्रतिवेदन** : सर्वसुलभ प्रारम्भिक शिक्षा के लिये जिला प्रारंम्भिक शिक्षा योजनाओं की तैयारी पर बल, समय एवं केन्द्रीभूत (Focused) दृष्टिकोण से सर्वशिक्षा मिशन या अभियान (SSA) संचालित होगा ।
- शिक्षा का मूल अधिकार (Fundamental right) सन् 2002 में 86 वें संविधान संशोधन विधेयक द्वारा शिक्षा प्राथमिक शिक्षा को मूल अधिकार का दर्जा दे दिया गया है।

प्राथमिक शिक्षा का दूसरा पहलू (The other side of the picture of UEE) -

- 6-14 वर्ष की आयु के लगभग 3,5000000(3.5 मी) बालकों का ही नामांकन हो पाया जबकि इस आयु वर्ग के 2,0000000 बालक शिक्षा प्राप्त करने के अधिकारी हैं ।
- 3,500,0000 बालिकाएँ (3.5 मि.) एवं 24 मि. लड़के विद्यालयों में नामांकित तक नहीं हो पाए हैं ।
- अभी देश में 1 लाख से अधिक ऐसी बस्तियाँ व टीले हैं जहाँ एक किलो मीटर की दूरी में विद्यालय नहीं हैं ।
- विद्यालय भवन सुविधा सम्पन्न नहीं हैं ।

- शिक्षकों की अनुपलब्धि, तथा नीरस शिक्षण प्रक्रिया के कारण शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लक्ष्य अभी दूर है ।
- नामांकित करने के साथ साथ क्षेत्रों का ठहराव एवं अपव्यय अवरोधन (Wastage and stagnation) पर नियंत्रण भी इतना ही आवश्यक है ।

नई शिक्षा नीति (1986) एवं पुन:निरीक्षण प्रतिवेदन (1992) में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण हेतु तीन क्षेत्रों पर बल दिया गया है ।

1 सार्वभौमिक नामांकन (Universal Enrollment)

2 शिक्षा सुविधाओं की सार्वभौमिक उपलब्धि (Universal Availability of Schooling)

3 सार्वभौमिक ठहराव (Universal Retention)

(i) सार्वभौमिक नामांकन (Univeral Enrollment) - 86 वें संविधान संशोधन विधेयक 2002 द्वारा 6 से 14 वर्ष तक के बालकों के लिये निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने का मूल अधिकार प्रदान किया गया है । देश में सर्वशिक्षा अभियान के अन्तर्गत इस लक्ष्य तक पहुँचने का प्रयास हो रहा है ।

सर्वशिक्षा अभियान (Education for all) द्वारा - केन्द्र व राज्य सरकारों के समन्वित प्रयासों द्वारा 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु वर्ग के सभी बालकों को 2010 तक उपयोगी व कोटिपरक प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करना है । चरण बद्ध संचालित इस अभियान द्वारा स्त्री पुरूष असमानता को दूर करने एवं सामाजिक अंतर को समाप्त करने की परिकल्पना की गई है ।

तालिका 9.1

वर्तमान में नामांकन की स्थिति

वर्ष 1999-2000 से 2003 - 04 तक नामांकन वृद्धि

(Enrollment growth by stages, 1999-2000 to 2003-2004)

(सभी मिलीयन में)

वर्ष Year	प्राथमिक स्तरीय 1-5 Primary (Grade I-V)			उच्च प्राथमिक स्तरीय कक्षा 6-8 Upper Primary (Grade VI-VIII)		
	छात्र Boys	छात्राएँ Girls	योग Total	छात्र Boys	छात्राएँ Girls	योग Total
1999-2000	64.1	49.5	113.6	25.1	17.0	42.1
2000-2001	64.0	49.8	113.8	25.3	17.5	42.8
2001-2002	63.6	50.3	113.9	26.1	18.7	44.8
2002-2003	65.1	57.3	122.4	26.3	20.6	46.9
2003-2004	68.4	59.9	128.3	27.3	21.4	48.7
2004-2005	70.12	61.56	131.69	28.71	22.96	51.67
	1.7%	5.2%	3.2%	2.2%	6.5%	3.9%

वार्षिक दर

Source: SES MHRD

Provisional

उक्त तालिका से स्पष्ट है प्राथमिक स्तर पर देश में समग्र नामांकन दर में 3.2 प्रतिशत की दर से और उच्च प्राथमिक स्तर पर 3.9 प्रतिशत की दर से वार्षिक वृद्धि हुई है । छात्राओं के नामांकन की दर में छात्रो की तुलना में तीव्र गति से बढ़ोतरी हुई है । (प्राथमिक स्तर पर 5.2 प्रतिशत, उ.प्रा. स्तर पर 6.5 प्रतिशत)

(ii) शिक्षा सुविधाओं का सार्वभौमिकरण (To universalize the availability of schools) - अध्ययन यह सिद्ध करते है कि जिस स्तर तक आस पास विद्यालय उपलब्ध होता है उस क्षेत्र के बालक बालिकायें उस स्तर तक पढ़ने जाते हैं । प्राथमिक स्तरीय शिक्षा सुविधाओं के अभाव में शिक्षा के सार्वजनीकरण के लक्ष्यों को प्राप्त करना सम्मव नहीं । देश में लगभग 83.4 प्रतिशत छात्रों को ही एक किलो मीटर के दायरे में स्कूल उपलब्ध है ।

सर्वशिक्षा अभियान ने वर्ष 2004-05 की अविधि में 44719 नए विद्यालय खोले, 29018 स्कूल भवनों का निर्माण किया, 10,431 नये शिक्षकों की नियुक्ति की और 50,044 विद्यालयों में सुविधाओं की व्यवस्था की ।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिये अपनाए गये डी.पी.ई.पी कार्यक्रम द्वारा भी 1,60,000 से अधिक स्कूल जिनमें 84,000 वैकल्पिक शिक्षण केन्द्र हैं, खोले गये । जिनमें 35 लाख बालक नामांकित हैं व शिक्षा ग्रहण का रहे हैं ।

इसके बावजूद एक अध्ययन के अनुसार विद्यालय जाने वाली आयु वर्ग के लगभग 1,00,000 बालकों के निवास स्थल पर विद्यालय उपलब्ध नहीं है न ही इनके 1 किलो मीटर के दायरे में कोई विद्यालय है।जहाँ विद्यालय भवन बने हुए हैं, वहाँ विद्यालय भवनों में मूलभूत शिक्षण सामग्री और सुविधाओं का अभाव है ।

(iii) विद्यालय में बने रहने का सार्वभौमिकरण (Universal Retention) - विद्यालय में प्रवेश लेना ही पर्याप्त नहीं छात्र-छात्राओं का वही पढने के लिये टिके रहना या बने रहना भी आवश्यक है । समस्या तब होती है जब नामांकन के उपरान्त छात्र विद्यालय से ड्रॉप होने लगते हैं । कक्षा V से पूर्व प्रवेश लेने वाले प्रत्येक 100 छात्रो में से केवल 40 (लड़कों में 45 व लड़कियों में 35) कक्षा V में तथा केवल 35 कक्षा VIII में पहुँचते हैं । इस प्रकार प्राथमिक स्तरीय पढ़ाई बीच में छोड़ने वाले और विद्यालय शिक्षा के आठों स्तरों को पूर्ण करने वाले छात्रों की संख्या शत प्रतिशत रहनी चाहिए ।

प्राथमिक विद्यालय शिक्षा पूर्ण करने से पूर्व स्कूल छोडने वाले विद्यार्थी-शिक्षा के सार्वभौमीकरण की बहुत बड़ी समस्या है । निम्न तालिका में प्राथमिक शिक्षा पूर्ण नही करने वाले तथ्य प्रस्तुत हैं ।

तालिका 9.2: प्राथमिक शिक्षा बीच में छोड़ने वाले विद्यार्थीयों की दर

(DROPOUT RATE PRIMARY)

वर्ग(Category)	2001-2002	2002-2003	2003-2004
S.C. अनु. जाति	45.18	41.47	36.56
S.T. अनु.जं. जाति	42.14	51.37	48.93
ALL सभी	39.03	34.89	31.36

Source: Selected Education survey MHRD

तालिका 9.3: प्रगति, ठहराव एवं विद्यालय बीच में छोड़ने वाले विद्यार्थी दर

(Promotion, Repetition and dropout rates in 02-03, 03-04 and 04-05)

वर्ग	2001-2002			2002-2003			2003-2004		
(Gender)	प्रोन्नति Promotion	पुनरावृति Repetition	छोड़ देंना Drop out	प्रोन्नति Promotion	पुनरावृति Repetition	छोड़ देंना Drop out	प्रोन्नति Promotion	पुनरावृति Repetition	छोड़ देंना Drop out
छात्र Boys	81	5	15	82	5	13	83	4	13
छात्राएँ Girls	80	5	15	82	5	13	83	4	13
योग Overall	80	5	15	82	5	13	84	4	13

Source: DISE data

Note: (NIEPA) नीपा ने इसे औसत ड्राप ऑउट रेट माना है ।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण में बाधक तत्व (Barriers in the achievement of universalization of Elementry Education)

(1). सामाजिक कारक (Social factors) - भारतीय समाज में प्रचलित बाल विवाह, लडकियों के प्रति संकीर्ण दृष्टिकोण, जातियों के संस्कार और दहेज जैसी कुप्रथाएं शिक्षा के प्रति उचित दृष्टिकोण के विकास में बाधक हैं । कुछ अभिभावक सह-शिक्षा में बालिकाओं को नहीं पढ़ाते हैं ।

(2). आर्थिक कारण (Economic factors) - निर्धन अभिभावक बच्चों की शिक्षा दीक्षा के स्थान पर उन्हें काम-धन्धे में लगाना आवश्यक समझते हैं । शिक्षा का व्यय भार वहन करना उनके लिए सम्भव नहीं ।

(3). शैक्षिक कारक (Educational factors).

- अभिभावक का न्यून शैक्षिक स्तर का या निरक्षर होने पर बालकों की शिक्षा को उचित महत्व नहीं मिल पाता ।
- शिक्षा के पाठ्यक्रम, पद्धतियों एवं विषयों का बालकों के स्थानीय जीवन, अनुभव और आवश्यकताओं से उचित तालमेंल न होने से बालक उनमें रूचि नहीं लेता ।
- निकटतम क्षेत्र में विद्यालयों की अनुपलब्धि ।
- विद्यालय ढाँचा मूलभूत सुविधाओं से वंचित होने के कारण बालको को विद्यालयी स्थितियाँ आकर्षित नहीं कर पातीं ।
- शिक्षकों की अनुपलब्धि या लम्बी छुट्टियॉ छात्रों को हतोत्साहित करती हैं । शिक्षक जब बालकों का मनोवैज्ञानिक सम्बल नहीं बन पाता है तो बालक को विद्यालय कारागह सा लगता है ।
- शिक्षा का अपव्यय व अवरोधन ।

(4). विविध कारण (Other Reason)

- अध्यापकों को मलेरिया टीकों, एड्स जागरूकता, पशु गणना, जनगणना, मेंले-त्यौहार, नेताजी के सत्कार आदि कई राष्ट्रीय एवं स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार विद्यालय से बाहर भेज दिया जाता है ऐसे में वह छात्रों पर पूरे सत्र ध्यान नहीं दे पाता है ।
- विद्यालयों में विभिन्न आयु वर्ग के छात्र एक साथ होते है यह आयु विषमता छात्रों की अनेक समस्याओं को जन्म देती है ।
- स्वास्थ्य एवं शारीरिक दोष भी बालकों को विद्यालय से अलग कर सकते हैं ।
- भौगोलिक और प्राकृतिक विषमताएं भी शिक्षा को निरन्तर रखने में बाधा बनती हैं ।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के कुछ महत्वपूर्ण प्रयास व कार्यक्रम (Special Programmes for Universalization of Elementary Education) - भारत जैसे विशाल देश में यद्यपि सभी की शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति एक विशाल लक्ष्य है । 9 वीं व 10 वीं पंचवर्षीय योजनाओं में प्राथमिक शिक्षा क्षेत्र शिक्षा के अन्य सभी क्षेत्रों से सर्वोच्य वरीयता प्राप्त रहा है । इस दिशा में महत्वपूर्ण कतिपय कार्यक्रमों व प्रयासों का विवरण निम्नवत है ।:-

(1). आपरेशन ब्लैक बोर्ड (Operation Black Board) - इस कार्यक्रम को नई शिक्षा नीति 1986 के सुझावानुरूप 1987-88 से प्रारम्भ किया गया । इसके अन्तर्गत शिक्षण- अधिगम परिस्थितियों में सुधार हेतु विद्यालयों को सुविधा सम्पन्न बनाने का प्रयास किया गया । ऐसे प्रत्येक विद्यालय में जहाँ छात्र संख्या 100 से अधिक हो रही हो न्यनूतम 03 शिक्षको का प्रावधान रखा गया । लगभग 5,23,000 प्राथमिक व 1,27,000 उच्च प्राथमिक विद्यालयों को पढ़ने लिखने की सुविधाओं से लेस किया गया साथ ही एक शिक्षकीय विद्यालयों (Single teacher schools) में 1,50,00 व उच्च प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षको की 76,000 तथा 83,000 तृतीय वेतन श्रृंखला में शिक्षको के पद स्वीकृत किये गये ।

(2). शिक्षक शिक्षा का पुर्नगठन (Re structuring and Re-organization of Teacher Education) - यह योजना 1987 में प्रारम्भ हुई जिसमें विशिष्टीकृत शिक्षकों के लिये विशेष प्रशिक्षण प्रतिमान अपनाए गये । जिला शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों को प्राथमिक स्तर के शिक्षकों, नान फॉर्मल केन्द्रों के शिक्षकों तथा प्रौढ़ शिक्षा अनुदेशकों के प्रशिक्षण हेतु तैयार किया गया । इसी क्रम में 'कॉलेज आफ टीचर एज्यूकेशन' (CTE's) 'इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडीज' (IASE's) का गठन किया गया है ।

(3). जिला स्तरीय प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) - यह कार्यक्रम 1994 में संचालित किया गया । इसके द्वारा 21,000 नये विद्यालय एवं 67,000 नये वैकल्पिक विद्यालय खोले गये जिनमें 2.5 मि. छात्रो को शिक्षित किया गया । यह कार्यक्रम प्राथमिक स्तर के 50 प्रतिशत से अधिक बच्चों की शिक्षा के लिये देश के 18 राज्यों में 271 जिलों में संचालित किया गया ।

(4). शिक्षाकर्मी योजना एवं लोक जुम्बिश (Shiksha Karmi Project & Lok Jumbish)- राजस्थान में नवान्वेषण की दिशा में वे दोनों प्रायोजनाएं एक सफल पहल मानी गई । इसके शैक्षिक प्रशासन व संचालन में ग्राम समिति (village commitee) को महत्व दिया गया । ये दोनों प्रायोजनायें शिक्षक प्रशिक्षण, सामुदायिक सहभागिता एवं वैकल्पिक शिक्षा के विकास में सहयोगी है । राजस्थान के 2,708 ग्रामों में शिक्षा कर्मी प्रायोजना चली जिसने 147

ब्लॉक्स एवं 31 जिलों को लाभान्वित किया । लोक जुम्बिश के अन्तर्गत भी 2560 सहज शिक्षा केन्द्रों के माध्यम से 47000 बालकों को तथा 529 नये प्राथमिक और 268 उच्च प्राथमिक विद्यालयों और 239 पूर्वप्राथमिक शिक्षा केन्द्रों व आगनबाड़ी केन्द्रों द्वारा नर्सरी प्रशिक्षण हेतु 7600 महिला समूहों को सक्रिय किया ।

(5). महिला समाख्या (Mahila Samkya) - महिलाओं की शिक्षा हेतु 1989 में 5 राज्यों में यह योजना प्रारम्भ की गई । इसका विस्तार दस राज्यों के 53 जिलो में 9000 ग्रामों तक हुआ । यह महिला शिक्षा व सशक्तिकरण के क्षेत्र में जागरूकता व शिक्षा प्रसार का एक सफल प्रयोग मानी जाती है ।

(6). मध्यान्ह भोजन (Mid day meal) - 1995 में प्राथमिक शिक्षा को आहार व पोषण से जोड़ते हुए प्रत्येक छात्र को 100 ग्राम गेहूँ या चावल देने का काम प्रारम्भ हुआ । इसमें शनै शनै: 2000-2001 तक 7,92,000 विद्यालय लाभान्वित हो रहे हैं व इनकी संख्या निरन्तर बढ़ रही है । राजस्थान में 'अक्षय पात्र' अक्षय कलेवा जैसी सुस्वाद भोजन व नाश्ता व्यवस्था में छात्र नामांकन के ठहराव में आशातीत बढ़ोत्तरी की है । यूनीसेफ (UNICE), राष्ट्रीय शैक्षिक प्रशिक्षण एवं अनुसंधान परिषद् (NCERT) प्राथमिक शिक्षा पर जन प्रतिवेदन (Public Report on Basic Education) आदि ने भारतीय आरम्भिक शिक्षा के प्रसार में मध्याहन भोजन के सकारात्मक प्रभाव पाए ।

(7). गैर औपचारिक शिक्षा (Non Formal Education) - यह साक्षरता एवं प्रौढ़ शिक्षा का वैकल्पिक कार्यक्रम है । यह 1977-78 से देशों में अपनाया गया है । इसमें ऐसे छात्र जो विद्यालयों में नहीं पढ़ पा रहे उनकी प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने हेतु यह कार्यक्रम शिक्षा की दृष्टि से पिछडे 10 राज्यो में चलाया गया । शहरी झुग्गी झोपड़ियों पहाड़ी क्षेत्रों और जनजातीय व रेगिस्तानी क्षेत्रों में इस कार्यक्रम से प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण में वृद्धि हुई ।

(8). वैकल्पिक एवं नवावेषी शिक्षा योजना (Education Guarantee scheme and Alternative and Innovative Education (EGS & AIE) - वैकल्पिक शिक्षा एवं नवावेषी शिक्षा योजना के नाम से उन क्षेत्रों में चलाया गया, जहाँ 1 कि.मी. के दायरे में काई विद्यालय नहीं हो । इसमें प्रति छात्र 845 रू. से प्राथमिक स्तर पर और 1200रू. से उच्च प्राथमिक स्तर पर शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रो हेतु देय था ।

(9). जनशाला (Jan Shala) - भारत सरकार एवं संयुक्त राष्ट्र संघ की पांच संस्थाओं सं.रा.सं.वि कार्यक्रम (UNDP), यूनिसेफ (UNICEF), यूनेस्को (UNESCO), अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) और UNFPA के 20 मिलियन डालर और तकनीकी सहयोग से जनशालाऐं 1998 से 2002 तक प्रारम्भ की गई अनु. जाति, जन जाति, अल्पसंख्यको एवं वंचित वर्ग के बालकों को शिक्षित करने हेतु यह प्रयोग हुआ । जयपुर, हैदराबाद, अजमेंर, नागपुर, पुरी और लखनऊ में शिक्षण, शिक्षक प्रशिक्षण, मल्टीग्रेड टीचिंग शिक्षण के रिसोर्स केन्द्रो के विकास के रूप में इन विद्यालयों की उपलब्धियां सराहनीय रही ।

(10). सर्वशिक्षा अभियान (SSA) - नवीं योजना के अन्त में सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सर्वशिक्षा अभियान प्रारम्भ हुआ । आज समग्र रूप से सार्वभौमिक शिक्षा के लक्ष्यों को पूर्ण करने हेतु इसे एकीकृत अभियान के रूप में संचालित किया जा रहा है ।

इसके उद्देश्य हैं -

- सन् 2003 तक सभी बालकों कों, विद्यालय शिक्षा गारण्टी देते हुए एकीकृत और वैकल्पिक विद्यालयों (EGSC, AISs) से शिक्षा प्राप्त करने हेतु जोड़ना ।
- 2007 तक सभी 6 से 9 वर्षीय बालको की पाँच वेर्षीय प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करना ।
- सन् 2010 तक 6 से 14 वर्ष तक के सभी बालकों की 8 वर्षीय विद्यालय शिक्षा पूर्ण करना |
- आरम्भिक शिक्षा को गुणात्मक और जीवन से सम्बद्ध बनाना ।
- 2007 तक लिंग, जाति, धर्म और सभी प्रकार की शैक्षिक असमानताओं को दूर करना ।
- 2010 तक सभी को विद्यालय में रोकने (Retention) के लक्ष्य को पूर्ण करना ।

प्रधानमंत्री एवं मानव संसाधन मंत्रालय की देख रेख में यह राष्ट्रीय मिशन के रूप में संचालित शिक्षा का सम्पूर्ण अभियान है (wholistic) जिसमें अभी तक चलने वाले सभी प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रमों को ग्रहण करते हुए एकीकृत रूप से चलाया जा रहा है ।

(11). आरम्भिक बाल्यावस्था देखभाल कार्यक्रमों द्वारा प्राथमिक शिक्षा के कार्यक्रमों को सम्बल देना (Establishing Linkages between Programmes of Early Childhood care & Education) - प्राथमिक शिक्षा की आयु 6 वर्ष से प्रारम्भ होती हैं यदि इसमें पूर्व बालक को विद्यालय से जोड़ा जा सके तो प्राथमिक शिक्षा को मजबूत आधार तैयार हो सकता है। पिछड़े व वंचित वर्ग के बालको को विद्यालय में पालना व लालन - पालन व्यवस्था द्वारा कार्यशील माताओं व बालिकाओं की भी शिक्षा कार्यक्रमों में भागीदारी बढ़ती है । अत: इस योजना द्वारा समेंकित बाल विकास (ICDS) के साथ स्वयं सेवी संस्थाओं (NGOs) द्वारा बालवाड़ी, बाल घर और डे केयर स्वास्थ्य सेवा आदि कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया जा रहा है ।

9.3 संसाधन प्रबन्धन (Resource Management)

भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) ने अपने प्रतिवेदन 'शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास' में विद्यालय से सम्बंध विभिन्न शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति पर बल देते हुए लिखा है -

"शैक्षिक विकास का कोई भी कार्यक्रम तब तक क्रियान्वित नहीं हो सकता जब तक कि प्रत्येक शैक्षिक संस्था सभी सम्बन्धित व्यक्तियों, अध्यापकों, छात्रों और स्थानीय समुदायों को कार्यक्रम के क्रियान्वयन में यथाशक्ति योगदान देने के लिये उत्पेरित (Mobilize) नहीं किया जाए।

आज शिक्षा संस्थानों का एक विशाल, जटिल एवं बहुस्तरीय ताना बाना देश में खड़ा हो चुका है जिसे संचालित करने हेतु विपुल संसाधनों की आवश्यकता है । शिक्षा में निम्न प्रकार के संसाधन प्रयुक्त होते है ।

i. **मानवीय संसाधन (Human Resource)**
ii. **भौतिक संसाधन (Material Resource)**

उक्त दोनो प्रकार के संसाधनों का उपयुक्त प्रबन्धन होना चाहिये ।

(i) **मानवीय संसाधन (Human Resource) -** गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा मूलत: मानवीय प्रक्रिया है । इसका पूर्ण संचालन, प्रबन्धन एवं प्रशासन मानवीय गुणवत्ता पर निर्भर करता है । सम्पूर्ण, शिक्षा प्रक्रिया विद्यार्थी केन्द्रित (Student centered) है । शिक्षक इसके संवाहक है और प्रबन्धक व प्रशासक एवं नीति निर्धारकों द्वारा शिक्षा के स्वरूप व उद्देश्यों का निरूपण, नियमन, नियंत्रण एवं मानकों के आधार पर उपलब्धियां का आकलन (Achievement appraisal) किया जाता है । इस प्रकार 'मानवीय संसाधनों का प्रबन्धन एक जटिल मनो-सामाजिक प्रक्रम (endeavour) है ।

मानवीय संसाधन प्रबन्धन के बदलते आयाम (Changed perspective of H R M) -"मानवीय संसाधन प्रबन्धन के उतने ही आयाम हैं जितने कि मानव स्वयं के।" प्रभावी मानव प्रबन्धन में एक अन्त:विषयी उपागम (interdisciplinary approach) या दृष्टि अपनानी होगी। शिक्षा एकाकी (Isolated) कार्य नहीं अत: शिक्षा प्रबन्धन में निम्न आयामों के प्रति सचेत होना आवश्यक है-

- **मनोवैज्ञानिक आयाम (Psychological aspects)**

(i) व्यक्ति के व्यवहार के कार्य - कारण सम्बन्धो का विश्लेषण । (Cause effect aspects of human behaviour)

(ii) समूह गत्यात्मकता का ध्यान रखना । (To take care of group dynamics)

(iii) संगठनात्मक घटकों (छात्र, अभिभावक एवं शिक्षक) की आवश्यकताओं का अनवरत विश्लेषण करते हुए उनके अनुरूप परिवर्तनों को प्रयुक्त करना । (Constant attainment of needs and aspirations of parents, students & teachers and adaptation to the changes accordingly)

(iv) शिक्षा के उत्पाद (Products) अर्थात् शिक्षितों की गुणवत्ता में सुधार के निरन्तर प्रयास करते रहना। (Constant quality assurance and improvement in product of education i.e. Students or educated individuals)

(v) कार्यरत व्यक्तियों (शिक्षकों, प्रशासकों, प्रबन्धकों) की क्षमताओं एवं कौशलों में उत्तरोत्तर निखार लाना। (Gradual capacity building and skill improvement of concern human/workers/teachers/leaders and managers)

(vi) भारत जैसे सांस्कृतिक विविधता पूर्ण देश में विविधताओं व भिन्नताओं का सम्मान करते हुए मानव संसाधनों का प्रबन्ध करना । (To accept & respect cultural diversity and manage human resources accordingly)

(vii) शिक्षा से सम्बन्धित मानवीय घटकों की सम्प्रेषणीयता, समन्वयन, अभिप्रेरणा के स्तरों एवं टीम भावनाओं को विकसित करते हुए उन्हें अभिवृद्ध करना । (To sharpen the communication, co-ordination, motivational levels, skill and mobilize team spiril among the involved human being)

- **जन सशक्तिकरण (People empowerment) -** संसाधनों के सुप्रबन्धन में आवश्यक है प्रत्येक इकाई को उत्तरदायित्वों के निर्वाह हेतु जबावदेह बनाना । यह तभी संम्भव है

जब ऊपर से निर्णय लादने के स्थान पर सबसे निचली इकाई तक उनके क्रियान्वयन की शक्ति निहित हो । शिक्षा नेतृत्व व प्रशासक वर्ग को शक्ति संतुलन के प्रतिमानों में बदलाव लाना होगा ।

- **नवान्वेषण व परिवर्तनों को प्रोत्साहित करना** (Stimulating innovations and changes)- सृजनशीलता, शोध व नवान्वेषणों को कार्य की अनिवार्य संस्कृति के रूप में अपनाना ।
- **वैश्विक परिप्रेक्ष्य पर नजर (Responding to Globalization) -** वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में व्यापक व दूरगामी सोच हो और भविष्यगामी दृष्टि से स्थानीय स्तर तक उसका क्रियान्वयन हो ।
- **अस्थाई स्थितियों का सामना करने की तत्परता (Coping with temporalism)-** शिक्षा क्षेत्र में विशेषज्ञ सेवाओं की बढ़ती माँग (Super specializations) के कारण निरन्तर प्रशिक्षण और आजीवन शिक्षा की अवधारणा पनप रही है । स्वाभाविक तौर पर स्थाई सेवाओं के स्थान पर आवश्यकता-आधारित सेवाओं को बढ़ावा मिलेगा । शिक्षा के बाजार में मॉग और पूर्ति कें नियम तेजी से लागू होंगे । अतं: अस्थाई सेवाओं के लिये प्रबन्धन व कर्मियों में मानसिक तत्परता विकसित करनी होगी ।
- **सेवारत व्यक्तियों की निष्ठा बनाए रखने का मुद्दा (Dealing with loyalities of the work force) -** शिक्षा को जैसे-जैसे व्यवसाय का दर्जा मिल रहा है-निष्ठावान शिक्षकों व समर्पित भावना से अपना कार्य सम्पादित करने वाली के साथ-साथ पर वेतन, भले और सुविधाओं का आधार मानने वाले कार्य कर्ताओं की निष्ठा को बनाए रखना होगा ।
- **आचार-व्यवहार में उन्नयन (Improving ethical behaviour) -** शिक्षा से जुड़े गुरूओं को आज अनेकों आकर्षण जैसे टूयशन, राजनैतिक जुड़ाव, शिक्षण के अतिरिक्त अन्य कार्यों में अधिक समय देना, यूनीयनबाजी आदि अपेक्षित आचरण से भटका सकते हैं । इसके लिये निम्न उपाय किये जा सकते है -

(i) अपेक्षित आचरण एवं पूर्वापेक्षाओं का शिक्षा-सेवाओं में प्रवेश के समय ही स्पष्ट व लिखित आदेश दिया जाए ।

(ii) आचरण संहिता के उल्लंघन पर दण्ड या की जाने वाली कार्यवाही सुनिश्चित हो ।

(iii) उत्कृष्ट आचरण को प्रोत्साहन के मानदण्ड निहित हों ।

(iv) समय-समय पर अपेक्षित कार्य एवं व्यवहारों का प्रशिक्षण व अभिन्मुखन (Orientation) दिया जाए । सेवारत प्रशिक्षणों को विशेषत: आचरण-परक बनाया जाए ।

(v) केस-स्टडीज, सेमीनार, कार्यशालाओं एवं ब्रेन-स्टॉर्मिग सत्रों का आयोजन हो ।

(vi) सेवापूर्व प्रशिक्षण में अपेक्षित व्यवहार व आचार में प्रभावी दक्षताओं का समावेषण आवश्यक है ।

(vii) शिक्षा सेवाओं में चयन के मानदण्डों का कड़ाई से निर्वहण हों ।

(ii) **भौतिक संसाधन (Material Resource) -** मानवीय संसाधनों के समुचित प्रबन्धन से शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति तभी सम्भव है जब वित्तिय और भौतिक संसाधनों का भी सही प्रबन्धन किया जाए। भौतिक संसाधनों से निम्न अभिप्राय है-

(a) वित्तिय संसाधन (Financial Resources)

(b) भवन एवं उपकरण (Building, infrastructure and equipement) - शिक्षा के संचालन हेतु भवन, भूमि, खेल मैदान, शिक्षण - अधिगम सामग्री फर्नीचर, साज -सज्जा इत्यादि ।

(a) वित्तिय संसाधनों (Financial Resources) को शैक्षिक कार्यक्रमों की कुन्ती कहा जाता है । शैक्षिक व्यवस्था हेतु दो प्रकार के वित्तिय स्रोत अहम हैं :-

(1) बजट पर आधारित वित्तिय स्रोत्र

(2) बजट से इतर वित्तिय स्रोत्र

इन्हें निम्न तालिका द्वारा सरलता से समझा जा सकता है -

शिक्षा में वित्तिय प्रबन्धन	**शिक्षा में वित्तिय प्रबन्धन**
(1) बजट पर आधारित	**(2) बजट से इतर**
(अ) मौजूदा करों के क्षेत्रों में परिवर्तन	(अ) दान-अनुदान व सहायता
(ब) नए करों का प्रावधान	(ब) विदेशी ऋण
(स) लाटरियों का आयोजन	(स) निजीकरण / उदारीकरण
(द) घाटे की वित्त व्यवस्था	(द) सामुदायिक सहयोग
(य) बांडों की बिक्री	

9.4 भारत में शिक्षा को वित्तिय समर्थन (Financial Support to Education in India)

यद्यपि भारत में रक्षा मद के बाद शिक्षा पर सर्वाधिक व्यय किया जाता है | यह पहली पंचवर्षीय योजना के 151.20 करोड़ रूपये से बढ़ कर दसवी पंचवर्षीय योजना (2002-07) में 43825 करोड़ रूपये हो गया है । सकल धरेलू उत्पाद की तुलना में शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय वर्ष (1951-52) के 0.64 प्रतिशत से बढ़ कर (2003-04) के बजट में 3.74 प्रतिशत हो गया है । दसवी पंचवर्षीय योजना के लिये निर्धारित 43825 करोड़ रूपये का योजना व्यय नौवी पंचवर्षीय योजना के 24,908 '38 करोड़ रू. सं 1.76 गुना अधिक है । इनमें से प्राथमिक शिक्षा और साक्षरता कार्यक्रमों के 30,000 करोड़ रू. तथा माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग को 13,825 करोड़ रू. दिये गये ।

यद्यपि शिक्षा व्यय में वृद्धि हुई है किन्तु कोठारी कमीशन एवं नई शिक्षा नीति (1988) द्वारा यह सुझाव दिया गया कि शिक्षा मद में राष्ट्रीय उत्पाद (GDP) का 6% व्यय होना चाहिये इसके स्थान पर अभी तक शिक्षा व्यय 3.74% ही किया जा रहा है । यह 6% होना चाहिए ।

प्रस्तुत आरेख में सर्वशिक्षा अभियान पर 2001-02 से 2006-07 तक किये गये सरकारी व्यय के प्रावधानों को प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सर्व शिक्षा अभियान में वित्तीय प्रावधानों में प्रगति

Financial Progress of SSA:

GOI Release and Expenditures

	2001-02	2002-03	2003-04	2004-05	2005-06	2006-07
Release	498.37	1558.28	2698.38	5139.7	7534.5	
Expenditure	172.4	1305.66	3648.44	6598.4	9985.2	

9.5 सामुदायिक सहभागिता (Community Participation)

विश्व शिक्षा आयोग (1996) ने अपने प्रतिवेदन अधिगम अन्तर्निष्ठ निधि (Learning the treasure Within) में शिक्षा में समुदाय के योगदान को स्पष्ट करते हुए लिखा है - शैक्षिक सुधारों की सफलता में योगदान देने वाले मुख्य पक्ष सर्वप्रथम स्थानीय समुदाय ही होते हैं । जिनमें माता - पिता, विद्यालय मुखिया, व अध्यापक होते है । ऐसे देश जहाँ माता पिता, अध्यापक तथा स्थानीय समुदाय अपनी शिक्षा के लिये प्रतिवद्धताएं दर्शाते हों तथा उनके मध्य एक सतत् संवाद रहता हो, और उनसे तकनीकी व कार्मिक सहायता का परस्पर आदान प्रदान होता रहता है । उनमें शिक्षा समुदायों की तरक्की में अधिक सहायक सिद्ध होती है । और शिक्षा की गुणवत्ता में अपेक्षित सुधार होता है । स्पष्ट है कि स्थानीय समुदायों का किसी सफल सुधार व्यूह रचना में अति महत्वपूर्ण योगदान होता है ।

भारत जैसे संस्तरण युक्त (stratified) एवं बहुल सांस्कृतिक (Plural cultural) समाजों में एकनिष्ठ सामुदायिक संसाधनों को जुटाना कठिन है । समृद्ध और उच्च सामाजिक आर्थिक स्थिति वाले समुदाय प्राय: शिक्षा के प्रति सचेत होते हैं किन्तु दूसरी ओर पिछड़े और वंचित वर्ग के समुदायों की शैक्षिक प्रगति के लिये अभिभावकों एव अन्य सामुदायिक सदस्यों के सजग सहयोग के बिना विद्यालय अलग-थलग चलने वाली निष्प्रभावी संस्था बनकर रह जाती है।

11 वीं पचंवर्षीय योजना में इस मुद्दे पर ध्यान देते हुए विद्यालय के प्रबन्धन को विकेन्द्रित करने और अभिभावकों और समुदाय के सदस्यों को न केवल नामांकन अपितु ठहराव और छात्र प्रगति के आंकलन में आवश्यक रूपेण सहभागी बनाने का प्रावधान किया है ।

उदारीकरण और सामुदायिक संसाधन (Liberalization and Community Resources)- गैर सरकारी (NGOs) व स्ववित्तपोषी संस्थानों द्वारा सामुदायिक भागीदारी के संदर्भ में आज सामुदायिक संसाधनों को प्रबन्धित करना और भी आवश्यक हो गया है । शिक्षा में सामुदायिक संसाधनों को सक्रिय (mobilize) करने में उदारीकरण का योगदान महत्वपूर्ण है । **डॉ. के. एन. रेड्डी** के अनुसार "सामुदायिक वित्तिय संसाधनो को बुनियाद सामूहिक कार्य, साझे हित या उद्देश्य वाले लोगों के लाभ से मिलकर किया गया कार्य है ।"

"प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के लिये समुदाय द्वारा वित्त की व्यवस्था" नामक अपने अध्ययन में डॉ. के. एन. रेड्डी ने शिक्षा में गैर सरकारी व स्वैच्छिक संस्थाओं के योगदान को सरकारी संसाधनों की कमी का पूरक बनाने की जरूरत बताई है । उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि गैर सरकारी व आंशिक सहायता प्राप्त विद्यालय सरकारी विद्यालयों से कम सक्षम नहीं हैं । उनकी शैक्षिक गुणवत्ता कुछ मामलों में बेहतर ही पाई गई। अत: शिक्षा क्षेत्र में उदारीकरण, तीव्रता से सामुदायिक संसाधनों को आकर्षित करेगा ।

सर्वशिक्षा अभियान में सामुदायिक सहयोग (Community Mobilization) बढ़ाने हेतु प्रयास - सामुदायिक सहयोग बढ़ाने हेतु सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत शैक्षिक दृष्टि से पिछडे क्षेत्रों में 2% और अन्य क्षेत्रों में 1% (कुल व्यय की) राशि आंवटित की है । सर्वशिक्षा अभियान के द्वितीय चरण में पंचायती राज्य संस्थाओं की सहभागिता सुनिश्चित करते हुए निम्न निर्णय लिया गया है -

(i) ग्राम पंचायत की देख रेख में प्रारम्भिक शिक्षा के सभी पक्षों को प्रभावी बनाने हेतु एक स्थाई समिति (standing committee) या उप-समिति (sub committee) होगी ।

(ii) ग्राम स्तर पर भी प्रारम्भिक शिक्षा संचालन समिति होगी जो ग्राम पंचायत की उप समितियों से सम्बद्ध होगी ।

(iii) ग्राम स्तरीय, ब्लॉक स्तरीय व जिला स्तरीय प्रारम्भिक शिक्षा समितियों से सभी स्तरों पर सर्वशिक्षा अभियान के पर्यवेक्षण (Supervision) की अपेक्षा होगी ।

वार्ड सभा व ग्राम सभा के रूप में समुदाय विद्यालय प्रबन्ध समिति द्वारा (SMC) सीधा भागीदार होगा सामुदायिक क्षमताओं का यदि वास्तविक उपयोग हो तो विद्यालय का पूर्ण क्षमतानुसार कार्यकरना एवं सहयोगी वातावरण में शिक्षण करने का सपना साकार हो सकेगा ।

9.6 नौकरशाही एवं शीक्षा-व्यवस्था (Bureaucracy and Educational Management)

भारत के शिक्षा प्रबन्धन में नौकरशाही की भूमिका ब्रिटिश शासन काल से चलती आ रही है । यह नियमानुसार, तर्कसंगत, न्यायसंगत कानून के शासन को संचालित करने के लिये विनिर्मित नौकरशाहों का पद-सोपान युक्त (hierarchical) कार्य करने वालों का ऐसा ताना बाना है जो शिक्षा के सुसंचालन हेतु निर्वैयक्तिक (impersonal) रूप से विशेषज्ञता व योग्यता के आधार पर कर्त्तव्य करने हेतु नियुक्त और अधिकृत होता है ।

मैक्स वेबर (Max Weber) ने नौकरशाही के आदर्श स्वरूप को उत्तम प्रशासन व कुशल संगठन का आधार माना । भारत में केन्द्र एवं राज्य स्तर पर केन्द्रीय प्रशासनिक एवं

राज्य स्तर पर राज्य प्रशासनिक सेवाओं के अधिकारियों के साथ विशेज्ञ कार्याधिकारियों (Specialists) की विस्तृत श्रृंखला सेवारत है । नौकरशाही के आधार पर शिक्षा प्रबन्धन में निम्न विशेषताऐं अपेक्षित हैं-

1 क्रमानुगत या पद सोपानवत पदस्थिति (Hierarchical Rank and file.)
2 सुनिर्धारित नियमों के आधार पर कार्य (Rule of law)
3 व्यक्तिगत सम्बन्धों से परे ।
4 विशेषज्ञता व सामान्य प्रशासन क्षमता का समन्वय (Co-ordination between specialists & general administration)
5 कार्य विभाजन (Division of work)
6 निश्चित कार्य प्रणाली (Set procedure of work)

यदि कार्य करने के उक्त आधारों में अन्तर (gap) आ जाता है तो ' ब्यूरोक्रेसी ' असफल हो जाती है । नौकरशाहों को प्रजातान्त्रिक आकांक्षाओं के अनुरूप संवेदनशील व लचीला होना आवश्यक है । जन- समस्याओं के प्रति परानुभूति (empathy) के अभाव में कोई शैक्षिक अभियान सफल नहीं हो सकता । प्राय: नौकरशाही पर भ्रष्टाचार, पक्ष-पात व राजनैतिक लगाव के आरोप लगते रहते है । स्थायित्व पूर्ण और लम्बी सेवाओं के चलते इनमें कार्य के प्रति उदासीनता भी पनपने लगती है । इन सभी प्रवृत्तियों से शिक्षा प्रशासकों या 'ब्यूरोकेट्स' को मुक्त होना चाहिये और पारदर्शिता के साथ दायित्व-पूर्ति करनी चाहिये ।

शिक्षा अभियानों में राजनीतिज्ञ, जन प्रतिनिधि, शिक्षक एवं समुदाय की सहभागिता सुनिश्चित करने पर प्रतिबल (Thrust) इसी लिये दिया जा रहा है ताकि नौकरशाही की एक सी कार्यशैली से अभियानों की गति मन्द न हो जाए ।

शिक्षा नीति (1986) में देश में शिक्षा सेवाओं का पृथक 'केडर' बनाने का सुझाव दिया है । ऐसा निर्णय शिक्षा प्रशासन व संगठन के लिये सकारात्मक सिद्ध होगा ।

9.7 सारांश (Summary)

केन्द्रीकरण एवं विकेन्द्रीकरण का अर्थ - शिक्षा व्यवस्था के संचालन की प्रक्रिया में नियम, कानून, सत्ता, शक्ति, निर्णय लेने की क्षमता, अनुपालना पर पुरस्कार, अवमानना पर दण्ड आदि अनेक प्रावधान किये जाते है । जब इनका प्रयोग किसी विशेष व्यक्ति या संगठन तक सीमित होता है तो इसे केन्द्रीकरण और जब इनका प्रयोग संगठन के विभिन्न स्तरों पर विशेषत: निम्न स्तर तक व्यक्तिगत या समूहों में वितरित रहता है तो इसे विकेन्द्रीकरण कहते हैं ।

केन्द्रीय शिक्षा प्रशासन व संगठन केन्द्रीय नियंत्रण के आधार पर चलता है । विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में सत्ता विधान, न्याय या शासन प्रशासन उच्च स्तर के स्थान पर निचले-स्तर तक विभाजित व वितरित रहती हैं ।

संसार में शिक्षा प्रशासन के स्वरूप पर दृष्टि डालें तो यह मुख्यत: तीन प्रकार से संगठित है :-

1 केन्द्रीकृत व्यवस्था
2 विकेन्द्रीकृत व्यवस्था

3 केन्द्रीकृत और विकेन्द्रीकृत व्यवस्था का मिला जुला रूप ।

विश्व में साम्यवादी व समाजवादी शासन व्यवस्थाओं में केन्द्रीकृत प्रशासनिक संगठनों के शिक्षा के गुणात्मक उन्नयन में बड़ा योगदान रहा है ।

केन्द्रीकृत शासन के लाभ :

1 केन्द्रीकृत प्रशासन व्यवस्था में शिक्षा के उद्देश्यों एवं स्वरूप का एक रूप निर्धारण व कड़ाई से उनका पालन सम्भव है ।

2 विशेषज्ञों की सेवाओं का अधिक लाभ मिलता है ।

3 गुणवत्ता के मानकीय मानदण्डों (Standard norms and quality) की सम्प्राप्ति सम्भव है ।

4 सार्वजनिक शिक्षा का विस्तार एवं समता मूलक शिक्षा को बढ़ावा ।

5 शिक्षा में सार्वजनिक धन का निवेश बढ़ता है ।

6 शिक्षा सुधार सम्भव होता है ।

विकेन्द्रीकरण : प्रजातान्त्रिक व्यवस्था के साथ शिक्षा के विकेन्द्रित प्रशासन व संगठन को बल मिला है । विकेन्द्रीकरण के तेजी से लोकप्रिय होने के अन्य कारण निम्न रहे:-

1 अतिकेन्द्रवाद के परिणाम निराशाजनक रहे ।

2 निजीकरण, वाणिज्यीकरण और बाजारीकरण का शिक्षा पर प्रभाव ।

3 शिक्षा व्यवस्था का अपरिमित विस्तार ।

4 सम्प्रेषण तकनीकी क्रान्ति ।

5 वैश्वीकरण, विशेषत: आर्थिक वैश्वीकरण ।

आज शिक्षा में विकेन्द्रित प्रबन्धन महत्वपूर्ण विकल्प माना जाता है, सफल विकेन्द्रिकृत शैक्षिक प्रबन्धन में छात्र, अभिभावक, समुदाय, जन नेता, शिक्षक एवं प्रधानाचार्य सक्रिय व सीधी भूमिका निभाते है|

विकेन्द्रीकरण के लाभ -

(1). शिक्षा व्यवस्था में प्रत्यक्ष सुधार सम्भव ।

(2). शैक्षिक संगठन व प्रशासन का कुशल संचालन ।

(3). लोकप्रिय जन सहभागिता के अधिक अवसर ।

(4). संसाधनों का समुचित प्रबन्धन व उनमें अभिवृद्धि ।

(5). परिवर्तन व क्रियात्मक शोध के आधार पर निरन्तर संशोधन ।

(6). शिक्षा में समानता लाने में अधिक सक्षम ।

(7). भ्रष्टाचार पर नियंत्रण सम्भव ।

(8). प्रजातन्त्र व स्थानीय प्रशासन के अनुरूप ।

भारत में पंचायती राज्य अधिनियम 1992 द्वारा विकेन्द्रित व्यवस्था को अपनाने के पश्चात शिक्षा प्रशासन में राज्य, जिले, ब्लॉक व पंचायतों की शिक्षा में सीधी भागीदारी बढ़ी है । सजग व योग्य जन प्रतिनिधियों, प्रशासकों व शिक्षकों के हाथों यह व्यवस्था शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक व स्वच्छ, संवेदनशील संगठन व प्रशासन दे सकती है ।

प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण हमारा राष्ट्रीय लक्ष्य है । संविधान की धारा 45 में यह उल्लेख है कि 'राज्य इस संविधान के लागू होने के 10 वर्ष की अवधि में सभी बच्चों को जब तक कि वे 14 वर्ष की आयु पूर्ण नहीं कर लेते, निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) एवं इसके पुनरावलोकन पत्र (1992) में शिक्षा के सार्वभौमीकरण पर प्रतिबल देते हुए इसके तीन लक्ष्य प्रस्तुत किये हैं :-

1 से 14 वर्ष तक के सभी बालकों का सार्वभौमिक नामांकन ।

2 सभी स्थानों पर **विद्यालयों की सर्वभौमिक उपलब्धि ।**

3 नामांकित बालकों का प्राथमिक स्तरीय शिक्षा पूर्ण करने तक **सार्वभौमिक ठहराव** ।

सन् 2002 में **86 वें संविधान संशोधन** द्वारा निशुल्क **प्राथमिक शिक्षा को मूल अधिकार** का दर्जा दे दिया गया है ।

नामांकन की दृष्टि से सन् 2004-2005 में चयनित शिक्षा सांख्यिकी (SES, MHRD) के आधार पर 17% प्राथमिक स्तर पर 70.12 मिलियन लड़के व 61.56 लड़कियाँ तथा उच्च प्राथमिक स्तर पर 28.71 मि. लड़के व 22.96 मिलियन लड़कियाँ नामांकित थी । अर्थात प्राथमिक स्तर पर कुल 131.69 तथा उच्च प्राथमिक स्तर पर 51.67 बालक बालिकाएँ नामांकित हुए ।

सांस्कृतिक प्रबन्धन के अन्तर्गत शिक्षा के लिये आवश्यक आधारभूत, कार्यशक्ति सामग्री एवं वित्तिय व्यवस्थाओं को जुटाना उनमें वृद्धि करना एवं उनका अधिकतम सदुपयोग करना है । संसाधन दो प्रकार के होते हैं, जो निम्नलिखित हैं :-

(1). मानवीय संसाधन

(2). भौतिक संसाधन

मानवीय संसाधनों जैसे शिक्षक-शिक्षार्थी, प्रधानाचार्य-प्रशासक, एवं कार्मिक वर्ग द्वारा शिक्षा व्यवस्था में प्राण फूँके जा सकते हैं ।

मानवीय संसाधन प्रबन्धन में जटिल मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, नैतिक व बौद्धिक गुणों से प्रभावित होते हैं। समूह और व्यक्ति का व्यवहार मानव प्रबन्धन को गत्यात्मकता प्रदान करता है।

वित्तिय संसाधनों में सार्वजनिक, बजट पर आधारित, व गैर-बजटीय वित्त, ऋण, दान, सहायता, जन-सहयोग, आदि से ध्यान अवाप्त कर शिक्षा में निवेशित होता है । कोठारी कमीशन ने 1964-66 में (GDP) का शिक्षा मद में 6% व्यय करने की अनुशंसा की थी किन्तु अभी तक यह राशि 3.74% से अधिक नहीं हो पाई है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. केन्द्रीकरण एवम विकेन्द्रीकरण की संकल्पना बताते हुए स्पष्ट कीजिए की इनमें कौन सी व्यवस्था भारतीय शिक्षा के लिए अधिक उपयुक्त है ?
(Elucidate the conceptes of centerlization and decenterlization. Out of these two which system you find more appropriate for Indian education system?)

2. भारतीय शिक्षा की समस्याओं का समाधान विकेन्द्रित शासन व्यवस्था में ही संभव है , इस कथन से आप कहाँ तक सहमत है ? अपने उत्तर की पुष्टि उदारहणों की सहायता से प्रस्तुत करे |
(“The solution of Indian education problems lies only in decenterlization system”, How far do you agree with this statement? Give an example in support of your answer)

3. भारत में विकेन्द्रित शिक्षा व्यवस्था की सफलता हेतु सुझाव प्रस्तुत कीजिए ।
(Suggest the measure for the successful implementation of decenterlized system of education in India.)

4. भारत में शिक्षा के सार्वभौमिकरण से आप क्या समझते हैं ?
(What do you understand by the universalization of education in Indian context?)

5. सार्वभौमिक नामांकन, सार्वभौमिक ठहराव, बीच में विद्यालय छोड़ने की प्रवृत्ति, के शिक्षा सार्वभौमिकरण पर पड़ने वाले प्रभावों की समीक्षा कीजिए ।
(Apprise the effects of universal enrollment, universal retention, drop out tendencies on universalization of education)

6. भारत में शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए किये गये विभिन्न प्रयासों की विवेचना कीजिए ।
(Give an account of various efforts made in India for achieving the targets of universalization.)

7. सहभागिता का विद्यालय के विकास में क्या महत्त्व है? अपने विद्यालय के विकास सामुदायिक सहभागिता की एक व्यावहारिक कार्य योजना प्रस्तुत कीजिए।

8. शिक्षा में मानवीय एवं भौतिक संसाधनों की विवेचना करते हुए इनके समुचित प्रबन्धन हेतु सुझाव दीजिए।
(Anlayse the importance of material and human resources in education. Suggest the measure for mobilizing human and material resources for education.)

9. सामुदायिक सहभागिता का विद्यालय के विकास में क्या महत्त्व है? अपने विद्यालय के हेतु सामुदायिक सहभागिता की एक व्यावहारिक कार्य योजना प्रस्तुत कीजिए ।
(What is the importance of community resources in school development programme?Prepare a practical programme for community participation for development of your school?)

10. प्राय: यह मान्यता है कि नौकरशाही संवेदनशील शिक्षा प्रशासन में बाधक, आप इस कथन से कहाँ तक सहमत हैं

("Generally it is presumed that bureaucracy is a hurdle in sensitive educational administration". How for do you agree with this statement?)

11. शिक्षा में गुणात्मक सुधार हेतु वित्तिय समर्थन में वृद्धि क्यों आवश्यक है ? भारत में शिक्षा की वित्तिय समर्थन की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए स्पष्ट कीजिए कि शिक्षा व्यय समस्त सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत किया जाना क्यों आवश्यक है?
(Why there is a need of increasing financial support for qualitative improvement in education? Give an account of India financial support system for education and also give reasons to increase it by 6% of total GDP.)

9.8 संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

1 लक्ष्मी लाल के. ओड (सम्पादक), **'शिक्षा प्रशासन'**, राजस्थान हिन्दी मन्थ अकादमी, जयपुर, 1985.

2 रेणुका चौधरी, **'भारतीय बच्चे'** योजना, नवम्बर-2006.

3 C.L. Anand, **Utilizing Community Resources** Education in Emerging Inida society NCERT 1993.

4 J.C. Agrawal, **School Administration**, Arya Book Depot, 2002.

5 **National Policy** of **Education**, Ministry of Human resource 1986.

6 **Towards a Perspective Paper on Education**: Report of the review committee of NPE-1986, MHR, India, 1992.

7 Kamla Arora, "**Universalization** of **Elementry Education**," Teacher and Education in Emerging India Society, NCERT, 1993

8 N.Meginn and T.walsh, "**Decentralization of Education: Why, When, What and how**?" International Institute of Educational Planning http/www.unesco.org.

9 K.Gopalan, **Indian Strategies to achieve universalization of Elementary Education.**
File://a:/Indian %20%20 achieve%universal.3.6.07

10 K.C. Chaudhary **Financing of Education; Four decades of neglect**,ed. IAEA News letter, Feb-2007.

11 **Central Plan outlay by Ministries/Departments for the year 2001-02, 2002-03, 2003-04, 2004-05 and 2005-06** :

12 **Union Budget Papers 2005-06, 2006-07**, Ministry of Finance, Government of India.

13 **Janshala- Towards Empowered Community Schools: Knowledge Hub for the Asia Pacific**, UNESCO, 2007.

14 **Encyclopedia of Social Science Vol-II**, the Macmillan & co., USA.

15 **Chapter on Elementary Education** (SSA & Girls Education) for XIth Plan working group report, Ministry of Human Resource Development, Deptt. of School Education & Literacy.

16 Kesa Desiraju, **Primary Education a problem Area**, on CAG Report, MHRD. 2006, IAEA News letter, Dec-2006.

17 **Million Development goals and India, Global Monitoring Report**-UNESCO-2007, http:/www.unesco.org/iiep

18 **Incentives in Elementary Education- Do they make a difference**? Research study commissioned by Plan international India, 3 Feb 2007, edudelhi@gmail.com

इकाई- 10

कक्षा-कक्ष प्रबन्धन

(Class Room Management)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

10.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

10.1 अध्यापक की विभिन्न भूमिकाएं (Different Roles of Teacher)

10.2 कक्षा-क्रियाओं का नियोजन (Planning of Classroom Activities)

10.3 कक्षा-क्रियाओं का संगठन (Organisation of Classroom Activities)

10.4 अभिप्रेरणा (Motivation)

10.5 विद्यार्थीयों के मध्य अन्तक्रिया (Interaction between Students)

10.6 नवीन समूह गतिशीलता का सृजन (Creation of New Group-Dynamics)

10.7 अनुशासन (Discipline)

10.8 प्रतिवेदन (Report)

10.9 कक्षा क्रियाओं का मूल्यांकन (Evaluation of Classroom Activities)

10.10 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

कक्षा क्रम - प्रबधंन कक्षा-कक्ष प्रबधंन अध्यायक की विभिन्न भूमिकाएँ कक्षा-कक्ष गतिविधियों का आयोजन विद्यार्थियों के साथ अन्तःक्रिया नवीन समूह गत्यात्मकता की रचना अनुशासन प्रतिवेदन तैयार करना कक्षा-कक्ष गतिविधियों का मूल्याकंन |

Class-room Management : Different roles of teacher in classroom management. Planing classroom activities, organising activities, motivation, interaction with students, creating new group dynamics, Discipline, Reporting, Evaluation of Classroom activities.

10.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप -

- अध्यापक की विभिन्न भूमिकाएँ बता सकेंगे ।
- कक्षागत क्रियाओं के नियोजन की विवेचना कर सकेंगे ।
- कक्षागत क्रियाओं का संगठन कर सकेंगे ।
- अभिप्रेरणा के प्रकारों एवं प्रविधियों की जानकारी दे सकेंगे ।
- विद्यार्थीयों के मध्य अन्त: क्रिया को स्पष्ट कर सकेंगे।

- नवीन समूह गतिशीलता का सृजन कर सकेंगे ।
- कक्षा में अनुशासन के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- कक्षागत क्रियाओं का प्रतिवेदन प्रस्तुत कर सकेंगे ।
- कक्षा-क्रियाओं का मूल्यांकन स्पष्ट कर सकेंगे ।

"भारत का भविष्य उसकी कक्षाओं में निर्मित हो रहा है " - कोठारी आयोग

शिक्षा एवं समाज में घनिष्ठ सम्बन्ध है । समाज की आवश्यकताओं, आकांक्षाओं, अपेक्षाओं और परिस्थितियों में अनवरत परिर्वतन होता रहता है जिसका प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से शिक्षा पर पडता है । फलत: शिक्षा में परिवर्तनीय शैक्षिक आयामों का समाहित करना अपेक्षित है।

शिक्षा एवं प्रशिक्षण के क्षेत्र में शैक्षिक व्यवस्था तथा विद्यालय व्यवस्था के विविध पक्षों की अहम् भूमिका होती है । विद्यालयों में शैक्षिक व्यवस्था एवं प्रबन्धन को सुव्यवस्थित चलाने का मूल आधार होता है शैक्षिक प्रबन्धन या विद्यालय व्यवस्था की सफलता अध्यापक की भूमिका, कक्षागत-क्रियाओं का नियोजन, संगठन, समूह-गतिशीलता, कक्षा-अनुशासन तथा कक्षा-क्रियाओं के मूल्यांकन किए जाने की स्थिति पर निर्भर करता है ।

10.1 अध्यापक की विभिन्न भूमिकाएँ (Different Roles of Teacher)

अध्यापक शिक्षा प्रणाली का प्रधान आधार होता है । उसी पर प्रणाली की सफलता या विफलता का दायित्व होता है । कोई भी प्रणाली तभी सफल होगी जब शिक्षक पूर्ण रूप से शिक्षित, बुद्धिमान तथा अपने कार्यों के प्रति रूचि रखेगा । परन्तु यदि शिक्षक शिक्षण-प्रशिक्षण में पीछे रह जाता है या वह अपने कार्य को पूरे मन से नहीं निभाता तो प्रणाली असफल हो जाती है, अत: शिक्षक विद्यालय का प्रमुख घटक है ।

शिक्षक विद्यालय का गतिशील बल होता है । बिना शिक्षक के विद्यालय उसी समान है जिस प्रकार बिना आत्मा के शरीर । शिक्षक एक मापन-स्केल के समान है जो राष्ट्र की आकांक्षाओं व उसके अवसरों को मापता है । शिक्षक के कार्य द्वारा राष्ट्र के मूल्य एवं क्षमताओं का मूल्यांकन किया जाता है। “किसी राष्ट्र की जनता उसके शिक्षक का ही साकार स्वरूप होता है।“

शिक्षक की भूमिका को निम्नलिखित प्रमुख विचारकर्ताओं ने व्यक्त किया है-

स्वामी विवेकानंद के अनुसार "सच्चा शिक्षक वह है जो तुरन्त विद्यार्थी के स्तर पर आ जाए, अपनी आत्मा को विद्यार्थी की आत्मा में डाल दे तथा उसके मस्तिष्क से देखे व उसे समझे। केवल वही शिक्षक वास्तव में शिक्षण करा सकता है बाकि कोई नहीं ।

डॉ. राधाकृष्णन ने कहा कि "समाज में शिक्षक की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । वह पीढी-दर-पीढी बौद्धिक परम्पराओं तथा तकनीकि कौशलों को स्थानान्तरित करने का प्रमुख कार्य करता है तथा सभ्यता के दीपक को जलाए रखने में सहायता करता है । "

माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार है कि "सभी शिक्षक व अनुभवी शिक्षाशास्त्री जानते हैं किए सर्वोत्तम पाठ्यक्रम व सबसे पूर्ण पाठ्यवस्तु तब तक निर्जीव है जब तक वह सही शिक्षण

विधियों द्वारा व सही प्रकार के शिक्षक द्वारा वास्तविक जीवन में न उतारी जाए अर्थात् व्यवहार में लायी जाए।"

एच.जी.वेंल्स का मत है कि "शिक्षक इतिहास का वास्तविक निर्माता या रचियता होता है।"

जॉन एड्मस का यह मत है कि "शिक्षक ही मानव का निर्माता है।"

इस प्रकार शिक्षक कक्षा-प्रबन्धन का प्रमुख घटक होता है । उसे भिन्न-भिन्न प्रकार की भूमिकाएँ निभानी पडती है जैसे- प्रबन्धक की तरह, मार्गदर्शक व एक मित्र के रूप में । शिक्षक कक्षा क्रियाओं के प्रबन्धन की जिम्मेदारी, अधिकारी तथा मार्गदर्शन का अधिकारी होता है । उसे अनुशासन के उपयुक्त प्रतिमान, व्यूह रचना तथा शिक्षण तकनीकी की नियुक्ति करनी होती है । उसे विद्यार्थी से नातेदारी तथा अपने प्रधानाध्यापक व सहकर्मियों से सामाजिक रिश्ते निभाने पडते हैं । शिक्षक की कुछ महत्वपूर्ण भूमिकाएं निम्नलिखित है-

1 **शिक्षक की भूमिका के रूप में (as Teacher) -** शिक्षण एक उत्तम व्यवसाय है शिक्षक अपने विद्यार्थी तथा समाज, दोनो के लिए आदर्श होता है । उसे एक शिक्षक की तरह ही दिखना चाहिए व उसी रूप में व्यवहार भी करना चाहिए। उसकी भूमिका जो छात्रों को सबसे ज्यादा प्रोत्साहित करती है वह है - उसका कक्षा में पहनावा कैसा है? वह छात्र को किस प्रकार सम्बोधित करता है? शिक्षक को अपने छात्रों के प्रांरभिक व्यवहार (Entery Behaviour) तथा उसकी सामाजिक व सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का पता होना चाहिए ।

2 **दार्शनिक की भूमिका के रूप में (as Philosopher) -** शिक्षक कां प्रमुख कार्य अपने पाठ्यवस्तु का ज्ञान प्रदान करना है। उसे अपने विषय-वस्तु का सम्पूर्ण ज्ञान होना चाहिए और उसमें नवीनतम विकास करना चाहिए । शिक्षक को अपने विषय में रूचि होनी चाहिए । अनुसंधानों से यह पता चला है कि विषय की श्रेष्ठता, शिक्षक के प्रभावी होने का सबसे शक्तिशाली सबूत है ।

3 **अनुसंधानकर्ता की भूमिका के रूप में (as Researcher) -** शिक्षक में इतना सामर्थ्य होना चाहिए कि वह कक्षा प्रबन्धन सम्बन्धी समस्याओं को हल कर सकें । शिक्षक में अनुसंधान कार्य का उपयोग करने का पूरा ज्ञान व कौशल होना चाहिए । कक्षा प्रबन्धन सम्बन्धी समस्याएं अनुसंधान प्रायोजना कार्य द्वारा हल की जा सकती है । कक्षा शिक्षण में विषय वस्तु को वैज्ञानिक ज्ञान से सम्बन्हि करते हुए रपष्ट करना चाहिए । शिक्षक में वस्तुनिष्ठ रूप से निरीक्षण करने की योग्यता होनी चाहिए ताकि छात्रों की वैज्ञानिक ज्ञान प्रदान कर उनमें तार्किक चिन्तन को विकसित कर सके ।

4 **निर्देशक की भूमिकाओं के रूप में (as Guide) -** शिक्षक का प्रमुख कार्य छात्रों की सही मार्गदर्शन करना ताकि छात्रों का सर्वागीण विकास किया जा सके । शिक्षक का कार्य है कि वह छात्रों की व्यक्तिगत तथा अधिगम सम्बन्धी समस्याओं को हल करने में मदद करें । इसके लिए उसे छात्रो की समस्याओं को वैज्ञानिक तरीकों से हल करना होगा जिससे छात्रों में समस्या के कारण को जानने व पहचानने की जागरूकता पैदा हो सके । कमजोर छात्रों के लिए उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जाती है ।

5 **प्रबन्धक की भूमिका के रूप में (as Manager) -** शिक्षक को प्रबन्धक के कार्यों, अधिकारों व जिम्मेदारियों का ज्ञान होना चाहिए । किसी प्रबन्धक के प्रमुख कार्य है- शिक्षण

प्रक्रिया की योजना बनाना, संगठन बनाना, निरीक्षण करना, निर्देशन करना, समन्वय करना तथा नियंत्रण करना । अब शिक्षक की जिम्मेदारियों का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत हो गया है । शिक्षक को कक्षा शिक्षण से पूर्ण सम्पूर्ण रूप से प्रबन्ध कर लेना चाहिए कि क्या पढाना है? कैसे पढाना है? तथा शिक्षण को कैसे प्रभावी बनाना है|

6 **नेता की भूमिका के रूप में (as Leader) -** एक शिक्षक में हमेंशा मार्गदर्शन करने की योग्यता होनी चाहिए । शिक्षक कक्षा में मार्गदर्शन का कार्य करता है । शैक्षिक नेतृत्व, एक शिक्षक का सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्य होता है । शिक्षक में नेतृत्व की भावना होनी चाहिए ताकि वह स्वयं निर्णय ले सके तथा छात्रों के समक्ष आने वाली समस्याओं का समाधान कर सके।

आधुनिक युग में समाज के अत्यधिक जटिल होने के कारण शिक्षक की अनगिनत जिम्मेदारियाँ है । शिक्षक को कक्षा प्रबन्धन में भिन्न-भिन्न प्रकार की भूमिकाएं निभानी पडती है। इनमें से ईमानदारी, निष्कपटता तथा शिक्षण कार्य में सम्मिलित होना ही शिक्षा के सबसे अधिक महत्वपूर्ण गुण है। शिक्षक अपने कक्षा शिक्षण में रूचि लेता है जिससे कक्षा प्रबन्धन में गुणवत्ता आती है। कक्षा क्रियाओं के प्रबंध में शिक्षक अपने शिक्षण का ज्ञान, प्रशिक्षण तथा अनुदेशन इत्यादि का उपयोग बहुत प्रभावी ढंग से कर सकता है।

शिक्षक की भूमिका के अतिरिक्त इनके कार्यों को निम्नलिखित रूप से वगीकृत किया गया है |

1 योजना निर्माण
2 अध्यापन या शिक्षण
3 संगठन
4 निरीक्षण
5 मार्गदर्शन
6 प्रमाण
7 मूल्यांकन

1 **योजना निर्माण-** वास्तविक शिक्षण तथा कक्षा प्रबन्धन की ओर बढने से पूर्ण शिक्षक को निम्नलिखित सामग्री की योजना बना लेनी चाहिए :-

1 उसे सम्पूर्ण पाठ्यक्रम की योजना बनानी चाहिए, जो विषय उसे पाठ्यवस्तु (Syllabus) में से पढाने है उसकी योजना बनानी चाहिए तथा पाठ्यवस्तु को मासिक, साप्ताहिक इकाई या वार्षिक योजना में विभाजित कर लेना चाहिए ।
2 उसे पहले से ही सामान्य एवं विशिष्ट शिक्षण सहायक सामग्री के उपयोग की योजना बना लेनी चाहिए ।
3 उसे समय-सारणी की योजना बनानी चाहिए तथा समय-सूची के अनुरूप वास्तविक कक्षा-कार्य की योजना बना लेनी चाहिए ।
4 उसे सत्र के दौरान होने वाली समस्त पाठ्य-सहगामी क्रियाओं की योजना बना लेनी चाहिए ।

2. **अध्यापन या शिक्षण -** अध्यापक का प्रथम पुनीत एवं पावन कार्य शिक्षण होता है । शिक्षण सर्वप्रथम व सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है । शिक्षक का यह कर्तव्य होता है कि उसे अपने

विषय की सम्पूर्ण जानकारी हो, वह सदैव शिक्षण के लिए नई एवं नवीन तकनीकों का अध्ययन व उपयोग भी करता रहे, अधिगम सामग्री का चुनाव करे, शिक्षण के दैनिक कार्यों व प्रक्रियाओं का प्रबन्धन करे तथा छात्रों को अधिगम के लिए प्रोत्साहित करें । शिक्षक आवश्यकतानुरूप गृहकार्य दे तथा लिखित कार्य में नियमित रूप से सुधार करें ।

3. **संगठन -** एक शिक्षक को निम्नलिखित कार्यों का संगठन करना होता है -

(i) उसे विभिन्न पाठ्यत्तर (Curricular) तथा पाठ्य-सहगामी क्रियाओं (Co-Curricular) का संगठन करना पडता है ।

(ii) उसे विद्यालय की सज्जा, विद्यालय परिसर की देखभाल का, बैठने की व्यवस्था का, उपकरणों की देखभाल का, फर्नीचर के क्रम का तथा विद्यालय के चारों ओर की आरोग्यकारी व्यवस्था की देखरेख का संगठन करना पडता है ।

(iii) उसे छात्रों के पुस्तकालय कार्यों को संगठित करना पडता है ।

(iv) अनुदेशन कार्य का संगठन करना ही सबसे महत्वपूर्ण कार्य है । जिसमें पाठ्यवस्तु का संगठन, छात्रों का वर्गीकरण, समय-सारणी का निर्माण तथा कार्यों का निरूपण करना इत्यादि सम्मिलित है।

4. **निरीक्षण -** एक शिक्षक को छात्रों के कार्यों का निरीक्षण करना होता है । उसे छात्र की नियमित उपस्थिति तथा नियमित कार्यों का पता लगाकर उसकी अनियमितता का पता लगाना होता है । उसे छात्रों के प्रायोगिक कार्य, लिखित कार्य की जांच करके, छात्र की पढाई का निरीक्षण करना पडता है । उसे विद्यालय में अनुशासन तथा आदेशों को बनाए रखना पडता है । उसे छात्रों के खेल सम्बन्धी तथा अन्य क्रियाओं का निरीक्षण करना पडता है । कभी-कभी उसे छात्रो के कार्यों का निरीक्षण भी करना पडता है ।

5. **मार्गदर्शन -** एक शिक्षक को विभिन्न क्षेत्रों में छात्रों को मार्गदर्शन करना पडता है । उसे छात्रों को सही विषय चयन करने में, उचित दिशा प्रदान करना होता है ताकि उन्हे जीविकोपार्जन से सहायता मिल सके । शिक्षक को छात्रो के अध्ययन में सहायता करनी पडती है । उसे छात्रों के व्यक्तित्व, उनकी कमजोरियों व गुणों को पहचान कर अपने व्यवहार में इस प्रकार सामंजस्य करना होता है जिससे कि वो छात्रों को उनके कार्य के प्रति प्रोत्साहित कर सके । उसे कमजोर छात्रों को सहायता व उचित मार्गदर्शन देना पडता है । शिक्षक कार्य में शिक्षा सम्बन्धी, जीविकोपार्जन सम्बन्धी तथा व्यक्तिगत मार्गदर्शन प्रमुख है ।

6. **प्रमाण -** शिक्षक को छात्रों के कार्यों का तथा उनकी विभिन्न कार्यों में सहभागिता को दैनिक प्रमाण रखना पडता है । उसे छात्रों के प्रवेश उपस्थिति, फीस तथा अन्य कार्यों का प्रमाण रखना पडता है । उसे विद्यालय के कार्य के रिकार्ड सम्बन्धी जानकारी जैसे - फर्नीचर का लेखा-जोखा, फर्नीचर का लेन-देन, छात्रों की छात्रवृत्ति इत्यादि रखनी पडती है ।

7. **मूल्यांकन -** शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह न केवल शिक्षा प्रदान करे बल्कि साथ ही साथ समय-समय पर उनके कार्यों का मूल्यांकन, उनकी कमियों तथा गुणों का भी मूल्यांकन करता रहे । इसके लिए वह इकाई परीक्षा, प्रश्न-पत्र, अंको की तालिका, अग्रिम कक्षा में प्रमोशन की नीति का निर्धारण तथा निष्कर्ष निकालना इत्यादि कार्य प्रतिपादित करता है साथ ही छात्रों का मूल्यांकन के लिए आंतरिक जांच भी लिया जाता है । उद्धेश्य के अनुसार परीक्षा-सामग्री के निर्माण तथा अंकन की विधि से भी परिचित होना चाहिए ।

इस प्रकार उपर्युक्त कार्यों के आधार पर शिक्षक की विभिन्न को भूमिकाओं स्पष्ट किया जा सकता है ताकि वह विद्यार्थियों को सर्वागीण विकास कर सके । शिक्षक अपनी विभिन्न भूमिकाओं का ध्यान में रखते हुए उत्तरदायित्व का निर्वाह करता है ताकि प्रभावी शिक्षण हो सके और प्रभावी शिक्षण में गुणात्मक सुधार लाता है व शिक्षा के स्तर को उन्नत करता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. शिक्षक किसे कहते है
2. शिक्षक की भूमिकाओं को स्पष्ट कीजिए|
3. शिक्षक के कार्यों की विवेचना कीजिए |

10.2 कक्षा-क्रियाओं का नियोजन (Planning of Classroom Activities)

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् विद्यालयों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई । सरकार एवं संविधान द्वारा प्रदत्त निर्देशक तत्वों के अनुसार आर्थिक स्त्रोतों के अभाव के कारण अनिवार्य शिक्षा-व्यवस्था लागू नही की जा सकी किन्तु जन-जन तक शिक्षा पहुँचे, इसे आधार बनाकर ढाणी-ढाणी में विद्यालय खोल दिए गये । इस प्रकार विद्यालयों की संख्यात्मक वृद्धि तो अवश्य हुई किन्तु छात्रों का गुणात्मक विकास अनुकूल नही हुआ । मुदालियर शिक्षा आयोग ने विद्यालयो के गुणात्मक विकास हेतु विद्यालय समुन्नयन योजना की सिफारिश की । इसमें प्रत्येक विद्यालय को उपलब्ध साधनों, मानवीय, भौतिक तथा शैक्षिक का परस्पर समन्वय करते हुए उनका पूर्ण रूप से नियोजन की सलाह दी । योजना या नियोजन करना एक कठिन कार्य है । शिक्षण प्रभावी हो इसके लिए आवश्यक है कि कक्षागत-क्रियाओं की योजनाएँ बनायी जाएँ ताकि वह प्रभावी शिक्षण का आधार बन सके । नियोजन में दो बातों को ध्यान में रखा जाता है -

1 हम किस दिशा में प्रगति चाहते हैं अर्थात् हमारे लक्ष्य क्या हैं?

2 हमारे पास क्या-क्या साधन उपलब्ध हैं?

योजनाबद्ध कार्य करने से कार्य में सफलता आसानी से प्राप्त हो जाती है । कार्य की सफलता के अनेक तत्व होते हैं किन्तु उनमें नियोजन का तत्व सबसे प्रमुख होता है । प्रत्येक शिक्षक प्रभावी शिक्षण के लिए उद्धेश्यों को निर्धारित करता हैं और उसकी प्राप्ति के लिये वह विभिन्न क्रियाओं का नियोजन करता है ताकि कार्य सुचारू रूप से चल सके ।

जे.पी.नायक के अनुसार "किन्ही भी पूर्व निर्धारित उद्धेश्यों एवं लक्ष्यों की निश्चित अवधि में प्राप्ति के लिए आवश्यक किन्तु कठिनता से उपलब्ध हो सकने वाले साधन सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए, भविष्य की कार्य विधि सम्बन्धी लिए जाने वाले पूर्ण निर्णयों का व्यवस्थित स्वरूप ही योजना है।"

कक्षा-क्रियाओं के नियोजन के लिए निम्नलिखित बिन्दु विचारणीय है -

1 **उद्धेश्यों एवं लक्ष्यों का पूर्व निर्धारण -** कक्षा-कक्षा क्रियाओं का नियोजन में उद्धेश्यों एवं लक्ष्यों को निर्धारित करने से पूर्व छात्रों की आवश्यकताओं, इच्छाओं तथा समस्या समाधान हेतु परिस्थितियों पर नियंत्रण पाने के लिए चिन्तन करना अनिवार्य है तत्पश्चात् ही शिक्षक छात्रों की

उपलब्धियों के स्वरूप को निर्धारित कर सकता है । छात्रों की अपेक्षित उपलब्धियों का यह परिमाणात्मक स्वरूप ही शिक्षक का लक्ष्य होता है ।

2 **साधन सुविधाओं के बारे में पूर्व चिन्तन -** इसके अन्तर्गत उद्धेश्यों की प्राप्ति के लिए साधन-सुविधाओं पर विचार किया जाता है जिसके लिए धन, श्रम व समय को भी ध्यान में रखा जाता है ।

3 **क्रियान्वित सम्बन्धी निर्णय -** कक्षागत क्रियाओं की योजना के सफल क्रियान्वयन के लिए उपलब्ध समय को ध्यान में रखते हुए कार्य किया जाता है, उसके सम्बन्ध में क्रमबद्ध निर्णय लेने की आवश्यकता है । यदि निर्णय दोषपूर्ण होगें तो सफलता भी आंशिक ही प्राप्त होगी । अत: निर्णय एवं कार्य पदों के निर्धारण को सोच-विचार से करना ही नियोजन की मूलभूत क्रिया है ।

अत: उक्त विचारों से रपष्ट है कि यदि कक्षा-क्रियाओं का योजनाबद्ध तरीके से कार्य किया जाए तो शिक्षण को प्रभावी बनाया जा सकता है और लक्ष्यों की प्राप्ति भी सुगमता पूर्वक प्राप्त की जा सकती है ।

कक्षा-क्रियाओं के नियोजन का उद्धेश्य (Purpose of Planning of Classroom activities) - इसके अधोलिखित उद्धेश्य है -

1 कक्षा के शैक्षिक एवं सामाजिक वातावरण में उत्तम परिणामों की उपलब्धि ।
2 छात्रों या विद्यार्थीयों का बहुमुखी विकास एवं प्रगति करना ।
3 शिक्षण उद्धेश्यों को प्राप्त करना ।
4 कक्षा में प्रजातांत्रिक वातावरण विकसित करना ।
5 अध्यापक व विद्यार्थीयों के मध्य सुदृढ सम्बन्ध स्थापित करना ।
6 विद्यार्थीयों में पारस्परिक सहयोग की भावना जातगृ करना ।
7 विद्यार्थीयों में सृजनात्मक क्षमता का विकसित करना ।
8 कक्षा-कक्ष की समस्याओं का समाधान करना ।
9 शिक्षण को प्रभावशाली बनाना ।
10 शिक्षा में गुणात्मक विकास एवं सुधार करना ।

कक्षा-क्रिया नियोजन के निर्माण के पद (Steps of Construction of Class activities) इसके निम्नलिखित सोपान है -

1 **कक्षा-क्रिया योजना की तैयारी -** किसी योजना की सफलता उनकी तैयारी पर निर्भर करती है । शिक्षक को सहयोगी तथा अन्य शिक्षकों से विचार-विमर्श करके कार्य करना चाहिए । सबसे पहले शिक्षक को विद्यार्थीयों की आवश्यकताओं एवं रूचियों को ध्यान में रखना चाहिए साथ ही कक्षा स्तर एवं मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर क्रियाओं की तैयारी की जानी चाहिए।

2 **साधनों का अध्ययन -** योजना की तैयारी के पश्चात् इस बात की जानकारी ले लेनी चाहिए कि क्या पर्याप्त साधन उपलब्ध हैं या नही? कक्षा-कक्ष क्रियाओं को प्रभावी एवं सफल बनाने के लिए पर्याप्त साधनो का उपलब्ध होना चाहिए ताकि छात्रों में अपेक्षित परिवर्तन लाकर उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके ।

3 **योजना का प्रारूप निर्माण -** आवश्यकताओं एवं साधनों का निर्धारण कर लेने के बाद योजना का प्रारूप निर्मित किया जाना चाहिए । इसके लिए अनुभवी शिक्षकों से विचार-विमर्श करके आने वाली संभावित समस्याओं का दूर करते हुए योजना का प्रारूप तैयार करना चाहिए ।

4 **योजना प्रारूप पर विचार-विमर्श -** योजना के प्रारूप की जानकारी सभी को दी जानी चाहिए । शिक्षकों को आपस में विचार-विमर्श कर योजना के प्रारूप को अंतिम रूप दिया जाना चाहिए ताकि क्रियान्वयन की प्रक्रिया सरल हो जाए ।

5 **नियोजन का क्रियान्वयन -** योजना के अंतिम प्रारूप को क्रियान्वित कर देना चाहिए । इस स्तर पर शिक्षक को गतिशील होना आवश्यक है । शिक्षक को उचित नेतृत्व प्रदान करना चाहिए साथ ही इस स्तर पर विभिन्न सोपानों में समन्वय होना चाहिए तभी क्रियान्वयन को सफल किया जा सकता |

6 **नियोजन का मूल्यांकन -** जिन उद्धेश्यों की प्राप्ति के लिए कक्षा-क्रियाओं का नियोजन किया गया है उस उद्धेश्य की प्राप्ति किस सीमा तक हुई इसके लिए मूल्यांकन पद का ध्यान में रखना चाहिए । शिक्षक को योजना के कुछ समय कार्य करने के बाद तथा कुछ कार्य की समाप्ति पर मूल्यांकन करना चाहिए । मूल्यांकन से अच्छाइयों व त्रुटियों का पता चलता है इस आधार पर फिर सुधारात्मक योजना का निर्माण किया जा सकता है ।

इस प्रकार उपर्युक्त पदों को ध्यान में रखते हुए शिक्षक कक्षा-क्रियाओं का नियोजन करता है तो अवश्य ही वह शिक्षण को प्रभावी बनाकर सफल शिक्षक या प्रभावी शिक्षक बन सकता है ।

कक्षा-क्रियाओं के नियोजन की विशेषताएँ (Characteristics of Planning of Class Activities) - कक्षा-क्रिया के नियोजन की अधोलिखित विशेषताएं है -

1 नियोजन प्राथमिक क्रम पर आधारित होता है । कक्षा की मूलभूत आवश्यकताओं को योजना में प्राथमिकता दी जाती है ।
2 नियोजन के उद्धेश्य विशिष्ट, सुनिश्चित व स्पष्ट हो जो शिक्षण-स्तर को उन्नत करें ।
3 कक्षा-क्रियाओं का नियोजन उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखकर किया जाता है ।
4 नियोजन निर्माण तथा क्रियान्वित में सभी अनुभवी शिक्षकों का सहयोग प्राप्त होता है ।
5 योजना के क्रियान्वयन की सफलता का समय-समय पर परिवीक्षण एवं निरीक्षण किया जाता है ।
6 कक्षा-क्रियाओं की योजना लचीली होती है ताकि आवश्यकतानुरूप परिवर्तन किया जा सकें ।
7 क्रियाओं का नियोजन तार्किक, व्यवस्थित, वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक प्रक्रिया पर आधारित होता है ।
8 नियोजन से शिक्षण को ही सही दिशा प्रदान होती है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. योजना से आप क्या समझते है?
2. कक्षा- क्रियाओं के नियोजन के मुख्य बिन्दु को स्पष्ट कीजिए |
3. कक्षा- क्रियाओं के नियोजन के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए |
4. कक्षागत क्रियाओं के नियोजन के पदों की विवेचना कीजिए |
5. कक्षा- क्रियाओं के नियोजन की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए |

विद्यार्थीयों के मध्य अन्तः-क्रिया (Interaction Between Students) -

कक्षा-कक्ष में अध्यापक तथा छात्रों के मध्य अन्तः-क्रिया एवं परस्पर छात्र के मध्य अदृश्य अन्त: क्रियाएं होती रहती है इनका स्पष्ट प्रभाव कक्षा-कक्ष वातावरण तथा शिक्षण प्रक्रिया पर पडता है । कक्षा-कक्ष में इस प्रकार की क्रियाओं की जो धारा प्रवाहित होती रहती है उसको व्यवस्थित करने को ही अन्तः-क्रिया कहते है । शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया है और शिक्षक-शिक्षार्थी के मध्य जो क्रियाएँ होती है उसको अन्तः-क्रिया कहते है । शिक्षण में केवल शिक्षक के व्यवहारों का ही नही अपितु छात्रों के व्यवहारों का भी विश्लेषण किया जाता है । कक्षा में कई बार शिक्षक की अनुपस्थिति में भी अन्तः-क्रिया होती है । कहने का तात्पर्य यह है कि छात्र-छात्र के मध्य आपसी क्रियाएँ होती है, विचारों का आदान-प्रदान होता है, जिससे विद्यार्थीयों के मध्य अन्त:- क्रिया के रूप में जाना जा सकता है । सामान्यतया विद्यार्थीयों के मध्य शाब्दिक-अशाब्दिक सम्प्रेषण को अन्तः-क्रिया कहते है ।

विद्यार्थीयों के मध्य अन्त: क्रिया की आधारभूत धारणाएँ (Basic Assumption of Interaction Between Students) -

इसकी आधारभूत धारणाएं निम्नलिखित हैं -

1 कक्षा में छात्रों के मध्य शाब्दिक व्यवहार की प्रधानता होती है क्योंकि अधिकांशत: कक्षा में कोई न कोई बोलता रहता है ।
2 प्रतिपुष्टि द्वारा कक्षा-कक्ष का वातावरण बदला जा सकता है ।
3 विद्यार्थीयों के मध्य अन्तःक्रिया का शिक्षक के व्यवहार पर प्रभाव पडता है ।
4 छात्रों के मध्य शाब्दिक व्यवहारों का अशाब्दिक व्यवहारों की अपेक्षा विश्वसनीयता के साथ निरीक्षण किया जा सकता है ।
5 छात्रों के मध्य अन्तः-क्रिया का उनकी निष्पत्ति पर भी प्रभाव पडता है ।
6 छात्रों के मध्य की क्रियाएं उनके आपसी सम्बन्ध का महत्वपूर्ण तत्त्व होती है ।
7 इसके द्वारा कक्षा में प्रजातांत्रिक वातावरण विकसित किया जा सकता है ।

अन्तः-क्रिया में क्रियाएं (Activities in Interaction) -

शिक्षण की अन्तः-क्रिया के अन्तर्गत वे सभी क्रियाएं भी सम्मिलित की जाती है जो छात्रों होती है । शिक्षण अन्तः-क्रिया में छात्र-छात्र को अनेक प्रकार से शाब्दिक अभि-प्रेरणा प्रदान करता है जैसे-प्रश्न पूछना, सुनना, अनुक्रिया करना, व्याख्या करना, निर्देशन देना आदि ।

विद्यार्थीयों के मध्य अन्तः-क्रिया में निम्नलिखित क्रियाएँ प्रमुख रूप से होती है-

1 कक्षा समूह की प्रकृति ।
2 छात्रों की समस्याओं का निदान ।

3 क्रिया तथा प्रक्रिया, इसमें निम्न बातें आती है -

अ उद्दीपनों का चयन ।

ब. उद्दीपनों का प्रस्तुतीकरण ।

स. युक्तियों का प्रयोग ।

द. युक्तियों का विस्तार ।

1. कक्षा-समूह की प्रकृति (Nature of Class-Group) - कक्षा समूह की प्रकृति से तात्पर्य कक्षा में छात्रों की संख्या से ही है । कक्षा में विद्यार्थीयों की संख्या अधिक होने पर अन्तः-क्रिया अधिक उत्तम होगी। अनुमानतः क्रम से क्रम छात्रों की संख्या 25 तथा अधिक से अधिक छात्रों की संख्या 40 होनी चाहिए। उत्तम कक्षा अन्तः-क्रिया के लिए ऐसा वातावरण उत्पन्न करना चाहिए छात्रों की सहभागिता अधिक से अधिक हो।

2. विद्यार्थीयों की समस्याओं का निदान (Diagnosis of Students Problem) - कक्षा में छात्रों की संख्या के पश्चात् इनके स्तर को देखा जाता है । जब छात्रों के मध्य अन्तः-क्रिया होती है तो इस अवसर पर छात्रों की समस्याओं की पहचान की जाती है । इस प्रकार छात्र मुख्य रूप से तीन पक्षों में निदान करने का प्रयास करते है -

(i) छात्रों की क्षमताएं तथा योग्यताएँ ।

(ii) छात्रों की अभिरूचि एवं अभिवृत्ति ।

(iii) छात्रों की शैक्षिक पृष्ठभूमि ।

छात्र आपस में प्रश्नों की सहायता से इन पक्षों की जानकारी प्राप्त करता है तथा प्रत्यक्षीकरण के माध्यम से सूचनाएं प्राप्त करता है ।

3. क्रिया तथा प्रतिक्रिया (Action & Reaction) - शिक्षण में छात्रों के मध्य जो क्रियाएं होती है उसमें छात्र स्वंय प्रेरित होकर भी आपस में अनुक्रियाएं करते है । छात्रों के मध्य क्रियाएं होती है और वे एक-दूसरे के प्रति प्रतिक्रिया भी व्यक्त करते है । इस प्रकार छात्रों का आपस में अन्तःक्रिया चलती रहती है ।

छात्रों की समस्त क्रियाओं के शाब्दिक तथा अशाब्दिक अन्तःप्रक्रिया के रूप का विश्लेषण किया जा सकता है इसके लिए छात्रों को निम्नलिखित क्रियाएं करनी पडती हैं -

अ. प्रेरकों का चयन - छात्रों को प्रेरित करना आवश्यक है ताकि आपस में उचित अन्तक्रिया कर सके । ऐसे प्रेरकों का चयन किया जाता है जिसकी सहायता से छात्र आपस में अनुक्रिया व्यक्त कर सके इसके लिए अपेक्षित परिस्थितियों का उत्पन्न किया जाता है ताकि सफल या प्रभावी अन्तक्रिया हो सके ।

ब. प्रेरकों का प्रस्तुतीकरण- छात्रों के समक्ष प्रेरक को अनेक रूपों में प्रस्तुत किया जा सकता है अतः इसके स्वरूप को ध्यान में रखना आवश्यक है ताकि छात्रों को सीखने के लिए अभिप्रेरणा प्राप्त हो ।

स. प्रतिपुष्टि तथा पुनर्बलन- ये वे परिस्थितियां है जो विशेष अनुक्रिया की संभावना में वृद्धि करती है । विद्यार्थियों के मध्य अन्तःक्रिया को सबल एवं सुदृढ बनाने के लिए उन्हें पुरस्कार देना चाहिए व प्रोत्साहित करना चाहिए । नकारात्मक पुनर्बलन या प्रतिपुष्टि के द्वारा छात्रों के मध्य होने वाली अवांछनीय अनुक्रियाओं को रोका जा सकता है ताकि छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन एवं सुधार लाया जा सकें ।

जब कोई छात्र किसी अन्य छात्र के व्यवहार को प्रभावित करता है अथवा प्रभावित होता है तो उसे छात्र-छात्र के मध्य अन्तःक्रिया कहते है । जब कोई छात्र समूह के व्यवहार से प्रभावित होता है अथवा प्रभावित करता है तो उसे समूह के बीच होने वाली अन्तःक्रिया कहा जाता है । उदाहरण के लिए यदि किसी कक्षा का कोई छात्र अपनी कक्षा-समूह में अन्तःक्रिया करता है तो कक्षा समूह अन्तःक्रिया कहा जाता है । छात्र-छात्र के मध्य परस्पर होने वाली अन्तःक्रिया के पांच आधार हो सकते है जो निम्न है--

(i) सहयोग (Co-Operation)

(ii) प्रतिस्पर्धा (Competition)

(iii) संघर्ष (Conflict)

(iv) व्यवस्था (Organisation)

(v) आत्मीकरण (Assimilation)

सहयोग, प्रतिस्पर्धा, व्यवस्थापन तथा आत्मीकरण वस्तुतः अन्तःक्रिया के सकारात्मक आधार है जिनसे समूह का सामाजिक विकास होता है । इसके विपरित संघर्ष एक नकारात्मक आधार है जिसके परिणाम विघटनात्मक भी हो सकते हैं ।

छात्रों के मध्य अन्त: क्रिया के लाभ (Advantage of Interaction between Students)

1 छात्रों के मध्य घनिष्ठ सम्बधों को स्थापित किया जा सकता है ।

2 छात्रों के व्यवहार के स्वरूपों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है ।

3 कक्षा में प्रजातांत्रिक वातावरण को विकसित किया जा सकता है ।

4 प्रतिपुष्टि युक्ति का प्रयोग कर छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन लाया जा सकता है ।

5 कक्षा में छात्रों में सहयोग की भावना को विकसित किया जा सकता है ।

6 छात्रों के उपलब्धि स्तर की जानकारी प्राप्त की जा सकती है ।

7 छात्रों के मध्य सम्प्रेषण का निरीक्षण किया जा सकता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. विद्यार्थीयों के मध्य अन्त:क्रिया की आधारभूत धारणाओं को स्पष्ट कीजिए |
2. छात्रो के मध्य अन्त:क्रिया में क्रियाओं को स्पष्ट कीजिए |
3. विद्यार्थियों के मध्य अन्त:क्रिया के लाभों की विवेचना कीजिए |

10.3 कक्षाक्रियाओं- का संगठन (Organisation of Class room Activities)

मानव आदि काल से जीवन को अच्छा बनाने के लिए संघर्ष करता आया है| उसने अपनी कठिनाईयों का हल करने के लिए साधनों और स्त्रोतो का अधिकतम प्रयोग करने का प्रयास किया है । साधनों तथा स्त्रोतों का समुचित रूप में प्रयोग करने को "संगठन" कहते है । संगठन का अर्थ होता है - साधनों एवं स्त्रोतों का निश्चित उद्धेश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयोग करने के स्वरूप को संगठन कहते हैं । संगठन के अन्तर्गत तीन युक्तियों को प्रयुक्त किया जाता है-

1 प्रयासों तथा स्त्रोतो में समन्वय स्थापित किया जाता है ।

2 कार्य और क्रियाओं का विभाजन किया जाता है ।

3 अधिकारी एवं उत्तरदायित्व को उन्नत क्रम (Hierarchy) में निर्धारित किया जाता है ।

संगठन के द्वारा अनिश्चितता को क्रम करके निश्चितता तथा स्थायित्व में वृद्धि की जाती है । संगठन के आधार पर वास्तविक उपलब्दियों के सम्बन्ध में पूर्व कथन दिया जाता है । डेवीज ने शिक्षक को संगठक की संज्ञा दी है । इनका मानना है कि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए शिक्षक को संगठक का कार्य करना होता है क्योंकि शिक्षण की तीन प्रमुख समस्याएं है -

1 कौन पढ़ाए? इसका सम्बन्ध शिक्षक की क्षमताओं से होता है ।

2 क्या पढाए? इसका सम्बन्ध पाठ्यवस्तु के स्वरूप से होता है ।

3 किसे पढ़ाए? इसका सम्बन्ध छात्रों के पूर्व व्यवहार से होता है ।

शिक्षण में पहले कार्यों तथा प्रक्रियाओं की योजना बनायी जाती है फिर उसकी व्यवस्था की जाती है । शिक्षक सीखने के स्त्रोतो तथा साधनों की व्यवस्था करने का कार्य करता है ताकि उद्देश्यों की प्राप्ति प्रभावशाली ढंग से की जा सके । कक्षा-क्रिया की व्यवस्था में मितव्ययी तथा प्रभावशाली साधनों को प्रयुक्त किया जाता है । कक्षागत क्रियाओं की व्यवस्था के द्वारा अधिगम-वातावरण तथा अधिगम स्वरूपों को उत्पन्न किया जाता है जिससे उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है । कक्षा- क्रियाओं की व्यवस्था के लिए शिक्षण उपागमों, व्यूह-रचना, शिक्षण सहायक सामग्री तथा शिक्षण-युक्तियों के सम्बन्ध में निर्णय लिए जाते है । कक्षा-क्रियाओं की व्यवस्था के सम्पादन से सीखने के स्वरूपों को उत्पन्न किया जाता है । इस प्रकार कक्षागत क्रियाओं की व्यवस्था करके शिक्षण प्रक्रिया को क्रियान्वित करने में सफलता प्राप्त की जा सकती है । शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए कक्षागत क्रियाओं की व्यवस्था में शिक्षण - कौशलों का भी प्रयोग किया जाता है । इस प्रकार शिक्षण व कक्षा कक्ष की क्रियाओं में समन्वय स्थापित करने में व्यवस्था का महत्वपूर्ण योगदान है ताकि कक्षा-क्रियाओं के नियोजन को प्रभावी एवं सफल बनाया जा सके ।

कक्षा-क्रियाओं की व्यवस्था के लिए रूपरेखा तैयार की जा सकती है जैसे:-

1 सम्पूर्ण शिक्षण प्रणाली का विश्लेषण करना ।

2 पाठ्यवस्तु का विश्लेषण करना ।

3 विद्यार्थीयों की योग्यता को ज्ञात करना ।

4 छात्रों के ज्ञान, कौशल और अभिवृत्तियों का विशिष्टिकरण करना ।

5 छात्रों की आवश्यकताओं को पहचानना ।

6 शिक्षण - अधिगम उद्धेश्यों की व्याख्या करना ।

7 शिक्षण क्रियाओं को प्रभावी बनाने के लिए शिक्षण व्यूह रचना का चयन करना ।

8 छात्रों को निरन्तर प्रेरित करना ।

9 शिक्षण -क्रियाओं का निरीक्षण एवं अवलोकन करना ।

10 कक्षा- क्रियाओं के सफल क्रियान्वयन के लिए उचित व्यवस्था करना ।

इस प्रकार उपर्युक्त रूपरेखा को ध्यान में रखकर क्रियाओं की व्यवस्था की जाए तो सफल क्रियान्वयन के पद या सोपान तक पहुंचा जा सकता है ताकि शिक्षक उचित व्यवस्था के आधार पर उद्देश्यों की प्राप्ति कर सके ।

कक्षा-क्रियाओं के प्रभावी संगठन की विशेषताएं (Characteristics of effective organization of Classroom activities) - कक्षागत क्रियाओं के प्रभावी व्यवस्था की निम्नलिखित विशेषताएं है -

1 शिक्षण-सिद्धान्त का विकास किया जा सकता है ।
2 शिक्षक को कर्तव्यों के प्रति अधिक जागरूक तथा प्रोत्साहित किया जा सकता है ।
3 शिक्षण क्रियाओं को सार्थक तथा उपयोगी बनाया जा सकता है ।
4 शिक्षण को उद्देश्य-केन्द्रित बनाया जा सकता है ।
5 शिक्षण-प्रक्रिया में छात्रों की आवश्यकताओं, योग्यताओं तथा अभिवृत्तियों को विशेष महत्व दिया जा सकता है ।
6 छात्रों के सर्वागीण विकास के लिए पूर्ण अवसर प्रदान किया जा सकता है ।
7 शिक्षण क्रियाओं के सम्पादित करने में अधिगम स्वरूपों को ध्यान में रखा जाता है । जिससे सीखने के उद्धेश्यों की अधिकतम प्राप्ति की जा सकती है ।
8 शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाया जा सकता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. संगठन की परिभाषा दीजिए ।
2. कक्षा-क्रियाओं की संगठन की रूपरेखा तैयार कीजिए ।
3. प्रभावी संगठन के प्रमुख विशेषताओं की विवेचना कीजिए ।

10.4 अभिप्रेरणा (Motivation)

शिक्षण का नियोजन तथा संगठन को कितना ही अच्छा क्यों न बना लिया जाये परन्तु जब तक छात्रों के व्यवहार को प्रेरित नही किया जाता, शिक्षण-प्रक्रिया आगे नही बढ़ सकती है । अत: यह शिक्षक का ही कर्त्तव्य है कि वह छात्रों को अभिप्रेरणा (Motivation) दे, उनके व्यवहार को प्रोत्साहित करे और निर्देशन प्रदान करे ताकि अधिगम के उद्धेश्यों को भली प्रकार से प्राप्त किया जा सके । इस सम्बन्ध में शिक्षक के दो कार्य है

1 छात्र - अभिप्रेरणा को प्रयोग में लाना (Harnessing Student's Motivation)
2 समुचित अभिप्रेरणा की प्रविधियों का चयन करना ।

इस प्रकार शिक्षण प्रक्रिया को आगे बढाने तथा उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि कक्षा शिक्षक को अभिप्रेरणा की प्रविधियों तथा उनके प्रयोग का बोध होना चाहिए । अधिगम में अभिप्रेरणा का विशेष महत्व है क्योंकि कोई भी अधिगम बिना प्रेरणा के नहीं होता है । अत: शिक्षक को अधिगम स्वरूपों का उत्पन्न करने के लिए अभिप्रेरणा की प्रविधियों का प्रयोग करना होता है ।

अभिप्रेरणा का अर्थ (Meaning of Motivation) - अभिप्रेरणा एक आन्तरिक शक्ति होती है जो अनुक्रिया या व्यवहार को तीव्र करती है । इसके अन्तर्गत वे सभी आन्तरिक अवस्थाएं

आती है जो किसी क्रिया को आरंम्भ करती है । यदि अभिप्रेरणा की आंतरिक अवस्थाएं क्रियाशील न हो तो बाह्य उद्दीपन होने पर अनुक्रिया उत्पन्न नही की जा सकती है ।

बनार्ड के अनुसार "अभिप्रेरणा के द्वारा उन विशिष्ट उद्धेश्यों की ओर क्रियाओं को प्रोत्साहित किया जाता है जिन उद्धेश्यों के प्रति पहले कोई आकर्षण नही होता है । (Motivation is the Stimulation of action towards a particular objective where previously there was little or no attraction of the goal)

जे0पी0 गिलफोर्ड के अनुसार- "प्रेरक एक विशिष्ट आन्तरिक कारण या अवस्था है जो क्रिया को आरंम्भ करने या जारी रखने में प्रवृत्त होता है ।"
(A Motive is any particular internal factor or condition that tends to initiate and to sustain activity.)

बी0एफ0 स्कीनर के अनुसार- "विद्यालय-अधिगम में अभिप्रेरणा का अर्थ अपेक्षित व्यवहार के लिए प्रौत्साहित करना, जारी रखना तथा दिशा प्रदान करना है । "(Motivation in School learning involves arousing, persisting, Sustaining and directing disrable behaviour.)"

अभिप्रेरणा की शब्दावली (Terminology of Motivation) - अभिप्रेरणा के सन्दर्भ में कई शब्द प्रयुक्त किए जाते है प्राय: उनका एक ही अर्थ समझ लिया जाता है जबकि उनका अर्थ विशिष्ट होता है इसलिए इनकी शब्दावलियों का स्पष्ट अर्थ समझना आवश्यक है जिसकी व्याख्या इस प्रकार है -

1 **प्रेरक (Motive) -** व्यक्ति के अन्दर उपस्थित मनोशारीरिक दशाएं जो किसी कार्य विशेष को प्रेरित करती है, प्रेरक कहलाती है । (Mc Dougall-Motives are conditions Psychological and Physiological with in the organism that dispose it to act in certain ways.) प्रेरक शब्द से व्यक्ति की क्रियाओं के साथ ही साथ उसकी दिशा का भी आभास होता है ।

2 **प्रणोदन (Drive) -** इसका सम्बन्ध शारीरिक आवश्यकताओं से है । व्यक्ति के जन्म से ही शारीरिक आवश्यकताए आरंम्म हो जाती है जैसे- भूख तथा प्यास ।

बोरिंग का मत है- "प्रणोदन आन्तरिक - शारीरिक क्रिया या दशा है, जो उद्दीपन के द्वारा विशेष प्रकार का व्यवहार उत्पन्न करती है। (A drive is an intra organic activity of condition of tissue supplying stimulation for particular type of behaviour.)

3 **प्रोत्साहन (Encourage) -** इसका संबंध निश्चित वस्तुओं से होता है जिनकों प्राप्त करने के लिए छात्र प्रयत्न करता है । यह बाहय वातावरण से भी सम्बन्धित होता है । इसका लक्ष्य छात्र को किसी विशेष दिशा की ओर आकर्षित करना है ।

(An incentive is an object or external condition, perceived as capable of satisfying an aroused motive that tend to elicit to attain that object or condition.)

4 **अभिरूचि (Interest) -** व्यक्ति अनेक कार्यों तथा वस्तुओं में से किसी विशेष कार्य तथा वस्तु को ही पसन्द करता है और उनकी ओर आकर्षित होता है अन्य कार्य तथा वस्तुओं को पसन्द नहीं करता है । (It is a tendency to give selective attention to one activity or activities rather than others.)

5 **उत्सुकता (Curiosity) -** उत्सुकता, अभिरूचि से निम्न होती है । अभिरूचि में चयन की प्रवृत्ति होती है जब कि उत्सुकता में व्यक्ति अन्वेषण तथा उन नई वस्तुओं के सम्बन्ध में जानने के लिए प्रयत्न करता है जिनके सम्बन्ध में उसे कोई जानकारी नही होती है (Curiosity is defferent from interest in that interest implies selective to certain activities where as curiosity implies the tendency to investigate and seek to learn more about new objectives with which there was no previous experience)

6 **ध्येय (Goal) -** लक्ष्य अंतिम परिणाम के संबन्ध में सूचित करता है, जिसे व्यक्ति चेतन अवस्था में प्राप्त करने का प्रयास करता है । (The end result, immediate or remote, which the individual seeks is his goal)

अभिप्रेरणा की प्रकृति (Nature of Motivation) - अभिप्रेरणा एक मनोशारीरिक प्रत्यय है अथवा आंतरिक प्रक्रिया है जो क्रियाओं को प्रारंभ करती है । उन्हे दिशा प्रदान करती है तथा आगे बढाती है । अधिगम की यह प्राथमिक आवश्यकता होती है । अभिप्रेरणा के अनेक आंतरिक कारक होते हैं जो जीव को क्रियाओं के लिए प्रोत्साहित करते हैं परन्तु मानव-अधिगम में आवश्यकताओं का विशेष महत्व होता है । **लोविल ने बताया कि** "अभिप्रेरणा मनोशारीरिक अथवा आंतरिक प्रक्रिया है जो आवश्यकताओं से आरंभ होती है जो किसी क्रिया को जारी रखती है और जिससे आवश्यकता की संतुष्टि होती है ।

इस प्रकार प्रभावी शिक्षण - अधिगम के लिए अभिप्रेरणा को महत्वपूर्ण कारक माना है ।

अभिप्रेरणा के प्रकार (Types of Motivation) - अभिप्रेरणा के निम्न प्रकार है :-

1 **बाहय-अभिप्रेरणा (Extrinsic Motivation) -** बाहय- अभिप्रेरणा का तात्पर्य छात्रों के समक्ष वस्तु अथवा वातावरण के प्रस्तुत करने से होता है जिससे उनके व्यवहार को प्रोत्साहन मिलता है । निम्न स्तर की आवश्यकताओं (शारीरिक एवं सुरक्षा) के लिए बाहय -अभिप्रेरणा प्रभावशाली होती है । इनके लिए पुरस्कार, दण्ड, निद्रा आदि अभिप्रेरणाएं प्रभावशाली होती है मन्दबुद्धि के बालकों के लिए इस प्रकार अभिप्रेरणा अधिक उपयोगी है ।

2 **आंतरिक अभिप्रेरणा (Intrinsic Motivation) -** आंतरिक अभिप्रेरणा का तात्पर्य पाठ्यवस्तु तथा क्रियाओं से छात्रों को स्वत: प्रोत्साहन मिलने से हैं। छात्र की क्रियाओं का सम्बन्ध आंतरिक - अभिप्रेरणा से ही होता है । यदि छात्र का इरादा परीक्षा में प्रथम आने का है तो उसकी सभी क्रियाएं उसके लक्ष्य से प्रभावित होगी और उसको प्रोत्साहित करती रहेगी । उच्च स्तर की आवश्यकताओं (सम्मान एवं यथार्थकरण) के लिए आंतरिक अभिप्रेरणा अधिक प्रभावशाली होती है । इनके लिए आकाक्षा स्तर, प्रगति का ज्ञान तथा नवीनता आदि अभिप्रेरणा की प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है । उच्च स्तर की कक्षाओं में इस प्रकार को अभिप्रेरणा का प्रयोग प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है।

3 **आंतरिक बाहय अभिप्रेरणा (Intrinsic - Extrinsic Motivation) -** इस प्रकार की अभिप्रेरणाओं का सम्बन्ध वातावरण तथा पाठ्यवस्तु दोनो से होता हैं । यह दोनो के मध्य की अभिप्रेरणा है । यह आन्तरिक तथा बाहय अभिप्रेरणाओं में कड़ी का कार्य करती है ।

मध्य वर्ग की आवश्यकताओं (सुरक्षा, स्नेह तथा सम्मान) के लिए आन्तरिक-बाहय अभिप्रेरणा अधिक प्रभावशाली होती है । इसके लिए सफलता एवं असफलता, प्रतियोगिता एवं सहयोग अभिप्रेरणा की प्रविधियों को संयुक्त किया जा सकता है । इनको सामाजिक क्षमताओं के लिए उपयोगी माना जाता है ।

अभिप्रेरणा की प्रविधियां (Techniques of Motivation) - अभिप्रेरणा की अनेक प्रविधियां है । प्रमुख अभिप्रेरणा की प्रविधियां निम्नलिखित है :-

1 पुरस्कार एवं दण्ड (Reward & Punishment)

2 प्रशंसा एवं निंदा (Praise and Reproof)

3 सफलता एवं असफलता (Success & Failure)

4 प्रतियोगिता एवं सहयोग (Competition & Co-operation)

5 प्रगति का ज्ञान (Knowledge of Progress)

6 नवीनता (Novelty)

7 आंकाक्षा का स्तर (Level of Aspiration)

इसके अतिरिक्त अभिवृत्ति, प्रश्न, उदाहरण तथा दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री के प्रयोग से भी छात्रों को प्रेरित किया जाता है ।

1. **पुरस्कार एवं दण्ड (Reward & Punishment) -** कक्षा में छात्रों को प्रेरित करने के लिए पुरस्कार विधि एक महत्वपूर्ण विधि है । छात्रों को अच्छा अथवा सही कार्य करने के लिए कोई उपहार, प्रशंसा या पुरस्कार दिया जाता है जिससे छात्रों को प्रोत्साहन मिलता रहे ।

पुरस्कार के विपरित दण्ड भी बालकों को प्रेरित करने की एक प्रविधि है । यदि छात्रों को किसी गलत अथवा अवांछनीय कार्य करने के लिए दण्ड दिया जाये तब वह उस कार्य को नही करते है । इस प्रकार अवांछनीय तथा गलत व्यवहारों को रोका जा सकता है ।

1. **प्रशंसा एवं निंदा-** प्रशंसा भी एक प्रकार का पुरस्कार है जिसके द्वारा किसी सही कार्य करने की संभावना बढ जाती है और उरने अच्छे कार्य करने के लिए प्रोत्साहन मिलता है । निन्दा भी एक प्रविधि है, यदि इसका प्रयोग आवश्यकतानुसार किया जाए तो अनुकुल प्रभाव पडता है। यदि अवांछनीय कार्यों की निदा की जाये जो उसको करने की संभावना कम हो जाती है। प्रतिभाशाली छात्रों के लिए निंदा का प्रभाव अनुकूल होता है परन्तु कमजोर छात्रों के लिए निंदा का प्रयोग नही करना चाहिए। इसका रूप शाब्दिक होता है।

2. **सफलता एवं असफलता - बरनार्ड का** कथन है कि कि सफलता से व्यक्ति में आत्म विश्वास का विकास होता है । इसके आधार पर छात्र अपनी योग्यतानुसार लक्ष्य निर्धारित करता है । सामान्य बुद्धि के बालकों के लिए सफलता विशेष रूप से प्रेरक का काम करती है । सफलता सभी को प्रेरणा देती है ।

असफलता सफलता के विपरीत होती है परन्तु कभी-कभी प्रेरक का कार्य करती है । प्रतिभाशाली छात्र असफलता को चुनौती के रूप में स्वीकार करते हैं जिससे कार्य करने के लिए प्रोत्साहन मिलता है ।

3. **प्रतियोगिता एवं सहयोग -** विद्यालयों में सामान्यतया छात्रों में प्रतियोगिता तथा सहयोग की प्रवृत्ति देखी जाती है । शिक्षक तथा छात्र दोनों को प्रतियोगिता के माध्यम से अधिक परिश्रम करने को प्रेरणा मिलती है ।

प्रतियोगिता में छात्र को पहले से अधिक अंक प्राप्त करने की प्रेरणा दी जाती है । सामूहिक प्रतियोगिता से छात्रों में सहयोग की भावना जागृत होती है और सामूहिक रूप में कार्य को प्रौत्साहन मिला है । इस अभिप्रेरणा के माध्यम से प्रजातांत्रिक भावना को विकसित किया जाता है ।

4. **प्रगति का ज्ञान -** प्रगति का ज्ञान व्यक्ति के अंह की भावना को संतुष्ट करता है । इसी के साथ व्यवहार को भी दृढ करता है । कक्षा में शिक्षक समय-समय पर छात्रों को उनकी प्रगति से अवगत कराता है । विद्यालयों में भी छात्रों की मासिक परीक्षाओं के विवरण के लिए प्रगति चार्ट बनाए जाते है ताकि छात्रों को उनकी स्थिति का ज्ञान होता रहे । इससे उन्हे अधिक परिश्रम के लिए प्रेरणा मिलती है ।

5. **नवीनता -** छात्रो को अपने वातावरण के साथ सामायोजन की आवश्यकता होती है और नवीनता इस आवश्यकता की संतुष्टि करती है छात्रों को नवीनता से प्रेरणा मिलती है और नवीन कार्य में रूचि अधिक होती है । इसका प्रयोग करते समय यह आवश्यक है कि उनका सम्बन्ध परिचित इयन से हो । इस प्रकार परिवर्तन और विविधता का सम्बन्ध जीवन से हो तो उसे नवीनता कहते है । इसके प्रयोग से छात्रों के व्यवहार को प्रोत्साहित किया जाता है ।

6. **आकांक्षा का स्तर -** व्यक्ति जिस वस्तु को पाने की आकांक्षा करता है और जिसका सम्बन्ध जीवन के लक्ष्य से होता है, उसे आकाक्षा-स्तर कहते है । आकांक्षा स्तर वातावरण और व्यक्ति की योग्यताओं पर निर्भर होता है । व्यक्ति वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुऐ आकाक्षाओं के स्तर का निर्धारण करता है । आकांक्षा स्तर पिछली निष्पत्तियों पर आधारित होता है । यह अभिप्रेरणा का एक रूप है । शिक्षक का कर्तव्य है कि छात्रों के आकांक्षा स्तर को उठाए जिससे छात्र कार्य करने में तल्लीन रहे । इसके अतिरिक्त छात्रों के अभिवृत्ति एवं अभिरूचि भी छात्रो के व्यवहारों का प्रोत्साहित करती है । प्रश्नों की सहायता से भी छात्रों को प्रेरणा मिलती है और वे कार्य में अधिक तत्पर हो जाते है और रूचि लेने लग जाते है । कक्षा शिक्षण में अभिप्रेरणा का प्रयोग कर तीन कार्य सम्पन्न किए जाते हैं जैसे-

(अ) छात्रों को व्यवहार के लिए शक्ति प्रदान की जाती है ।

(ब) वांछनीय व्यवहार के परिवर्तन में सहायता मिलती है ।

(स) इनसे व्यवहार का आरम्भ तथा संचालन होता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. अभिप्रेरणा का अर्थ बताते हुए परिभाषित कीजिए।
2. अभिप्रेरणा की प्रकृति को स्पष्ट कीजिए|
3. अभिप्रेरणा की प्रविधियों का संक्षिप्त विवरण दीजिए |

10.5 विद्यार्थियों के मध्य अन्त: क्रिया (Interaction between Students)

कक्षा-कक्ष में अध्यापक तथा छात्रों के मध्य अन्तः-क्रिया एवं परस्पर छात्र के मध्य अदृश्य अन्त: क्रियाएं होती रहती है इनका स्पष्ट प्रभाव कक्षा-कक्ष वातावरण तथा शिक्षण प्रक्रिया पर पडता है । कक्षा-कक्ष में इस प्रकार की क्रियाओं की जो धारा प्रवाहित होती रहती है उसको व्यवस्थित करने को ही अन्तः-क्रिया कहते है । शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया है और शिक्षक-शिक्षार्थी के मध्य जो क्रियाएँ होती है उसको अन्तः-क्रिया कहते है । शिक्षण में केवल शिक्षक के व्यवहारों का ही नही अपितु छात्रों के व्यवहारों का भी विश्लेषण किया जाता है । कक्षा में कई बार शिक्षक की अनुपस्थिति में भी अन्तः-क्रिया होती है । कहने का तात्पर्य यह है कि छात्र-छात्र के मध्य आपसी क्रियाएँ होती है, विचारों का आदान-प्रदान होता है, जिससे विद्यार्थीयों के मध्य अन्त:- क्रिया के रूप में जाना जा सकता है । सामान्यतया विद्यार्थीयों के मध्य शाब्दिक-अशाब्दिक सम्प्रेषण को अन्तः-क्रिया कहते है ।

विद्यार्थीयों के मध्य अन्त: क्रिया की आधारभूत धारणाएँ (Basic Assumption of Interaction Between Students) - इसकी आधारभूत धारणाएं निम्नलिखित है -

1 कक्षा में छात्रों के मध्य शाब्दिक व्यवहार की प्रधानता होती है क्योंकि अधिकांशत: कक्षा में कोई न कोई बोलता रहता है ।
2 प्रतिपुष्टि द्वारा कक्षा-कक्ष का वातावरण बदला जा सकता है ।
3 विद्यार्थीयों के मध्य अन्तःक्रिया का शिक्षक के व्यवहार पर प्रभाव पडता है ।
4 छात्रों के मध्य शाब्दिक व्यवहारों का अशाब्दिक व्यवहारों की अपेक्षा विश्वसनीयता के साथ निरीक्षण किया जा सकता है ।
5 छात्रों के मध्य अन्तः-क्रिया का उनकी निष्पत्ति पर भी प्रभाव पडता है ।
6 छात्रों के मध्य की क्रियाएं उनके आपसी सम्बन्ध का महत्वपूर्ण तत्त्व होती है ।
7 इसके द्वारा कक्षा में प्रजातांत्रिक वातावरण विकसित किया जा सकता है ।

अन्तःक्रिया में क्रियाएं (Activities in Interaction) - शिक्षण की अन्तः-क्रिया के अन्तर्गत वे सभी क्रियाएं भी सम्मिलित की जाती है जो छात्रों द्वारा होती है । शिक्षण अन्तः-क्रिया में छात्र-छात्र को अनेक प्रकार से शाब्दिक अभिप्रेरणा प्रदान करता है जैसे-प्रश्न पूछना, सुनना, अनुक्रिया करना, व्याख्या करना, निर्देशन देना आदि ।

विद्यार्थीयों के मध्य अन्तः-क्रिया में निम्नलिखित क्रियाएँ प्रमुख रूप से होती है-

1 कक्षा समूह की प्रकृति ।
2 छात्रों की समस्याओं का निदान ।
3 क्रिया तथा प्रक्रिया / इसमें निम्न बातें आती है -
   अ उद्धीपनों का चयन ।
   ब. उद्धीपनों का प्रस्तुतीकरण ।
   स युक्तियों का प्रयोग ।
   द. युक्तियों का विस्तार ।

1 **कक्षा-समूह की प्रकृति (Nature of Class-Group) -** कक्षा समूह की प्रकृति से तात्पर्य कक्षा में छात्रों की संख्या से ही है । कक्षा में छात्रों की संख्या अधिक होने पर अन्तः-क्रिया अधिक उत्तम होगी । अनुमानत: कम से कम छात्रों की संख्या 25 तथा अधिक से अधिक छात्रों की संख्या 40 होनी चाहिए । उत्तम कक्षा अन्तः-क्रिया के लिए ऐसा वातावरण उत्पन्न करना चाहिए छात्रों की सहभागिता अधिक से अधिक हो ।

2 **छात्रों की समस्याओं का निदान (Diagnosis of Students Problem)** कक्षा में छात्रों की संख्या के पश्चात् इनके स्तर को देखा जाता है । जब छात्रों के मध्य अन्तः-क्रिया होती है तो इस अवसर पर छात्रों की समस्याओं की पहचान की जाती है । इस प्रकार छात्र मुख्य रूप से तीन पक्षों में निदान करने का प्रयास करते है -

(i) छात्रों की क्षमताएं तथा योग्यताएँ ।

(ii) छात्रों की अभिवृत्ति एवं अभिरूचि ।

(iii) छात्रों की शैक्षिक पृष्ठभूमि ।

छात्र आपस में प्रश्नों की सहायता से इन पक्षों की जानकारी प्राप्त करता है तथा प्रत्यक्षीकरण के माध्यम से सूचनाएं प्राप्त करता है ।

3. **क्रिया तथा प्रतिक्रिया (Action & Reaction) -** शिक्षण में छात्रों के मध्य जो क्रियाएँ होती है उसमें छात्र स्वंय प्रेरित होकर भी आपस में अनुक्रियाएं करते है । छात्रों के मध्य क्रियाएं होती है और वे एक-दूसरे के प्रति प्रतिक्रिया भी व्यक्त करते है । इस प्रकार छात्रों की आपस में अन्तःक्रिया चलती रहती है

छात्रों की समस्त क्रियाओं के शाब्दिक तथा अशाब्दिक अन्तःप्रक्रिया के रूप का विश्लेषण किया जा सकता है इसके लिए छात्रों को निम्नलिखित क्रियाएं करनी पडती हैं -

अ. प्रेरकों का चयन - छात्रों को प्रेरित करना आवश्यक है ताकि आपस में उचित अन्तःक्रिया कर सके । ऐसे प्रेरकों का चयन किया जाता है जिसकी सहायता से छात्र आपस में अनुक्रिया व्यक्त कर सके इसके लिए अपेक्षित परिरिथतियों का उत्पन्न किया जाता है ताकि सफल या प्रभावी अन्तःक्रिया हो सके ।

ब. प्रेरकों का प्रस्तुतीकरण- छात्रों के समक्ष प्रेरक को अनेक रूपों में प्रस्तुत किया जा सकता है । अत: इसके स्वरूप को ध्यान में रखना आवश्यक है ताकि छात्रों को सीखने के लिए अभिप्रेरणा दें ।

स. प्रतिपुष्टि तथा पुनर्बलन- ये वे परिस्थितियां है जो विशेष अनुक्रिया की संभावना में वृद्धि करती है। विद्यार्थियों के मध्य अन्तःक्रिया को सबल एवं सुदृढ बनाने के, लिए उन्हें पुरस्कार देना चाहिए व प्रोत्साहित करना चाहिए । नकारात्मक पुनर्बलन या प्रतिपुष्टि के द्वारा छात्रों के मध्य होने वाली अवांछनीय अनुक्रियाओं को रोका जा सकता है ताकि छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन एवं सुधार लाया जा सकें ।

जब कोई छात्र किसी अन्य छात्र के व्यवहार को प्रभावित करता है अथवा प्रभावित होता है तो उसे छात्र-छात्र के मध्य अन्तःक्रिया कहते है । जब कोई छात्र समूह के व्यवहार से प्रभावित होता है अथवा प्रभावित करता है तो उसे समूह के बीच होने वाली अन्तःक्रिया कहा जाता है । उदाहरण के लिए यदि किसी कक्षा का कोई छात्र अपनी कक्षा-समूह में अन्तःक्रिया करता है तो

कक्षा समूह अन्तःक्रिया कहा जाता है । छात्र-छात्र के मध्य परस्पर होने वाली अन्तःक्रिया के पांच आधार हो सकते है जो निम्न है-

(i) सहयोग (Co-operation)

(ii) प्रतिस्पर्धा (Competition)

(iii) संघर्ष (Conflict)

(iv) व्यवस्था (Organization)

(v) आत्मीकरण (Assimilation)

सहयोग, प्रतिस्पर्धा, व्यवस्थापन तथा आत्मीकरण वस्तुत: अन्तःक्रिया के सकारात्मक आधार है जिनसे समूह का सामाजिक विकास होता है। इसके विपरित संघर्ष एक नकारात्मक आधार है जिसके परिणाम विघटनात्मक भी हो सकते है।

अन्त: क्रिया के लाभ (Advantage of Interaction between Students)

1 छात्रों के मध्य घनिष्ठ सम्बधों को स्थापित किया जा सकता है ।

2 छात्रों के व्यवहार के स्वरूपों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है ।

3 कक्षा में प्रजातांत्रिक वातावरण को विकसित किया जा सकता है ।

4 प्रतिपुष्टि युक्ति का प्रयोग कर छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन लाया जा सकता है ।

5 कक्षा में छात्रों में सहयोग की भावना को विकसित किया जा सकता है ।

6 छात्रों के उपलब्धि स्तर की जानकारी प्राप्त की जा सकती है ।

7 छात्रों के मध्य सम्प्रेषण का निरीक्षण किया जा सकता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 विद्यार्थियों के मध्य अंत: क्रिया आधारभूत धारणाओं को स्पष्ट कीजिए |

2 छात्रों के मध्य अन्त: क्रिया में क्रियाओं को स्पष्ट कीजिए |

3 विद्यार्थियों के मध्य अंत:क्रिया के लाभों की विवेचना कीजिए |

10.6 नवीन समूह गतिशीलता का सृजन (Creation of New Group-Dynamics)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । उसके जीवन का प्रारम्भ समाज से ही होता है तथा जीवनपर्यन्त समाज में रहकर ही वह अपने जीवन की विभिन्न गतिविधियों को सम्पादित करता रहता है । ऐसी स्थिति में मानव समाज के सदस्यों में परस्पर सहयोग तथा अन्तःक्रिया का होना स्वाभाविक ही है । वास्तव में मनुष्यों में समूह मूल प्रवृति (Gregariousness) होती है, वह समूह बनाकर रहता है तथा समूह में रहकर ही अपनी विभिन्न आवश्यकताओं तथा अपेक्षाओं की पूर्ति करता है उसकी अनके मूल प्रवृतियों की तुष्टि समूहों में ही हो सकती है । यही कारण है कि शिक्षा में समूहों के अध्ययन को एक महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है ।

समूह का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning & Definition of Group) - मनुष्य में समूह बनाकर रहने की सामाजिक प्रवृति होती है । सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य

पारस्परिक सहयोग के अभाव में अपने प्रयोजन को पूरा नही कर सकता है । इसी तरह छात्र के सम्पर्क में समान हित वाले छात्र आते है तो धीरे-धीएर एक समूह का रूप ले लेते है । समूह के सदस्य के रूप में छात्र अपने व्यक्तित्व को भूलकर समूह के सामूहिक व्यक्तित्व को अपना लेता है तथा प्राय: समूह के प्रयोजन के अनुकूल आचरण करता है ।

समूह के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएं दी जा रही है-

मैकाईवर - "समूह से हमारा अभिप्राय व्यक्तियों के किसी भी ऐसे संग्रह से है, जो आपस में एक-दूसरे के साथ सामाजिक सम्बन्ध में आते है ।"(By group we mean any collection of human being, who are brought into social relationship with one other).

ऑगबर्न व निमकॉफ - "जब दो या दो से अधिक व्यक्ति एक दूसरे के निकट आते है और एक-दूसरे को प्रभावित करते है, तब वे सामाजिक समूह का निर्माण करते है । "(Whenever two or more individuals come together and influence one another, they may be said to constitute a social group.)

कक्षा-समूह की विशेषताएँ (Characteristics of Class-group) - विद्यालय से सम्बंधित अनेक प्रकार के समूह होते है जैसे-टीम, क्लब, विषय समितियां, साहित्यिक, गोष्ठियाँ, कक्षा-समूह आदि । इन सब में अपने महत्व और उपयोगिता के कारण कक्षा-समूह का स्थान सर्वोपरि है । इसकी पुष्टि में कप्पूस्वामी ने लिखा है -

"विद्यालयों के कार्यक्रमों में कक्षा-समूह का एक विशेष महत्वपूर्ण स्थान है । "(In school programme, the class room group has a special place of importance) - कक्षा-समूह की कुछ विशेषताएँ निम्न प्रकार से है -

1 **सामान्य उद्देश्य**- कक्षा के सामान्य उद्धेश्य होते है इसके सभी छात्र एक बडे समाज द्वारा बनाए गए उद्देश्यो को प्राप्त करने की कोशिश करता है । वे इसी सामान्य उद्धेश्य के कारण एक-दूसरे से बंधे रहते है ।

2 **संगठित संरचना**- कक्षा की एक संगठित संरचना होती है इन समूहों में कुछ समानता अवश्य होती है जैसे-उनकी आयु विषय व पृष्ठभूमि आदि ।

3 **प्रेरणा**- समूह के सभी सदस्य एक-दूसरे के लिए प्रेरणा का स्त्रोत होते है । वे सभी समूह के उत्थान के लिए कार्य करते हैं ।

4 **नेतृत्व**- समूह के रूप में कक्षा में एक नेता होता है। इस नेता के कार्य शिक्षक द्वारा निश्चित किये जाते हैं । नेतृत्व विभिन्न प्रकार के होते हैं । जैसे- जनतांत्रिक, आधिकारिक व स्वच्छन्दात्मक।

समूह गत्यात्मकता (Gropup Dynamics) - समूह गत्यात्मकता का प्रारम्भ संयुक्त राज्य अमेरिका में सन् 1930 में हुआ । कुर्ट लेविन ने इसे सर्वप्रथम यह नाम दिया । छात्र जब समूह में होता है तो उसका व्यवहार समूह के अनुरूप होता है । जिस प्रकार छात्र के व्यवहार में ज्ञानात्मक, भावनात्मक एवं क्रियात्मक पक्ष होते हैं, उसी प्रकार समूह के व्यवहार में भी तीन पक्ष होते हैं जैसे- अकस्मात सडक, दुर्घटना पर एकत्रित भीड / समूह के द्वारा सर्वप्रथम यह जानने का प्रयत्न किया जाता कि क्या हुआ? (ज्ञानात्मक पक्ष), उसके पश्चात् बस के चालक के प्रति भीड समूह में क्रोध का सवेंग तथा हताहत बालक के प्रति स्नेह तथा सहानुभूति के भाव पैदा होते

हैं । (भावात्मक पक्ष) इसके बाद बस चालक को डांटना, मारना-पीटना तथा घायल व्यक्ति को चिकित्सालय ले जाने में भीड़ के व्यवहार का क्रियात्मक पक्ष परिलक्षित होता है ।

समूह गत्यात्मकता का अर्थ व परिभाषा (Meaning & Definition of Group Dynamics) - समूह गत्यात्मकता का अर्थ कक्षागत स्थिति में होने वाली समस्त अन्तक्रियाओं के अध्ययन से होता है । जिनमें अध्यापन तथा छात्र समूह दोनो ही सक्रिय रहते हैं । गत्यात्मकता शब्द यूनानी भाषा से लिया गया है जिसका अर्थ शक्ति (Power) है अत: समूह गत्यात्मकता का अर्थ समूह में कार्यरत शक्तियों से होता है ।

गुड के अनुसार - "समूह गत्यात्मकता का प्रयोग उन अन्तःक्रियात्मक मनोवैज्ञानिक सम्बन्धों के लिए किया जाता है जिनमें समूह के सदस्य समान, उभयनिष्ठ, अनुभूतियों को विकसित करते है जो कि समान साझे, अनुभवों तथा भावनाओं पर आधारित होते है । ये परस्पर प्रेरक सम्बन्ध **समूह गत्यात्मकता** के रूप में वर्णित किये जाते हैं ।

गत्यात्मकता का प्रभाव हमें कक्षा स्थिति में शिक्षक तथा दोनों के व्यवहार से ज्ञात होता है । क्योंकि कोई भी शिक्षक हमेंशा एक जैसा ही व्यवहार करता हो, यह आवश्यक नही है क्योंकि शिक्षक का व्यवहार समय, विषयवस्तु एवं परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होता रहता है तथा यही स्थिति छात्रों पर भी लागू होती है ।

समूह गत्यात्मकता की विशेषताएं (Characteristics of Group Dynamic) - विभिन्न अनुसंधानों द्वारा जो निष्कर्ष प्राप्त हुए है उनके आधार पर समूह गत्यात्मकता की निम्न विशेषताएं है-

1 एक व्यक्ति की मनोवृत्ति उस समूह से प्रभावित होती है, जिनका वह सदस्य होता है । वर्तमान अनुसंधान यह स्पष्ट करते है कि यदि मनोवृति को बदलना है तो उस समूह के कुछ गुणो में परिवर्तन लाकर किया जा सकता है । यह विधि अधिक प्रभावशाली होगी ।

2 विद्यार्थीयों के सटे हुए समूह (Cohesive Group) विद्यालय में नैतिक आचरण के निर्धारण में बहुत सक्रिय होते है । यह समूह अपने हर सदस्य से आचरण का पालन चाहते है और जितना समूह निकटस्थ होता है उतना ही वह सदस्यों के आचरण पर नियंत्रण रखने की शक्ति रखता है ।

3 जब समूह अपने उद्देश्य प्राप्त करने में नेराश्य होता है तो वह समूह अधिक शक्ति के साथ उद्धेश्य की ओर बढने की चेष्टा करता है जो अधिक परस्पर हुआ होता है जो बिखरा हुआ समूह होता है, उसमें उद्देश्य की ओर बढने का दृढ संकल्प नही होता है ।

4 कक्षा जैसे समूह गुटों में बंट जाते है । यह गुटों में बंटना रोका जा सकता है, यदि समूह के सदस्यों को एक-दूसरों के प्रति आकर्षण से अवगत कराया जाए और समूह को उस समूह की ओर गतिशील किया जाय, तो सब बालक समान मूल्यवान है ।

5 सामाजिक कार्यों (जैसे नागरिक सेवा) में प्रभावशाली ढंग से भाग लेने का प्रशिक्षण सामूहिक रूप में उत्तम रहता है।

6 समूह वातावरण अथवा समूह जीवन की कार्यपद्धति समूह के सदस्यों के व्यक्तित्व पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते है ।

7 कुछ कक्षा के व्यवहार ऐसे यन्त्र समझे जा सकते है जो तनाव को कम कर देते है जैसे- ऐसे समूह व्यवहार के प्रतिमानों को अपनाया जाय तो कठिन कार्य और दुखपूर्ण स्थितियों का परिहार कर दे ।

समूह वातावरण में निहित स्त्रोत-

1 **उद्देश्य निर्धारण की विधि -** जब सम्पूर्ण कक्षा द्वारा उद्धेश्य निर्धारित होते है तब बालक को अधिक प्रेरणा मिल जाती है और वो उसे व्यक्तिगत उद्धेश्य समझकर उनको प्राप्त करने में सहायता देता है ।

2 **एक सहायक वातावरण -** अधिक अनुप्रेरणा छात्र उस समय भी प्राप्त कर लेते है जब शिक्षक कक्षा में एक सहायक वातावरण बना लेते है । यह वातावरण ऐसा होता है जिसमें प्रत्येक छात्र समझता है कि वह समूह का स्वीकृत सदस्य है ।

3 **3. सहभागी-सदस्यता की स्वीकृति -** तीसरी अधिक अनुप्रेरणा का निहित स्त्रोत उस सीमा में होता है जब तक कक्षा के विभिन्न सदस्य भाग लेने वाले सदस्य के रूप में स्वीकृत हो जाते है और सारे सदस्यों के ज्ञान, कला और योग्यता का लाभ उठाते है । अब विद्यार्थी केवल शिक्षक के उपर सब ज्ञान और निर्देशन के लिए आश्रित नही रहते । इसके अतिरिक्त विद्यार्थीयों में अच्छी समझ विकसित हो जाती है । भाग लेने की सदस्यता की स्वीकृति प्रत्येक विद्यार्थी को इस बात का अवसर देती है कि वह समूह को अपना निजी योगदान दे सके । अब कक्षा का कमरा एक ऐसी स्थिति में हो जाता है जहाँ आपसी आदान-प्रदान होता है ।

समूह गव्यात्मकता को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting group dynamics) -

1. **शिक्षक का व्यक्तित्व (Personality of Teacher) -** शिक्षक का व्यक्तित्व बहुत ही प्रभावशाली होना चाहिए क्योंकि शिक्षक बालकों के लिए एक आदर्श होता है और बालक उन्ही का अनुकरण करते है।

2. **शिक्षक-छात्र सम्बन्ध (Teacher-Students Relation) -** शिक्षक - छात्र सम्बन्ध मधुर होने चाहिए । यह तभी हो सकता है जब शिक्षक का व्यवहार जनतांत्रिक हो ।

3. **छात्र -छात्र एवं छात्र-शिक्षक अन्त: क्रिया (Student-Student & Student-Teacher Interaction) -** एच.एफ.राइट के अनुसार अन्तःक्रिया व्यक्ति के विकास में वृद्धि करती है इसलिए शिक्षक को समूह की शक्तियों का ज्ञान होना चाहिए और वो उन शक्तियों को अच्छे ढंग से व्यवस्थित कर सके । जैसे-वह विद्यार्थीयों के आपस में मेलजोल को बढाए और इस मेंल का उनके सीखने की क्रिया में प्रेरणात्मक ढंग से प्रयोग करे ।

4. **कक्षा-कक्ष का वातावरण (Classroom environment) -** भौतिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक वातावरण होना चाहिए ।

5. **विषय-वस्तु (Content) -** विषय वस्तु किस प्रकार की है? उसे सामूहिक रूप में पढाया जा सकता है या नही । अगर पढाया जा सकता है तो किस प्रकार ये सभी प्रश्न एक शिक्षक को चतुरता से निर्णय लेने को प्रभावित करते हैं, अगर निर्णय सही है तो इसका 'समूह -गव्यात्मकता' पर सकारात्मक प्रभाव पडता है ।

6. **उद्धेश्यों की स्पष्टता (Clarity of Objectives) -** समूह में किये जाने वाले कार्यों के उद्देश्य समूह को स्पष्ट होने चाहिए ताकि समूह एक प्रभावी रूप से कार्य कर सके ।

7. **छात्र समूह का सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्तर (Social, Economic & Cultural level of Students) -** छात्र समूह का सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्तर समूह गत्यात्मकता को प्रभावित करता है ।

8. **छात्रों को उत्तरदायित्व सौंपना (Give Responsibilities to Students) -** छात्रों को उत्तरदायित्व सौपने से उनका आत्मविश्वास बढता है जो कि समूह पर सकारात्मक प्रभाव डालता है ।

9. **शिक्षक का व्यवहार (Teacher Behaviour) -** शिक्षक का व्यवहार विश्वासोत्पादक, स्वेच्छाचारी, जनतांत्रिक, अधिकारिक, निषेधात्मक और सकारात्मक होना चाहिए ।

कक्षा कक्ष एक सामाजिक स्थिति (Classroom - A Social Status) - हम कक्षा-कक्ष का वर्णन एक सामाजिक स्थिति की भांति कर सकते हैं । वास्तव में कक्षा- कक्ष अपने आप में ही एक समाज है । वह अपनी सामाजिक स्थिति का स्वंय निर्माण करता है । जो सामाजिक शक्तियां कक्षा-कक्ष में सक्रिय होती है उनका वर्णन निम्न प्रकार से है -

(i) यद्यपि कक्षा-कक्ष में अन्तः-क्रिया उसे सामाजिक रूप से प्रदान करती है । कक्षा कक्ष के अनुभव की सफलता इस बात कर निर्भर होती है कि समूह के हर एक व्यक्ति ने क्या सीखा है । उसके निजी निष्पादन का मूल्यांकन होता है ।

(ii) कक्षा-कक्ष की स्थिति में बल निष्पत्ति पर होता है कक्षा-कक्ष के समूह को कुछ कार्य पूरा करना है । यह एक कृतिक अनुस्थापन समूह (Task Oriented Group) होता है । दूसरी कुछ समूहो की तुलना में जो समूह निर्वहन-अनुस्थापन समूह (Group Maintenance-Oriented group) होते है । इस समूह की रुचि अस्तित्व को बनाए रखने की है ।

(iii) कक्षा-कक्ष समूह दूसरे समूहों से अपने आकार में भिन्न होता है वह बहुधा विद्यालयों के नियमों पर केंन्द्रित होता है । आकार समूह के सदस्यों के मध्य प्रक्रियाओं को निर्धारित करता है ।

समूह गत्यात्मकता एवं शिक्षक की भूमिका (Group Dynamics and Role of the teacher) - कक्षा-कक्ष में शिक्षक की भूमिका नेतृत्व की होती है । शिक्षक की भूमिका जनतांत्रिक व सहभागिता वाली होनी चाहिए । शिक्षक, छात्रों की सहभागिता को प्रोत्साहित करे क्योंकि हमारा समाज जनतांत्रिक है ।

वर्तमान समय में स्वंय सीखने व अन्वेषण पर बल दिया जाता है । अब शिक्षक केवल अनुदेशक या अधिगम का निर्देशक नही है । शिक्षक अपने छात्रों को कैसे अधिगम कराए, तथा सिखाने में मदद करे ताकि सतत् अधिगम हो सके । शिक्षक छात्रों को समूह चर्चा में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है संक्षेप में हम कह सकते हैं कि वो कक्षा में जनतांत्रिक वातावरण बनाकर छात्रों को प्रोत्साहित कर सकता है ।

समूह गत्यात्मकता को प्रभावी बनाने की विधियाँ (Methods make Group Dynamics Effective) -

i. कक्षा में छात्रों के मध्य अन्तःक्रिया हेतु उन्हे सीधी पंक्तियों में बैठाने के स्थान पर गोलाकार स्थिति में बैठाया जाना चाहिए ।

ii. शिक्षक छात्र समूह में से प्रतिभाशाली छात्रों की खोजकर शिक्षण हेतु वांछित वातावरण उत्पन्न करें ।

iii. शिक्षक छात्रों के गुणों को पहचान कर उन्हे प्रोत्साहित तथा पुनर्बलित करें ।

iv. छात्रों को स्वतंत्र अभिव्यक्ति एवं समूह चचाओं का अवसर देना ।

v. छात्रों को बौद्धिक स्तर के अनुसार छोटे समूहों में बांटकर एक -दूसरे की सहायता व सहयोग प्राप्त करना सिखाना।

vi. शिक्षण के साथ विद्यालय में पाठ्य- सहगामी क्रियाएं आयोजित की जाए । जैसे- शारीरिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक गतिविधियाँ ।

vii. छात्रों के नेतृत्व के साथ नैतिक गुणों का विकास भी किया जायें ।

viii. छात्रों को वर्तमान परिस्थितियों एवं समस्याओं के साथ भविष्य में संभावित समस्याओं से अवगत करवाया जायें ।

ix. छात्रों में समूह -भावना का विकास किया जाये ।

समूह-गव्यात्मकता से शिक्षक को छात्रों में सामूहिक चेतना का विकास करने, राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय एकता की भावना, देश-प्रेम, सेवा सहयोग, सहानुभूति जैसे गुणो का विकास करने में सहायता मिलती है ।

कक्ष में समूह के मध्य सम्बन्धों को कैसे सुधार सकते है? (How to Improve Group Relationship in the Class) - घनिष्ठ समूह सम्बन्धें की सामाजिक अधिगम में महत्वपूर्ण भूमिका है । शिक्षक को कक्षा में औपचारिक संवेगात्मक वातावरण व परस्पर समूह का उत्पन्न करना चाहिए व उनमें सुधार करना चाहिए । कक्षा-कक्ष वातावरण को सुधारने की विधियां निम्न है -

1. **शिक्षक व्यवहार (Teacher's behaviour) -** शिक्षक छात्रों के लिए आदर्श (Model) होता है इसलिये शिक्षक का व्यवहार पक्षपात पूर्ण नही होना चाहिए । इसकी समस्या सामधान की विधि मनोवैज्ञानिक होनी चाहिए उसे प्रत्येक छात्र की मदद करनी चाहिए । 'चमचो' से बचना चाहिए क्यों कि वे कई बार द्वन्द का कारण बन जाते है । कक्षा का सम्पूर्ण वातावरण सामाजिक व भावनाओं से युक्त होना चाहिए ।

2. **चर्चा (Discussion) -** कक्षा-कक्ष के संवेगात्मक वातावरण को सुधारने के लिए मुक्त चर्चा की व्यवस्था करनी चाहिए । छात्रों से वर्तमान परिस्थति को सुधारने के लिए सुझाव आमंत्रित करने चाहिए । इस चर्चा में धार्मिक मान्यताओं व जाति आदि से जुडे विषयों की चर्चा नही की जानी चाहिए ।

3. **प्रभावी सम्प्रेषण (Effective Communication) -** कभी-कभी अप्रभावी संप्रेषण कक्षा के वातावरण को खराब करता है । शिक्षक को छात्रों की आपसी समझ को बढाने के लिए औपचारिक व अनौपचारिक परिचर्चा का आयोजन करना चाहिए । कक्षा-कक्ष सम्प्रेषण द्वि-पथ (Two-way) प्रक्रिया के रूप में होना चाहिए । छात्र निष्क्रिय श्रोता नही होने चाहिए ।

4. **संगति (Cohensiveness) -** शिक्षक को साथ-साथ रहने की भावना को प्रोत्साहित करना चाहिए । यह कार्य प्रभावी सम्प्रेषण के द्वारा ही संभव है ।

5. **परामर्श (Counselling) -** अनुसंधानों में कक्षा में पिछड़े छात्रों के लिए परामर्श पर जोर दिया गया है । शिक्षक के द्वारा परामर्श का प्रयोग कक्षा के संवेगात्मक वातावरण को सुधारने में किया जाना चाहिए ।

6. **भ्रमण (Tours and Visits) -** शिक्षक शैक्षिक भ्रमण, पिकनिक एवं साहसिक यात्रा आदि का आयोजन करके समूह के सदस्यों को एक-दूसरे को समझने का मोका देना चाहिए ताकि कक्षा का सामाजिक व संवेगात्मक वातावरण अच्छा बने ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. समूह का अर्थ बताते हुए इनकी विशेषताओं की विवेचना कीजिए |
2. समूह- गत्यात्मक को स्पष्ट कीजिए |
3. समूह गत्यात्मक को प्रभावित करने वाले कारकों का विवरण दीजिए |
4. समूह गत्यात्मक को प्रभावी बनाने वाली विधियों को स्पष्ट कीजिए |

10.7 अनुशासन (Discipline)

"Discipline must be based on love and controlled by Love."

-Pastalozze.

'डिसिप्लिन' शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द ' Discipline से मानी जाती है जिसका अर्थ है - व्यवस्था, नियम, शिक्षा आदि । अंग्रेजी शब्द Discipline शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'Discipulum' से मानी जाती है जिसका अर्थ है- छात्र या शिष्य छात्रों से यह आशा की जाती है कि वह अपने शिक्षकों के आदेशों का आदर करे और उन्ही के अनुरूप स्वंय में वांछित गुणों का विकास करें । इस प्रकार 'डिसिप्लिन' का अर्थ- आचरण में नियमितता उत्पन्न करना है । सर्वाधिक आधुनिक विचारधाराओं के अनुसार अनुशासन का अर्थ है- लोकतन्त्रीय समाज में छात्रों एवं छात्राओं को जीवन के लिए तैयार करना । इसका अभिप्राय व्यक्ति को ज्ञान, शक्ति, आदतों, रूचियों तथा आदर्शो को प्राप्त करने में सहायता देना है जो कि स्वंय के व उसके साथियों के कल्याण के लिए एवं सम्पूर्ण समाज के लिए कल्पित किये जाते है ।

अनुशासन की परिभाषाएँ (Definitions of Discipline)

1. **टीनन.पी. के अनुसार -** "अनुशासन का अभिप्राय अपनी प्रवृतियों, भावनाओं तथा शक्तियों को रोककर इस प्रकार नियंत्रित करना है कि विफलता, अव्यवस्था, प्रभावहीनता व अपव्ययता के स्थान पर सफलता, व्यवस्था, कार्यकुशलता व मितव्ययता प्राप्त की जा सके और विकृति के स्थान पर आकृति आ सके ।" अर्थात मूल-प्रवृतियों संवेगों तथा शक्तियों को नियमाधीन करना ही अनुशासन है ।
2. **डब्लू.एन.रॉयबर्न के अनुसार -** 'एक विद्यालय में अनुशासन का अर्थ सामान्यत: व्यवस्था तथा कार्यों के सम्पादन में विधि, नियमितता एंव आदेशों की अनुपालना होता है ।"
3. **एस.एस.माथुर -** "कार्य एंव व्यवहार में व्यवस्था तथा आदेश अनुपालना " का दूसरा नाम ही अनुशासन है |

अनुशासन का महत्व (Importance of Discipline) - जीवन में अनुशासन का बहुत महत्व है । इसके अभाव में मनुष्य प्रकृतिदत्त शक्तियों का उचित प्रयोग नहीं कर सकता । अनुशासन द्वारा ही व्यक्ति अच्छी शक्ति प्राप्त करता है और इस शक्ति से वह अपनी नैसर्गिक प्रवृतियों का विकास करने में समर्थ होता है । व्यक्तिगत दृष्टि से अनुशासन का बहुत महत्व है । एक राष्ट्र का निर्माण चट्टानों तथा वृक्षों से नहीं किया जाता है बल्कि उसके नागरिकों के चरित्र से निर्मित किया जाता है । जब किसी देश के नागरिक अनुशासित होंगे तो वे अपने देश को उन्नति के लिए अग्रसर करने में सामर्थ्य होंगे । एक अनुशासित व्यक्ति सच्चरित्र एवं मन तथा कर्म से शुद्ध होता है । इससे स्पष्ट है कि सम्पूर्ण समाज के लिए अनुशासन का बहुत महत्व है । टी.पी.नन का मत है - "अनुशासन का अर्थ - अपने आवेगों और शक्तियों को उस व्यवस्था के अधीन करना है जो अराजकता का अन्त करती है एवं जो अकशुलता और अपव्यय के स्थान पर कुशलता और मितव्ययता की स्थापना करती हैं ।"

अनुशासन के प्रकार (Types of Discipline) - अनुशासन का सामान्यतया यह अर्थ लिया जाता है कि छात्र विद्यालय के नियमों का पालन करे । अनुशासन के प्रति अलग-अलग युग में विभिन्न धारणा के आधार पर प्रकार को स्पष्ट किया जा सकता है-

1. **दमनात्मक अनुशासन -** "डण्डे को छोड़ने से बालक बिगड़ जाएगा " (Spare the rod and spoil the child) यह प्राचीन काल का मूल मंत्र था और इस प्रकार के अनुशासन को दमनात्मक के नाम से जाना जाता है । प्राचीनकाल में शिक्षक का प्रथम कर्त्तव्य छात्र को अनुशासन में ररवना था और छात्र का प्रथम कर्त्तव्य शिक्षक की आज्ञा का अक्षरश: पालन करना था । यदि छात्र आज्ञा का उल्लंघन करता था तो डण्डे के बल पर आज्ञा का पालन कराया जाता था । इस प्रकार अनुशासन दण्ड व भय पर आधारित था । उसका स्वरुप कठोर व नकारात्मक था।

2. **लोकतांत्रिक अनुशासन -** पेस्तोलॉजी के अनुसार ** Discipline must be based on love and controlled by love) अर्थात् अनुशासन प्रेम पर आधारित और प्रेम द्वारा नियंत्रित होना चाहिए । इस प्रकार का अनुशासन स्थायी और प्रभावी होता है । **रॉयबर्न** के शब्दों में "वास्तविक अनुशासन मुरव्यत: सकारात्मक तथा रचनात्मक होना चाहिए न कि नकारात्मक तथा निषेधात्मक । **फ्राबेल** ने मत प्रकट किया कि "बालक के ऊपर नियन्त्रण उसकी रुचि के ज्ञान तथा उससे प्रेम तथा सहानुभूति प्रकट करके दिया जाना चाहिए ।" अनुशासन की भावना बालक के अन्दर से उत्पन्न होनी चाहिए । छात्रों को स्वानुशासन हेतु प्रेरित किया जाना चाहिए ।

3. **मुक्तयात्मक अनुशासन -** इस प्रकार के अनुशासन की यह मान्यता है कि छात्रों को प्रकृति के अनुराप चलने देना चाहिए । उसके कार्यों में बाधा नहीं डालना चाहिए । इस प्रकार के अनुशासन की मान्यता हैं कि छात्रो को कभी दण्ड नहीं मिलना चाहिए बल्कि उसके दोषों के परिणामस्वरुप प्रकृति द्वारा आना चाहिए । छात्र को स्वतंत्र छोड़कर स्वतंत्र वातावरण में अपने विकास का अवसर दिया जाना चाहिए ताकि अनुशासित रहने के मूल्य को समझ सके ।

अनुशासन को विकसित करने के सिद्धान्त (Principles of Development of Discipline) - अनुशासन का व्यक्तिगत एंव सामाजिक दोनों दृष्टियों से बहुत महत्व हे । कुछ सिद्धान्त है जो छात्रों में अनुशासन को विकसित करने में सहायता करते हैं-

1. अनुशासन का आधार प्रेम, विश्वास तथा सद्भावना हों क्योंकि भय पर आधारित अनुशासन क्षणिक होता है। अत: छात्रों को इस प्रकार अनुशासन सिखाएं कि वह शिक्षक द्वारा बनाए गए नियमों का पालन करें ।
2. उत्तम अनुशासन सहयोग पर आधारित होना चाहिए । इसमें प्रधानाध्यापक व अध्यापक, अध्यापक एंव छात्रों, अध्यापकों एंव अभिभावकों तथा छात्र-छात्राओं के बीच सहयोग होना परमावश्यक है । यदि इनके बीच सहयोग नहीं होगा तो उत्तम अनुशासन की स्थापना करना कठिन होगा । इसके लिए सबके बीच मधुर सम्पर्क स्थापित करना आवश्यक है ।
3. अनुशासन को स्थापित करने के लिए दण्ड का प्रयोग न किया जाए । यदि अपनी दुष्प्रवृजियों को कोई किसी प्रकार से नहीं छोड़ता है, तभी इसके प्रयोग की आवश्यकता का अनुभव किया जाना चाहिए । यदि दण्ड का बार-बार प्रयोग किया तो छात्रों के मस्तिष्क में विभिन्न प्रकार की ग्रन्थियाँ पनपने की संभावना रहेगी, जिसके परिणामस्वरुप इनका व्यक्तित्व असंतुलित हो जाएगा अत: जहाँ तक संभव हो दण्ड का प्रयोग न किया जाय ।
4. कक्षा के सम्पूर्ण वातावरण को सामजंस्यपूर्ण बनाया जाय । इसके लिए छात्र, अभिभावक व शिक्षक को अपने उत्तरदायित्वों को ध्यान में रखकर सामजंस्य रखना चाहिए ।
5. छात्रों एंव शिक्षकों को अपने-अपने कर्त्तव्यों को पूर्ण निभाने के हेतु पर्याप्त स्वतंत्रता एंव सुविधाएं प्रदान की जाए ।
6. विभिन्न रचनात्मक कार्यों को स्थान दिया जाय जिससे छात्रों की रुचियों के अनुसार विभिन्न कार्यों के करने से मानसिक व संवेगात्मक सन्तोष मिले । इससे अनुशासनहीनता की समस्या उत्पन्न होने की संभावना न रहेगी ।
7. विद्यार्थीयों को पारिवारिक जीवन को सुन्दर व सुखमय बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, क्योंकि इनका अधिकतर समय अपने घर पर ही व्यतीत होता है ।
8. छात्रों को अनुशासन के महत्त्व के विषय में अवगत कराया जाय इसके लिए उपदेश देना ही उचित नहीं हैं वरन् विभिन्न महान् पुरूषों के उदाहरण प्रस्तुत करें ।

अनुशासन को विकसित करने के साधन (Means of Development of Discipline) -छात्र में उत्तम अनुशासन स्थापित करना है तो शिक्षक का परम कर्त्तव्य है कि सम्पूर्ण वातावरण को उपयुक्त एंव सामजंस्यपूर्ण बनाए । अनुशासन को विकसित करने के निम्नलिखित साधन है -

(अ) सकारात्मक (Positive) साधन ।

(ब) नकारात्मक (Negative) साधन ।

ये निम्नलिखित है---

(1). स्वशासन- विद्यालय नियन्त्रण में छात्रों के सहयोग से अनुशासन स्थापित एंव विद्यालय के वातावरण को सहयोगी बनाने में पर्याप्त सहायता मिलती है । छात्रों पर विद्यालय के प्रतिदिन के सामान्य कार्यक्रम के लिए उत्तरदायित्व डालना ही उत्तम अनुशासन की स्थापना में महत्वपूर्ण सहायता करता है । छात्र स्वयं अपने आचरण सम्बंधी नियमों का निर्माण कर सकते है तथा इनके पालन में भी हिचकिचाहट नहीं होगी, क्योंकि वे स्वयं के द्वारा निर्मित किये जाय । इसके अतिरिक्त छात्रों पर विद्यालय की सफाई, व्यक्तिगत स्वच्छता, विद्यालय सम्पत्ति की

सुरक्षा,स्वास्थ्य सम्बंधी नियम की जानकारी आदि का दायित्व डाला जा सकता है जिसमें रहकर वे स्वयं को अनुशासित करने में समर्थ हो सके ।

(2). विद्यालय के नियम एंव परम्पराएं - अनुशासन को विकसित करने में इसका महत्वपूर्ण स्थान हैं । नियम चार प्रकार के होते है - पहला शिक्षा विभाग के नियम, दूसरा प्रबन्ध समीति द्वारा निर्मित नियम, तीसरा प्रधानाध्यापक एंव शिक्षक वर्ग द्वारा बनाए गए नियम तथा चौथा छात्र परिषद द्वारा निर्मित नियम । छात्रों को इन नियमों के महत्व से अवगत करा देना चाहिए । छात्रों को यह भी जानकारी देना आवश्यक है कि उन्हें नियमें के अनुसार कार्य करना चाहिए । छात्रों को विद्यालय की परम्पराओं से भी अवगत करना चाहिए ताकि विद्यालय को उन्नत करने में सहायता मिल सके ।

(3). पारस्परिक सहयोग - विद्यालय को उन्नत बनाए रखने के लिए प्रधानाध्यापक, शिक्षक, अभिभावक के साथ-साथ छात्रों का सहयोग भी आवश्यक है । छात्रों को आपसी समूह में बैठकर समस्या-समाधान करना चाहिए तथा आपस में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए जिससे उनमें अनुशासन स्वत: ही उत्पन्न हो जाएगा क्योंकि प्रत्येक दायित्व में अनुशासनात्मक परिस्थितियाँ निहित होती है । इस प्रकार अनुशासन स्थपित करने के लिए पारस्परिक सहयोग की आवश्यकता है।

(4). उपयुक्त पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाओं की व्यवस्था - इन क्रियाओं का बड़ा ही अनुशासनात्मक महत्व है । इनके द्वारा छात्रों में नेतृत्व, कर्त्तव्यपरायणता, बड़ों के प्रति आदर की भावना, आत्मनिर्देशन की शक्तिसहयोग आदि का विकास किया जाता है । अत: छात्रों में अनुशासन स्थापना के लिए पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का कार्यक्रम निर्धारित किया जाना चाहिए जिससे छात्र अपनी रुचि व योग्यता के अनुसार उसमें भाग ले सके ।

(5). नैतिक शिक्षा की व्यवस्था - अनुशासन को विकसित करने में इसका महत्वपूर्ण स्थान है । छात्रों को उच्च आदर्शों के प्रति निष्ठा एंव उसके अनुसार कार्य की भावना का विकास किया जाय परन्तु इसको पाठ्य विषय के रुप में नहीं पढ़ाना चाहिए । इसको सभी विषयों के शिक्षा व विभिन्न क्रियाओं के संचालन पर बल दिया जाना चाहिए । नैतिक शिक्षा प्रदान करने वाली कहानियों को उदाहरण के रुप में छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए ।

(6). विद्यालय वातावरण एंव शैक्षिक सुविधाएं - यदि विद्यालय का वातावरण अनुपयुक्त है तो उत्तम अनुशासन की स्थापना में बहुत कठिनाई आती है । उचित शिक्षण के लिए विद्यालय में समुचित व्यवस्था होनी चाहिए । छात्रों को शैक्षिक सुविधाओं देने का उचित अवसर प्रदान करना चाहिए जिससे अपने अवकाश का सदुपयोग कर अनुशासन भी सीख जायेंगे ।

(7). शिक्षक-अभिभावक सहयोग - शिक्षक इनके सहयोग से बालकों की कठिनाईयों एंव गतिविधियों को जानने में समर्थ होंगे । इसकी सहायता से छात्रों की समस्याओं का हल किया जा सकता है । छात्रों को अनुशासित जीवन व्यतीत करना सिखाने के लिए अध्यापक व अभिभावक के बीच मधुर सम्बंध होना आवश्यक है ।

(8). पुरस्कार - प्राय: अच्छे कार्यों के लिए छात्रों को पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं । अनुशासन को विकसित करने में पुरस्कारों का बड़ा महत्व है । प्रत्येक छात्र की इच्छा होती है कि वह समाज द्वारा स्वीकृत किया जाए । अच्छे कार्यों से पुरस्कृत होता है तब समाज में उसे अच्छी दृष्टि से देखा जाता है इसी के साथ दूसरे बच्चों को भी प्रोत्साहन मिलता है । पुरस्कार प्राप्त कर छात्र

स्वयं को दूसरों से श्रेष्ठ प्रदर्शित करने का प्रयत्न करते है । इस प्रकार पुरस्कार के द्वारा भी अनुशासन को विकसित किया जा सकता है ।

(ब) नकारात्मक साधन- इसके अन्तर्गत दण्ड-व्यवस्था को रखा जाता है । वस्तुतः दण्ड-व्यवस्था को अनुशासन विकसित करने का साधन नहीं माना जा सकता क्योंकि उत्तम अनुशासन आंतरिक रुप से उत्पन्न होने वाला गुण है लेकिन फिर भी इसकी आवश्यकता प्रतीत होती है । इसकी सहायता से कक्षा की दूषित परिस्थितियों को सुधारा जा सकता हैं इसकी सहायता से छात्रों को गलती का अहसास कराया जाता है । दण्ड का महत्वपूर्ण रुप निलम्बन तथा निष्कासन (suspension and expulsion) है । परन्तु इसका प्रयोग गंभीर परिस्थितियों में ही किया जाना चाहिए और जहाँ तक संभव हो इसका उपयोग कम ही किया जाना चाहिए ।

इस प्रकार विभिन्न साधनों के माध्यम से छात्रों में अनुशासन को विकसित किया जा सकता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. अनुशासन का अर्थ एवं प्रमुख परिभाषाएँ लिखिए |
2. लोकतांत्रिक अनुशासन एवं मुक्तात्मक अनुशासन में भेद स्पष्ट कीजिए |
3. अनुशासन के महत्व की विवेचना कीजिए |
4. अनुशासन को विकसित करने के सिद्धान्त बताइये |
5. अनुशासन को स्थापित करने के साधनों की व्याख्या कीजिए |

10.8 प्रतिवेदन (Report)

प्रतिवेदन का प्रस्तुतीकरण कक्षा-क्रियाओं का एक महत्वपूर्ण तथा अभिन्न अंग है । इसके अन्तर्गत कक्षा में कौन-कौन सी क्रियाएं होती है तथा कौन-कौनसी होनी चाहिए? इसका सम्पूर्ण ब्यौरा शिक्षक के पास होना चाहिए ताकि वे अपने उद्धेश्यों की प्राप्ति कर शिक्षण को सफल बना सके ।

कक्षागत- क्रियाओं के प्रतिवेदन का उद्धेश्यः- शिक्षक को अपनी कक्षा में होने वाली विभिन्न प्रकार की क्रियाओं का प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के अनेक कारण है । इसका **प्रथम** कारण तथा प्रमुख उद्धेश्य यह रहता है कि ऐसे प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण में स्वंय शिक्षक -की अपनी एक प्रबल जिज्ञासा की सन्तुष्टि होती है । **दूसरे** कक्षागत-क्रियाओं का प्रतिवेदन से शिक्षक को जानकारी मिलती है कि छात्रों में सृजनात्मकता को विकसित करने के लिए कौन-कौनसी क्रियाओं का आयोजन किया जा सकता है । **तीसरा,** क्रियाओं को क्रमबद्वरूप से व्यवस्थित करने पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास किया जा सकता है कई बार कक्षागत-क्रियाओं के प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण से शिक्षक को अन्य क्षेत्र की क्रियाओं से आलोचना करने में सहायता मिलती है ताकि वे आवश्यकतानुरूप क्रियाओं में पुनरावृति कर नवीन क्रियाओं का आयोजन करने में प्रबल प्रेरणा मिलती है । इससे सैद्वान्तिक ज्ञान रचना में भी सहायता मिलती है और कभी-कभी किसी

व्यवहारिक समस्या के समाधान में सुविधा सुलभ होती है । इस प्रकार कक्षागत प्रक्रियाओं के प्रतिवेदन को प्रस्तुत करने से प्रभावी शिक्षण के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान मिलता है साथ ही नवीन क्रियाओं की रचनात्मक पृष्ठभूमि भी प्रशस्त होती रहती है ।

प्रतिवेदन के तत्व-

1. शीर्षक - शिक्षक को कक्षा-क्रियाओं से संबन्धित प्रतिवेदन प्रस्तुत करते समय उसका शीर्षक स्पष्ट कर देना चाहिए ताकि किसी प्रकार की समस्या का सामना न करना पडे । उदाहरण के लिए-कक्षा-कक्ष की साज-सज्जा करना ।

2. परिचय - कक्षा की सजावट करने के लिए शिक्षक को उससे सम्बन्धित उद्देश्यों को निर्धारित करना चाहिए शिक्षक को निर्धारित कर लेना चाहिए कि किस प्रकार से सजावट करना है? साथ ही यह भी निश्चित कर लेना चाहिए कि इससे छात्रों पर क्या प्रभाव पडेगा? जैसे-छात्रों में मूल्यांकन नैतिक गुणों को विकसित करने के लिए किन-किन आदर्श महापुरूषों का चित्र लगाना है । वैज्ञानिक ज्ञान एंव दृष्टिकोण को विकसित करने के लिए कैसे क्रमबद्ध रूप से चार्ट को लगाएंगे । भौगोलिक स्थिति की जानकारी के लिए ग्लोब को भी रखेगें । कहने का तात्पर्य है कि पूर्व में ही निर्धारित कर लेगें कक्षा कैसे सजाएंगे?

3. प्रक्रिया - शिक्षक ने पूर्व में जो तैयारी की है उसे चार्ट व मॉडल की सहायता से कक्षा में सजावट की जायेगी । प्रत्येक छात्र से कार्य करवाया जाएगा ताकि उनकी सहभागिता प्राप्त की जा सके और उन्हें जिम्मेदारी निभाने का अहसास हो सकेगा ।

4. निष्कर्ष - उपरोक्त तीनों प्रकार के कार्य करने के पश्चात् शिक्षक यह जांच करेगा कि क्या महापुरूषों का चित्र जीवनी सहित लगाने पर छात्रों को प्रभावित किया या नहीं ? क्या छात्रों में मूल्य विकसित हुए? छात्रों ने जब मिलजुल कर कक्षा की साज-सज्जा की तो क्या उनमें सामाजिक गुणों का विकास हुआ अथवा नहीं ? वास्तव में यह एक प्रकार का मूल्यांकन है ताकि यदि कुछ कमियां रह जाए तो फिर क्रियाओं में परिवर्तन कर उसे सुधारात्मक रूप में व्यवस्थित कर सके ।

इस प्रकार सपूर्ण क्रियाओं का प्रतिवेदन प्रस्तुत करने से कक्षा-कक्ष के वातावरण की सम्पूर्ण जानकारी मिल जाती है।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. कक्षागत-क्रियाओं के प्रतिवेदन का क्या उद्देश्य है ?
2. प्रतिवेदन के विभिन्न तत्वों का वर्णन कीजिए ?

10.9 कक्षा-क्रियाओं का मूल्यांकन (Evaluation of Classroom Activities)

पूर्व में विद्यालय शिक्षा का प्रमुख कार्य विभिन्न विषयों के ज्ञान एंव कुशलताओं में दक्षता प्राप्त करना था। अत: छात्रों की प्रगति का मापन लगभग परीक्षाओं को लेने तक ही सीमित था, जो यह जाँच करने के लिए ली जाती थी कि छात्र ने पाठ्यवस्तु को किस सीमा तक ग्रहण कर लिया है । ये परीक्षाएँ रटने पर बल देती थी । इनके द्वारा केवल छात्रों की पढ़ाई

सम्बधी सफलताओं पर ही ध्यान दिया जाता था और छात्रों के व्यक्तित्व पर ध्यान नहीं दिया जाता था । इस दोष को समाप्त करने के लिए मूल्यांकन की धारणा का निर्माण हुआ ।

मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Evaluation)

क्विलिन एंव हन्ना - "मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जो विद्यालय द्वारा विद्यार्थी को दिए गए अधिगम अनुभवों के फलस्वरुप हुए व्यवहारगत परिर्वतनों के सम्बंध मैं साक्षियों का संकलन कर उसकी व्याख्या करती है "।

डान्देकर -"मूल्यांकन हमें यह बताता है कि बालक ने किस सीमा तक किन उद्देश्यों को प्राप्त किया है"|

कोठारी आयोग - "मूल्यांकन एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जो शिक्षा प्रणाली का एक अभिन्न अंग है । इससे छात्र की अध्ययन आदतों का शिक्षक की शिक्षण पद्धति पर बड़ा प्रभाव पड़ता है । मूल्यांकन की प्रविधियाँ वांछित दिशाओं में छात्र के विकास विषय में प्रमाण संग्रहित करने के साधन है ।

शिक्षण को उन्नत बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि कक्षा-क्रियाओं का भी मूल्यांकन किया जाए ताकि शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति की जा रनके । शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है - छात्रों का सर्वागीण विकास ।

सर्वागीण विकास से तात्पर्य छात्रों में वांछनीय व्यवहार परिर्वतन लाना । सामान्तया यह माना जाता है कि सीखने के फलस्वरुप छात्र का व्यवहार पहले से भिन्न हो जाता है । वह अधिक बुद्धिमता से कठिनाइयों को दूर कर सकता है । प्रत्येक शिक्षक यह जानना चाहता है कि जो कक्षा में छात्रों को अनुभव दिए है या कक्षा कियाएं करवायी है वे सार्थक हुए या नहीं प्रत्येक शिक्षक शिक्षण प्रक्रिया के दौरान जो कक्षागत कियाएं करवायी जाती है उसकी जानकारी परीक्षा परिणाम तथा अनौपचारिक विधियों से प्राप्त करता है । वह इन सूचनाओं के आधार पर छात्र के व्यवहार में हुए परिवर्तनों को आंक सकता है। अत: कक्षागत-क्रियाओं के मूल्यांकन के अन्तर्गत छात्र व्यवहार परिमाणात्मक तथा गुणात्मक व्यवहार का अध्ययन तथा उसके मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया आती है ।

कक्षा क्रियाओं के मूल्यांकन के उद्देश्य (Purpose of Evaluation of Class-Room Activities) - इसके निम्नलिखित उद्देश्य है-

1. कक्षागत मूल्यांकन का प्रमुख उद्देश्य यह जांचना कि छात्रों ने किस सीमा तक योग्यताओं गुणों एंव कुशलताओं को ग्रहण किया है ।
2. यह छात्रों की कमियों व अच्छाईयों को भी जानने में सहायता देती है ।
3. मूल्यांकन द्वारा छात्रों को कक्षागत क्रियाओं को उचित निर्देशन देने में सहायता मिलती है ।
4. कक्षागत क्रियाओं की सफलता एंव कुशलता का मापन किया जा सके ।
5. छात्रों का सर्वागीण विकास करना ।

कक्षा क्रियाओं के मूल्यांकन की प्रक्रिया (Purpose of Evaluation of classroom activities) - कक्षा क्रियाओं का मूल्यांकन एक जटिल प्रक्रिया है, जिसके तीन महत्वपूर्ण पक्ष होते है -

(i) शिक्षण क्रियाओं का उद्देश्य

(ii) कक्षागत क्रियाओं के अनुभव

(iii) मूल्यांकन विधियां

उपरोक्त तीनों पक्ष आपस में एक-दूसरे पर निर्भर रहते है, इसलिए ये तीनों पक्ष आपस में घनिष्ठ रुप से सम्बंधित है । छात्रों के व्यवहार परिवर्तन का सीधा सम्बंध उद्देश्यों तथा कक्षागत अनुभवों से है ।

कक्षागत-क्रियाओं के मूल्यांकन प्रक्रिया के सोपान (Steps of evaluation process of class room activities) -

1. उद्देश्यों का चयन - कक्षागत क्रियाओं के उद्देश्य शिक्षण को दिशा प्रदान करते है इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि इनका चयन भली भांति किया जाए । उद्देश्यों का चयन करते समय छात्रों की रुचि योग्यता एंव आवश्यकताओं को ध्यान रखा जाना चाहिए ।

2. उद्देश्यों को व्यवहार-परिवर्तन के रुप में लिखना - उद्देश्यों को चयनित करने पश्चात् उन्हें व्यवहारगत रुप में लिखना चाहिए । कोई भी कक्षागत क्रियाओं के उद्देश्य उसी समय तक सार्थक है जब उसे पूर्णराप से. परिभाषित कर दिया जाता है । जैसे-छात्रों को कक्षा में रसायन विज्ञान में "ऑक्सीजन गैस बनाना" बताना है तो इसके लिए ज्ञान अवबोध कौशल व रुचि उद्देश्य आदि को परिभाषित करना चाहिए ।

3. कक्षागत-परिस्थितियों की पहचान - उद्देश्यों को व्यवहारगत परिवर्तन के रुप में परिभाषित करने के पश्चात् कक्षा परिस्थितियों की पहचान करनी चाहिए ताकि छात्रों में व्यवहारगत परिवर्तन हो सके । मूल्यांकन करते समय छात्रों को ऐसी परिस्थितियों में रखा जाना चाहिए ताकि वांछित व्यवहार की अभिव्यक्ति कर सके । उदाहरण के लिए ऑक्सीजन गैस बनाने में काम आने वाले उपकरणों की व्यवस्था करना ।

4. प्रविधि का प्रयोग- कक्षा में विभिन्न प्रकार की क्रियाएं होती है जैसे- प्रश्नोत्तर क्रिया, शिक्षण कौशलों का प्रदर्शन आदि । ऐसी क्रियाओं के मूल्यांकन के लिए निरीक्षण एंव साक्षात्कार प्रविधियों का प्रयोग किया जा सकता है ताकि समस्त कक्षागत-प्रक्रियाओं को अंकित किया जा सके ।

5. कक्षागत क्रियाओं की व्याख्या - प्रविधियों का प्रयोग करने के पश्चात् यह निर्णय लेना चाहिए कि छात्र के व्यवहार में जो परिवर्तन हुए वह उद्देश्यों के अनुरुप है या नहीं । शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए कक्षा में उचित क्रियाओं का संचालन होना चाहिए । कक्षागत क्रियाओं के माध्यम से क्या छात्रों के व्यवहार में व्यवहार परिवर्तन हुए है या नहीं? जैसे- ऑक्सीजन गैस बनाने में छात्रों ने उपकरणों की व्यवस्था तथा उनमें प्रयोगात्मक कौशल का विकास हुआ है या नहीं ।

कक्षा-क्रियाओं के मूल्यांकन का महत्व (Importance of evaluation of class room) - शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए कक्षा-क्रियाओं का मूल्यांकन वैज्ञानिक ढंग से किया जाना चाहिए । मूल्यांकन सम्पूर्ण कक्षागत क्रियाओं में परिवर्तन लाने का साधन हो सकता है । कक्षा-क्रियाओं के मूल्यांकन से छात्रों को निर्देशन भी- दिया जा सकता है कि कौन-कौन सी क्रियाएं उचित है । इसी के आधार पर शिक्षण प्रक्रिया में सुधार लाया जा सकता है । मूल्यांकन की सहायता से छात्र अधिगम अर्जित करने के किए अभिप्रेरित होता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. मूल्यांकन के अर्थ को स्पष्ट कीजिए ।
2. कक्षागत-क्रियाओं के मूल्यांकन प्रक्रिया के सोपानों का वर्णन करिए ।
3. कक्षागत-क्रियाओं के मूल्यांकन को स्पष्ट कीजिए ।

10.10 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

1. अग्रवाल.जे.सी. "स्कूल एडमिनिस्ट्रेशन"आर्य बुक डिपो, न्यू दिल्ली ।
2. रुहेला , सत्यपाल, "बुनियादी पाठशाला प्रबंध और स्वास्थ्य रक्षा, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर"।
3. भटनागर, सुरेश, "आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं मेरठ।
4. नायक.जे.पी. "संस्थात्मक आयोजन", मेरठ ।
5. शर्मा.आर.ए., 'एजूकेशनल एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड मैनेजमेंट' आर.लाल बुक डिपो, मेरठ ।
6. शर्मा.आर.ए. 'शिक्षण तकनीकी", मेरठ ।
7. ओड.एल.के. "शिक्षा के नूतन आयाम', राजस्थान ग्रंथ अकादमी, जयपुर ।
8. अग्रवाल.जे.सी. "विद्यालय प्रशासन', आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली ।
9. सुखिया.एस.पी 'विद्यालय प्रशासन एंव संगठन', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा ।
10. वशिष्ठ के.के. "विद्यालय संगठन एंव भरतीय शिक्षा की समस्याएं", मेरठ ।
11. बालिया, शिरिष एंव अरोड़ा रीता "शिक्षा में मापन एंव मूल्यांकन", राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर ।
12. स्टीफन,एम.कोरे. "ग्रुप डायनेमिक्स एंड एक्शन रिसर्च रिर्पोट, विद्याभवन बुलेटिन
13. मैरी.ए.बेनी क्लासरुम बिहेवियर ग्रुप डायनेमिक्स इन एजूकेशन", लुई बी. जॉन्सन., न्यूयार्क ।

इकाई- 11

नेतृत्व शैली

(Leadership Style)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

11.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)
11.1 प्रस्तावना / नेतृत्व की अवधारणा (Introduction/Concept of Leadership)
11.2 नेतृत्व के प्रकार (Types of Leadership)
11.3 नेतृत्व के गुण (Qualities of Leadership)
11.4 नेतृत्व शैली (Leadership Style)
11.5 नेतृत्व में अध्यापक की भूमिका (The Role of teacher in Leadership)
11.6 नेतृत्व एवं छात्र अधिगम (Leadership and Student Learning)
11.7 समूह गत्यात्मकता की दक्षता (Skill of Group Dynamics)
11.8 समन्वय व सहयोग की दक्षता (Skill of Co-ordination and Co-operation)
11.9 वैज्ञानिक दृष्टिकोण (Scientific Temper)
11.10 सारांश (Summary)
11.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

नेतृत्व शैली, विद्यालय प्रबंधन में नेतृत्व, समूह गत्यात्मकता कौशल, सहयोग दल भावना, समनव्य, संवेद्नशीलता, वैज्ञानिक (प्रकृति) मनोदशा

Leadership style, Teachers Leadership in school management, skill of group dynamics, Co-operation, Team-spirit, Co-ordination, Sensitivity, Scientific temper

11.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप-

- नेतृत्व के सम्प्रत्य और परिभाषा को बता सकेंगे ।
- नेतृत्व के प्रकार व गुण को भली भाँति समझ सकेंगे ।
- नेतृत्व को बढ़ाने में अध्यापक की भूमिका समझ सकेंगे ।
- समूह गतिकी की दक्षता बता सकेंगे ।
- समन्वय तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण को भली प्रकार से स्पष्ट कर सकेंगे ।

– नेतृत्व व छात्र-अधिगम के सम्बन्ध को समझ सकेंगे ।

11.1 प्रस्तावना / नेतृत्व की अवधारणा (Introduction/Concept of Leadership)

नेतृत्व प्रबन्ध कला का एक महत्वपूर्ण पहलू है । प्रभावी नेतृत्व प्रभावी प्रबन्ध की एक कुंजी है । शाब्दिक व्यूत्पत्ति की दृष्टि से नेतृत्व के अंग्रेजी के रूपान्तर 'Leadership' शब्द से लिया गया है, जिसका अर्थ होता है "वह जो नेतृत्व दे" । यह नेतृत्व किसी भी क्षेत्र तथा दिशा में हो सकता है ।

"सचमुच मैंने ऐसा कोई नेता कभी नहीं देखा, जो समुचित रीति से या बुद्धिमत्तापूर्वक यह बता सकता हो कि वह नेता बनने योग्य क्यों है; और न मुझे उस नेता के अनुयायियों का ही ऐसा कोई कथन मिला है जिसमें उन्होंने यह प्रकट किया हो कि वे नेता का अनुगमन क्यों करते हैं ।" यह कथन बनार्ड का है । शब्दकोष में 'नेतृत्व करना' **(to lead)** का अर्थ दो विभिन्न भावों से दिया हुआ है । उसका एक अर्थ 'सर्वोत्तम होना, अग्रणी होना, प्रसिद्ध होना' है । दूसरा अर्थ है 'दूसरों को मार्ग दिखाना, किसी संगठन का प्रधान बनना समादेश देना । इस प्रकार वैयक्तिक नेतृत्व तथा प्रबन्धकीय नेतृत्व के मध्य एक लाभकारी विभाजक रेखा खींची जा सकती है । मनुष्य "वैयक्तिक रूप से नेतृत्व की प्रतिभा लेकर पैदा होता है; किन्तु उसे प्रबन्धकीय नेतृत्व सीखने की आवश्यकता पड़ती है ।"

मिलेट का यह कथन ठीक है कि "नेतृत्व प्राय: परिस्थितियों के अनुसार बनता या बिगड़ता है । उनके कथनानुसार नेतृत्व की दो आवश्यक परिथितियाँ हैं राजनीतिक तथा संस्थागत । प्रशासकीय नेतृत्व की राजनीतिक परिस्थितियों से हमारा तात्पर्य बाह्य राजनीतिक संचालन तथा नियन्त्रण के प्रति सजग रहने से है । नेतृत्व की संस्थागत परिस्थितियों से हमारा आशय आन्तरिक प्रवर्तन (operation) की आवश्यकताओं के प्रति सजग रहने और प्रशासनिक अभिकरण को गतिशील बनाये रखने की आवश्यकता से है ।

कूंज तथा ओडोनेल (Koonz and O'Donnel) ने नेतृत्व की प्राप्ति हेतु तीन विभिन्न उपागमों - लक्षणवादी (situationalist) तथा तत्ववादी (elementalist) का संकेत किया है । नेतृत्व एक गतिशील तत्व है । यह समूह के सदस्यों को सम्बद्ध करने वाली एक ऐसी सामूहिक शक्ति है, जो समूह को अक्षुण्ण (intact) बनाये रखती है । वास्तव में नेतृत्व का कोई स्थानापन्न (substitute) नहीं है |

नेतृत्व की परिभाषाएं (Definitions of Leadership) - एण्डरसन का मत है कि प्राय: प्रबन्ध तथा नेतृत्व को समान माना जाता है, परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है । इनके अनुसार प्रबन्ध एक व्यापक शब्द है जिसमें विभिन्न चातुर्य सम्मिलित हैं, नेतृत्व उनमें से एक है । नेतृत्व एक विशिष्ट प्रक्रिया है जो प्रबन्धक को व्यक्तियों से उच्च निष्पादन प्राप्त करने में समर्थ बनाता है ।

कूंज एवं ओडोनेल के अनुसार - "किसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु सम्प्रेषण के माध्यम द्वारा व्यक्तियों को प्रभावित कर सकने की योग्यता ही नेतृत्व कहलाती है ।"

(Leadership may be defined as the ability to exert interpersonal influence by means of communication towards the achievement of a goal)

- **Koonz and O'Donnel**

के. यंग के अनुसार - "नेतृत्व प्रभुत्व का एक ऐसा प्रकार है जिसमें अनुयायी अधिक या कम इच्छा से किसी अन्य व्यक्ति का निर्देशन एवं नियन्त्रण स्वीकार करते हैं ।"

(Leadership is one dream of dominance, in which the followers more or less willingly accept direction and context by another person.)

- K Young

स्टॉडगिल के अनुसार - "नेतृत्व एक संगठित समूह का लक्ष्य निर्धारण एवं लक्ष्य प्राप्ति को प्रभावित करने की प्रक्रिया है ।"

(Leadership may be considered as the process (act) of influencing the activities of an organized group in its efforts towards setting goal achievement) - Stodgill

'दिशा निर्देशन' एवं 'प्रभाव उपयोग' ऐसे दो कार्य हैं जो नेतृत्व की अधिकतर परिभाषाओं के मूल में हैं । यह दानों कार्य विभिन्न प्रकार से होते हैं ।

युकल के अनुसार नेतृत्व प्रभावित करता है "नेतृत्व में समूह के लिए सामूहिक उद्देश्य, उद्देश्य प्राप्ति हेतु कार्य गतिविधियों का गठन तथा अनुगामियों के लिए उद्देश्य कर प्राप्ति हेतु अभिप्रेरित करना तथा अन्ततः उद्देश्य की प्राप्ति करना है।"

11.2 नेतृत्व के प्रकार (Types of Leadership)

नेतृत्व के प्रकार के संदर्भ में विभिन्न विचार देखने को मिलते है-

हेमफिल व अन्य (Hemphill et.al.) ने सम्पर्क के आधार पर नेतृत्व की तीन अवस्थाओं का वर्णन किया है -

चित्र संख्या : 11.1

बोगार्डस (Bogardas) ने नेताओं के कार्यों के आधार पर विचार पूर्वक नेतृत्व को तीन वर्गों में वर्गीकृत किया है -

चित्र संख्या : 11.2

(1). मानसिक नेतृत्व - यह प्रकार विचार की प्रक्रिया के कारण जाना जाता है । नेता अपने अनुयायियों के साथ सामाजिक सम्पर्क में हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है । यह अन्तर्मुखी प्रवृत्ति को प्रदर्शित करता है।

(2). सामाजिक नेतृत्व - इस प्रकार के नेतृत्व के लिए अनुयायियों के साथ सामाजिक सम्पर्क अवश्यक है । सामाजिक नेतृत्व के नेता अपने सहयोगियों में निर्देशक होता है । उसके मुख्य गुण-आत्मविश्वास, बहिर्मुखी व्यक्तित्व, उत्साह तथा उच्च शारीरिक सौष्ठव होते हैं ।

(3). अधिशाषी नेतृत्व - यह मानसिक तथा सामाजिक नेतृत्व का सम्मिश्रण होता है । इसमें नेता दृश्य के पीछे से ही सहयोगियों का कुशल संचालन करता है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 नेतृत्व किसे कहते है ? परिभाषा देकर समझाइए |
(What is leadership? Explain with example.)

2 नेतृत्व के दो प्रकार को समझाइए |
(Explain two types of leadership.)

11.3 नेतृत्व के गुण
(Qualities of Leadership)

स्टॉडगिल (Stodgill) के अनुसार -

चित्र संख्या 11.3

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि केवल बौद्धिक क्षमता या शारीरिक विशेषताएं एक व्यक्ति को समूह में प्रतिष्ठा प्रदान करती है, वरन् उसके आन्तरिक गुण, उसका व्यवहार, उसका कार्य करने का तरीका तथा उसके सामाजिक दृष्टिकोण नेतृत्व के लिए ज्यादा महत्वपूर्ण है ।

11.4 नेतृत्व शैली
(Leadership Style)

नेतृत्व की शैलियाँ व्यवहार का आदर्श स्वरूप है जिसके द्वारा नेता अपने कनिष्ठ सहयोगियों के व्यवहार को प्रभावित करता है ।

चित्र संख्या : 11.4

(1). अधिकारिक नेतृत्व - नेतृत्व की इस शैली में नेता शक्ति एवं अधिकारी सत्ता को पूरी तरह स्वयं में ही केन्द्रित रखते हैं । वे स्वयं ही नीतियों का निर्धारण करते हैं, निर्णय करते हैं तथा स्वयं ही आदेशों एवं निर्देशों का प्रसारण अपने अधीनस्थों को करते हैं । अधिकारिक नेतृत्व के सम्बन्ध में निम्न मान्यताएं हैं -

1. यह नेतृत्व उन लोगों तक सीमित है, जो पद / प्रस्थिति में होने के कारण शक्ति में हैं ।
2. अन्तिम रूप से दायित्व उस नेतृत्व का ही होता है, जो अधिकार की सर्वोच्च स्थिति पर होता है ।
3. उद्देश्यों की प्राप्ति में एकजुटता तभी हो सकती है, जब संगठन के सदस्य नेतृत्व के प्रति निष्ठावान हो ।
4. अच्छे परिणाम प्रतिस्पर्धा एवं दबाव जन्य पर्यावरण में ही संभव है ।
5. विभिन्न प्रधिकृतियों के पद सोपानों का प्रयोग, संगठन के लक्ष्यों, नीतियों व कार्यक्रमों का निर्धारण करने में किया जाना चाहिए ।
6. अधिकृति ही सही होती है तथा उस व्यक्ति का अधिकार है, जो पदासीन होने के कारण अधिकार प्राप्त किये हुए है ।
7. मूल्यांकन का दायित्व पद / प्रस्थिति नेतृत्व का ही है ।

(2). जनतन्त्रीय नेतृत्व - इसमें जहाँ सम्भव हो वहाँ यथा आयोजन, नीति निर्धारण, कार्य आदि में जन सहयोग प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है । प्राय: नेता समूह के मानदण्ड के ही आचरण करता है, वह समूह के समग्र संसाधनों को समूह के विकास के लिए उपयोग में जनतन्त्रीय नेता सहकर्मी होता है । जनतन्त्रीय नेतृत्व के सम्बन्ध में निम्नांकित धारणाएं हैं -

1 नेतृत्व उन लोगों तक सीमित नहीं है जो पद या प्रस्थिति में हैं, वरन् नेतृत्व परिवर्तनशील या परिस्थितिजन्य है ।
2 श्रेष्ठ परिणामों की प्राप्ति के लिए समूह के मध्य अच्छे मानवीय सम्बन्ध आवश्यक हैं ।
3 जनतन्त्रीय नेतृत्व में अधिकार एवं कर्तव्य दोनों का विकेन्द्रीकरण हो सकता है ।
4 व्यक्ति ऐसे गतिशील पर्यावरण में अधिक सुरक्षित अनुभव करता है जिसमें उसकी स्वयं की सहभागिता हो।
5 समूह के लक्ष्यों को समूह की आम सहमति एवं निष्ठा द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।
6 भयहीन पर्यावरण में ही अधिकाधिक उपलब्धि सम्भव है ।
7 संगठन के विभिन्न पद या प्रस्थिति का प्रयोग कार्य व श्रम के विभाजन व नीतियों को लागू करने में ही किया जाना चाहिए ।
8 व्यक्ति संगठन के लिए महत्वपूर्ण है ।
9 विशेष परिस्थिति ही नेता को अधिकार प्रयोग के लिए बाध्य करती है, न कि पद या प्रस्थिति ।
10 व्यक्ति के कार्य का मूल्यांकन, समूह का दायित्व होता है ।

(3). अहस्तक्षेपीय नेतृत्व - अहस्तक्षेपीय नेतृत्व वस्तुत: कोई नेतृत्व नहीं होता, नेतृत्व की इस शैली में नेता प्रशासन के कार्य में हस्तक्षेप कम करते हैं तथा अपने अधीनस्थों को स्वतन्त्र रूप से कार्य करने का अवसर प्रदान करते हैं । अधीनस्थ स्वयं ही अपने-अपने कार्य क्षेत्र की

सीमाओं में लक्ष्यों का निर्धारण करते हैं तथा उनकी प्राप्ति हेतु नीतियों का निर्धारण और निर्णय लेने का कार्य करते हैं । इसमें संगठन नेतृत्वविहीन सा लगता है ।

लिपहन (Liphenn) के अनुसार नेतृत्व शैलियाँ -

चित्र संख्या : 11.5

इसी विभाजन को **गेटजेल** एवं **गूवा** नोमोथिटिक (Nomothetic), इडियोग्राफिक (Idiographic) तथा ट्रांजेक्शनल (Transaction) कहा है ।

1 **आदर्शमूलक शैली (Normative Style) -** इसके अन्तर्गत संगठन की अपेक्षाओं पर ध्यान दिया जाता है, व्यक्ति की अपेक्षाओं पर नहीं । नेता देखता है कि संगठन की अपेक्षाओं के अनुसार अनुसरणकर्ता कार्य सम्पन्न करते हैं या नहीं । व्यक्ति के कार्यों का संगठन की अपेक्षाओं की पूर्ति के आधार पर मूल्यांकन होता है । वस्तुत: यह शैली भूमिका सिद्धान्त से प्रभावित है ।

2 **वैयक्तिक मूलक शैली (Personal Style) -** इस शैली के अन्तर्गत व्यक्तिगत अपेक्षाओं पर ध्यान दिया जाता है । इसके अनुसार संगठन से कहीं अधिक महत्वपूर्ण भूमिका व्यक्ति की होती है । यदि व्यक्ति की भूमिका उपयुक्त हो, उसकी आवश्यकताओं की संतुष्टि हो, तो संगठन विकास कर सकता है |

इस शैली के अनुसार संगठन में पूर्ण दक्षता प्राप्त करने के लिए उच्चाधिकारियों एवं अनुसरणकर्ताओं की भूमिका में अपेक्षाओं के अनुरूप व्यवहार होना आवश्यक है तथा अपेक्षित भूमिका एवं वास्तविक व्यवहार की भूमिका के मध्य अन्तर कम से कम करने का यत्न करना चाहिए ।

3 **व्यवहार मूलक शैली (Transactional Style)** - इस शैली के अनुसार जहाँ व्यक्तिगत अपेक्षाओं पर ध्यान दिया जाता है, वहाँ संगठन की अपेक्षाओं का भी ध्यान रखा जाता है । इस प्रकार यह एक मध्यमार्गी नेतृत्व शैली है, जिसमें व्यक्ति एवं संगठन की अपेक्षाओं के मध्य समन्वय रखने का प्रयास किया जाता है । अत: नेता के लिए अत्यन्त कठिन स्थिति होती है, सही अपेक्षाओं का समन्वय ही उसकी कसौटी है । इसमें सफलता नेतृत्व की क्षमता पर निर्भर करती है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 शैक्षिक नेतृत्व से क्या अभिप्राय है ?
(What is the meaning of Educational Leadership? Explain.)

2 नेतृत्व की विभिन्न शैली कौन सी है ? वर्णन कीजिए |
(What are the different Leadership Styles? Describe them.)

11.5 नेतृत्व में अध्यापक की भूमिका (The Role of teacher in Leadership)

हर व्यक्ति अपने जीवन के उड़ेश्यों की पूर्ति के लिए योजना बनाता है । उद्देश्यों की पूर्ति के लिए निश्चित कदम उठाता है । आवश्यक संसाधन जुटा कर उन्हें प्राप्त करने का प्रयास करता है । शिक्षा का क्षेत्र भी इसका अपवाद नहीं है ।

विद्यालय प्रबन्ध को बनाये रखने में अध्यापक में निम्न गुण होने चाहिए -

1. **निश्चयात्मकता -** किसी भी प्रबन्ध को बनाये रखने के लिए अस्थिर चित्त वाले, काम टालने वाले, हिचकिचाने वाले तथा अनिश्चित प्रवृत्ति वाले शिक्षक से अधिक घातक कोई नहीं हो सकता ।
2. **दृष्टिकोण की स्पष्टता -** अच्छे अध्यापक को यह जानना चाहिए कि वह क्या चाहता है और क्या नहीं?
3. **पूर्व दृष्टि -** नेतृत्व के लिए शिक्षक में पूर्व दृष्टि तथा दूरदृष्टि, दोनों ही होनी चाहिए ।
4. **सही निर्णय -** शिक्षक का निर्णय गलत होने की अपेक्षा ठीक अधिक होना चाहिए ।
5. **सहगामी प्रबन्ध -** शिक्षक के लिए वस्तुतः अच्छा संगठनकर्ता होना आवश्यक है, साथ ही उसे इस योग्य होना चाहिए कि वह छात्रों में संगठन के प्रबन्ध में भाग लेने की भावना उत्पन्न कर सके ।
6. **अच्छे लोक सम्बन्ध -** निष्पादकों में अपना काम ठीक प्रकार से बना लेने की चतुराई होनी चाहिए।

अध्यापक छात्रों में निम्न गुणों का विकास करता है -

चित्र संख्या : 11.6

11.6 नेतृत्व एवं छात्र अधिगम
(Leadership and Student Learning)

नेतृत्व एवं अधिगम में जो सम्बन्ध है उसे हम नीचे दर्शाये रेखांकित चार्ट से समझ सकते हैं -

चित्र संख्या. 11.7

Figure: Linking Leadership to learning. The research framework features 10 interdependent variables. According to this framework, leaders play critical roles to identify and supporting learning, structuring the social settings and mediating the external demands.

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 एक शिक्षक में नेतृत्व के कौन- कौन से गुण होने चाहिए|
What qualities of leadership do you think a teacher must have?

2 एक अध्यापक की नेतृत्व की भूमिका पर प्रकाश डालिए |
Explain the role of teacher in leadership.

11.7 समूह गत्यात्मक की दक्षता (Skill of Group Dynamics)

व्यक्ति के कार्य व्यवहार को दो प्रकार से देखते हैं - व्यक्तिगत रूप में तथा सामूहिक रूप में । व्यक्तिगत रूप में वैयक्तिक रूप को प्राथमिकता दी जाती है जबकि सामूहिक रूप में व्यक्ति की तुलना में समूह को अधिक महत्व दिया जाता है ।

समूह का अर्थ - कोई व्यक्ति किसी समूह का सदस्य इसलिए बनता है कि वह समूह उसकी कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति करता है तथा समूह की सदस्यता उस व्यक्ति को संतुष्ट करती है ।

समूह की विशेषताएं--

1. **अभिप्रेरणात्मक आधार (Motivational Base)** - सभी के समान लक्ष्य होते हैं, जिससे उनके क्रिया कलाप लक्ष्य प्रेरित (Goal Oriented) हो सकें ।
2. **संगठन (Organization) -** संरचना सुव्यवस्थित यानी कुछ निश्चित नियम व मानक होने चाहिए, ताकि सदस्यों का नियमन हो सके ।
3. **अन्तनिर्भरता (Interdependency) -** परस्पर एक दूसरे पर निर्भर हैं ।
4. **संरचना (Structure) -** ऐसा हो जिसमें शक्ति पदानुक्रम से सर्वोच्च सत्ता के हाथों में निहित हो, किन्तु वह शक्ति जनतांत्रिक रूप से प्रत्येक सदस्य व्यक्ति में भी निहित हो ।

समूह गतिकी (Group Dynamics) - समूह गत्यात्मकता का प्रारम्भ सर्वप्रथम संयुक्त राज्य अमेरिका में 1930 ई. में हुआ । **कुर्ट लेविन** ने इसे सर्वप्रथम यह नाम दिया । गतिकी शब्द भौतिक शास्त्र व ज्यामिति से लिया है, जिसका अर्थ है **परिवर्तनशीलता** (Changing)। समूह के अन्तर्गत इसके सदस्यों की परस्पर अन्तःक्रियाओं के कारण सदस्यों के व्यक्तित्व व व्यवहार में सतत परिवर्तन होते रहते हैं । यूनानी भाषा में इसका अर्थ है **शक्ति,** अत: समूह गत्यात्मकता का अर्थ समूह में कार्यरत शक्तियों से होता है ।

परिभाषाएं -

1. **एस. एस. चौहान** - समूह गतिकी समूह में अन्तःक्रिया के माध्यम से हुए व्यवहार परिवर्तन को कहते हैं । यह उन शक्तियों का सूचक है, जो समूह स्थितियों में कार्यरत रहती है । यह समूह अन्तःक्रिया से प्रकट की संरचना व अन्य घटनाओं का अध्ययन करती है ।

2. **एस. एस. माथुर** - अंग्रेजी शब्द Dynamics जिसका अर्थ गति है, एक ग्रीक भाषा के शब्द से निकाला गया है, जिसका अर्थ है शक्ति । समूह गतिविज्ञान उन शक्तियों का ज्ञान देता है, जो एक समूह में सक्रिय होती हैं । उन शक्तियों का अध्ययन समूह गतिविज्ञान के अन्वेषण का विषय होता है । यह अन्वेषण उस दिशा में होते हैं, जिससे यह पता चल जाये के यह शक्तियाँ किस प्रकार उभरती हैं, किन दिशाओं में यह शक्तियाँ सक्रिय होती हैं, क्या इनके परिणाम होते हैं और किस प्रकार से उनका रूपान्तर किया जा सकता है । समूह गतिविज्ञान का प्रयोग इस ज्ञान का किसी उद्देश्य के लिए उपयोग करना है ।

विद्यालय में भी व्यक्ति समूह के रूप में व्यवहार करते हैं । शिक्षक की प्रत्येक क्रिया से कोई न कोई प्रक्रिया शुरू होती है, यह उसकी गत्यात्मकता का परिचायक है । इस गत्यात्मकता का प्रभाव विद्यार्थीयों के बौद्धिक, सांवेगिक एवं सामाजिक विकास पर पड़ता है । इसके अलावा शिक्षक एवं छात्रों की अन्तःक्रिया, विषय सम्प्रेषण और अधिगम स्तर भी प्रभावित होते हैं ।

समूह गत्यात्मकता का अर्थ कक्षागत स्थिति में होने वाली समस्त अन्तक्रियाओं के अध्ययन से होता है, जिनमें शिक्षक तथा छात्र समूह दोनों ही सक्रिय रहते हैं ।

गत्यात्मकता का प्रभाव हमें कक्षा स्थिति में शिक्षक तथा छात्र दोनों के व्यवहार से ज्ञात होता है, क्योंकि कोई भी शिक्षक हमेशा एक जैसा ही व्यवहार करता हो, यह आवश्यक नहीं, क्योंकि शिक्षक का व्यवहार समय, विषयवस्तु एवं परिवर्तन के अनुसार परिवर्तित होता रहता है तथा यही स्थिति छात्रों पर भी लागू होती है ।

समूह गत्यात्मकता को प्रभावित करने वाले कारक -

1 शिक्षक का व्यक्तित्व ।
2 शिक्षक-छात्र सम्बन्ध ।
3 छात्र-छात्र एवं छात्र-शिक्षक अन्तःक्रिया ।
4 कक्षा कक्ष का वातावरण (भौतिक, सामाजिक, संवेगात्मक) ।
5 विषय-वस्तु ।
6 उद्देश्यों की स्पष्टता ।
7 छात्र समूह का सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्तर ।
8 छात्रों को उत्तरदासित्व सौंपना ।
9 शिक्षक का व्यवहार (विश्वासोत्पादक, स्वेच्छाचारी, जनतान्त्रिक, अधिकारिक, निषेधात्मक और सकारात्मक) ।

समूह गत्यात्मकता को प्रभावी बनाने वाली विधियाँ -

1 कक्षा में छात्रों के मध्य अन्तःक्रिया हेतु उन्हें सीधी पंक्तियों में बैठाने के स्थान पर गोलाकार स्थिति में बैठाया जाना चाहिए ।
2 शिक्षक छात्र समूह में से प्रतिभाशाली छात्रों को खोजकर शिक्षण हेतु वांछित वातावरण उत्पन्न करें ।
3 छात्रों को स्वतन्त्र अभिव्यक्ति एवं समूह चर्चाओं का अवसर देना ।
4 छात्रों को बौद्धिक स्तर के अनुसार छोटे समूहों में बाँटकर एक दूसरे की सहायता व सहयोग प्राप्त करना सिखाना ।

5 शिक्षण के साथ-साथ विद्यालय में पाठ्य-सहगामी क्रियाएं आयोजित की जायें, जैसे, शारीरिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक गतिविधियाँ ।
6 छात्रों में नेतृत्व के साथ नैतिक गुणों का विकास भी किया जावे ।
7 छात्रों में समूह की भावना का विकास किया जावे ।
8 छात्रों को वर्तमान परिस्थितियों एवं समस्याओं के साथ भविष्य में सम्भावित समस्याओं से अवगत कराया जावे ।
9 शिक्षक छात्रों के गुणों को पहचान कर उन्हें प्रोत्साहित तथा पुनर्बलित करें ।

11.8 समन्वय व सहयोग की दक्षता (Skill of Co-ordination and Co-operation)

समन्वय का अर्थ एवं परिभाषा - साधारण भाषा में समन्वय से तात्पर्य है संगठन के कार्यकलापों एवं गतिविधियों में उचित सम्बन्ध, समायोजन तथा तालमेल स्थापित करना । व्हाइट के अनुसार, "समन्वय का अर्थ है विभिन्न भागों का परस्पर समायोजन एवं उसकी गतिविधियों तथा क्रियाओं का भी समय पर समायोजन ताकि प्रत्येक भाग पूर्ण उत्पादन के लिए अपना अधिकतम योगदान कर सके । " **चार्ल्सवर्थ** के शब्दों में, ' 'समन्वय का अर्थ है विभिन्न भागों का एक व्यवस्थित रूप में एकीकरण ताकि संगठन के उद्देश्य की प्राप्ति की जा सके ।" **निग्रो** के कथनानुसार, "समन्वय से तात्पर्य यह है कि संगठन के विभिन्न अंग एक साथ मिलकर प्रभावकारी रूप में कार्य करते हैं और काम संघर्ष, अतिच्छादन या पुनरावृत्ति के बिना चलता है । "**सेकलर हडसन** की सम्मति में," समन्वय कार्यके विभिन्न हिस्सों को परस्पर सम्बद्ध करने का सर्वत्र महत्वपूर्ण कार्य है |" **टेरी** ने लिखा है कि, "समन्वय विभिन्न 'भागों का एक-दूसरे के साथ सामंजस्य है तथा उसकी गतिविधि एवं व्यवहार का समय के साथ ऐसा सामंजस्य है जिसमें प्रत्येक हिस्सा समग्र में उत्पादन के लिए अपना अधिक से अधिक योगदान कर सके । " संक्षेप में, समन्वय का अर्थ ऐसी व्यवस्था करना है कि किसी संगठन के सभी हिस्से कार्य की पुनरावृत्ति किये बिना निर्धारित लक्ष्यों की ओर कदम मिलाते हुए आगे बढ़ें । इसी महत्व के कारण **मूने** और **रैले** ने इसे संगठन का बुनियादी एवं प्राथमिक सिद्धान्त मानते हुए अन्य समस्त सिद्धान्तों को गौण कहा है ।

समन्वय और सहयोग - यहाँ यह उल्लेखनीय है कि समन्वय और सहयोग एक नहीं है । समन्वय को सहयोग समझ लेना एक भूल होगी । **टेरी** के शब्दों में, "सहयोग किसी सामान्य लक्ष्य की प्राप्ति के लिए व्यक्ति का दूसरे या दूसरों के साथ सामूहिक कार्य है । समन्वय सामूहिक कार्य से कहीं अधिक है और इसका अर्थ है 'प्रयत्नों की समकालिकता' अर्थात् प्रयत्न एक लई समय होने चाहिए।" सहयोग और समन्वय के अन्तर को **टेरी** ने एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया है - एक लड़का था । वह एक दिन प्रात: ही रेलगाड़ी पकड़ना चाहता था । इसके लिए सोने से पूर्व उसने अपनी घडी को आधा घण्टे आगे कर दिया ताकि वह जल्दी उठ सके । लड़के का पिता यह जानता था कि उसका लड़का प्रात: रेलगाड़ी पकड़ेगा, उसने सोचा कि लड़के को प्रात: उठने और कपड़े पहनने में समय लगेगा, इसलिए उसने घड़ी को आधा घण्टे और आगे कर दिया । इसी प्रकार लड़के की माता भी सोने से पहले लड़के के शयनागार में गई और घड़ी को आधा

घण्टा आगे कर दिया ताकि लड़के को प्रात: जल्दी न करनी पड़े । फल यह हुआ कि आधा घण्टा पहले उठने की बजाय लड़का डेढ़ धण्टे पहले उठ गया और उसकी एक घण्टे की नींद मारी गई । **टेरी** के शब्दों में, "यहाँ माता, पिता तथा बेटे के कार्यों में सहयोग तो था, लेकिन समन्वय न था।"

इससे यह नहीं समझना चाहिए कि समन्वय और सहयोग विरोधी अवधारणाएं हैं । वस्तुत: समन्वय और सहयोग दोनों पूरक हैं । समन्वय एवं सहयोग के बीच सम्बन्ध को हेमेन ने इस प्रकार व्यक्त किया है, "यद्यपि सहयोग हमेशा सहायतापूर्ण रहता है और इसका अभाव समन्वय की प्रत्येक सम्भावना रोक सकता है, पर इसका अस्तित्व मात्र ही समन्वय का होना साबित नहीं करता । महत्व की दृष्टि से समन्वय सहयोग की अपेक्षा अधिक उच्च है ।"

समन्वय क्यों आवश्यक है? - समन्वय की आवश्यकता निम्न चार कारणों से उत्पन्न होती है

1. **संघर्ष और झगड़ों को दूर करना** - किसी भी संगठन में कर्मचारियों के बीच संघर्ष उत्पन्न हो सकता है । समन्वय द्वारा विवादों का समाधान किया जाता है ।
2. **सहयोग की भावना** - किसी भी संगठन के विभिन्न भागों एवं अधिकारियों में सहयोग आवश्यक है । यदि उनमें सहयोग की भावना नहीं है तो संगठन की गति रुक जायेगी और वह लक्ष्य प्राप्ति से हट जायेगा । समन्वय द्वारा उसमें टोली की भावना (Team Spirit) तथा समान उद्देश्य की अनुभूति (A sence of common purpose) उत्पन्न होती है ।
3. **दोहराव को रोकना -** समन्वय के अभाव से संगठन में दोहराव (Dupl>ication) का दोष उत्पन्न होना स्वाभाविक है । जब संगठन के विभिन्न सदस्यों को यह ज्ञात नहीं रहता कि दूसरे क्या कर रहे हैं तो वह स्वयं ऐसे कार्य करने लग जाते हैं जो दूसरे अधिकारी पहले से ही सम्पन्न कर रहे हैं । समन्वय द्वारा संगठन के सभी हिस्से काम की पुनरावृत्ति किये बिना, या टकराए बिना निर्धारित लक्ष्यों की ओर कदम मिलाते हुए आगे बढ़ते हैं ।
4. **क्रमहीनता के कारण -** संगठन की क्रियाओं में एक क्रम होता है । प्राथमिक क्रियाओं को सम्पन्न किये बिना यदि आगे की क्रियाओं को पहले ही सम्पन्न कर दिया जाये तो वे अनुपयोगी बन जाती हैं । अत: संगठन के कार्यों में क्रमबद्धता लाने के लिए समन्वय बहुत आवश्यक है।

समन्वय के प्रकार -

समन्वय अनेक प्रकार का होता है-

1 आन्तरिक तथा बाह्य अथवा कार्यात्मक तथा संरचनात्मक

2 लम्बरूप समन्वय तथा सममतल समन्वय ।

आंतरिक समन्वय संगठन द्वारा उसकी विभिन्न इकाइयों के बीच किया जाता है । इसके अतिरिक्त, प्रत्येक संगठन अनेक बाहरी तत्वों, जैसे लोकमत, दबाव समूह, हित समूह, इत्यादि से भी प्रभावित होता है । इनके बीच जो समन्वय स्थापित किया जाता है, उसे बाह्य समन्वय कहते हैं ।

लम्बरूप समन्वय (Vertical Co-ordination) से हमारा अभिप्राय समन्वय के उस रूप से है, जो संगठन की इकाई के विभिन्न स्तरों के बीच स्थापित किया जाता है । उदाहरण के लिए, एक संगठन के निदेशक, उपनिदेशक, निरीक्षक, नियन्त्रक एवं ऐसे ही अधीनस्थों के मध्य स्थित समन्वय को ले सकते हैं । इस प्रकार समन्वय में पदसोपान एवं सत्ता का महत्वपूर्ण स्थान है ।

समतल समन्वय (Horizontal Co-ordination) का अर्थ उस समन्वय से है जो प्रबन्ध के समान स्तरों पर किया जाता है । इस प्रकार के समन्वय में कर्मचारियों एवं अधिकारियों की स्वेच्छा का अधिक महत्व होता है । समान स्तर वाले अधिकारियों के बीच समन्वय स्थापित करने की कुछ अपनी समस्याएं हैं क्योंकि ये अधिकारी एक-दूसरे पर सत्तावान नहीं होते ।

11.9 वैज्ञानिक दृष्टिकोण (Scientific Temper)

यह स्पष्ट है कि वैज्ञानिक साक्षरता के साथ-साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हो । भारतवर्ष में विज्ञान का ज्ञान एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण अन्धविश्वासों को कम करेंगे और प्रजातन्त्र को सम्पोषित करेंगे ।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण व्यक्तित्व का भावात्मक पक्ष है । वैज्ञानिक दृष्टिकोण विषयों एवं घटनाओं को देखने की मूल्य आधारित प्रविधि है । सामान्यत: वैज्ञानिक दृष्टिकोण को वैज्ञानिक चिन्तन के समकक्ष मानते हैं ।

किसी भी विशिष्ट परिस्थिति में दृष्टिकोण व्यक्ति के चिन्तन, क्रिया एवं व्यवहार की एकीकृत मनःस्थिति है । वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं चिन्तन एक प्रविधि है, जिससे व्यक्ति उपलब्ध प्रमाणों पर उस समय वस्तुगत दृष्टि से विवेकपूर्ण निर्णय करता है ।

सिंह (1990) के अनुसार वैज्ञानिक दृष्टिकोण क्रियात्मक कार्यों के लिए एक मूल्य प्रारूप, विश्व के लिए एक दृष्टिकोण और कार्य एवं क्रिया के लिए एक प्रविधि है ।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण के चार विभिन्न पक्ष हैं-

1 **मूल्य परिप्रेक्ष्य (Value Perspective) -** मूल्य परिप्रेक्ष्य विज्ञान एवं तकनीकी सम्बन्धित वैयक्तिक एवं सामाजिक समस्याओं को हल करने में सहायक होता है । विज्ञान एवं तकनीकी मूल्य समूह में वस्तुनिष्ठता, विवेक, प्रश्न करने की अभिवृत्ति, बुद्धि परक निर्णय करना, जिज्ञासा, प्रवीणता, दृढ़ता और अज्ञात को जानने की आन्तरिक प्रेरणा हैं । ये मूल्य व्यक्ति के व्यवहार में दिखने चाहिए ।

2 **अन्धविश्वास में अरुचि (Aversion to Superstition) -** एक रूढ़िवादी समाज पुराने विश्वास और अन्धविश्वासों में रहता है । निरक्षरता तथा अज्ञानता इसके पूरक हैं । बाह्य प्राकृतिक शक्तियों में विश्वास करने वाले व्यक्ति को भाग्य आधीन बनाता है तथा नवीन विचारों का अवरोधक है । भारतवर्ष में अनेक व्यक्ति इस प्रकार के चिन्तन से ग्रस्त हैं । वैज्ञानिक

दृष्टिकोण वाला व्यक्ति इस प्रकार के विश्वास को नहीं स्वीकारेगा । वह व्यक्ति वस्तुनिष्ठ विश्लेषण द्वारा किसी भी अप्राकृतिक घटनाओं का प्रमाणों से प्रयोगाश्रित विश्लेषण करेगा ।

3 **अभिवृत्ति विचार का एक समूह (A Set of Attitudes) -** वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाला व्यक्ति पर्यावरण, सांस्कृतिक सन्दर्भ, विज्ञान की देन, तकनीकी का प्रयोग तथा विश्व दृष्टिकोण पर एक अभिवृत्ति विचार समूह रखता है । ये व्यवहार में प्रतिबिम्बित होते हैं । भारत में हरित क्रान्ति, नवीन उर्वरकों के प्रयोग से उपलब्ध हुई जो किसानों की अभिवृत्ति का द्योतक है ।

4 **विश्व-मत परिप्रेक्ष्य (World View Perspective) -** समकालीन समस्याएं तथा सार्वभौमीकरण, सुवना एवं सम्प्रेषण प्रौद्योगिकी ने शिक्षा को नवीन दृष्टि दी है । इस सन्दर्भ में विश्व व्यापक कम्प्यूटर साक्षरता, कम्प्यूटर प्रधान शिक्षा और कम्प्यूटर सहायता प्राप्त शिक्षा आवश्यक हो गई है । सार्वभौमिकता से शिक्षा द्वारा सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने होंगे । शिक्षा सक्रिय नागरिकता तथा मानव अधिकार के लिए, पर्यावरण सुधार के लिए तथा विश्व व्यापक मूल्यों के लिए आवश्यक है । **कैपरा (1982)** के अनुसार हमें यन्त्रवादी विश्वमत के स्थान पर एक गतिशील विश्वमत की आवश्यकता है, इसलिए एक साकल्यवादी (Holistic) विश्वमत स्वीकार करना होगा, जो समग्र के साथ-साथ सजीव (Organic) भी हो, जो व्यक्ति और उसके प्राकृतिक एवं सामाजिक जीवन में सक्रिय सम्बन्ध स्थापित कर सके ।

11.10 सारांश
(Summary)

प्रत्येक संगठन में जहाँ पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए एक से अधिक व्यक्ति कार्य करते हैं, वहाँ नेतृत्व की आवश्यकता एवं महत्व को नकारा नहीं जा सकता । इस सन्दर्भ में **पाल हर्स** तथा **ब्लेनचर्ड** का मत उल्लेखनीय है कि, "सफल संगठनों का प्रमुख गुण जो कि इसे असफल संगठनों से पृथक करता है, गतिशील एवं प्रभावी नेतृत्व है ।" इसी सन्दर्भ में **पीटर एफ. ड्रकर** ने भी कहा है, "अधिकांश संस्थाएं इसलिए असफल रहती हैं क्योंकि वहाँ अच्छे नेतृत्व का अभाव रहता है ।"

नेतृत्व वह प्रेरक शक्ति है जो अन्य लोगों से काम कराती है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 समूह गत्यात्मकता किसे कहते है ? परिभाषा देकर समझाइए |
(What is Group Dynamics? Explain with definitions.)

2 एक अच्छे नेतृत्व में समन्वय व सहयोग की भूमिका स्पष्ट करें|
(Clarify the role of Co-ordination and Co-operation in good leadership.)

3 वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रकारों को समझाते हुए स्पष्ट करें |
(Explain different types of Scientific Temper.)

11.11 संदर्भ ग्रंथ सूची
(Bibliography)

1. भटनागर सुरेश: शैक्षिक प्रबंध और शिक्षा की समस्याएँ, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ,1996
2. सुखिया.एस.पी. विद्यालय प्रशासन एवं सगठन,विनोद पुस्तक मंदिर,आगरा 1965
3. Andrews, R., Soder, R. Principal instructional leadership and student achievement. Educational Leadership, 44.09.11, 1987.
4. Gronn, P. Distributed leadership, In K Leithwood & P.Hallinger (Eds)., 2002. Second International Handbook on Educational leadership and Administration. Dordrecht, The Netherlands: Kluwer Publishers
5. Leithwood, K., Jantzi D. The effects of transformation leadership on student engagement with school, Journal of Educational Administration, 38, 2, 112-129, 2000.

इकाई-12

अध्यापक की सामाजिक पृष्ठभूमि
Social Background of the Teacher

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

12.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

12.1 शिक्षक की सामाजिक पृष्ठभूमि (Social Background of Teacher)

12.2 विभिन्न प्रकार की शिक्षा योजनाएं (Different types of Education Planning (N.G.O)

12.3 औपचारिक एवं खुले विद्यालय के सुगमकर्ता (Facilitator of Non Formal & open School)

12.4 सारांश (Summary)

12.5 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

अध्यापक की सामाजिक पृष्ठभूमि : शिक्षाकर्मी, बेयरफूट टीचर, शिक्षा बोध, अनौपचारीक शिक्षा का सुगमकर्ता, खुले विद्यालय के विद्यार्थियों के सुगमकर्ता

Social Background of Teacher : Shiksha karmi ,Barefoot teacher, Siksha Bodh: Non formal Education faciliator, Faciliator of open school students.

12.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप:-

1. शिक्षकों की सामाजिक पृष्ठभूमि का बोध कर सकेंगे ।
2. शिक्षा की गैर सरकारी संगठनों यथा बेयरफूट (Barefoot), शिक्षा बोध (Siksha Bodh), अनौपचारिक शिक्षा (Inormal Education), उसके सुगमकर्ता (Faciliator) तथा खुले विद्यालय (Open school) की संकल्पना, सुगमकर्ता तथा समस्त कार्यक्रमों की गतिविधियों (Acitivities) का ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम हो सकेंगे ।
3. प्राप्त ज्ञान का अपने शिक्षण में उपयोग कर सकेंगे ।
4. सारांश का अध्ययन करने पर प्राप्त ज्ञान का प्रबलीकरण कर सकेंगे ।
5. स्वमूल्यांकन द्वारा अर्जित ज्ञान की पुष्टि कर व्यवहार परिवर्तन की साक्षियों का संकलन कर सकेंगे ।

12.1 शिक्षक की सामाजिक पृष्ठभूमि (Social Background of Teacher)

शिक्षक को संकल्पना अतिप्राचीन है |शिक्षक किसी न किसी रूप में औपचारिक तथा अनौपचारिक रूप से शिक्षा प्रदान करता रहा है । शिक्षक के ज्ञान उसकी व्याख्या, विश्लेषण और पुनर्व्याख्या की क्षमता की जांच प्राय: परिषदों में होती रहती थी । शिक्षक के लिए यद्यपि आज की तरह के प्रशिक्षण, डिग्री व परीक्षा की व्यवस्था नहीं थी तथापि उनके ज्ञान व क्षमता की परीक्षा सदैव होती रहती थी । उस समय शिक्षक चुनने का माध्यम मानीटर प्रणाली भी थी । जातक काल में शिक्षक नए विद्यार्थीयों को ज्ञान देने का कार्य वरिष्ठ विद्यार्थीयों की सहायता से करते थे । जो वरिष्ठ विद्यार्थी इस योग्यता के होते, उन्हें शिक्षक अपने पास अधिक समय तक रखते ताकि वे अध्यापन का गहरा ज्ञान प्राप्त कर सकें । जब ज्ञान-अधिग्रहण व परिपक्वता से अच्छे शिक्षक बन जाते, तो फिर वे स्वतंत्र रूप से शिक्षण कार्य प्रारम्भ कर देते थे । अच्छे शिक्षकों के संपर्क में रहकर ही बिना औपचारिक प्रशिक्षण के उस समय शिक्षण व्यवस्था का ज्ञान प्राप्त किया जाता था ।

आज की तरह ना तो पहले विद्यालय होते थे और ना ही आज की तरह शिक्षकों की नियुक्ति होती थी, नियुक्ति का आधार उनकी ख्याति और योग्यता होती थी। शिक्षक की संप्रेषण शक्ति (Communication-Power) पर ही उनका चयन एवं कार्य होता था । ज्ञानी या विद्वान उसे ही कहा जाता था जो शास्त्रों का पूर्ण जानकार हो और उनकी भली भांति व्याख्या कर सके और ज्ञान जिसके व्यक्तित्व में ही समा गया हो । शास्त्र ज्ञान के साथ-साथ उच्च चरित्र और आत्मिक ज्ञान वाला व्यक्ति ही शिक्षक बनने योग्य अधिकारी होता था ।

कालान्तर में जब जाति प्रथा काल प्रादुर्भाव हुआ तो शिक्षण कार्य भी एक जाति विशेष का कार्य बन गया। यह ब्राह्मण जाति का पैतृक व्यवसाय हो गया, एक जाति का व्यवसाय होने के कारण योग्यता का स्तर घटना भी स्वाभाविक था । शिक्षण का उद्देश्य भी ज्ञान को केवल कण्ठस्थ करना ही रह गया । इस प्रकार शिक्षण के यांत्रिक होने के साथ-साथ शिक्षकों की अन्त: क्रिया में भी परितर्वन आने लगा ।

भारत ही नहीं वरन् संपूर्ण विश्व में आर्थिक, सामाजिक व अन्य कारकों में एक अन्तराल है । ऐसी परिस्थिति में समाज का एक वर्ग जहां औपचारिक संसाधनों द्वारा शिक्षा प्राप्त कर रहा है । वही दूसरी ओर ऐसा वर्ग भी है जहां मूलभूत सुविधाओं का भी अभाव है, गरीबी रेखा व उससे नीचे (BPL) जीवन यापन करने वाले स्कूल, शिक्षक, पाठ्यक्रम की क्रियान्विति तथा अन्य शैक्षिक उपकरणों से वंचित है, ऐसे बालकों को मानवीय, राजनैतिक व सामाजिक समानता का दर्जा प्रदान करने वाले प्रशिक्षित वर्ग के अलावा उस समुदाय के कुछ अप्रशिक्षित किन्तु थोड़े पढ़े लिखे लोग स्वयंसेवक के रूप में साधन हीन समुदाय के बच्चों को पढ़ने के लिए प्रेरित करने तथा शिक्षा देने हेतु आगे आने लगे ।

12.2 विभिन्न प्रकार की शिक्षा योजनाएं (Different types of Education Planning (N.G.O))

सरकारी व्यवस्था के अतिरिक्त गैर सरकारी संगठन (Non Government Organization(NGO) द्वारा अनौपचारिक शिक्षण केन्द्रों की स्थापना की गयी जो सरकार के सहयोग व समुदाय के लोगों की भागीदारी से कच्ची बस्ती तथा सामान्य सुविधाहीन बालकों को उनकी सुविधा के अनुसार मुफ्त पाठ्यक्रम (Open Curriculum), समयावधि (Time Duration), स्थान तथा परीक्षा व्यवस्था में लचीलापन (Flexibilty in Examination System) द्वारा राष्ट्रीय साक्षरता लक्ष्य में अपना योगदान कर रहे है। ऐसी ही अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों के रूप में कुछ मुख्य है - शिक्षाकर्मी, बेयरफूट शिक्षक, महिला मंडल, आगनबाडी, जनबोध, जन ज्ञान, रात्रि / प्रहर पाठशाला, भ्रमण शिक्षा केन्द्र तथा शिक्षा आपके द्वारा जैसी योजनाएं सामान्य शिक्षा के अभाव में न्यूनतम शैक्षणिक स्तर (आरंभिक शिक्षा - Elementary Education) को प्राप्त करने में निरन्तर प्रयत्नरत है ।

शिक्षाकर्मी (Shiksha karmi) - शिक्षाकर्मी योजना (SKP) की क्रियान्वित राजस्थान में 1987 में स्वीडिश अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग-अभिकरण से हुई । (SIDA) इस योजना का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से अलग-थलग दूर दर्राज के गांवों की विशेषकर बालिकाओं की पूर्व प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण तथा गुणात्मक सुधार करना है । प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण (UEE-Universalisation of Elementary Education,) के मुख्य ध्येय (Goal) को प्राप्त करने में आने वाली सबसे बडी बाधा अध्यापकों की अनुपस्थिति को पहचानना है । यह महसूस किया गया है कि दूर दरार्ज के गांवों में जहां प्राथमिक विद्यालय नहीं है और अध्यापक भी वहां रहते नहीं हैं । उसके कारण भी बालकों एवं अभिभावकों को शिक्षा प्राप्त करने में, जाने में कठिनाई तथा असुविधा होती थी । इस कारण से विद्यालय छोड कर जाने वालों की संख्या में काफी वृद्धि हुई । शिक्षाकर्मी योजना (SKP) के अन्तर्गत नियमित शिक्षकों के स्थान पर वही के स्थानीय अध्यापकों को रखा गया जो कम योग्यता वाले थे किन्तु विशेष प्रशिक्षण प्राप्त थे । शिक्षाकर्मी स्थानीय व्यक्ति है जो कम शैक्षिक योग्यता पुरूषों के लिए कक्षा आठ तथा महिलाओं के लिए कक्षा पांच तक की शिक्षा है । आधारभूत योग्यता की कमी से उभरने के लिए शिक्षाकर्मी योजना द्वारा अभिप्रेरणात्मक (Induction Programme) एवं समय समय पर पुनर्श्चया (Refreser) कार्यक्रम द्वारा प्रशिक्षण देते हैं शिक्षाकर्मी योजना की निम्नलिखित बडी उपलब्धियां है -

1. से 14 आयु वर्ग के बच्चों की संख्या में छः गुना वृद्धि शिक्षाकर्मी स्कूल तथा प्रहर पाठशाला (सुविधानुसार समय वाला विद्यालय) के नामांकन में वृद्धि हुई है ।
2. शिक्षाकर्मी गांवों के प्राथमिक विद्यालय के 6 से 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों में वर्तमान समय तक 37 प्रतिशत से 83 प्रतिशत तक महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है ।
3. छात्र एवं छात्राओं का नामांकन 50 प्रतिशत से 93 प्रतिशत बढा है । छात्राओं की संख्या में 21 प्रतिशत से 76 प्रतिशत तक वृद्धि हुई है ।

4. शिक्षाकर्मी विद्यालयों के बच्चों की मासिक उपस्थिति से 58 प्रतिशत से 64 प्रतिशत तक सुधार हुआ ।
5. योजना वाले स्कूलों में जो पांच वर्ष से अधिक समय से चल रहे है उनमें बालकों का ठहराव पर्याप्त रूप से सुधर रहा हैं |
6. 1979 असमर्थ बच्चे शिक्षाकर्मी स्कूल के अभिन्न अंग बने है |
7. शिक्षाकर्मी विद्यालय के 55 प्रतिशत अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के तथा 19 प्रतिशत बालक पिछडे वर्ग से संबंधित है ।
8. शिक्षाकर्मी योजना की सबसे बडी उपलब्धि 6 से 14 वर्ष के आयु के बच्चों का 576 गांवों में 100 प्रतिशत नामांकन है जो कि योजना के चौथाई गांवों की योजना में भी ज्यादा है|
9. शिक्षाकर्मी योजना ने 2600 गांव शिक्षा समिति (VECS) समुदाय को शामिल करने व प्राथमिक शिक्षा में क्रमोन्नत करने तथा ग्राम स्तर योजना, निरीक्षण व प्रबंध के सुधार को स्कूल को प्रभावी बनाने के लिए किया गया।
10. बालिका शिक्षा के क्रमोन्नत करने के लिए व्यूह रचना (Strategy) निर्मित की गयी ।
11. वर्तमान में 22,138 लड़कियों को प्रहर पाठशालाओं के अधिगमकर्ता को 68 प्रतिशत किया गया । प्रहर पाठशालाएं दूर दर्राज के गांवों के बालकों विशेषकर बालिकाओं की शिक्षा उनके स्थान पर देने के लिए पर्याप्त लचीली बनाई गयी ।
12. छोटे बच्चों के लिए विशेषकर बालिकाओं के लिए जो लंबी दूरी के विद्यालयों में नहीं जा सकती । उनके लिए आंगन ,पाठशाला (Country School) शुरू किये गये । वर्तमान में 97 आंगन पाठशाला / (APS) 4023 बच्चों के साथ कार्यरत है । सुविधाओं के क्रम में बालिकाओं के नामांकन में वृद्धि करने के लिए जहां पढी लिखी महिलाएं शिक्षाकर्मी स्कूलों में नहीं है, वहां 14 महिला प्रशिक्षण केन्द्र ग्रामीण क्षेत्रों में शुरू किये गये जिनमें 334 महिलाएं प्रशिक्षित की गई ।

बेयर फुट / (अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति की शिक्षा (Barefoot shiksha) - शिक्षक तथा विद्यालय व उससे जुड़ी सुविधाओं से वंचित ऐसा समूह बालकों का है जिनके पास जीवन जीने की पर्याप्त सुविधाएं भी नहीं है उनके लिए ऐसे शिक्षक का योगदान उल्लेखनीय है जो बिना कहे, सुने चुपचाप द्वास-द्वार जाकर साक्षरता के लिए ऐसे स्थान पर जाते हैं जो कक्षा-कक्ष की सुविधाओं से परे हैं और जहां अनेक सीमाएं हैं । ऐसे बच्चों को ना तो शिक्षक दिवस की जानकारी है और ना उससे जुडे अन्य तथ्यों की ।

बेयरफुट (Barefoot) शिक्षक कौन है? ये वो महिला शिक्षक है जो गांव कच्ची बस्ती में रहती है कम पढे लिखे, बिना छत के आधा तन ढंके हुए बच्चों को शिक्षा देती है । इन साधारण लोगों के लिए साधारण चीजें भी असाधारण होती हैं । वे लोग असाधारण तरीकों से हमारी तरह के साधारण कार्य करते है । भारत में स्कूलों से वंचित लाखों बालक है जो गरीबी का जीवन यापन करते है और उनके पास स्कूलों में बिताने के लिए आठ घंटे का समय बिताने की परिस्थिति भी नहीं है । जिनके लिए असंगतपूर्ण पाठ्यक्रम के साथ कार्य करना पडता है । यदि इन बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था नहीं की गयी तो ये बाल-मजदूरी से पीड़ित होंगे । यह विश्वास

किया जाता है कि इस उम्र के बालकों का स्थान स्कूल है ना कि अन्य कही कार्य करने का स्थल।

इन क्षेत्रों की सबसे बडी बाधा स्थान की कमी है, इनकी कक्षाएं मंदिर, राजनीतिक पार्टी के कार्यालय, अथवा वृक्षों के नीचे लगती हैं, इनकी कक्षाएं ऐसे स्थानों पर लगती हैं जो स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उपयुक्त नहीं हैं, इसके अलावा इनके मकान भी स्थायी नहीं होते, इनको आवश्यकता पडने पर गिरा दिया जाता है । ऐसे में इन बालकों के स्थायी निवास की भी समस्या है । इसके अलावा सूखे इलाकों में पानी की कमी भी गंभीर समस्या है । टेंकरों द्वारा पानी के वितरण से जनसंख्या का अधिकांश भाग टैंकरों के आस-पास रहना पसंद करता है । अस्तित्व के लिए संघर्ष की स्थिति के इर्द-गिर्द जिंदगी घूमती है, स्थायी राजनैतिक प्रभाव तथा राजनीतिक दलों के बीच प्रतिस्पर्धा भी साक्षरता केन्द्रों के कार्यों को प्रभावित करती है ।

अनौपचारिक शिक्षा का कोई सहयोगी ढांचा भी नहीं है, केवल स्वयं के साहस एवं उत्साह, परिश्रम व समझ का ही सहयोग है । उनके स्वयं की सृजनात्मकता, उसका आत्मविश्वास तथा उसकी उदारता बच्चों को दो-तीन घंटों के लिए विद्यालय में खींच लाती हैं । ऐसी परिस्थिति में बेयरफुट शिक्षक अपने असीम प्यार से सिखाने के लिए सर्वोच्च सत्ता के लिए प्यार के सानिध्य में रहती है । विपरीत परिस्थितियों में काम करने वाली उन महिलाओं के लिए भविष्य की संतति को शिक्षित करना एक चुनौती है जो सब प्रकार के साहसी कार्यों द्वारा किया जाता है ।

बालवाड़ी शिक्षक प्रशिक्षण में भी ऐसे ही प्रशिक्षण केन्द्र कार्यरत् है जो सामाजिक संगठनों के सहयोग से बालकों की न्यूनतम स्तर की शिक्षा के लिए तीन सौ अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों में चल रहा है ।

शायद बेयफुट शिक्षक अनौपचारिक शैक्षिक कार्यक्रम (NFEP) का सर्वोच्च घटक (Component) है । अनुभव यह बताते हैं कि बालक मित्रवत् वातावरण में ज्यादा जल्दी सीखते हैं । विशेषकर उन महिलाओं से जो उन्हें समझती है । कच्ची बस्तियों में अधिकांश महिलाएं कक्षा 10 तक पढी लिखी के रूप में पहचानी जाती है उनके चयन का अन्य निर्धारक बच्चों के लिए प्यार तथा कच्ची बस्तियों में सीखाने के लिए प्रतिष्ठित है । ये सखी महिला मंडल के महत्वपूर्ण सदस्य भी हैं ।

वे कक्षा संचालन एवं प्रबंधन के लिए विशेष रूप से चल रहे प्रशिक्षण प्राप्त कर रही हैं । सहायक सामग्री का निर्माण व उपयोग करना सीखती हैं, शैक्षिक भ्रमण तथा सुदूरवर्ती यात्रा की व्यवस्था करना सीखती है । इसके द्वारा शिक्षा के प्रति जागरूकता से शिक्षा की आवश्यकता का महत्व बताती है । वे नियमित स्कूली शिक्षकों से अन्तःक्रिया बच्चों को समझने के लिए करती हैं। बेयरफुट शिक्षक एन.एफ.ई.पी के कार्यक्रमों की भी व्यवस्था करती है, ये अन्य कच्ची बस्तियों के बेयरफुट शिक्षकों को प्रशिक्षित भी करने में सहयोग देती है ।

इस प्रकार बेयरफुट शिक्षक बेसहारा दूर दर्राज कच्ची बस्तियों के बालकों के लिए विपरीत परिस्थिति में शिक्षा प्रदान करने का महत्वपूर्ण दायित्व निभाती है । इस कार्य को वो मन से (By Heart) करती है तथा बालकों को अपनापन देकर उन्हें शिक्षा के लिए प्रेरित करती है ।

बोध शिक्षा (Bodh Siksha) - बोध शिक्षा का संप्रत्यय (Concept) पूर्व विद्यालय घटकों पर बल देने का प्रयास है । ऐसा महसूस किया गया है कि गरीबी के कारण अपने अभिभावकों को फुटकर कार्य द्वारा सहयोग देने अथवा छोटे भाई-बहनों की देखभाल करने

(क्योंकि उनके माता-पिता जीवन यापन के लिए मजदूरी करने जाते है) के कारण आरंभिक शिक्षा (Elementary Education) से वंचित तथा स्कूल जाने में असमर्थ बालकों के लिए तीन से पांच वर्ष तक के शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी शिक्षा की व्यवस्था करने का जनसहयोग द्वारा किया गया प्रयास है । इन बच्चों के लिए पूर्व विद्यालय में अलग से विभाग (Section) बनाये गये है । इस समय 25 बोधशाला (पूर्व विद्यालय सहित) शहरी क्षेत्रों में खोले गये हैं । जिनमें 34 माँ शिक्षिका पूर्व विद्यालय सहित ग्रामीण क्षेत्रों में क्रियाओं का संचालन कर रही हैं । कुछ विद्यालयों में पूर्व विद्यालय शिक्षक भी है । शहरी क्षेत्रों में बोधशाला, मां शिक्षिका तथा पूर्व विद्यालय शिक्षक संयुक्त रूप में कार्य करते हैं

इनमें बालकों को उम्र के आधार पर 'शाला पूर्व' तथा 'शाला आरंभ' समूह में बांटा गया है । जो कि पूर्व बाल्यावस्था शिक्षा के समकक्ष है । इसमें एक स्थिति से दूसरी स्थिति में दोनों समूहों का एक साथ आसानी से संबंध बनाया जा सकता है । पाठ्यचर्या में बदलाव के लिए भी यह प्रयासरत है । एक स्पष्ट पाठ्यचर्या की उत्पत्ति प्राचीन ज्ञान एवं सूझबूझ, मौखिक साहित्य, सांस्कृतिक मूल्य एवं समुदाय का नजरिया, मौखिक साहित्य में होती है। क्षेत्र में अभ्यास का सबसे अच्छा उपागम सांस्कृतिक मूल्यों तथा विश्व परिदृश्य के बीच तुलना करना है । प्रतिभागियों की स्थायी समीक्षा अध्यापकों के समूह से साप्ताहिक, मासिक तथा वार्षिक कार्यशालाओं के परिणामों से क्रियाओं को स्थायी करना तथा बोध दर्शन व शिक्षण विधियों को सिद्धान्त व प्रयोग में प्रयास किया जाता है ।

समस्त शिक्षक पूर्व प्रेरणा, वार्षिक तथा मासिक पाठ्यक्रम द्वारा आपस में जुडते हैं व अभिप्रेरणा द्वारा शिक्षा के दर्शन, पूर्व विद्यालय की खेल क्रियाओं, स्वास्थ्य एवं शिक्षा, बाल मनोविज्ञान, शिक्षण विधियों तथा शिक्षण शैली (Pedagogy) तथा पूर्व विद्यालय बालकों के लिए उपयोग में लाते हैं ।

प्रत्येक पूर्व विद्यालय एक व्यापक रंगीन तथा बाल-मित्र तथा शिक्षण सहायक सामग्री से युक्त होता है । प्रत्येक बालक अपनी पसंद के अनुसार कार्य करने को स्वतंत्र होता है । यह विश्वास किया जाता है कि बालक प्राकृतिक वातावरण में अधिक अच्छा सीखता है । बोध शिक्षा इसका प्रयास करता है ।

बोध शिक्षा का स्वयं का कार्य पूर्व विद्यालय कार्यक्रम के प्रशिक्षण को जड़ की गहराई तक कार्यकर्ताओं तक पहुँचाने के लिए संगठनों का निर्माण करके करता है ।

इस प्रकार साधन हीन बालकों के लिए मूलभूत सुविधाओं द्वारा शिक्षा प्रदान करने की प्रेरणा बोध दर्शन का योगदान है ।

12.3 सुगमकर्ता (Facilitator)

अनौपचारिक शिक्षा का सुगमकर्ता (Facilitator of Non Formal Education) - औपचारिक शिक्षा के अभाव में अथवा जहां औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था नहीं हो सकती, विशेषकर कच्ची बस्ती तथा सुविधा रहित क्षेत्रों में जहां गरीबी के कारण बालक अपनी न्यूनतम शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ हो, ऐसी परिस्थिति में अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम (NFEP-Non Formal Education programme) का उद्देश्य कच्ची बस्ती के बालकों के शिक्षा के स्तर को

सुधार करना है । इस प्रकार के कार्यक्रम के अन्तर्गत अनेक सुविधाओं तथा व्यवस्थाओं के द्वारा उनकी शिक्षा के लिए प्रयास किया जा रहा है -

1. कच्ची बस्तियों के लिए आवासीय बेयरफुट शिक्षकों को सहयोग करना ।
2. अनौपचारिक शिक्षा योजना के लिए कमरों का सहयोग करना ।
3. प्राथमिक शिक्षा के लिए बड़े बच्चों को तैयार करना |
4. असक्षम बालकों को औपचारिक पाठ्यक्रम से जोड़ना, जिससे वे विद्यालय छोडकर नहीं जायें ।
5. विद्यालय न जाने वाले बालकों, विशेषकर लडकियों के लिए शैक्षिक कक्षाओं का संचालन करना ।
6. बालकों की शिक्षा के लिए उनके अभिभावकों को शामिल करना ।
7. व्यस्क आवासीय क्षेत्रों की साक्षरता में वृद्धि करना ।
8. शिक्षा के अनौपचारिक अभिकरणों - बेयरफुट शिक्षक, शिक्षाकर्मी, सखी महिला मंडल, आंगनबाडी आदि केन्द्रों तथा स्थानीय संगठनों को शामिल करना व सहयोग करना ।

अनौपचारिक शिक्षा योजना के मुख्य घटक :-

1. शिक्षाविद्
2. बेयरफुट शिक्षक
3. पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियां
4. कक्षा-कक्ष
5. स्कूल पूर्व कक्षाएं
6. पूरक एवं विशेष कक्षाएँ ।
7. शैक्षिक भ्रमण एवं दूर की यात्राएँ ।
8. अभिभावक एवं समुदाय को शामिल करना ।

खुले विद्यालय के विद्यार्थीयों के सुगमकर्ता (Facilitator of open school Students) - खुला विद्यालय की संकल्पना ऐसे बालकों की शिक्षा का प्रयास है जो किन्ही कारणों से समय पर शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ रहे भारत जैसे देश में जहां बालकों को अपने अभिभावकों को आर्थिक सहयोग प्रदान करना होता है । साथ ही बालिकाओं की शिक्षा की अवहेलना या उनका कम उम्र में विवाह करने जैसी सामाजिक कुप्रथाओं के कारण न्यूनतम शिक्षा प्राप्त करने में वंचित रहे बालकों के लिए ऐसी शिक्षा व्यवस्था की जरूरत महसुस की जाने लगी। जिसमें किसी भी प्रकार की आयु कक्षा, समय निर्धारित अवधि में पाठ्यक्रम को पूर्व करने, परीक्षा की जटिलताओं की बाध्यता अथवा बंधन नहीं हो । पाठ्यक्रम की विविधता एवं लचीलापन आदि समस्त प्रयास जरूरत मंद बालकों की शिक्षा के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है । इसके साथ ही आरंभिक शिक्षा की सर्वव्यापकता एवं अनिवार्यता के कारण भी ऐसे शिक्षा केन्द्रों का संगठन एवं क्रियान्वयन किया गया जहां शिक्षा से वंचित रहे बालकों की शिक्षा की व्यवस्था सुचारू रूप से की जा रही है ।

खुले विद्यालय के सुगमकर्ता के रूप में इनकी आवश्यकतानुरूप योग्य शिक्षक, पाठ्य सामग्री (Study Material), संपर्क शिविर (Contact Camp), सलाहकारी कक्षाएं (Counselling Classes) जहां वे अपनी कठिनाइयों को दूर कर सकें, सैद्धान्तिक एवं अभ्यास

कार्य, यथासंभव निकटतम शिक्षा केन्द्र तथा अवकाश के समय शिक्षण कार्य जिससे वे आसानी से आ सकें तथा ग्रेडिंग प्रणाली (Grade System) तथा निश्चित अवधि में पाठ्यक्रम पूर्ण न करने पर पुन: अवसर उपलब्ध कराना, परीक्षा प्रणाली में सरलता आदि ऐसे प्रयास है जिनके द्वारा शिक्षा से वंचित रहे बालक अथवा वे व्यस्क जिन्होंने न्यूनतम आरंभिक शिक्षा ग्रहण नहीं की हो उनके लिए मुक्त विद्यालय (Open School) एक वरदान के रूप में अनूठा प्रयास है जो शिक्षा के प्रसार तथा सार्वजनीकरण की श्रृंखला में विशेष वर्ग ही नहीं वरन् सामान्य वर्ग के बालकों के लिए भी शिक्षा की व्यवस्था करता है ।

12.4 सारांश
(Summary)

शिक्षक की सामाजिक पृष्ठभूमि (Social Background of Teacher) - शिक्षक की सामाजिक पृष्ठभूमि में शिक्षक की संकल्पना (Concept) औपचारिक तथा अनौपचारिक रूप में अति प्राचीन काल से रही है, समयानुसार शिक्षा के उद्देश्यों व आवश्यकता में परिवर्तन के कारण शिक्षकों की भूमिका में भी परिवर्तन आया और आज शिक्षक ज्ञान प्रदान करने के साथ-साथ जीवन जीने की समस्त क्रियाओं से अवगत कराता है इसलिए उसका कार्य क्षेत्र, दायित्व तथा शिक्षण देने के माध्यम में परिवर्तन आया है । शिक्षक एक मार्गदर्शक के रूप में न केवल वर्तमान तक सीमित है । अपितु वह भविष्यशास्त्र (Education For Future) की शिक्षा द्वारा अधिगमकर्ता को पूर्ण बनाता है ।

शिक्षाकर्मी - Shiksha karmi-SKP 1987 से स्वीडिश अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग अभिकरण (SIDA) के द्वारा राजस्थान में सामाजिक आर्थिक दृष्टि से अलग दूर दर्राज के गांवों की विशेषकर बालिकाओं की पूर्व प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण (Universalization) तथा गुणात्मक सुधार का प्रयास है|

विद्यार्थीयों के नामांकन (Enrollment) में वृद्धि, अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों (Informal study centers) की स्थापना तथा उनका विकास, प्रहर पाठशालाओं (समय का निर्धारण-सीखने वाले की सुविधानुसार) समुदाय के निवासियों को शिक्षा प्रदान करने हेतु प्रेरित करना आदि अनेक कार्यक्रमों से इनकी शिक्षा की व्यवस्था गैर सरकारी संगठन (NGO) का प्रयास है ।

बेयरफूट शिक्षक (Barefoot Teachers) - कच्ची बस्ती तथा गरीबी में जीवन यापन करने वाले बालकों को विशेषता बालिकाओं की अनिवार्य आरंभिक शिक्षा के लिए उन बस्ती की रहने वाली कम पढी लिखी किन्तु विशेष रूप से प्रशिक्षित महिलाओं द्वारा महिला मंडल, आगनबाड़ी, कार्यक्रम द्वारा आवास व पानी की चिन्ता से ग्रस्त बालकों की शिक्षा की व्यवरथा गैर सरकारी संगठन (NGO) द्वारा की जाती है ।

बोध-शिक्षा (Bodh Siksha) - गरीबी अथवा छोटे भाई बहनों की देखभाल के कारण स्कूल जाने में असमर्थ बच्चों के लिए 'शाला पूर्व' तथा 'शाला आरंभ' समूह के आयु वर्ग द्वारा बाल्यावस्था में शिक्षा की व्यवस्था है । इन बालकों के लिए पाठ्यक्रम का लचीलापन तथा मौखिक साक्षरता, सांस्कृतिक मूल्य, समूदाय का शान बोध दर्शन एवं शिक्षण विधियों द्वारा जन-

बोध के रूप में विकास किया जा रहा है । इनके लिए शिक्षकों को आरंभ में पूर्व प्रेरणा, मासिक रिफ्रेशर (Refresher) (पुनश्चार्या) कोर्स के द्वारा पूर्व विद्यालय खेल गतिविधियों, स्वस्थ्य व शिक्षा की जानकारी दी जाती है । शिक्षण की विधियों हस्तशिल्प कार्य तथा शिक्षक सामग्री व मनोविज्ञान के ज्ञान द्वारा प्रशिक्षित किया जाता है ।

अनौपचारिक शिक्षा (Non Formal Education-NFE) - औपचारिक शिक्षा के अभाव तथा उससे वंचित रहने वाले बालकों के लिए आरंभिक शिक्षा के रूप में सामान्य जानकारी, स्वास्थ्य आदि तथ्यों का शिक्षण अनौपचारिक शिक्षण केन्द्रों द्वारा जैसे-साक्षरता कार्यक्रम, आंगन-बाडी, महिला मंडल, जन-बोध, शिक्षाकर्मी, बेयरफूट, प्रहर पाठनशाला आदि में विशेष रूप में प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों द्वारा आवश्यकता व सुविधानुसार लचीला पाठयक्रम, परीक्षा पद्धति की सरलता व बालकों की उपस्थिति व नामांकन में वृद्धि पर बल दिया जाता है । इस कार्यक्रम में सरल व रोचक तथा प्रेरक शिक्षण विधियों द्वारा सीखने में बालक की रूचि व ठहराव में वृद्धि करता है ।

खुला विद्यालय के शिक्षक व उसके सुगमकर्ता (Open School Teacher and Their Facilitator) - किसी कारण से मूलभूत आरंभिक शिक्षा से विशेष वर्ग तथा सामान्य वर्ग के बालक जो शिक्षा से वंचित रह गये हो उनके लिए संपर्क शिविर (Contact Camp) सलाह कक्षाएं (Counsellling Classes) पाठ्यक्रम की अवधि की मुक्तता व परीक्षा प्रणाली में ग्रेडिंग प्रणाली आदि लचीला प्रक्रियाओं द्वारा सुविधानुसार कक्षाएं व परीक्षा द्वारा वांछित आरंभिक शिक्षा योग्य व प्रशिक्षित शिक्षकों द्वारा की जाती है । इनमें विद्यालय की सीमाओं का बंधन भी नहीं होता है । ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में मुक्त विद्यालय कार्यरत् है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. शिक्षक संकल्पना की उत्पत्ति भारत में क्यों हुई ?
2. शिक्षकों की नियुक्ति का चयन का आधार क्या होता था ?
3. असमर्थ बालकों के शिक्षण का उद्देश्य क्या था ?
4. शिक्षाकर्मी योजना का प्रमुख उद्देश्य क्या था ?
5. शिक्षाकर्मी योजना में शिक्षण का कार्य करता है ?
6. बेयरफूट शिक्षक कौन होते हैं?
7. बेयरफूट शिक्षकों के सामने सबसे बडी समस्या क्या है?
8. जो बालक अपने भाई-बहनों तथा अभिभावकों को सहयोग देने के लिए विद्यालय नहीं जा पाते उनके लिए कौनसी शिक्षा व्यवस्था है?
9. बोध दर्शन के अनुसार किन शिक्षण विधियों के द्वारा बालकों को शिक्षित किया जा सकता है ?
10. अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों द्वारा बालकों को शिक्षित करने के लिए क्या-क्या प्रयास किए गए है ?
11. बेयरफुट शिक्षक, शिक्षाकर्मी, बोध शिक्षा योजना तथा अनौपचारिक शिक्षा का प्रमुख ध्येय क्या है ?

12. किसी कारण से शिक्षा से वंचित सभी वर्गो के लिए क्या महत्वपूर्ण प्रयास है?
13. किन शिविर एवं सलाहकारी कक्षाओं में खुले विद्यालय के बालकों को सुविधानुसार आवश्यकतानुसार शिक्षा दी जाती है?
14. शिक्षाकर्मी व बेयरफुट शिक्षकों के सामने मुख्य समस्या क्या है?
15. खुले विद्यालय की क्या विशेषताएं हैं?
16. अनौपचारिक शिक्षा के क्या लाभ हैं?
17. भारत में आरंभिक शिक्षा के सार्वजनीकरण एवं गुणात्मक सुधार में प्रमुख बाधायें क्या हैं?
18. खुले विद्यालय के विद्यार्थीयों के सुगमकर्ता कैसे होने चाहिए?
19. बोध शिक्षा योजना की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं?
20. यदि आपको किसी शिक्षा योजना से जुड़ना पड़े तो आप किस योजना को चुनना पसंद कारेंगे और क्यों?

12.5 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

1. डी. रामेश्वरी शर्मा, अध्यापक शिक्षा, उदयपुर, 2006
2. आर.ए.श्र्मी, शिक्षक शिक्षा के सिद्धान्त ।
3. अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों से प्रत्यक्ष संप्रेषण, जनबोध शिक्षा, नाहरी का नाका, जयपुर ।
4. रमाशंकर शुक्ला, अनिल शुक्ला, अध्यापक शिक्षा तब और अब ।

इकाई-13

अध्यापक की एक व्यावसायिक के नाते प्रगतिशील सामाजिक भूमिका

Progressive Social Role of a teacher as a Professional

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

13.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

13.1 प्रस्तावना (Introduction)

13.2 अध्यापक की एक व्यावसायिक के नाते प्रगतिशील सामाजिक भूमिका (Progressive Social Role of a teacher as a Professional)

13.2.1 अध्यापक और समाज (Teacher and Society)

13.2.2 अध्यापक की विभिन्न भूमिकाएं (Various role of a teacher)

13.3 अध्यापन व्यवसाय के सम्बन्ध में नैतिक प्रश्न (Ethical questions related to teaching profession)

13.4 अध्यापन के प्रति अध्यापकों की अभिवृत्ति (Attitude of teachers towards teaching)

13.5.1 अध्यापक के समक्ष चुनौतियाँ (Challenges before teacher)

13.5 एक व्यावसायिक के नाते स्व-विकास की योग्यता (Ability to self development as a professional)

13.5.1 प्रभावशाली अध्यापक के गुण (Qualities of an effective teacher)

13.5.2 अध्यापक प्रशिक्षण (Training of teacher)

13.6 सारांश (Summary)

13.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

अध्यापक की एक व्यावसायिक के नाते प्रगतिशील सामाजिक भूमिका, अध्यापन व्यवसाय से जुड़े नैतिक प्रश्न, अध्यापन के प्रति अध्यापकों की अभिवृत्ति, व्यावसायिक के रूप में स्वविकास की क्षमता

Progressive Social Role of a teacher as a Professional ,Ethical Questions related to Teaching Profession, Attitude of a Teachers towards teaching,ability to self development as a Professional

13.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप-

- भारतीय समाज में अध्यापक के महत्व को प्रतिपादित कर सकेंगे।
- प्राचीन एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अध्यापक की स्थिति को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- अध्यापक की विभिन्न भूमीकाओं का वर्णन कर सकेंगे ।
- अध्यापन व्यवसाय के महत्त्व को बता सकेंगे ।
- अध्यापन व्यवसाय के सम्बन्ध में नैतिक प्रश्नों को सूचीबद्ध कर सकेंगे ।
- अध्यापन के प्रति अध्यापकों की अभिवृत्ति की व्याख्या कर सकेंगे ।
- अध्यापक के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों का वर्णन कर सकेंगे ।
- अध्यापक के स्व-विकास की आवश्यकता को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- प्रभावशाली अध्यापक के गुणों का उल्लेख कर सकेंगे ।
- अध्यापन के स्व-विकास में अध्यापक प्रशिक्षण के महत्व को बता सकेंगे ।
- प्रशिक्षण के सेवापूर्व, सेवारम्भ कालीन एवं सेवा कालीन जैसे विभिन्न चरणों की आवश्यकता का औचित्य स्पष्ट कर सकेंगे ।
- अध्यापकों के विकास के लिए सामान्यत: प्रयुक्त कुछ प्रणालियों का नामोल्लेख और व्याख्या कर सकेंगे ।

13.1 प्रस्तावना
(Introduction)

अध्यापक का कार्य बहुत महत्वपूर्ण है । प्रसिद्ध विद्वान एच. जी. वैल्स (H.G.Wells) ने उसके कार्य का महत्व देखते हुए उसे 'राष्ट्र का निर्माता' कहा है ।

शिक्षा अधिकारी, नेता, राजनीतिज्ञ और अन्य इस बात को स्वीकार करते हैं कि अध्यापक को भारत के शैक्षिक, सामाजिक, यहाँ तक कि राजनैतिक पुनर्निमाण में महत्वपूर्ण कार्य करता है अध्यापक ही सम्पूर्ण शिक्षा-पद्धति का निर्देशन एवं संचालन करता है जो कि अन्त में राष्ट्र के बहुमुखी विकास को प्रभावित करती है । इसी पर विद्यालय, ग्राम, राष्ट्र और वास्तव में मानव जाति का भविष्य निर्भर है । कितनी ही सुन्दर इमारत, शक्तिशाली पाठ्यक्रम, मूल्यवान उपकरण हों, वे तब तक उपादेय नहीं हो सकते, जब तक ऐसे अध्यापक न हों, जो अपने व्यवसाय की महानता और सम्बन्धित उत्तरदायित्वों से सुपरिचित न हों । अध्यापक छात्रों की आदतों, रूचियों, व्यवहारों और चरित्र आदि बनाने और बदलने में महत्वपूर्ण कार्य करता है । डॉ. राधाकृष्णन ने ठीक ही कहा है कि "समाज में अध्यापक का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । वह एक ऐसा केन्द्र बिन्दु है जहाँ से बौद्धिक परम्पराएं तथा तकनीकी कुशलताएं एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को संचारित होती है । वह सभ्यता के दीप को प्रज्जवलित रखने में सहायता प्रदान करता है । वह केवल व्यक्ति का मार्ग-दर्शन ही नहीं करता बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र के भाग्य का निर्माण करता है । अत: अध्यापकों को समाज के प्रति अपने विशिष्ट कर्त्तव्य को पहचानना चाहिए ।" इसी

सन्दर्भ में इस इकाई में आप जानेंगे कि अध्यापक की एक व्यावसायिक के नाते प्रगतिशील सामाजिक भूमिका किस प्रकार की होनी चाहिए? शिक्षण व्यवसाय से सम्बन्धित किन नैतिकताओं का ध्यान उसे रखना चाहिए? अध्यापन के प्रति अध्यापकों की किस प्रकार की अभिवृत्ति होनी चाहिए? तथा व्यावसायिक के नाते स्व-विकास के लिए उसमें कौन-सी योग्यताएं होनी चाहिए?

13.2 अध्यापक की एक व्यावसायिक के नाते प्रगतिशील सामाजिक भूमिका (Progressive Social Role of a teacher as a Professional)

किसी भी राष्ट्र की उन्नति उस राष्ट्र की शिक्षा पद्धति पर निर्भर करती है तथा अध्यापक शिक्षा पद्धति का केन्द्र बिन्दु है । भारतीय समाज में अति प्राचीन काल से ही अध्यापक का स्थान सर्वोपरि माना गया है । वेदों और उपनिषदों तथा अन्य भारतीय ग्रन्थों में अध्यापक के महत्व को स्पष्ट किया गया है । स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने प्रसिद्ध गन्ध 'सत्यार्थ प्रकाश' में अध्यापक को देवताओं के समकक्ष बताते हुए कहा है- "मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव ।" अर्थात् बालक के माता, पिता, आचार्य (अध्यापक) तीनों ही देवता होते हैं ।

अध्यापक का पद ईश्वर के समकक्ष बताते हुए कहा गया है -

गुरूर्ब्रह्मा, गुरूविष्णु: गुरूर्देवो महेश्वर: ।
गुरू: साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरूवे नम: । ।

अर्थात् भारतीय समाज में माने जाने वाले तीनों प्रमुख देवता ब्रह्मा, विष्णु और महेश गुरू (अध्यापक) ही है साक्षात् परब्रह्म भी गुरू हैं और मैं उस परम गुरू को नमस्कार करता हूँ ।

कबीर ने भी गुरू को ईश्वर से उच्च स्थान देते हुए कहा है-

गुरू गोविन्द दोउ खड़े, काके लागू पाय ।
बलिहारी गुरू आपने, गोविन्द दियो बताय । ।

अर्थात् गुरू (अध्यापक) ओर गोविन्द (ईश्वर) दोनों मेरे सामने खड़े हैं । मैं पहले किसके चरणों में नमन करूँ? हे गुरू! आप ही की कृपा है कि आपने मुझे ईश्वर के बारे में बताया, अत: मैं तो आपको अधिक महान मानता हूँ ।

आदर्शवादियों ने शिक्षक को महत्त्वपूर्ण स्थान देते हुए इस बात को माना है कि शिक्षक के बिना छात्र कुछ भी करने में असमर्थ हैं । शिक्षक ही छात्रा का समुचित और संतुलित विकास करने में सक्षम है । यह फ्रॉबेल के कथन से स्पष्ट हो जाता है । उन्होंने कहा है- "विद्यालय बाग है, छात्र कोमल पौधा है और शिक्षक कुशल माली है। वह अपनी कुशलता से पौधे का सर्वोत्तम और सन्तुलित रूप से विकास करता है ।"

प्रो. हुमायूँ कबीर ने अध्यापक का महत्त्व बताते हुए कहा है "अच्छे अध्यापकों के बिना शिक्षा की सर्वोत्तम पद्धति भी सफल नहीं हो सकती । अच्छे अध्यापकों से शिक्षा पद्धति के दोषों को भी दूर किया जा सकता है ।"

शिक्षक के महत्त्व का उल्लेख करते हुए मुदालियर शिक्षा आयोग ने कहा हैं कि "हम इस बात से पूर्णरूपेण सहमत हैं कि शिक्षा के पुनर्निमाण में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व अध्यापक है । उसके वैयक्तिक गुण, उसकी शैक्षिक योग्यताएं, उसका व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा विद्यालय

एवं समुदाय में उसका स्थान विद्यालय की प्रसिद्धि तथा सामुदायिक जीवन पर उसका प्रभाव उसमें काम कर रहे अध्यापकों पर आधारित होता है ।

कोठारी शिक्षा आयोग ने शिक्षा में अध्यापक के महत्त्व को स्पष्ट करते हए कहा है कि "शिक्षा को गुणात्मक रूप से प्रभावित करने वाले सभी तत्वों में अध्यापक के गुण, कुशलता एवं चरित्र का महत्व निःसंदेह सर्वोपरि है ।"

उपर्युक्त सभी कथन अध्यापक का महत्त्व स्पष्ट करते हैं । अध्यापक विद्यार्थीयों की आकांक्षाओं के अनुरूप उनका सर्वागीण विकास कर राष्ट्र एवं समाज के लिए उपयोगी नागरिक बनाने की दृष्टि से अपनी विद्वता व सृजनात्मकता तथा अन्य गुणों का प्रयोग करता है । वह उचित शिक्षण पद्धतियों का प्रयोग करता हुआ विषय सामग्री को छात्रों के समक्ष रोचक एवं प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है । वह आवश्यकतानुसार उचित निर्देशन प्रदान करता है । वह अभिभावकों से मधुर सम्बन्ध बनाकर उन्हें विद्यालय के कार्यक्रमों में सहभागी बनाता है तथा समुदाय को विद्यालय के निकट लाने का प्रयास करता है। वह प्रधानाध्यापक, अध्यापकों तथा विद्यालय के अन्य कर्मचारियों रो मधुर सम्बन्ध बनाकर विद्यालय में सामाजिक वातावरण निर्मित करने का प्रयास करता है। इस प्रकार विद्यालय के सम्पूर्ण वातावरण में अध्यापक की महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रकट होती है।

13.2.1 अध्यापक और समाज (Teacher and Society) - अध्यापक समाज का अभिन्न अंग है तथा समाज की संरचना एवं सामाजिक परिवर्तनों में अध्यापक की विशिष्ट भूमिका होती है। प्राचीनकाल में शिक्षकों को सर्वोपरि स्थान प्राप्त था। सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में शिक्षकों की राय महत्त्वपूर्ण समझी जाती थी। अध्यापक का व्यवसाय सभी व्यवसायों और कारोबारों में सबसे ऊँचें दर्जे का माना जाता था और शिक्षकों का स्तर सबसे ऊँचा था। उसे भगवान के समकक्ष माना जाता था। यह कहा जाता था कि राजा केवल अपनी स्वयं की राजधानी में ही सम्मान प्राप्त करता था परन्तु आचार्य सम्पूर्ण संसार में। राजाओं को शामिल करते हुए समाज सभी मामलों में सलाह और निर्देशन के लिए उनके पास जाते थे। आचार्य भाग और गुरू दक्षिणा के अतिरिक्त एक शिक्षक को अपने स्वयं के कामों की व्यवस्था के लिए समाज से पूर्ण सहायता प्राप्त होती थी। उसकी आर्थिक स्थिति आज के भारतीय शिक्षकों से नीची नहीं थी। वे अपने जीवन से सन्तुष्ट थे और विलासितापूर्ण जीवन में विश्वास नहीं रखते थे। वे अपने शिष्यों के लिए जितने अच्छे आदर्श और प्रतिमान थे उतने ही अच्छे पूरे समाज के लिए थे। जब वे मार्ग से निकलते थे तो लोग खडे होकर उनका अभिवादन करते थे। राजा भी गुरू के आगमन पर अपने सिंहासन से उठकर उनके चरण स्पर्श करते थे । भारतीय समाज और उसके मन में शिक्षकों की वही प्रतिमूर्ति स्थिर है और उन्हीं का सम्मान करता है जो इसकी आशाओं पर स्थिर रहता हैं । समकालीन शिक्षक थोड़ी सी प्रस्थिति और गौरव अर्जित करके रखते हैं तथा भग्नाशाओं और आत्मदोष से कष्ट पाते रहते हैं । वे लोगों की नजरों में बहुत नीचे चले गए हैं । यदि वे अपनी प्रस्थिति बढ़ाने की इच्छा रखते हैं तो इस दशा में उन्हें इतिहास से सबक सीखना चाहिए । प्राचीनकाल में शिक्षकों में जो ज्ञान-पिपासा एवं चारित्रिक स्तर था वह अब धीरे-धीरे विलुप्त प्राय: होता जा रहा है । अब शिक्षण व्यवसाय बन गया है तथा शिक्षक एक कर्मचारी मात्र बनकर रह क्या है । परिणामत: शिक्षक अपने महान उद्देश्यों को भूलकर शासकों के आदेश पालक बन गए हैं । समाज में व्याप्त बुराईयों, अन्याय, शोषण, भ्रष्टाचार एवं दानवता के प्रति शिक्षक मूक दर्शक

मात्र रह गया है । यही नहीं अध्यापक थोड़े से लाभ के लिए समाज की बुराइयों में जब सम्मिलित हो जाते हैं तो वह इन चुनौतियों का सामना करने के लिए कहीं समर्थ हो सकते हैं? परिणामत: प्राचीन गुरूओं जैसी प्रतिष्ठा मिल भी कैसे सकती है? इसका अभिप्राय यह नहीं है कि समाज में अच्छे शिक्षकों का सर्वथा अभाव हो गया है किन्तु यह एक चेतावनी अवश्य है ।

औपचारिक रूप में समाज आज भी शिक्षकों को राष्ट्र निर्माता मानता है । शिक्षक को स्वयं ही यह सोचना पडेगा कि वह समाज में अपना स्थान कैरने प्राप्त करेंगे । यदि हम अपने विद्यार्थीयों पर अच्छा प्रभाव डाल सकते हैं तो समाज उचित स्थान देने को अवश्य तत्पर होगा तथा अन्य सामाजिक कार्यों में भी नेतृत्व स्वीकार करेगा । तटस्थता, स्वार्थलिप्तता एवं पिछलग्गूपन अध्यापक को दिग्भ्रमित कर निम्न स्तर पर ले आएगा । डॉ.के.जी. सैयदन के अनुसार "अध्यापक की प्रतिष्ठा इस बात पर निर्भर करती है कि वह कहीं तक राष्ट्र की समस्याओं में रूचि रखता है । यदि अध्यापक समाज व राष्ट्र के लिए कुछ कर सकता है तो उसका सम्मानित होना स्वाभाविक है। "बीटिसकिंग के शब्दों में - "उसका (अध्यापक का) घर व्यावसायिक विचारों का केन्द्र है, एक गैर सरकारी परामर्श केन्द्र है जहाँ कृषि से लेकर बच्चों के नामकरण तक के विषयों पर सलाह मिल सकती है, जहाँ समाज और अध्यापक के मध्य इस प्रकार के संबंध बन गए हैं, वहाँ न तो अध्यापक के घर में और न विद्यालय में किसी प्रकार का अभाव होगा और विद्यालय तथा अध्यापक किसी की भी ओर समाज उपेक्षा की दृष्टि नहीं रख सकेगा । " सर विलियम कार ने शिक्षण व्यवसाय के विश्व संगठन के महामंत्री पद से अध्यापकों को सम्बोधित करते हुए कहा था- "इस संसार में अध्यापक का स्तर तब ऊँचा उठेगा जब वह अपने आपको अध्यापक कहलाने में गर्व का अनुभव करेगा । मैं यह नहीं कहता कि वह अंहकार करे, मैं कहता हूँ कि उसे वास्तव में स्वयं को अध्यापक कहलाने का गर्व होना चाहिए । " अत: अध्यापक को यह समझना चाहिए कि समाज तो दर्पण है उसमें हम जैसी वस्तु सामने रखेगे वैसा ही प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ेगा । समाज आज भी शिक्षकों से बहुत अपेक्षाएं रखता है । अपने लाड़ले बच्चों के भविष्य को अध्यापकों के हाथ सौंपकर उनके उचित विकास की अपेक्षा करता है । अब अध्यापक इस चुनौती का किस सीमा तक राष्ट्रीय स्तर पर सामना कर पाते हैं-उनके समाज में स्थान का मानदण्ड निर्धारित करता है । पहल शिक्षक को ही करनी होगी ।

अध्यापक केवल विद्यार्थी तथा विद्यालय को ही प्रभावित नहीं करता वरन् समस्त राष्ट्र एवं विश्व को प्रभावित करता है । अध्यापक के क्रिया-कलाप हर क्षेत्र में प्रतिबिम्बित होते हैं । कहा भी हैं-"एक इंजीनियर की त्रुटि से कुछ पुल या भवन टूट सकते हैं, एक डॉक्टर की त्रुटि से कुछ मरीज मर सकते है, एक धर्मोपदेशक के दूषित धर्मोपदेश कुछ ही भक्तों को पथ-भ्रष्ट कर सकते हैं किन्तु एक अध्यापक के गलत काम सम्पूर्ण राष्ट्र को गलत दिशा-निर्देश दे सकते हैं । " वह छात्रों का सर्वनाश कर सकता है । जिससे एक राष्ट्र पाताल को जा सकता है । संक्षेप में अध्यापक वह नक्षत्र हैं जो सम्पूर्ण मानव जाति को पथ प्रदर्शित करता है । जिसका किसी समाज, राष्ट्र या समुदाय की उन्नति / अवनति में महत्त्वपूर्ण स्थान होता है । सुयोग्य, दक्ष एवं कुशल अध्यापक राष्ट्र के आधार स्तम्भ होते हैं ।

13.2.2. अध्यापक की विभिन्न भूमिकाएं (various roles of a teacher) - वैसे तो अध्यापक का प्रमुख कार्य शिक्षण है । फिर भी उसे इसके अतिरिक्त अनेकों भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है । अध्यापक की प्रमुख भूमिकाएँ निम्नानुसार हैं-

चित्र संख्या 13.1

1. **कक्षाध्यापक के रूप में (As a class teacher) -** कक्षा में अध्यापक का मुख्य दायित्व शैक्षिक लक्ष्यों की उपलब्धि सुनिश्चित करना है । इन लक्ष्यों को निश्चित विषयों में पूर्व निर्धारित ज्ञान, कौशल और अभिवृत्तियों के सन्दर्भ में अधिगम के रूप में निर्दिष्ट किया जा सकता है । इन विषयों के माध्यम से ही अध्यापक विद्यालय लक्ष्यों की प्राप्ति का प्रयास तो करता ही है; साथ ही अपने विद्यार्थीयों का सर्वागीण विकास भी करना चाहता है, क्योंकि शिक्षा का व्यापक लक्ष्य तो वही है । इसकी प्राप्ति के लिए अध्यापक कक्षा में ऐसे कृत्रिम वातावरण का सृजन करता है जिससे सीखने की प्रक्रिया सुगम और सुसाध्य हो । वह अध्येताओं का अनुदेशन करता है, उन्हें अधिगम के लिए अभिप्रेरित करता हैं, उन्हें अपनी गलतियों को सुधारने में सहायता देता है, विभिन्न स्थितियों में उनका मार्गदर्शन करता हैं और उनके निष्पादन का मूल्यांकन करता है । अध्यापक के लिए विषयवस्तु विद्यार्थीयों को ज्ञान, कौशल और अभिवृत्तियों को प्राप्त कराने का माध्यम या उपकरण ही नहीं है, बल्कि एक ऐसा साधन भी हैं जिसकी सहायता से विद्यार्थी अपने व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास कर सकें और वही शिक्षा का वास्तविक ध्येय भी है ।

विद्यार्थीयों के सर्वागीण विकास को सुनिश्चित करने के लिए अध्यापक को खेल-कूद, प्रश्नोत्तर परीक्षा, वाद-विवाद, परिभ्रमण, पर्यटन, क्षेत्र-यात्रा जैसे पाठ्यचर्या सहगामी क्रियाकलापों का आयोजन भी करना होता है ।

2. **समुदाय के सदस्य के रूप में (As a member of community) -** अध्यापक की समुदाय में अत्यन्त सक्रिय भूमिका होती है । उसकी भूमिका के विभिन्न पक्ष हैं-

(i) अभिभावकों को, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले, व शहरी, कच्ची बस्तियों एवं दूरवर्ती क्षेत्रों में रहने वाले अभिभावकों को शिक्षा के महत्व का बोध कराना, ताकि वे अपने बच्चों को विद्यालय में दाखिल करे ।

(ii) बाल्यावस्था में विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने से वंचित प्रौढ़ों की शिक्षा हेतु आयोजित प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से भाग लेगा ।

(iii) हमारे अनेक ग्रामवासियों को टीकाकरण, संतति नियमन के उपाय, गर्भावस्था एवं प्रसव के दौरान महिलाओं के स्वास्थ्य की देख-रेख, घर तथा बाहर की स्वच्छता, संक्रामक रोग वैयक्तिक सफाई आदि के संबंध में जारूकता जैसे कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है । शिक्षित व्यक्ति होने के नाते अध्यापक का यह कर्त्तव्य हो जाता है वह या तो इनके बारे में उन्हें स्वयं जानकारी प्रदान करे अथवा उन्हें जानकारी के उपयुक्त स्रोतो जैसे डॉक्टर आदि तक पहुँचाए ।

(iv) ग्रामीण क्षेत्रों में अध्यापक को साक्षरता कार्यक्रमों में यथासंभव योगदान करना चाहिए ।

(v) एक शिक्षित नागरिक के नाते, चुनाव कार्य और जनगणना आंकड़ों के संग्रहण कार्य में भाग लेने की अपेक्षा भी अध्यापक से की जाती हैं ।

(vi) समुदाय के सदस्य यह अपेक्षा करते हैं कि उनकी जगह अध्यापक उनके बच्चों के लिए अनुकरणीय व्यक्ति हों । वे चाहते हैं कि अध्यापक कोई ऐसा आचरण न करे जिनका अनुकरण उनके बच्चों के लिए हानिकारक सिद्ध हो ।

(vii) ग्रामीण समुदाय में जहाँ अधिसंख्य प्रौढों के निरक्षर होने की संभावना होती है, अध्यापक को मार्गदर्शक, तत्त्ववेत्ता ओर उपबोधक की भूमिका भी निभानी होती है । सामान्यत: लोग अपनी समस्याओं के समाधान के लिए अध्यापक के पास आते हैं ।

3. **नागरिक के रूप में (As a citizen) -** एक शिक्षित व्यक्ति के रूप में तथा एक ऐसे व्यक्ति के रूप में जो दूसरों को शिक्षा देता है, अध्यापक देश के भावी नागरिकों की दृष्टि में एक आदर्श व्यक्ति होता है । वह लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में भाग लेकर लोकतंत्र के परिचालन को सशक्त बनाता है, समाज में एक निष्पक्ष, वस्तुनिष्ठ आलोचक का कार्य करता है और राष्ट्र की संवृद्धि और विकास में बाधक भ्रष्टाचार, कलंकपूर्ण कृत्य, दंगा-फसाद, शोषण जैसी घटनाओं के प्रति संवेदनशील होता हैं तथा समाज विरोधी एवं राष्ट्र विरोधी गतिविधियों को नियंत्रित करने के लिए संसाधान जुटाता है । इन सबके अतिरिक्त अध्येताओं के लिए एक मित्र, तत्त्ववेत्ता और मार्गदर्शक का कार्य करता है । वह अध्येताओं को अपनी अधिकतम दक्षता प्राप्त करने और राष्ट्र की सेवा करने के लिए अनुप्राणित करता है ।

4. **उपबोधक के रूप में (As a counseller) -** उपबोधक के रूप में अध्यापक विद्यार्थी की केवल विद्यालय से एवं पढ़ाई आदि से सम्बन्धित समस्याओं से ही सरोकार नहीं रखता है, बल्कि उसके मित्रों, परिवार, स्वास्थ्य आदि से सम्बन्धित समस्याओं से भी उसे सरोकार होता है।

प्रभावी उपबोधक की दृष्टि से अध्यापक का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण गुण समस्या वाले विद्यार्थीयों के अभिनिर्धारण के प्रति उसकी संवेदनशीलता है । ऐसा इसलिए है, कि विद्यालय परिवेश में विद्यार्थी यदा-कदा आते हैं, क्योंकि वे अपनी समस्याओं के अंतरंग स्वरूप को अध्यापक के समक्ष प्रकट करने में आशंकित रहते है । कोई संवदेनशील अध्यापक ही समस्याग्रस्त विद्यार्थी को पहचान कर अपने गंभीर प्रयास द्वारा उसके साथ सौहार्द्र स्थापित कर सकता है और उसे अपनी समस्या बताने के लिए प्रेरित कर सकता है । समस्या के स्वरूप को जान लेने के बाद, अध्यापक का यह कर्त्तव्य होता है कि वह समस्या का हल पाने में विद्यार्थी को उसकी अपनी समर्थतता का अहसास करा सके । उपबोधन इस सिद्धान्त पर कार्य करता है कि उचित मार्गदर्शन मिलने पर प्रत्येक व्यक्ति स्वयं ही अपनी समस्या के समाधान की समर्थता प्राप्त कर सकता है । अत: अध्यापक के लिए आवश्यक नहीं कि सदैव समस्याओं का हल प्रस्तुत

करे । वह तो यह कर सकता है कि वह विद्यार्थी के समक्ष समस्या, समाधान के विभिन्न तरीकों को स्पष्ट कर दे और इस प्रक्रिया को विद्यार्थी द्वारा स्वयं अपनी समस्या के समाधान के लिए अग्रसरित कर सके । उदाहरणार्थ निम्नलिखित स्थिति को देखिए -

- एक संवेदनशील अध्यापक ने देखा कि एक विद्यार्थी कक्षा में अनमना और अत्यन्त उदास रहता है । उसने विद्यार्थी को अलग बुलाकर उससे बातचीत शुरू की । दो तीन सत्रों के पश्चात् उसे समस्या का पता चला । बच्चे का अपने बडे भाई से बहुत लगाव था, किन्तु दुर्भाग्यवश एक सड़क दुर्घटना में उसकी मृत्यु हो गई । इससे उसका जीवन ही बदल गया है । अध्यापक ने विद्यार्थी के साथ सहनभूति प्रकट करने के साथ-साथ अत्यन्त वस्तुनिष्ठ रूप से उससे जीवन और मृत्यु के बारे में चर्चा की और उसे कई तरीके सुझाए जिनके द्वारा वह अपने को घर में व्यस्त रख सकता है । अध्यापक ने उसे अपने प्रियजनों के बिछुड जाने की कठोर वास्तविकता पर भी सोचने के लिए प्रेरित किया और नकारात्मक मनोवृत्ति से उबारने के लिए उसे समझाया कि "यद्यपि प्रिय व्यक्ति की मृत्यु सहन करना अत्यन्त कष्टकर होता है, तथापि सभी में इस अभाव को सहन करने की आंतरिक शक्ति होती है । तुम भी इस दुख को सहन कर सकते हो । " ऐसे अनेक सत्रों के पश्चात् वह विद्यार्थी अपने को समायोजित करने में तथा अपनी उदासी पर काबू पाने में सफल हो गया और कक्षा में सावधान और सजग रहने लगा ।

चित्र संख्या : 13.2

5. **व्यवस्थाकर्ता के रूप में (As a organiser) -** अध्यापक विद्यालय का अभिन्न अंग होता है । विद्यालय में समस्त क्रियाओं की व्यवस्था और उनका कुशल संचालन केवल प्रधानाध्यापक का ही कर्त्तव्य नहीं है, अपितु विद्यालय का अभिन्न अंग होने के कारण विद्यालय के प्रत्येक कार्य समय-सारणी बनाना, पाठ्यसहगामी क्रियाओं का आयोजन और संचालन आदि में प्रधानाध्यापक का पूर्णत: सहगामी होना एवं उनको सफलता के साथ पूरा करने का अध्यापक का दायित्व है । इस प्रकार विद्यालय में विभिन्न प्रकार की व्यवस्था रखने में अध्यापक की महत्त्वपूर्ण भूमिका है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1 भारतीय समाज में अध्यापक के महत्व का वर्णन करे |
Explain the importance of teacher in Indian society

2 अध्यापक की विभिन्न भूमिकाओं का वर्णन कीजिए |
Describe the various roles of teacher

3	समुदाय के किन क्रिया-कलापों में अध्यापक अधिक सहायता प्रदान कर सकता है? In which activities of community a teacher can help ?

13.3 अध्यापन व्यवसाय के सम्बन्ध में नैतिक प्रश्न (Ethical questions related to teaching profession)

किसी भी व्यवसाय तथा वृत्ति की प्रतिष्ठा, गौरव तथा मान सम्मान बहुत सीमा तक इस बात पर निर्भर रहता है कि उस व्यवसाय में कार्यरत् व्यक्ति व्यवसाय के उत्तरदायित्वों के प्रति कितने जागरूक हैं तथा अपने कर्त्तव्य पालन में कितनी निष्ठा रखते हैं । शिक्षा के क्षेत्र में इसका विशेष महत्त्व बढ़ जाता है । शिक्षकों की व्यावसायिक आचार संहिता के बारे में लॉरी (Laurie) ने लिखा है-"यदि अध्यापक के पास सच्चा आदर्श नहीं है, उसे शीघ्र ही दुकानदार बन जाना चाहिए, वहाँ उसे अपनी योग्यता के अनुसार निस्सन्देह एक आदर्श प्राप्त होगा ।"

माध्यमिक शिक्षा आयोग (Secondary Education Commision) के शब्दों में, "वे अपने कार्य को जीविकोपार्जन का अरूचिकर साधन नहीं समझेंगे, वरन् उसे समाज-सेवा करने का एक महत्त्वपूर्ण मार्ग समझेंगे, साथ ही उसे आत्मसिद्धि एवं आत्मभिव्यक्ति का उपाय समझेंगे ।"

अध्यापक को अपने व्यवसाय का महत्व समझना चाहिए । इस व्यवसाय के महत्व के कारण अध्यापक को राष्ट्र निर्माता कहा जाता है । वह अपने व्यवसाय के प्रति अन्याय तथा विश्वासघात करता है यदि वह एक बार उसे अपनाकर दूसरे कार्यों में व्यस्त रहता है । अपने व्यवसाय के प्रति निष्ठावान हुए बिना उन नवयुवकों तथा नवयुवतियों की एक अच्छी नस्ल तैयार नहीं कर सकता जो कि मानव कल्याण के लिए प्रभावी योगदान देने में समर्थ हैं । अत: अध्यापक को अध्यापन व्यवसाय से सम्बन्धित निम्नलिखित प्रश्नों पर विचार करना चाहिए -

चित्र संख्या. 13.3

अध्यापन व्यवसाय के सम्बन्ध में नैतिक प्रश्न

1. कक्षा अध्यापन के संदर्भ में (with reference to class-room teaching)

(i) क्या कक्षा अध्यापक नियमित तौर पर स्कूल में आता है?

(ii) क्या कक्षा में प्रतिदिन शिक्षण अधिगम की तैयारी करके आता है?

(iii) क्या कक्षा में समय पर जाता है?

(iv) क्या कक्षा में पूरे समय शिक्षण कार्य करता है?

(v) क्या गृहकार्य देकर उनकी सम्पूर्ण जाँच करता है?

(vi) क्या अधिगम को प्रभावी बनाने के प्रयास करता है?

2. परीक्षा के सन्दर्भ में (with reference to examination) -

(i) क्या परीक्षा पत्र में पूर्ण गोपनीयता बरतता है?

(ii) क्या उत्तर पुस्तिकाओं की पूरी जाँच करता है?

(iii) क्या उत्तर पुस्तिकाएं जाँचते समय किसी भी छात्र-छात्रा से पक्षपात नहीं करता है?

3. छात्रों से व्यवहार के सम्बन्ध में (with reference to pupil) -

(i) क्या सभी छात्रों से एक जैसा व्यवहार करता है?

(ii) क्या जाति-पाँति पर ध्यान नहीं देता है?

4. प्राइवेट ट्यूशन के सम्बन्ध में (with reference to private tutions) -

(i) क्या किसी भी प्रकार से विद्यार्थीयों को ट्यूशन करने के लिए मजबूर करता है?

5. साथियों के साथ बर्ताव के सम्बन्ध (with references to the behave with Colleagues) -

(i) क्या अपने साथियों को उचित सम्मान देता है?

(ii) क्या विद्यार्थीयों के सम्मुख किसी भी कर्मचारी की निन्दा करता है?

6. प्रकाशकों से सम्बन्ध के सन्दर्भ में (with references to the relationship with publisher)

(i) क्या विद्यार्थीयों को निजी स्वार्थवश पुस्तक क्रय करने के लिए बाध्य करता है?

(ii) क्या प्रकाशकों से केवल व्यावसायिक सम्बन्ध ही रखता है?

7. व्यावसायिक अभिवृद्धि के सम्बन्ध में (with references to professional growth) -

(i) क्या व्यावसायिक अभिवृद्धि के लिए शैक्षिक गोष्ठि में तथा कार्यशालाओं में भाग लेता है?

(ii) क्या व्यावसायिक साहित्य का अध्ययन करता है?

8. सामान्य आचार संहिता के सन्दर्भ में (with references to general professional norms) -

(i) क्या विद्यार्थीयों के सम्मुख तम्बाकू बीड़ी, शराब आदि का सेवन करता है?

(ii) क्या विद्यार्थीयों को निजी कार्य करने के लिए बाध्य नहीं करता?

9. अध्यापक संगठन की सदस्यता के सम्बन्ध में (with references to the relationship with parents and other groups) -

(i) क्या अध्यापक संगठन का सक्रिय सदस्य बनकर संगठन की सकारात्मक गतिविधियों में सहयोग करता है?

शिक्षण व्यवसाय से सम्बन्धित उपर्युक्त नैतिक प्रश्नों पर अध्यापक को गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिए तथा अपने लिए आचार-संहिता बनाकर उसका पालन करना चाहिए ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. अध्यापन व्यवसाय को महत्व को स्पष्ट कीजिये ?
   Explain the importance of teaching profession
2. अध्यापन व्यवसाय के संबंध में नैतिक प्रश्नों को सूचीबद्ध कीजिए |
   List the ethical questions relating to teaching profession

13.4 अध्यापन के प्रति अध्यापकों की अभिवृत्ति (Attitude of teachers towards teaching)

प्रत्येक व्यक्ति बाहय तथ्य, वस्तुओं, विचारों तथा घटनाओं के प्रति कुछ निश्चित धारणाएं विकसित कर लेता है । इन धारणाओं के कारण ही व्यक्ति किसी को पसन्द करते हैं तो किसी को नहीं, किसी को देखकर खुशी से झूम उठते हैं तो किसी को देखकर घृणा से मुँह सिकोड़ लेते हैं । इन धारणाओं के फलस्वरूप ही हम बाहय पदार्थों, घटनाओं, विचारों, व्यक्तियों, पशु-पक्षियों, धर्मा, राष्ट्रों, जातियों प्रथाओं, संस्थाओं तथा व्यवसायों आदि के प्रति व्यवहार करते हैं । रेमर्सू रूमेंल एवं गेज ने अभिवृत्ति के सम्बन्ध में लिखा है कि - "अभिवृत्ति अनुभवों के द्वारा व्यवस्थित एक संवेगात्मक प्रवृत्ति है जो कि मनोवैज्ञानिक पदार्थ या वस्तु के प्रति सकारात्मक या नकारात्मक रूप से प्रतिक्रिया करती है ।" सरल शब्दों में अभिवृत्तियाँ स्थायी भावों, भावना ग्रन्थियों तथा भावात्मक साधनों का मिला-जुला रूप है । इनके कारण ही हम किसी से घृणा या प्यार करते हैं । अभिवृत्ति के प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं -

(i) अभिवृत्तियाँ सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही प्रकार की हो सकती हैं । घृणा की अभिवृत्ति नकारात्मक प्रेम की अभिवृत्ति सकारात्मक है ।
(ii) अभिवृत्तियाँ मनुष्य के व्यवहार का निर्धारण करती है । ये मानव व्यवहार का आधार होती हैं ।
(iii) वस्तुत: ये काफी मात्रा में स्थायी होती है, किन्तु इनमें परिवर्तन संभव होते हैं ।
(iv) ये बाहय वस्तुओं के प्रति हमारी मानसिक स्थिति का एक रूप होती हैं ।
(v) अभिवृत्तियाँ जन्मजात नहीं होती हैं । इनका विकास वातावरण के फलस्वरूप होता है ।
(vi) अभिवृत्तियाँ व्यक्त तथा अव्यक्त हो सकती है ।
(vii) अभिवृत्तियों का स्वरूप दो प्रकार से समझा जा सकता है - व्यक्ति के आचरण के द्वारा तथा व्यक्ति के कथन के द्वारा ।
(viii) अभिवृत्तियाँ मापनीय होती हैं ।

कार्य की सफलता के लिए सकारात्मक अभिवृत्ति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है । सकारात्मक अभिवृत्ति कार्य को सुन्दर बनाती है । एक अध्यापक जिसकी अभिवृत्ति अध्यापन के पक्ष में है, छात्रों को अधिक अधिगम कराने में सहायक होती है । इसलिए अपने कार्य के प्रति, विद्यार्थीयों के प्रति, बाल-केन्द्रित अभ्यासों के प्रति, कक्षा-शिक्षण के प्रति, शैक्षिक प्रक्रिया के प्रति, अध्यापकों के प्रति, एवं अध्यापन व्यवसाय से सम्बन्धित अन्य घटकों के प्रति अध्यापक का अनुकूल तथा पक्षपूर्ण दृष्टिकोण उसे अपने व्यवसाय में सफलता प्रदान करता है, जिसके अभाव में उसकी सफलता संदिग्ध हो जाती है ।

यदि अध्यापक अध्यापन व्यवसाय को पसन्द नहीं करता है या उसके प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण नहीं रखता है तथा विवशता के कारण अध्यापन व्यवसाय को अपनाता है तो न तो वह उस व्यवसाय के साथ न्याय कर पाएगा, न अच्छा कार्य कर पाएगा, न छात्रों के प्रति न्याय कर पाएगा, न विद्यालय में किसी के साथ समायोजन स्थापित कर पाएगा न उन्नति कर पाएगा, और न ही इस व्यवसाय में रहते हुए मानसिक शान्ति एवं सन्तुष्टि का ही अनुभव कर सकेगा ।

13.4.1 अध्यापक के समक्ष चुनौतियाँ (Challenges before teacher) - शिक्षण समुदाय को भविष्य में एक महान चुनौति का सामना करना पड़ेगा । कम्प्यूटर क्रान्ति, सूचना तकनीकी व साइबरनैटिक के शैक्षिक अभिप्रेतों को शिक्षकों को समझना होगा । शिक्षा तकनीकी, जनसंचार, रेडियो और टेलीविजन इसके स्वयं के प्रभाव रखते हैं । सूचनाएं उपलब्ध कराने में शिक्षक इनसे बराबरी नहीं कर सकता है । इन्होंने शिक्षक का स्थान लेना शुरू कर दिया है । "हाल ही में जयपुर में 13 अक्टूबर, 1998 को विज्ञान मॉडल प्रदर्शनी में बिना शिक्षक के छात्रों को शिक्षा देने तथा पूरी कक्षा का नियंत्रण करने वाले कम्प्यूटर का मॉडल प्रदर्शित किया गया था।"

जेनेटिक्स में शोध, परमाणु जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान जैसे विषयों के शोधकार्य शिक्षकों के सम्मुख चुनौति खड़ी कर रहे हैं । स्नायविक औषधियाँ अध्यापकों की अपेक्षा शीघ्र और प्रभावशाली ढंग से छात्रों की मानसिक अस्वस्थता और असामान्य व्यवहार की देखभाल कर सकती है । याद रखने के और सीखने के कैप्स्युल्स का प्रयोग अधिगम की समस्याओं का समाधान कर सकते हैं । अध्यापक शिक्षा में खोजों की अपेक्षा इन क्षेत्रों में खोजें अधिक जल्दी स्थान ले रही हैं । शिक्षकों के अनावश्यक बनने की सम्भावनाएं अब अधिक हो रही हैं । छापेखाने के आविष्कार और पुस्तकों की उपलब्धता से लेकर अब तक शिक्षा की केन्द्रीय स्थिति बदल चुकी है । इसके बाद इलेक्ट्रोनिक्स मीडिया ने इसको प्रभावित किया । ये नवीन प्रवृत्तियाँ शिक्षण व्यवसाय के लिए नई चुनौतियाँ हैं । शिक्षण समुदाय को इस नई स्थिति को स्वीकारना होगा ।

यदि अध्यापक अध्यापन व्यवसाय की श्रेष्ठता सिद्ध करना चाहता है तथा अपने अस्तित्व को न्यायसंगत बनाना चाहता है तो उसे अपने आपको ऊपर वर्णित साधनों की तुलना में अधिक प्रभावशाली बनाना होगा । इसके लिए उसे जीवनपर्यन्त अध्ययनरत् रहते हुए अपने ज्ञान के क्षेत्र को विस्तृत करने की आवश्यकता है तथा आवश्यकता है अध्यापन व्यवसाय के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति की ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. अभिवृत्ति को परिभाषित करें तथा इसके लक्षणो को बताइए |
   Define attitude and state its characteristics.
2. अध्यापन व्यवसाय के प्रति अध्यापकों की सकारात्मक एवं नकारात्मक अभिवृत्ति के प्रभावों को स्पष्ट कीजिए |
   Clarify the positive and negative effects of attitudes of teachers towards teaching.
3. अध्यापक के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों का वर्णन कीजिए|
   Explain the challenges before teachers.

13.5 व्यावसायिक के नाते स्व-विकास की योग्यता (Ability to self development as a professional)

किसी भी राष्ट्र में अध्यापक निर्णायक स्थिति में होते हैं, क्योंकि वे ही भावी नागरिकों का निर्माण करते हैं। यद्यपि राष्ट्र की गुणवत्ता बहुत सीमा तक विद्यालयों की गुणवत्ता पर निर्भर करती है, तथापि विद्यालयों की कार्यक्षमता और प्रभावशीलता अध्यापकों के हाथों में होती है । यदि अध्यापक उस कार्य के लिए प्रशिक्षित है जिसकी उससे अपेक्षा की जाती है, तो वह स्वयं को सौंपे गए विद्यार्थीयों को शिक्षित करने की स्थिति में हो सकेगा।

आधुनिक समाज में अध्यापकों में केवल ज्ञान के क्षेत्र में अपेक्षित प्रवीणता ही नहीं होनी चाहिए, बल्कि प्रभावी शिक्षण पद्धतियों का चयन करने, शिक्षण रणनीतियों को अधिगम में सफल बनाने के लिए प्रभावी दृश्य-श्रव्य साधनों के उपयोग करने की दक्षताएं भी होनी चाहिए । उन्हें उपचारात्मक एवं प्रतिपूरक शिक्षण प्रदान करने में भी समर्थ होना चाहिए । उनमें अपने विद्यार्थीयों के साथ स्पष्ट एवं सुनिश्चित ढंग से सम्प्रेषण करने, उनके सरोकारों और आवश्यकताअएं का निर्धारण करने तथा उनके साथ स्वीकारात्मक एवं सहयोगशील अन्तर्क्रिया करने की योग्यता होनी चाहिए । इसी प्रकार उचित प्रतिपुष्टि, प्रबलन और पुरस्कारों के माध्यम से अपने विद्यार्थीयों को अच्छे निष्पादन के लिए अभिप्रेरित और अनुप्राणित करने की कला आनी चाहिए । माँग के अनुसार कक्षा में गंभीर, सहज अथवा आनन्ददायी वातावरण के निर्माण की अपेक्षा भी की जाती है ।

विद्यार्थीयों के बौद्धिक विकास के अतिरिक्त अध्यापक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह विद्यार्थीयों के व्यावसायिक, आध्यात्मिक तथा नैतिक मूल्यों का भी संवर्धन करे ।

आज की शिक्षा पद्धति, जिसमें गैर-औपचारिक दूरवर्ती और मुक्त अधिगम पर निरंतर बल दिया जा रहा है, अध्यापक में ऐसी स्वत: अनुदेशी सामग्री और मॉडयूलों को तैयार करने की योग्यता की अपेक्षा करती है जो शिक्षार्थियों में स्व-अधिगम की प्रवृत्ति को बढ़ावा दे सके । अत: यह अपेक्षित है कि प्रत्येक भावी अध्यापक को अधिगम और अधिगम के सिद्धान्तों, विधियों, शिक्षण रणनीतियों और शैलियों, प्रबंधन के निर्णयन, आयोजन आदि पक्षों का तथा प्रेक्षण, जाँच और मूल्यांकन की प्रविधियों का ज्ञान हो । अध्यापकों में जब ये दक्षताएं और कौशल होंगे, तभी वे उचित एवं पर्याप्त रूप से अपनी सेवाएं प्रस्तुत कर पाएंगे ।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि अध्यापक के स्व-विकास की नितान्त आवश्यकता है । इस हेतु एक प्रभावशाली अध्यापक में बहु आयामी गुणों का होना अनिवार्य है, जिनका विकास उसे अपने में करना चाहिए ।

13.5.1 प्रभावशाली अध्यापक के गुण (Qualities of an effective teacher) - गुरू शब्द अध्यापक के गुरूत्तर दायित्वों का आभास कराता है । गुरू को अज्ञान रूपी अन्धकार को मिटाने वाला एवं ज्ञानरूपी प्रकाश को दिखाकर मानवता के पथ को आलोकित करने वाला कहा गया है । एक आदर्श अध्यापक में संन्यासी का चरित्र बल, विशेषज्ञ का ज्ञान एवं कौशल होना चाहिए और एक कलाकार की संवेदनशीलता और भावना के साथ उनका प्रयोग करने की योग्यता भी होनी चाहिए । स्पष्ट है कि अध्यापक को कार्यसाधक होने के लिए अपने में अनेक शैक्षिक,

व्यावसायिक, वैयक्तिक और सम्बन्ध स्थापित करने की दक्षताओं को विकसित करना चाहिए । सामान्यत: एक प्रभावशाली अध्यापक में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक हैं -

चित्र संख्या : 13.4

(अ) शैक्षिक गुण (Educational qualities) - अध्यापक में अध्यापक के लिए स्तरानुसार न्यूनतम शैक्षिक योग्यता का होना आवश्यक है । साथ ही अध्यापक का प्रशिक्षित होना भी आवश्यक है । उदाहरणार्थ प्राइमरी कक्षाओं को पढ़ाने के लिए अध्यापक को कम से कम हायर सैकण्डरी पास होना तथा एस.टी.सी. के रूप में शिक्षक कार्य का प्रशिक्षण प्राप्त किया हुआ होना चाहिए । इसी प्रकार सैकण्डरी कक्षाओं को पढ़ाने वाले अध्यापक के लिए कम से कम शैक्षिक योग्यता के रूप में स्नातक एवं बी.एड. किया हुआ होना चाहिए । उच्च माध्यमिक कक्षा को पढ़ाने वाला अध्यापक सम्बन्धित विषय में स्नातकोत्तर की डिग्री होना चाहिए साथ ही बी. एड. भी होना चाहिए ।

(आ) व्यावसायिक गुण (Professional qualities) - एक अच्छे अध्यापक में निम्नलिखित व्यावसायिक गुणों का होना आवश्यक है -

चित्र संख्या : 13.5

(1). व्यवसाय के प्रति रूचि एवं निष्ठा (Interest and commitment towards profession) -अध्यापक को अध्यापन व्यवसाय में रूचि और उसके प्रति निष्ठा होनी चाहिए ।

उसे अध्यापन को मात्र अपनी कमाई का साधन ही नहीं समझना चाहिए । प्रो. एस. एन. मुखर्जी ने कहा हैं - "अध्यापक को बडी लगन व आत्मा से आज्ञाकारिता के रूप में व्यवसाय का कार्य करना चाहिए । व्यक्तिगत रूप से जिन्हें अध्यापन से प्यार नहीं है, उन्हें अध्यापन व्यवसाय छोड देना चाहिए । "

(2). विषय का पूर्ण ज्ञान (Complete knowledge of subject) - यदि अध्यापक को विषय का पूर्ण ज्ञान नहीं होगा तो वह विद्यार्थीयों की विषय से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान नहीं कर पाएगा जिससे छात्र उसका आदर नहीं करेंगे और न ही उसमें आत्म सन्तुष्टि हो पाएगी तथा वह अपने आप में हीन भावना महसूस करेगा ।

(3). उचित शिक्षण विधियों के प्रयोग की कुशलता (Use of proper teaching method) - एक अच्छे अध्यापक में विषयानुसार एवं स्तरानुसार उचित शिक्षण विधियों के प्रयोग की कुशलता होनी चाहिए । उदारहणार्थ छोटे बालकों के लिए खेल विधि, प्रदर्शन विधि, कहानी विधि आदि का प्रयोग प्रभावशाली रहता है जबकि उच्च कक्षाओं में व्याख्यान विधि, प्रायोजना विधि, निरीक्षित स्वाध्याय विधि, समस्या समाधान विधि आदि विधियाँ उपयुक्त रहती हैं ।

(4). समुचित सहायक सामग्री का प्रयोग (Proper use of teaching aids) - वर्तमान समय में विषयवस्तु की जटिलता की दृष्टि से अध्यापन में शिक्षा तकनीकी के साधनों का प्रयोग किया जाने लगा है । एक अच्छा अध्यापक वही है जो छात्रों के स्तर, उनकी योग्यता एवं विषयवस्तु की प्रकृति को ध्यान में रखकर शिक्षण को रूचिपूर्ण, सरल एवं सुग्राह्य बनाने के लिए समुचित शिक्षण सहायक सामग्री का प्रयोग करें ।

(5). मनोविज्ञान का ज्ञान (Knowledge of psychology) - एक कक्षा में भिन्न-भिन्न प्रकृति एवं बुद्धि स्तर के छात्र होते हैं । मनोविज्ञान का ज्ञान होने पर ही अध्यापक बालक की मन: स्थिति, रूचि, योग्यता, बुद्धि आदि को समझ सकता है और उसके आधार पर अपना शिक्षण और निर्देशन का कार्य ठीक प्रकार से कर सकता है ।

(6). विषयवस्तु से सम्बन्धित नवीन जानकारियाँ (New information related to subject matter) - एक सफल अध्यापक को अपने विषय से सम्बन्धित होने वाले नवीन आविष्कारों, प्रयोगों अनुसन्धानों आदि की जानकारी होना आवश्यक है । नवीन जानकारियाँ होने से वह अपने छात्रों को विषय से सम्बन्धित विस्तृत एवं अतिरिक्त लाभ दे सकता है ।

(7). ज्ञान पिपासा (Thirst for knowledge) - एक सच्चा अध्यापक जीवन-पर्यन्त विद्यार्थी बना रहता है । रविन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों में-"एक अध्यापक कभी भी वास्तविक अर्थों में नहीं पढ़ा सकता, जब तक वह स्वयं अभी सीख न रहा हो । एक दीपक दूसरे दीपक को कभी भी प्रज्जलित नहीं कर सकता जब तक कि उसकी अपनी ज्योति जलती न रहे ।" इस प्रकार अध्यापक में हमेशा सीखने की ललक बनी रहनी चाहिए इससे उसका स्वयं का ज्ञान तो बढ़ेगा ही साथ ही वह अपने विद्यार्थियों को भी लाभ दे सकता है ।

(8). पाठ्य सहगामी प्रवृत्तियों में रूचि (Interest in co-curricular activities) - पाठ्य सहगामी क्रियाएं विद्यालय का अभिन्न अंग होती हैं । इनकी सहायता से ही बालक का समुचित एवं संतुलित विकास संभव है । अत: एक अच्छे अध्यापक के लिए यह आवश्यक है कि वह विद्यालय में विभिन्न पाठ्य सहगामी क्रियाओं यथा-साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं खेलकूद

प्रतियोगिताएं, पर्व एवं जयन्तियों आदि का आयोजन करने एवं उन्हें सफलतापूर्वक सम्पन्न कराने में रूचि ले ।

(9). समय का पाबन्द (Punctuality of time) - अच्छे अध्यापक का एक महत्त्वपूर्ण गुण समय का पाबन्द होना है । उसे समय पर विद्यालय में जाना चाहिए, प्रार्थना सभा में उपस्थित रहना चाहिए, तथा कालांश प्रारम्भ होते ही कक्षा में जाना चाहिए तथा कालांश समाप्ति से पूर्व कक्षा नहीं छोड़नी चाहिए । यदि अध्यापक ऐसा नहीं करेगा तो वह विद्यार्थीयों को भी समय का पाबन्द नहीं बना सकेगा व अनुशासन में नहीं रख सकेगा ।

(10). बालकों के प्रति प्रेम, सहानुभूति एवं रूचि (Love, sympathy and interest towards children) -अध्यापक को विद्यार्थीयों से प्रेम एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए । विद्यार्थीयों द्वारा पूछे गये प्रश्नों का सन्तोषप्रद ढंग से उत्तर देना चाहिए ।

(11). कुशल वक्ता (Perfect speaker) - अध्यापक को अपनी बात विद्यार्थीयों तक स्पष्टतापूर्वक, प्रभावशाली तरीके से, सुरूचिपूर्ण ढंग से तथा निश्चित अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग करते हुए पहुँचाने के लिए कुशल वक्ता होना अनिवार्य है । अध्यापक को बोलने में झिझकना नहीं चाहिये तथा प्रवाहपूर्वक उचित गति एवं उचित स्वर में अपनी बात स्पष्ट करनी चाहिए जिससे विद्यार्थीयों पर उसका प्रभाव पड़े और वे उसे सुनने में रूचि लें ।

(12). नियंत्रण शक्ति (Control power) - एक अच्छा अध्यापक वही है जिसकी कक्षा में विद्यार्थी अनुशासन में रहें । कक्षा में अनुशासन रखने के लिए वह कई रीतियों को अपना सकता है । वह छात्रों में भय पैदा करके, अपने प्रेमपूर्ण व्यवहार से, प्रभावशाली शिक्षण आदि किसी भी प्रकार से अनुशासन रख सकता है । सामान्यत: अध्यापक को अनुशासन के लिए सकारात्मक विधियों का ही प्रयोग करना चाहिए ।

(13). अध्यापन कौशलों का ज्ञान (Knowledge of teaching skills) - सफल अध्यापन का आधार विभिन्न शिक्षण कौशलों के प्रयोग में अध्यापक की निपुणता है । अत: अध्यापक को अध्यापन के विभिन्न कौशलों का ज्ञान तथा उनका प्रयोग करने की कुशलता होनी चाहिए ।

(14). आत्म विश्लेषण के लिए तैयार (Ready for self analysis) - एक अच्छा अध्यापक वही है जो अपनी गलतियों की ओर ध्यान दे, उन्हें स्वीकार करे एवं उन्हें सुधारने का प्रयत्न करे क्योंकि आत्मविश्लेषण करने वाला अध्यापक अधिक से अधिक सीखता जाता है ।

(इ) व्यक्तित्व सम्बन्धी गुण (Qualities related to personality) - एक अच्छे अध्यापक का व्यक्तित्व भी प्रभावशाली होना आवश्यक है । अध्यापक का व्यक्तित्व प्रभावशाली तब ही हो सकता है जब उसमें निम्नलिखित गुण हों ।

चित्र संख्या : 13.6

(1). बाहय स्वरूप (External shape) -बाहय रूप का तात्पर्य सुन्दर या असुन्दर होने से न होकर, अध्यापक की वेशभूषा आदि से है । अध्यापक को साफ-सुथरे, प्रेस किए हुए तथा अध्यापकोचित वस्त्र पहनने चाहिए । यदि किसी व्यक्ति की वेशभूषा उसके व्यवसाय के अनुरूप नही होगी तो वह ठीक नहीं लगेगा, उसकी मजाक उड़ाई जाएगी, व्यक्ति उसके अन्य गुणों की भी अवहेलना कर देंगे । उदाहरण के लिए कोई बड़ा डॉक्टर अपने सुन्दर से क्लिनिक में मैली-कुचैली बनियान व पायजामें में बैठकर अपने मरीजों का इलाज करे तो लोग उसका मजाक उड़ाएंगे तथा उसे सनकी समझेंगे । इसी प्रकार गली-गली में चिल्ला-चिल्लाकर सब्जी बेचने वाला कीमती सूट तथा टाई आदि लगाकर सब्जी बेचे तो यह भी उसके लिए ठीक नहीं होगा । कोई शिक्षक बाजीगर या पॉप सिंगर जैसे कपड़े पहिनकर कक्षा में जाए तो यह भी उसके लिए प्रभावी नहीं होगा । इस प्रकार अध्यापक को उचित वेशभूषा पहिनकर बालों को ढंग से सँवारकर कक्षा में जाना चाहिए । इन सबसे विद्यार्थी पर अच्छा प्रभाव पड़ता है ।

(2). उत्तम स्वास्थ्य (Good health) - अध्यापक कक्षा में भलिभाँति शिक्षण कार्य कर सके तथा विद्यालय के अन्य कार्यक्रमों में रूचि ले सके इसके लिए उसका शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ होना आवश्यक होता है । कहा भी गया है कि "स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है ।"

(3). उच्च कोटि का चरित्र (High rank of character) - एक अध्यापक को चारित्रिक रूप से दृढ़ होना चाहिए क्योंकि अध्यापक के चरित्र का प्रभाव उसके विद्यार्थीयों पर शीध्र ही पड़ता है । अत: अध्यापक को अपने विद्यार्थीयों के समक्ष अपने आपको अच्छे रूप में प्रस्तुत करना चाहिए । कभी उसके सामने गलत या अनैतिक कार्य नहीं करना चाहिए ।

(4). नेतृत्व शक्ति (Leadership power) - एक अच्छे अध्यापक में कुशल नेतृत्व क्षमता भी होनी चाहिए । उसे अपने विद्यार्थीयों को प्रत्येक क्षेत्र शिक्षण-अधिगम, पाठ्य-सहगामी प्रवृत्तियों, किसी विषय में विचार-विमार्श, अनुशासन बनाये रखने आदि में कुशल एवं प्रभावशाली नेतृत्व प्रदान करना चाहिए, जिससे विद्यार्थी इन सभी क्षेत्रों में सफलतापूर्वक कार्य कर सकें ।

(5). धैर्यवान (Enduring) - एक अच्छे अध्यापक को छात्रों के प्रश्न पूछने व अन्य विभिन्न परिस्थितियों में झुंझलाना नहीं चाहिए वरन् धैर्य के साथ सोच-समझकर छात्रों के प्रश्नों के उत्तर देने चाहिए तथा विभिन्न परिस्थितियों में संतुलित रहकर समस्याओं का समाधान करना चाहिए ।

(6). विनोदप्रिय (Humourous) - अध्यापक यदि अपना चेहरा हमेशा कठोर मुद्रा में रखते हैं तो विद्यार्थी उस अध्यापक से अप्रसन्न ही रहते हैं । उससे बात करना पसन्द नहीं करते हैं । अत: अध्यापक को विद्यार्थीयों से सोहद्रपूर्ण तथा मधुर सम्बन्ध बनाने एवं कक्षा शिक्षण में रस और रूचि उत्पन्न करने के लिए विनोदप्रिय होना आवश्यक है ।

(7). निर्णय शक्ति (Decision making power) - प्रभावशाली अध्यापक के लिए यह भी आवश्यक है कि वह किसी भी विषय में शीघ्र निर्णय लेने वाला हो । निर्णय के अभाव में विद्यालय के विभिन्न कार्य असमंजसता की स्थिति में बने रहेंगे जिसका विद्यार्थीयों, प्रधानाध्यापक तथा समाज पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

(8). उत्साह (Enthusiasm) - प्रभावशाली अध्यापक उत्साही होता है । जो भी कार्य उसे दिया जाता है उसे वह पूर्ण उत्साह के साथ करता है । इससे छात्रों में भी उत्साह उत्पन्न होता है

और वे भी उत्साह के साथ अध्यापक का पूर्ण सहयोग करते हैं जिससे कार्य में पूर्ण सफलता मिलने की सम्भावनाएं बढ़ जाती हैं ।

(9). आत्म सम्मान (Self-respect) - एक प्रभावशाली एवं अच्छा अध्यापक वह है जो विद्यार्थीयों, प्रधानाध्यापक व अन्य व्यक्तियों के सामने किसी गलत बात के लिए नहीं झुकता है, किसी प्रकार का अन्याय सहन नहीं करता है, गलत बात के लिए समझौता नहीं करता है । जो अध्यापक अपने कर्त्तव्यों और अधिकारों के प्रति सचेत रहता है वही अपने आत्म-सम्मान की रक्षा कर सकता है ।

(10). कक्षा व्यवहार (Classroom behaviour) - कक्षा में अध्यापक को इस प्रकार का कार्य नहीं करना चाहिए जिसे देखकर विद्यार्थी हँसी उड़ाए । कई बार देखा जाता है कि कई अध्यापकों की शिक्षण के समय एक विशेष प्रकार की क्रिया करने की आदत पड़ जाती है जैसे पढ़ाते समय मुँह मटकाना, पैण्ट की जेब में हाथ डालते रहना, पैण्ट बार-बार ऊपर खिसकाना, पैर हिलाना, आदि । अध्यापक को अपने में ऐसी कोई आदत विकसित नहीं होने देनी चाहिए, जिससे छात्र उसकी हँसी उड़ाए ।

(ई) सम्बन्ध स्थापित करने के गुण (Qualities of relation making) - इस सन्दर्भ में उसे निम्नलिखित व्यक्तियों से संबंध बनाने होते हैं -

चित्र संख्या : 13.7

(1). विद्यार्थीयों के साथ सम्बन्ध (Relation with students) - अध्यापक का कार्य केवल अध्यापन तक ही सीमित नहीं है । उसे यह भी देखना चाहिए कि विद्यार्थीयों पर उसका कितना प्रभाव पड़ता है । प्रत्येक छात्र की ओर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना चाहिए, उनकी समस्याओं का उचित समाधान करना चाहिए, उनके साथ मित्रवत् व्यवहार करे और उनके विश्वास को जीतने का प्रयत्न करे ।

(2). साथी अध्यापकों के साथ सम्बन्ध (Relation with colleagues) - अच्छा अध्यापक वही है जो अपने साथी अध्यापकों के साथ प्रेम और सहयोग का व्यवहार करे, उनके विचारों का आदर करे, उनकी निन्दा अथवा चुगली न करे । विद्यार्थीयों के समक्ष अध्यापक को उन्हें अच्छे उदाहरणों के रूप में रखना चाहिए क्योंकि साथियों के साथ खराब अथवा तनावपूर्ण सम्बन्ध होने पर विद्यार्थीयों पर उसका गलत प्रभाव पड़ता है ।

(3). प्रधानाध्यापक के साथ सम्बन्ध (Relation with head master) - विद्यालय एक परिवार है तथा प्रधानाध्यापक उसका मुखिया । विद्यालय के प्रत्येक कार्य का जिम्मेदार प्रधानाध्यापक होता है किन्तु वह अकेला सभी कार्यों को नहीं कर सकता है और वह अपेक्षा रखता

है कि साथी अध्यापक उसका सहयोग करे तथा एक अच्छा अध्यापक वही है जो प्रधानध्यापक के साथ सहयोगपूर्ण व्यवहार करता है । विद्यालय में चलने वाली विभिन्न क्रियाओं को सफलतापूर्वक सम्पन्न कराने में अपना योगदान करता है ।

(4). अभिभावकों के साथ सम्बन्ध (Relation with parents) - अध्यापक को विद्यार्थीयों के साथ-साथ उनके माता-पिता से भी मधुर सम्बन्ध रखने चाहिए । इसके लिए उसे विद्यार्थीयों के माता-पिता को समय-समय पर बालक की प्रगति से परिचित कराते रहना चाहिए, बालक की समस्याओं के समाधान के लिए विचार-विमर्श करना चाहिए तथा विद्यालय में होने वाले विशिष्ट कार्यक्रमों में उन्हें आमंत्रित करना चाहिए ।

(5). समुदाय के साथ सम्बन्ध (Relation with community) - ऐसे देश में जहाँ लगभग आधी जनसंख्या निरक्षर हो, अध्यापक को समुदाय में नेता के रूप में देखा जाता है, विशेष तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में और छोटे समुदायों में । शैक्षिक रूप से पिछड़े हुए कुछ क्षेत्रों में तो अब भी एकमात्र साक्षर व्यक्ति अध्यापक, ही होता है । समुदाय में उसे अत्यधिक सम्मान मिलता है और उससे नेतृत्व की अपेक्षा होती है । समुदाय में अध्यापक की शिक्षण विशेषज्ञता का उपयोग साक्षरता प्रसार के लिए शैक्षिक नेतृत्व प्रदान करने के लिए और चुनावों में, जनसंख्या के ऑकड़ों के संग्रहण में तथा बड़े पैमाने पर ऐसे अन्य राष्ट्रीय कार्यों में सेवाएं प्रदान करने में किया जाता है जिनके लिए ऐसे प्रशिक्षित व्यक्ति की आवश्यकता होती है । सार्वजनिक सेवा जैसे जिम्मेवार तथा महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए अध्यापकों पर ही भरोसा किया जाता है ।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि अध्यापक होने के लिए, अनेक वैयक्तिक गुणों और व्यावसायिक दक्षताओं को विकसित करना होता है । उसमें इन सभी के स्वत: ही विकसित होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती । अत: उसे प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है ताकि वह अध्यापक के रूप में प्रभावी सिद्ध होने के लिए अपेक्षित जागरूकता,ज्ञान , कौशल और अभिवृत्तियाँ विकसित कर सके ।

13.5.2 अध्यापक प्रशिक्षण (Teachers Training) - इस इकाई के पूर्ववर्ती अनुभागों में हमने देखा कि प्रभावी होने के लिए, व्यक्ति को अनेक वैयक्तिक गुण और व्यावसायिक दक्षताएं विकसित करनी होती है और ये दक्षताएं इतनी जटिल हैं कि अध्यापक अपने बूते पर इनका अर्जन नहीं कर सकता है । अध्यापक बनने के इच्छुक व्यक्ति को प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, केवल प्रारम्भ में ही नहीं, अपितु सेवारत रहते हुए भी समय-समय पर, ताकि वह अपने आपको अद्योतन बनाए रखे । इसलिए अध्यापक शिक्षा को एक सतत् प्रक्रिया माना गया है, जिनके तीन स्पष्ट तथा परम्पर सम्बन्धित चरण हैं । ये चरण निम्नलिखित हैं-

1. सेवापूर्ण प्रशिक्षण
2. प्रेरण प्रशिक्षण
3. सेवाकालीन प्रशिक्षण

1. सेवापूर्ण प्रशिक्षण (Pre-service training) - प्रशिक्षण के इस चरण में विश्वविद्यालय स्तर की संस्था में सामान्यत: एक वर्ष की अवधि के लिए शिक्षाध्ययन करना होता है । प्रशिक्षण के इस चरण में अध्यापक को शिक्षा से सम्बन्धित मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय, दार्शनिक एवं प्रौद्योगिकी पक्षों और सिद्धान्तों के सम्पर्क में लाया जाता है । सेवापूर्ण प्रशिक्षण में सिद्धान्त तथा व्यवहार दोनों ही सम्मिलित होते हैं । सिद्धान्त के माध्यम से

प्रशिक्षार्थियों को शिक्षा से सम्बन्धित दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय पक्षों के साथ-साथ कार्य प्रणाली सम्बन्धी अपेक्षित ज्ञान भी प्रदान किया जाता है । प्रायोगिक प्रशिक्षण के अन्तर्गत विद्यार्थीयों के लिए दत्त कार्य तैयार करने, अपने शिक्षण कार्य के लिए सहायक साधनों के रूप में सहायक सामग्री-चार्ट, रेखाचित्र, मॉडल आदि तैयार करने की योग्यता विकसित की जाती है । इनके अतिरिक्त शिक्षण में समाविष्ट विभिन्न कौशलों की जानकारी दी जाती है तथा उनके प्रयोग करने का अभ्यास कराया जाता है । तत्पश्चात् विद्यालयों में शिक्षण अभ्यास कराया जाता है । ब्लॉक टीचिंग के अन्तर्गत विद्यालय की विभिन्न गतिविधियों एवं उपयोगी पंजिकाओं आदि की जानकारी दी जाती है ।

इस प्रकार सेवापूर्ण प्रशिक्षण की एक वर्ष की अवधि में प्रशिक्षणार्थी अध्यापन कार्य करने के लिए अपेक्षित ज्ञान, कौशलों तथा अभिवृत्तियों को अर्जित कर लेता है तथा विद्यालय कार्यों की सामान्य जानकारी प्राप्त कर लेता है ।

2. प्रेरण प्रशिक्षण (Institutional training) - प्रशिक्षण के इस चरण का उद्देश्य नव-नियुक्त अध्यापकों को उस संस्था की रीतियों, तौर-तरीकों तथा क्रियाकलापों से परिचित कराना है, जहाँ उनकी नियुक्ति हुई है । प्रेरण प्रशिक्षण को सामान्यतः परिवीक्षा काल से जोड़ा जाता है । इसका अभिप्राय कक्षा शिक्षण की वास्तविकताओं की बेहतर समझ प्राप्त करने में तथा शिक्षण-व्यवसाय के गुरों से परिचित होने में अध्यापक की सहायता करना है । उचित प्रेरण प्रशिक्षण विद्यालय के लिए लाभप्रद होता है क्योंकि यह अध्यापक की योग्यताओं के उचित तथा पूर्ण उपयोग के लिए मार्ग तैयार करता है ।

3. सेवाकालीन प्रशिक्षण (In-service training) - अध्यापक शिक्षा का तीसरा चरण सतत् सेवाकालीन प्रशिक्षण है । यह चरण सबसे अधिक दीर्घकालिक तथा अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण होता है । प्रारम्भिक प्रशिक्षण तो अध्यापक को शिक्षण के लिए मात्र एक अनुज्ञापत्र (लाइसेंस) देता है और अध्यापक की जीविका तक 'पहुँच प्रदान करता है । किन्तु इससे व्यवसाय के लिए केवल न्यूनतम आधारभूत ज्ञान और शिक्षण कौशल प्राप्त होते हैं । तथापि प्रभावी रूप से कार्य करते रहने के लिए अध्यापक को बदलते हुए समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप ज्ञान और शिक्षण-कौशलों का वैयक्तिक और व्यावसायिक स्तर पर निरंतर नवीनीकरण तथा कृत्यकों और विशेषज्ञता के पुनः निदेशन की आवश्यकता होती है । अतः प्रत्येक अध्यापक को अपने प्रारम्भिक प्रमाणीकरण के बाद भी प्रशिक्षण प्राप्त करते रहने की आवश्यकता होती है । इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु आजकल विविध प्रकार की प्रणालियाँ अथवा विधियाँ प्रयुक्त की जा रही है । वे निम्नलिखित हैं -

चित्र संख्या : 13.8

1. सी.टी.ई एवं आइ.ए.एस.ई. में आयोजित प्रशिक्षण शिविर (Training camp organized in C.T.E & I.A.S.E.) - शिक्षक शिक्षा कॉलेज एवं शिक्षा के उच्च अध्ययन संस्थानों में माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी अध्यापकों के लिए भारत सरकार की ओर से वर्षभर विषयवार सेवारत शिक्षक प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन होता रहता है । इन संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करके अध्यापक अपने व्यवसाय में उत्कृष्टता प्राप्त कर सकता है ।

2. स्वत: अनुदेशी प्रणालियाँ (Self Instructional Systems) - अध्यापक के लिए आवश्यक जानकारी, समझ तथा कौशल शिक्षा की पुस्तकों और लेखों के पठन जैसे स्वत: अनुदेशी क्रियाकलापों से प्राप्त किए जा सकते हैं । शिक्षण में सुधार लाने की दृष्टि से व्यावसायिक साहित्य का संसाधन के रूप में उच्च प्राथमिकता देते हुए अध्ययन करना चाहिए । राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ने कुछ पुस्तकें और सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा पर कुछ पैकेज बनाए हैं । यह सामग्री अध्यापकों की विशिष्ट आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर तैयार की गई है । ऐसी सामग्री का लाभ यह है कि अध्यापक बाहरी अभिकरणों की बहुत मामूली सहायता लेते हुए अपने ही बूते पर अपना समुन्नयन कर सकते हैं ।

3. कार्यशालाएं (Workshop) - कार्यशालाओं में भाग लेने से अध्यापक अपेक्षित सैद्धान्तिक ज्ञान के अतिरिक्त अपने समक्ष आने वाली समस्याओं के बारे में व्यावहारिक अनुभव भी संचित कर सकता है । कार्यशालाओं का आयोजन सामान्यत: तब किया जाता है जब किसी संस्था को कुछ शैक्षणिक समस्याओं का सामना करना पड जाता है । कार्यशाला सामान्य हितों, समस्याओं की पारस्परिकता आदि जैसे कुछ एक समान कारकों के लिए गठित छोटे समूहों के लिए पर्याप्त क्रियाकलापों के अवसर देती है, जिससे परिचर्चा, आयोजना और समस्या-समाधान सम्बन्धित क्रियाकलाप सुकर हो जाते हैं । इसका मुख्य लाभ यह है कि इसमें विस्तृत और गहन अध्ययन और परिचर्चा के लिए अपेक्षाकृत तनावरहित अवसर मिलता है, व्यक्तियों ओर समस्याओं में एकरूपता होती है तथा इनमें भाग लेने वालों की योजना में सक्रिय भागीदारी होती है ।

4. व्यावसायिक गोष्ठी, सम्मेलन, पैनल परिचर्चा तथा अन्य अध्ययन-कार्यक्रम (Professional conversation, seminars, panel, discussions and other study programmes) - ये अपने समूह सदस्यों को लाभकारी सेवाकालीन शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराते हैं । इनके आयोजन से अध्यापकों को शिक्षण सुधार अभियान में सहायता मिलती है । ऐसे आयोजनों से मिले विचारों, अन्तर्दृष्टि और कौशल अध्यापकों को अपनी कक्षाओं में नवाचारी क्रियाकलापों के परीक्षण के पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराते हैं ।

5. विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम (University syllabus) - हमारे देश में अनेक मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्रीय संस्थान और अध्यापक शिक्षा केन्द्रों में सर्जनात्मक लेखन, अंग्रेजी शिक्षण दूरवर्ती शिक्षा जैसे पाठ्यक्रमों में अनेक सर्टिफिकेट एवं डिप्लोमा पाठ्यक्रम उपलब्ध हैं । ये पाठ्यक्रम अधिकतर निरौपचारिक अभिकरणों द्वारा संचालित किए जाते हैं, अत: अध्यापक सेवारत रहते हुए भी इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश ले सकते हैं । ऐसे पाठ्यक्रमों द्वारा सामान्यतया स्व-शैक्षणिक सामग्री भी दी जाती है । रेडियो तथा दूरदर्शन पर प्रसारित विषयवस्तु आधारित कार्यक्रम ऐसी सामग्रियों को संपूरित करते हैं । अध्यापकों को इन पाठ्यक्रमों का लाभ उठाना चाहिए तथा इनके माध्यम से अपने ज्ञानाधार के साथ-साथ अपनी शिक्षण दक्षताओं का भी समुन्नयन करना चाहिए।

संक्षेप में आजकल अध्यापक को अपने शिक्षण-व्यवसाय में समुन्नयन के लिए अनेक विधियाँ उपलब्ध हैं । उनमें से कुछ हैं - स्व-अध्ययन पाठ्यक्रम, पत्राचार पाठ्यक्रम, नवाचार तथा प्रयोग प्रवर्तक व्यावसायिक साहित्य के प्रति अभिमुखीकरण, सम्मेलन, गोष्ठी, कार्यशाला आदि । अध्यापक का यह दायित्व है कि अपने व्यावसायिक जीवन में आद्योपान्त बेहतर शिक्षण के लिए प्रतिबद्ध हो । इसके लिए आवश्यकता है कि अध्यापक अभिप्रेरणा और व्यवसाय में उत्कृष्टता प्राप्ति की इच्छा से युक्त हो ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. अध्यापक के स्व-विकास की आवश्यकता स्पष्ट कीजिए |
   Clarify the necessity of self-development of teacher.
2. प्रभावी अध्यापक के गुणों का विस्तार से वर्णन कीजिए |
   Describe the qualities of an effective teacher.
3. सेवाकालीन प्रशिक्षण के महत्व के चार कारण बताइये |
   Give four reasons of importance in-service training.
4. सेवाकालिन प्रशिक्षण के पाँच प्रणालियाँ लिखिए |
   Write five systems of inservice training.
5. अध्यापक प्रशिक्षण के विभिन्न चरणों का वर्णन कीजिए|
   Explain the various steps of teacher training

13.6 सारांश
(Summary)

किसी भी राष्ट्र की उन्नति उस राष्ट्र की शिक्षा पद्धति पर निर्भर करती है तथा अध्यापक शिक्षा पद्धति का केन्द्र बिन्दु है । सुयोग्य, दक्ष एवं कुशल अध्यापक राष्ट्र के आधार स्तम्भ होते है । वैसे तो अध्यापक का प्रमुख कार्य अध्यापन है । फिर भी उसे इसके अतिरिक्त भी अनेकों भूमिकाओं का यथा-कक्षा अध्यापक के रूप में, समुदाय के सदस्य के रूप में, नागरिक के रूप में उपबोधक के रूप में एवं व्यवस्थाकर्ता के रूप में निर्वाह करना होता है ।

अध्यापक को कक्षा-अध्यापन, परीक्षा, छात्रों से व्यवहार, प्राइवेट ट्यूशन, साथियों के साथ बर्ताव, प्रकाशकों से सम्बन्ध, व्यावसायिक अभिवृद्धि, सामान्य आचार संहिता, अभिभावकों तथा अन्य वर्गों से सम्बन्ध एवं अध्यापक संगठन की सदस्यता आदि के सन्दर्भ में स्वयं से नैतिक प्रश्न करते हुए अपने लिए आचास्संहिता बनाकर उसका पालन करना चाहिए ।

यदि अध्यापक अध्यापन व्यवसाय को पसन्द नहीं करता है तथा विवशता के कारण अध्यापन व्यवसाय को अपनाता है तो वह अपने व्यवसाय के साथ न्याय नहीं कर पाएगा । अत: अध्यापक को अध्यापन व्यवसाय के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करना चाहिए ।

अध्यापक की अभिवृत्ति जब अध्यापन व्यवसाय के प्रति सकारात्मक होगी तभी वह व्यावसायिक के नाते अपना स्व-विकास कर सकता है । प्रभावी अध्यापक बनने हेतु उसमें

विभिन्न प्रकार के शैक्षिक, व्यावसायिक, व्यक्तित्व सम्बन्धी एवं सम्बन्ध स्थापित करने से सम्बन्धित गुण होने आवश्यक हैं । इनके अतिरिक्त अपने विकास के लिए उसे सेवापूर्ण प्रशिक्षण, प्रेरण प्रशिक्षण एवं सेवाकालीन प्रशिक्षण भी प्राप्त करना चाहिए ।

13.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

- वर्मा जी.एस,शैक्षिक तकनीकी के मूलाधार एवं प्रबंध, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस मेरठ 2004, पृ. 487-525 ।
- अग्रवाल जे.सी., शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्ध, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा 2003, पृ. 401-424 ।
- चौबे एस.पी. एवं अखिलेश, शिक्षा के दार्शनिक समाशास्त्रीय आधार, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 2002 पृ. 250-254 ।
- वशिष्ठ के.के, विद्यालय संगठन एंव भारतीय शिक्षा की समस्याएं, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 1993, पृ. 19-32 ।
- श्रीवास्तव जे.पी. एवं मित्तल एम.एल., आधुनिक भारतीय शिक्षा, ईगल बुक्स इण्टरनेशलन, मेरठ, 1994, पृ. 145-177 ।
- Rajan K.M(1997) : Teachers Role in three Organisational Models,New Frontiers in Education .Vol.XXVII, No.1, Jan-March 1997, P. 63-80
- Rajput J.S. (1997) : Role of Teacher in 21st Century , New Frontiers in Education .Vol.XXVII, No.1, Jan-March 1997, P. 69-71
- Nayar , P.R Deve, P.N and Arora, K. (1982) : The Teacher and Education in Emerging Indian Society ,New Delhi , P.217-226.
- Grelach, V.S and Ely D.P. (1980) Teaching and Media : A Systematic Approach, Prentice-Hall Inc. New York.
- Crow, L.D & Crow, A (1956) Human Development and Learning, Eurasia Publishing House, New Delhi.
- Passi, B.K. (1976) : Becoming Better Teacher-Micro Teaching Approach, Sahitya Mudranalya, Ahmedabad

इकाई-14

शिक्षकों के सतत् व्यवसायिक विकास के अवसर (Avenues of continuous Professional Development of Teachers)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

14.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

14.1 शिक्षकों के सतत् व्यावसायिक विकास के अवसर (Avenues of continuous Professional Development of Teachers)

14.2 सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा में दूरस्थ / खुली शिक्षा की भूमिका (The role of DE mode in in-service teacher education)

14.3 सेवारत अध्यापक शिक्षा के लिए विभिन्न कार्यक्रम (Different schemes of in-service teacher education)

14.4 संदर्भ सूची (Bibliography)

अध्यापकों के अनवरत व्यावसायिक विकास के अवसर ,सेवारत अध्यापक शिक्षा में शिक्षा की रीति की भूमिका, सेवारत अध्यापक शिक्षा की विभिन्न योजनाएँ

*Avenues of continuous Professional Development of Teachers, The role of Distance Education mode in In-service teacher education, different schemes of in-servic*e teacher education.

14.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप-

- व्यवसायिक विकास के अर्थ को समझ सकेंगे ।
- व्यवसायिक विकास के महत्व को समझ सकेंगे ।
- शिक्षकों के व्यवसायिक विकास में अध्यापक शिक्षा की भूमिका को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा में दूरस्थ / खुली शिक्षा की भूमिका की व्याख्या कर सकेंगे ।
- सेवारत अध्यापक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय विभिन्न कार्यक्रमों को समझ सकेंगे ।
- सेवारत अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों से लाभान्वित हो सकेंगे ।

14.1 शिक्षकों के सतत् व्यावसायिक विकास के अवसर

किसी व्यवसाय की प्रगति निश्चितत: उसके सदस्यों के निरंतर विकास पर निर्भर करती है |उन्नत देशों में विभिन्न कार्य क्षेत्रों के व्यावसायिक (Professional) गत दशकों से इस बात के प्रति सजग हैं कि उस क्षेत्र के सदस्यों में व्यावसायिक विकास के लिए वह प्रणाली अथवा संस्था ही उत्तरदायी हैं । किसी भी कार्यक्षेत्र में सदस्यों की उन्नति उनके व्यावसायिक प्रशिक्षण एवं समय-समय पर कार्यकर्त्ताओं द्वारा प्रदर्शित निष्पादन से सम्बद्ध होती है ।

व्यावसायिक विकास का सम्प्रत्यय इस समय अति महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र में ज्ञान की दर निरन्तर बढ़ रही है । अत: प्रत्येक व्यावसायिक (Professional) को अपने कार्यक्षेत्र की नवीनतम 'जानकारियों' से अद्यतन होना आवश्यक है । जब वे अपने कार्यक्षेत्र अथवा व्यवसाय में पूर्णत: दक्ष एवं विशिष्ट ज्ञान से युक्त होते हैं तब ही वह प्रत्येक दैनिक कार्य का बेहतर तरीके से निष्पादन कर सकेंगे । वास्तव में किसी व्यवसाय में अक्षम अथवा अल्प कौशल युक्त सदस्य देश के मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का अपव्यय करने वाले होते हैं ।

अक्षम एवं अल्प कौशल युक्त पुरुष एवं महिला की कोई सामाजिक-उपयोगिता अथवा मूल्य नहीं है । उनके निर्देशन एवं विशेषज्ञता से समाज अपनी समस्याओं का समाधान नहीं कर पाता है । वह देश के लिए अनुपयोगी होते हैं एवं समाज विरोधी माध्यमों से देश की प्रतिभा एवं ऊर्जा के निरन्तर निष्कासन का कारण बनते हैं । अत: उपरोक्त कारणों के आधार पर कहा जा सकता है कि आज के आधुनिक समय में व्यावसायिक विकास से सम्बद्ध दो महत्त्वपूर्ण कारक हैं- प्रत्येक व्यवसाय के सदस्य को अपने व्यवसाय के प्रति नैतिक रूप से प्रतिबद्ध होना चाहिए तथा उसे अपने व्यवसाय के साथ-साथ अन्य व्यावसायों का भी सम्मान करना चाहिए ।

किसी भी प्रगतिशील व्यवसाय के सदस्यों को निम्न मानदण्डों के आधार परीक्षित किया जाना चाहिए ।

- किसी व्यवसाय का सदस्य अपने व्यवसाय के ज्ञान एवं कौशलों में अद्यत्न है?
- सेवा कार्य के दैनिक निष्पादन में दक्षता का प्रदर्शन करता है?
- क्या उनकी सेवा देश एवं समाज की आवश्यकता एवं समस्या के अनुकूल है?
- एक समूह के रूप में वह व्यवस्थित एवं अनुशासित है?
- अपने वृत्तिक अभ्यासों में क्या वह ईमानदार, समर्पित एवं निष्पक्ष है?

उपरोक्त मानदण्डों के आधार पर देश में शिक्षण व्यवसाय को भी मापने की आवश्यकता है । इस संदर्भ में अनेक प्रश्न उभरते हैं- विद्यालयों द्वारा शिक्षक किस प्रकार नियुक्त किए जाते हैं? वे प्रशिक्षण के लिए कैसे चयनित होते हैं? उनकी निरन्तर व्यावसायिक वृद्धि हेतु कौनसे उद्दीपन दिए जाते हैं? सेवाकाल में उनकी क्षमताओं को कैसे मूल्यांकित किया जाता है? वह एक समूह के रूप में कैसे संगठित होते हैं? समुदाय के प्रति उनकी नैतिक प्रतिबद्धता क्या है?

हमारे देश में शिक्षकों की नियुक्ति उनकी अकादमिक डिग्री, डिप्लोमा के आधार पर की जाती है । जो शिक्षा में सेवापूर्व व्यावसायिक प्रशिक्षण के रूप में आवश्यक है । यद्यपि उन्हें निर्धारित समय पर ग्रेड एवं स्केल भी प्राप्त होते हैं किन्तु इनमें से अधिकांश अपने कार्य में उद्देश्यहीन होते हैं व अधिक समय तक प्रसन्न नहीं रहते हैं । कुछ शिक्षक अपने व्यवसाय के प्रति कम समर्पित होते हैं । प्राय: वे शिक्षण को अस्थायी व्यवसाय या सर्वोत्तम कैरियर ट्रेन का प्रतीक्षालय मात्र मानते हैं ।

कोई शिक्षक अपने शिक्षण व्यावसाय हेतु कितना निष्ठ, प्रतिबद्ध और समर्पित है यह पूर्णत: व्यक्तिगत संदर्भ है । यह उसकी स्वयं की क्षमता एवं सामाजिक परिस्थिति पर तो निर्भर करता ही है साथ ही उसकी सेवापूर्व के प्रशिक्षण से भी प्रभावित होता है हमारे देश में सेवा पूर्व शिक्षक प्रशिक्षण को इस व्यवसाय का अनिवार्य अंग अथवा शर्त माना है ।

यह ज्ञातव्य है कि विद्यालय जाने वाले विद्यार्थीयों की विशेषताएँ अवस्थानुसार भिन्न-भिन्न होने के कारण देश में सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था को अनेक स्तरों में विभाजित किया गया है तथा प्रत्येक स्तर के अनुसार शिक्षक तैयार करने हेतु शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं । यदि हम माध्यमिक स्तरीय अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम की चर्चा करें तो देश में माध्यमिक स्तर के लिए शिक्षकों को तैयार करने का दायित्व माध्यमिक अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम का हैं ।

अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम एक व्यावसायिक (Professional) कार्यक्रम है, जो कि अन्य किसी भी 'अकादमिक' कार्यक्रम से भिन्न है । इस कार्यक्रम द्वारा व्यक्ति को एक विशिष्ट व्यवसाय के लिए तैयार किया जाता है, इसीलिए इस कार्यक्रम की प्रकृति, उद्देश्य, विषयवस्तु कार्य विधि, संरचना तथा अधिगम प्रक्रिया में भी अन्य कार्यक्रमों से भिन्नता एवं विशिष्टता दृष्टिगोचर होती है । इस व्यावसायिक कार्यक्रम से रखी जाने वाली अपेक्षाएँ भी अन्य अकादमिक कार्यक्रम से भिन्न होती है । इस सन्दर्भ में इस व्यावसायिक कार्यक्रम का विद्यार्थी विशिष्ट ज्ञान एवं कुशलताओं की प्राप्ति हेतु तो प्रयासरत रहता ही है साथ ही समाज की अपेक्षाओं एवं दायित्वों के निर्वहण हेतु भी स्वयं को तैयार करता है । वह शिक्षण व्यावसाय के क्षेत्र एवं उसके विभिन्न पक्षों के ज्ञान को आत्मसात करने के लिए आवश्यक दक्षताओं, सुग्राहिता, आत्मविश्वास एवं तकनीकों का किसी परिपक्व व्यवसायी के सान्निध्य में अभ्यास करता है ।

अध्यापक-शिक्षा, एक व्यावसायिक शैक्षिक कार्यक्रम के रूप में, इसी प्रकार के अन्य कार्यक्रमों के साथ विभिन्न विशिष्टताओं का विनिमय करता है किन्तु फिर भी यह अन्य व्यावसायिक कार्यक्रमों यथा- चिकित्सा, अभियांत्रिकी, कानून, नर्सिंग, प्रबन्धन आदि से पृथक् है । अध्यापक शिक्षा का क्षेत्र अधिक व्यावहारिक तथा अन्तर्विषयक प्रकृति का है, इसके ज्ञान की प्रकृति आधारभूत नहीं है । यह क्षेत्र-आधारित है, जिसमें कार्यक्षेत्र सम्बन्धी घटकों व प्रक्रियाओं की सैद्धान्तिक समझ, उसके व्यावहारिक प्रयोग एवं दोनों के समन्वय की आवश्यकता अनुभव होती है।

अध्यापन व्यावसाय में शिक्षक की अपने छात्रों के साथ प्रत्यक्ष अन्तःक्रिया होना अनिवार्य है । ऐसे सक्षम शिक्षकों को तैयार करने वाली व्यावसायिक शिक्षा के सन्दर्भ में प्रश्न उठते हैं कि द्रुत परिवर्तनों से युक्त समाज में जहाँ आज का ज्ञान भविष्य में निष्प्रभावी हो सकता है, वहाँ शिक्षार्थी अध्यापकों को एक व्यावसायिक (Professional) के रूप में तैयार कैसे किया जाए? व्यावसायिक शिक्षा में अधिगम प्रक्रिया किस प्रकार संचालित की जाए कि विद्यार्थीयों के संज्ञानात्मक (Cognitive), भावात्मक (Affective) एवं मनोगत्यात्मक (Conative) पक्ष पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड सके ।

अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम द्वारा शिक्षार्थी अध्यापकों (Student-Teachers) के संज्ञानात्मक भावात्मक एवं मनोगत्यात्मक पक्ष में सकारात्मक परिवर्तनों द्वारा उन्हें, समाज द्वारा निर्धारित एवं अपेक्षित भूमिकाओं के निर्वहण हेतु तैयार किया जाता है । शिक्षार्थी अध्यापकों को अपने व्यावसायिक क्षेत्र को प्रत्यक्षीकृत करने, अपेक्षित भूमिकाओं का अनुभव

करने, क्षेत्र की परिस्थितियों सम्भाव्यताओं एवं प्रभावक कारकों का अवबोध करने; विविध प्रकार की परिस्थितियों में कार्य करने में दक्ष बनने, अपने व्यावसायिक कार्यों को करने में निर्णय लेने एवं आत्म विश्वास से परिपूर्ण बनाया जाता है । यह ज्ञातव्य है कि शिक्षार्थी अध्यापकों को सच्चा व्यावसायिक बनने के लिए सम्प्रत्ययात्मक अवबोध, तकनीकी दक्षता तथा शिक्षण के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति, सजगता एवं प्रतिबद्धता होना आवश्यक है ।

अध्यापक शिक्षा एक जीवन पर्यन्त चलने वाली व्यावसायिक विकास की प्रक्रिया है जो अध्यापकों की तैयारी से आरम्भ होती है तथा उनके सम्पूर्ण कैरियर के दौरान चलती है । अनेक विद्यवानों ने यह माना है कि व्यावसायिक विकास की प्रक्रिया में शिक्षक को विषयक्षेत्र एवं शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया की समझ तथा अधिगम पर व्यक्तिगत भिन्नताओं के प्रभाव की सुदृढ़ पृष्ठभूमि से युक्त होना आवश्यक है ।

अध्यापकों के व्यावसायिक विकास में अनुकूल दक्षताओं को अद्यतन करना, सुदृढ़ एवं तीक्ष्ण बनाना तो शामिल है ही साथ ही व्यवसाय की विभिन्न प्रक्रियाओं में अवबोध तथा अन्तर्दृष्टि का विकास भी आवश्यक है । **इन्टरनेशनल डिक्शनरी ऑफ एडल्ट एण्ड कन्टीन्यूइंग एजूकेशन (1990)** के अनुसार - व्यक्ति के व्यक्तित्व में अनेक पक्ष होते हैं, सामाजिक, सांवेगिक, सौन्दर्यात्मक, नैतिक आदि । व्यक्ति, व्यक्तित्व के इन पक्षों की प्रगति अथवा विकास के लिए प्रयासरत रहता है । व्यक्तित्व का एक पक्ष अन्य पक्षों के विकास को प्रभावित करता है । व्यक्ति के व्यक्तित्व का व्यावसायिक पक्ष उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहण करता है । अत: कहा जा सकता है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास तथा उसके कार्यों को सर्वोत्तम तक पहुंचाने के लिए उसका व्यावसायिक विकास आवश्यक है ।

Hoyle (1980) के अनुसार 'वृत्तिक विकास विषय का ज्ञान तथा शिक्षण दक्षताओं की प्राप्ति है।'

Joyce & Showers(1980) प्रत्येक शिक्षक, सेवा से पूर्व तथा सेवाकाल में निरन्तर अधिगम करता है। स्वयं के ज्ञान कौशलों और दृष्टि का पुनरावलोकन एवं पुनर्नवीनीकरण करना प्रत्येक शिक्षक के लिए अनिवार्य है । शिक्षक के व्यावसायिक विकास की विविध विशेषताएँ इस प्रकार है-

- वृत्तिक विकास आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है जो सेवा पूर्व से आरम्भ होती है तथा सम्पूर्ण सेवाकाल में चलती है। विद्यालय में प्रगतिपूर्ण परिवर्तनों की प्राप्ति हेतु वृत्तिक विकास एक वाहन की भांति है ।
- व्यावसायिक विकास एक निरन्तर एवं नियमित चलने वाली प्रक्रिया है ।
- संस्था का प्रजातान्त्रिक वातावरण व्यक्ति के व्यावसायिक विकास, संगठन की प्रगति एवं व्यक्तित्व विकास को तीव्र उद्दीप्त करता है ।
- व्यावसायिक विकास में व्यक्ति के विकास एवं संस्था के विकास को शामिल किया जाता है|
- व्यावसायिक विकास, विद्यार्थीयों की आवश्यकता तथा अधिगम निर्गत पर संकेन्द्रण करता है ।
- व्यावसायिक विकास सामान्य तथा विषय विशेष की दक्षताओं का संयोजन है ।

- व्यावसायिक विकास के लिए विद्यालय द्वारा स्पष्ट नीतिगत योजनाएँ होनी अनिवार्य हैं।

सेवा पूर्व अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम का उद्देश्य भावी शिक्षकों में न्यूनतम आवश्यक दक्षताओं का विकास करना है । वर्तमान परिवर्तनीय समाज में विद्यालय पाठ्यक्रम की मांग, विविध विद्यालय परिस्थितियों, सूचना तकनीकी के द्रुत विकास के कारण शिक्षक को अपने ज्ञान व दक्षताओं को निरन्तर एवं तीक्ष्ण बनाने की आवश्यकता है । इसके लिए शिक्षक को सदैव अद्यतन परिवर्तनों, अपने व्यवसाय की प्रकृति एवं उसकी मांग के प्रति सजग रहने की आवश्यकता है । सेवापूर्व कार्यक्रम के माध्यम से शिक्षार्थी-अध्यापकों तथा सेवाकालीन कार्यक्रमों द्वारा शिक्षकों में मात्र दक्षताओं का विकास करना पर्याप्त नहीं होगा वरन् उन्हें मानसिक एवं भावात्मक निवेश देने की भी आवश्यकता है ताकि वह समायोजित, तार्किक, नवाचारी, सर्जक एवं स्व-प्रेक्षक बन सकें। (हौवे एवं स्टॉम 1987)

शुलमैन (Shulmen) ने 1987 में व्यावसायिक विकास हेतु 7 प्रकार के शिक्षण ज्ञान बताए हैं-

- विषय ज्ञान ।
- सामान्य विधि सम्बन्धी ज्ञान ।
- पाठ्यक्रम निर्माण सम्बन्धी ज्ञान ।
- अधिगमकर्त्ता की विशिष्टता सम्बन्धी ज्ञान ।
- समूह की विशेषता, कक्षा तथा विद्यालय प्रशासन, समुदाय एवं संस्कृति सम्बन्धी ज्ञान ।
- शिक्षा के लक्ष्य, उद्देश्य, मूल्य तथा इनकी दार्शनिक व ऐतिहासिक पीठिका ।
- विषय के साथ विधि सम्बन्धी ज्ञान ।

इस प्रकार विभिन्न विद्वानों ने शिक्षण को व्यावसाय मानते हुए शिक्षक में विभिन्न व्यावसायिक गुणों का होना अनिवार्य माना है तथा शिक्षकों के व्यावसायिक विकास का दायित्व अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम को सौंपा गया है।

शिक्षकों का व्यावसायिक विकास, कार्य क्षेत्र में संतुष्टि तथा स्व-प्रत्यय के बढ़ाने में सहायक होता है अत: शिक्षकों के व्यवस्थित रूप से व्यावसायिक विकास पर बल दिये जाने की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी परिणामस्वरूप देश में अनेक सेवाकालीन कार्यक्रमों के माध्यम से शिक्षकों का विकास करने की पहल की गयी । राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने सेवापूर्व एवं सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों को पृथक् कर अध्यापक शिक्षा में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया । जिसने शिक्षकों की व्यावसायिक वृद्धि तथा सेवाकालीन शिक्षा को संस्थागत बनाने की दृष्टि को मूर्त रूप प्रदान किया । राष्ट्रीय स्तरीय संस्था - राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT), राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (NCTE), राष्ट्रीय शैक्षिक नियोजन एवं प्रशासन संस्थान (NIEPA), सांस्कृतिक संसाधन एवं प्रशिक्षण संस्थान (CCRT), राज्यीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (SCERT), उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान (IASE), जिला शिक्षा प्रशिक्षण संस्थान (DIET) एवं अध्यापक शिक्षा के कॉलेज (CTEs) के माध्यम से सेवापूर्व तथा सेवाकालीन कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं जिन्होंने शिक्षकों के व्यावसायिक विकास के प्रति विभिन्न उपगामों पर पुनर्विचार हेतु वांछित मार्ग प्रशस्त किया है ।

14.2 सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा में दूरस्थ / खुली शिक्षा की भूमिका (The role of Distance Education mode in In-service teacher education)

वर्तमान में सामाजिक लक्ष्य, शैक्षिक संरचना, पाठ्यक्रम प्रारूप, अधिगम अनुभव, मूल्यांकन तकनीक एवं व्यवस्थापन नीति में निरन्तर परिवर्तन दृष्ट्व्य है । शिक्षा के क्षितिज पर नवाचारों का उदयीमान हो रहा है । ऐसे में बहुत पहले प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके शिक्षक प्रभावी होंगे, वह अपनी पारम्परिक मान्यताओं, कुशलताओं के साथ दीर्घकाल तक सफलता प्राप्त कर सकेंगे । इसकी संभावना कम ही प्रतीत होती है । वर्तमान अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम भी यह दावा नहीं कर सकता है कि सेवापूर्व अध्यापक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् शिक्षक आगामी चार दशकों तक बगैर किसी अकादमिक और व्यावसायिक निवेश के अपने क्षेत्र में सफल हो पाएंगे ।

द्रुत गति से हो रहे वैज्ञानिक एवं तकनीकी परिवर्तनों से शिक्षा क्षेत्र में नये सम्प्रत्ययों, सिद्धान्तों एवं दर्शन का उदय हुआ है । जहाँ पहले शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक और पाठ्यक्रम महत्वपूर्ण था वहीं अब तक बालक-केन्द्रित प्रतिमान महत्वपूर्ण है । मानव समाज ने शिक्षा को जन समुदाय के लिए सुलभ बनाने की तथा शैक्षिक समानता की सुविधा दी है, वहीं आज की नव शताब्दी में बालक की सभी क्रियाएँ उच्च ज्ञान-आधारित हैं । साथ ही तीव्र वैश्वीकरण, उदारीकरण और बाजार केन्द्रित अर्थ व्यवस्था ने हमारी क्रियाओं को नये आयाम दिए हैं ।

शिक्षा की गुणवत्ता काफी हद तक शिक्षकों की गुणवत्ता पर निर्भर करती है जो इसे विकसित और संचालित करते हैं । शिक्षा के पुनर्नवीनीकरण पुनर्संगठन और पुन: निर्देशन में शिक्षक महत्वपूर्ण संसाधन है । अत: शिक्षकों के निरन्तर व्यावसायिक विकास करने और उन्हें अद्यतन बनाने हेतु सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम अनिवार्य है । वर्तमान में अनेक योजनाएँ और संस्थाएँ सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा हेतु प्रयासरत है । प्रत्येक राज्य में राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (SCERT) कार्यरत हैं । यह प्रत्येक स्तर के शिक्षकों, अनुदेशकों व अन्य शैक्षिक प्रशिक्षकों के लिए सेवाकलीन शिक्षा कार्यक्रम को नियोजित, प्रायोजित, नियंत्रित एवं मूल्यांकित करने की महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है ।

राज्य शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण संस्थान (SCERT), जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (DIET), उच्च शैक्षिक अध्ययन संस्थान (IASE), कॉलेज ऑफ टीचर एजुकेशन (CTE) प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षकों के लिए सेवाकालीन शिक्षा हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण अभिकरण है। यह सभी संस्थाऐं सेवाकालीन शैक्षिक कार्यक्रमों को आमने-सामने (Face to Face) अर्थात औपचारिक रूप में संगठित करते हैं किन्तु यह सभी शिक्षकों को निर्धारित समय में अल्पकालिक या दीर्घकालिक प्रशिक्षण प्रदान करने में कठिनाई अनुभव कर रहे थे और वह भी तब जब कि अधिक संख्या में शिक्षकों को एक साथ प्रशिक्षित करना हो । ऐसे में दूरस्थ अथवा खुली शिक्षा महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में उभर कर आया । दूररथ शिक्षा, अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता बढाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहा है ।

शिक्षक प्रशिक्षण में दूरस्थ माध्यम की भूमिका को स्वीकारते हुए NCTE (राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद्) द्वारा जनवरी 1990 में प्रो. एम.बी.बुच की अध्यक्षता में *Committee*

for teacher Education Programme Through Distance Education mode का गठन किया गया । प्रो. जी. राम रेड्डी की अध्यक्षता में शिक्षा की केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड दूरस्थ शिक्षा समिति- 1992 *(Central Advisory Board of Education Committee on Distance Education 1992*) तथा प्रो. खेरमा लिंगदोह की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा बी.एड. पत्राचार एवं दूरस्थ शिक्षा कार्यकम आयोग- 1994, *(Committee of University Grants Commission On B.ED Correspondence/ Distance Education Programme 1994)* सेवाकालीन शिक्षकों के लिए बी.एड. पत्राचार - 1995 *(B.ED Through Correspondence for In-service Teachers-1995)* और भारत में शिक्षक तैयारी हेतु प्रयुक्त विभिन्न माध्यमों पर राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद की समिति- 1995 *(Committee of National Council for Teacher Education on Different Modes of Education used for Teacher Peparation-1995*) गठित की गयी ।

इन समितियों एवं आयोगों के गठन का उद्देश्य बी.एड. (पत्राचार) कार्यक्रम की वर्तमान स्थिति का पुनरावलोकन करना तथा सेवाकालीन शिक्षकों के लिए सतत् व्यावसायिक विकास के प्रयासों पर विचार करना, दूरस्थ शिक्षा के सम्प्रत्यय, उद्देश्य, स्थिति, शिक्षा में इसकी भूमिका पर विचार करना था । वास्तव में यह अनुभव किया जा रहा है कि बहुत संख्या में शिक्षकों को निरन्तर सेवाकालीन शिक्षा प्रदान करने में वर्तमान औपचारिक संस्थाएं भौतिक सुविधा की दृष्टि से अपर्याप्त हैं । यह सत्य है कि औपचारिक माध्यमों द्वारा सेवाकालीन शिक्षकों को पर्याप्त समय के प्रशिक्षण हेतु अनुकूल भौतिक सुविधाएँ प्रदान नहीं की जा सकती है । ऐसे में शिक्षकों को अपने कार्यस्थल पर रहते हुए सेवाकालीन प्रशिक्षण प्राप्त करने में दूरस्थ / खुली शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

भारत के साथ-साथ विश्व के अन्य विकासशील एवं विकसित राष्ट्र भी जब 'सबके लिए शिक्षा की चुनौती का सामना कर रहे थे तब दूरस्थ शिक्षा या मुक्त अधिगम व्यवस्था एक विकल्प के रूप में सामने आया । शिक्षा के क्षेत्र में दूरस्थ शिक्षा महत्वपूर्ण नवाचार के रूप में उभर कर आया । **होल्मबर्ग (1977) के अनुसार**- "दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम द्वारा सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा तथा उनकी भावी दक्षताओं के उन्नयन के लिए महत्वपूर्ण उपकरण है । यह शिक्षक-प्रशिक्षण के लिए लचीली व्यवस्था प्रदान करता है ।

दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षकों की व्यावसायिक वृद्धि में उपयोगी सिद्ध हुआ है । शिक्षा का यह माध्यम अधिकाधिक (बहुसंख्या में) शिक्षकों को उनके घर द्वार तक आवश्यक सेवाकालीन शिक्षा की सुविधा प्रदान करता है ।

अति महत्वपूर्ण एवं सेवारत शिक्षकों के सतत् व्यावसायिक विकास में उपयोगी दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम के कतिपय उद्देश्य इस प्रकार हैं-

- दूरस्थ अधिगम निवेशों के माध्यम से वर्तमान में चल रहे सेवाकालीन कार्यक्रमों को सहयोग करना है ।
- सेवाकालीन शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए दूरस्थ अधिगम निवेशों एवं सामग्रियों के प्रारूपण, विकास, उत्पादन एवं प्रदान करने में तकनीकी सहयोग प्रदान करता है ।
- दूरस्थ निवेश एवं सामग्री के निर्माण के द्वारा राष्ट्र, राज्य, जिला एवं उपजिला स्तर पर लोगों में दक्षता विकसित (Capacity Build) करना है ।

- चयनित स्तरीय शिक्षकों के लिए सामग्री का विकास करता है तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम संगठित करता है ।

इन उद्देश्यों के साथ दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता बढाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहा है । सेवारत शिक्षकों के सतत् व्यावसायिक विकास में इस कार्यक्रम की भूमिका इस प्रकार है-

- o अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता शिक्षक अध्यापकों की दक्षता पर निर्भर करती है क्योंकि यह शिक्षकों की नींव का कार्य करती है । वर्तमान परिस्थिति में जहाँ प्रति वर्ष नये बी.एड. कॉलेज खुलने की मान्यता राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (NCTE) एवं सरकार से प्राप्त हो रही है ऐसे में उन कॉलेजों में अध्यापन कार्य करने वाले अध्यापकों की दक्षता से भी सभी परिचित है तब अनिवार्य हो जाता है कि अल्प ज्ञान व कौशल से युक्त शिक्षकों को सेवाकालीन प्रशिक्षण से अद्यतन बनाया जाए । दूरस्थ शिक्षा में दक्ष एवं निष्णातों द्वारा तैयार विषय सामग्री के अध्ययन एवं प्रशिक्षण से शिक्षक निरन्तर अपना व्यावसायिक विकास कर सकते हैं ।
- o औपचारिक माध्यम द्वारा एक समय में बहुत बड़े समूह को प्रशिक्षित एवं पुनर्प्रशिक्षित नहीं किया जा सकता । तथा यह प्रक्रिया दीर्घकालिक एवं व्ययी होगी क्योंकि सेवाकालीन प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले शिक्षकों की संख्या अधिक है और एक बार में प्रशिक्षण प्राप्त कर सकने वाले शिक्षकों की संख्या कम । अत: एक समय में अधिकाधिक शिक्षकों को पुनर्प्रशिक्षित करने में दूरस्थ शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है ।
- o दूरस्थ / खुली शिक्षा में यह क्षमता है कि यह शिक्षकों के विविधिकृत (Diversified) समूह को सम्प्रेषण की विभिन्न तकनीकी के उपयोग द्वारा (किन्तु मूल्य बचत की अपेक्षाओं के साथ) शिक्षित कर सकता है ।
- o अनेक व्यक्तिगत एवं सामाजिक परिस्थितियों के कारण महिला शिक्षिकाएँ अपने कार्य स्थल से दूर संगठित किए गए कार्यक्रमों में उपस्थित होने में असमर्थ रहती है । अत: वे अपने कार्य क्षेत्र में रहते हुए दूरस्थ शिक्षा द्वारा संचालित कार्यक्रमों का लाभ उठा सकती हैं ।
- o विद्यालय में अध्यापन के अतिरिक्त दायित्वों का वहन करने वाले शिक्षक, एकल शिक्षक विद्यालय ते शिक्षक और दूर स्थित कार्यरत शिक्षकों के सतत् व्यावसायिक विकास में दूरस्थ शिक्षा महती भूमिका का निर्वहन कर रही है ।
- o विविध विधियों एवं तकनीकों के प्रयोग द्वारा सेवाकालीन शिक्षकों में ज्ञान का अद्यतन करने तथा कौशलों का विकास करने में दूरस्थ शिक्षा का अपूर्व योगदान है ।
- o प्रभावी एवं गुणात्मक सेवापूर्व अध्यापक शिक्षा प्रदान करने में दूरस्थ शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है ।
- o ऐसे शिक्षक जो अल्प योग्यता के बावजूद शिक्षा व्यवस्था में कार्य कर रहे हैं उन्हें उन विषय क्षेत्रों में -अद्यतन करना जिनमें वह अपर्याप्त हैं । दूरस्थ शिक्षा ऐसे शिक्षकों की दक्षता विकास द्वारा मदद करती है ।
- o वे शिक्षक जो अपनी योग्यता बढ़ाना चाहते हैं उन्हें अवसर देती है जैसे प्राथमिक शिक्षक यदि सैकण्डरी या सीनियर सैकण्डरी शिक्षक बनना चाहता है तब वह अपनी आवश्यक

योग्यता को दूरस्थ शिक्षा द्वारा बढ़ा सकता है । इस प्रकार दूरस्थ शिक्षा शिक्षकों की अपने कैरियर में गतिशीलता (Mobility) लाने के लिए महत्वपूर्ण व्यावसायिक विकास का कार्यक्रम है ।

- शिक्षक अपनी गति, सुविधा तथा उपलब्ध समय के अनुसार डिग्री, डिप्लोमा अथवा किसी व्यावसायिक कार्यक्रम के लिए प्रमाण पत्र प्राप्त कर अपनी सेवा को जारी रखते हुए स्वयं का व्यावसायिक विकास कर सकते है ।

14.3 सेवारत अध्यापक शिक्षा के लिए विभिन्न कार्यक्रम (Different schemes of In-service teacher education)

यद्पि विद्यालय शिक्षा के विषय तथा शिक्षकों की शिक्षा का दायित्व राज्य सरकार का है । किन्तु सेवारत अध्यापक शिक्षा, विद्यालय शिक्षकों एवं अन्य सम्बद्ध व्यक्तियों के सतत् व्यावसायिक विकास को सहयोग करने में अनेक राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय संस्थाएँ कार्यरत है। इनमें से कतिपय केन्द्र एवं राज्य सरकार के नियंत्रण में है और अनेक स्वायत्त एवं निजी संगठन भी है जो शिक्षकों के सतत् व्यावसायिक विकास में संलग्न हैं । यह संस्थाऐं और इनके कार्य इस प्रकार हैं-

1. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (National Council of Educational Research and Training 'NCERT') -एन.सी.ई.आर.टी. भारत सरकार से वित्तीय सहायता प्राप्त एक स्वायत्तशासी संस्था है जिसका गठन 1961 में किया गया । इस संस्था का गठन मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सुझाव एवं निर्देशन में भारतीय विद्यालय शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए आवश्यक अकादमिक सहयोग देने तथा विद्यालय शिक्षा के लिए नीति एवं प्रमुख कार्यक्रमों के निर्धारण एवं नियोजन हेतु किया गया ।

एन.सी.ई.आर.टी. प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तरीय सेवारत शिक्षकों की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए अनेक कार्यक्रमों का संचालन करती है । यथा-

- विद्यालय आधारित सेवारत शिक्षा एवं प्रशिक्षण ।
- प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षक - अध्यापकों के लिए संगोष्ठी का आयोजन ।
- सूक्ष्म शिक्षण व प्रतिमान शिक्षण के लिए अभिमुखी कार्यक्रम ।
- राज्य, अध्यापक शिक्षा बोर्ड व राज्य शैक्षिक अनुसन्धान प्रशिक्षण संस्थान (SIERT) की राष्ट्रीय क्रान्फेन्स का आयोजन ।
- प्राथमिक एवं माध्यमिक अध्यापक शिक्षा संस्थान में अनुसंधान की प्रोन्नति हेतु कार्यक्रमों का आयोजन ।
- मूल्य शिक्षा में शोध एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन ।
- शिक्षक अभिप्रेरित सेवारत शिक्षा एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम-सेमीनार, कार्यशाला, क्रान्फेन्स का आयोजन ।
- राज्य एवं केन्द्र सरकार के शैक्षिक अधिकारियों के लिए मीटिंग, क्रान्फेन्स, कार्यशाला एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन ।
- अध्यापक शिक्षकों के लिए अभिमुखी एवं रिफ्रेशर कोर्स का आयोजन ।

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा देश भर में 5 क्षेत्रीय शैक्षिक संस्थानों (RIEs) का संचालन किया जा रहा है । यह क्षेत्रीय शैक्षिक संस्थान सेवारत प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षकों एवं शिक्षक-अध्यापकों एवं अन्य के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम संगठित करते है । इन संस्थानों द्वारा प्रसार कार्यों की भी व्यवस्था की जाती है । ग्रीष्मकालीन विद्यालय एवं पत्राचार पाठ्यक्रम प्रस्तुत किए जाते है जिनका उद्देश्य प्रशिक्षित शिक्षकों में उत्पन्न अवरोधन को दूर कर उन्हें अद्यतन करना है ।

2. राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान / राज्य शिक्षा संस्थान ('SIERT'-State Council of Education Research and Training/State Institute of Education 'SIEs') - राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् में जो कार्य राष्ट्रीय स्तर पर होता है, राज्य स्तर पर वही कार्य एन.सी.ई.आर.टी.द्वारा किया जाता है । शिक्षा के क्षेत्र में जो अनुसंधान तथा लक्ष्य एन.सी.ई.आर.टी द्वारा निश्चित किये जाते है उन्हें प्रत्येक राज्य अपने भौगोलिक स्थिति, आवश्यकता तथा प्राप्त संसाधनों के अनुकूल अपनाता है।

तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत भारत में लगभग प्रत्येक राज्य एवं दिल्ली में शिक्षा के राज्य-संस्थान (SIEs) खोले गये । भारतीय शिक्षा मंत्रालय इन संस्थाओं के खर्च को वहन करता हैं । राजस्थान राज्य में विद्यालय शिक्षा के गुणात्मक समुन्नयन के लिए राज्य सरकार द्वारा गठित प्रो. आर. सी. मेहरोत्रा समिति, की अभिशंसानुसार पूर्व में कार्यरत राज्य शिक्षा संस्थान के विभिन्न अभिकरणों को समन्वित कर दिनांक 11 नवम्बर, 1978 को उदयपुर में राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की गई ।

जिस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान एन.सी.ई.आर.टी. शिक्षा का प्रमुख घटक है, उसी प्रकार राज्य शिक्षा संस्थान राज्य स्तर पर महत्वपूर्ण शैक्षिक कार्य करता है । यहाँ राज्य के प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम की रचना की जाती है । विभिन्न विषयों के लिए पाठ्यपुस्तक का निर्माण किया जाता है । प्रत्येक विषय के विशेषज्ञ विषय अध्यापन के लिए शिक्षण सामग्री का निर्माण करते है, तथा अध्यापकों की शिक्षा हेतु नवाचारी पाठ्यक्रम तथा प्रशिक्षण का आयोजन करते हैं । विज्ञान तथा व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में यह संस्था विशेष रूप से कार्य करती है । विद्यालय शिक्षा के क्षेत्र में अपनी नीतियों और कार्यक्रमों के निर्धारण तथा क्रियान्वयन में शिक्षा मन्त्रालय तथा विभाग को यह संस्थान विशेषज्ञ सेवाएँ उपलब्ध कराता है । इसके लिए वित्तिय प्रबन्ध राजस्थान सरकार द्वारा किया जाता है ।

नई शिक्षा नीति (1986) के अन्तर्गत प्रस्तावित अनेक विषय जैसे राष्ट्रीय पाठ्यक्रम, बाल केन्द्रित शिक्षा, मूल्यों की शिक्षा, राष्ट्रीय एकता, जनसंख्या शिक्षा, कार्यानुभव, शिक्षण में सहायक साधन तथा विभिन्न विषयों की शिक्षा आदि के नवीनीकरण हेतु ग्रीष्मावकाश में दस दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं । सेवारत शिक्षकों के व्यावसायिक विकास के लिए राज्य स्तर पर राज्य शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण संस्थान (SIERT) की स्थापना की गयी । केन्द्र द्वारा प्रायोजित इस कार्यक्रम के उद्देश्य एवं प्रमुख कार्य इस प्रकार है --

- प्राथमिक शिक्षकों के लिए सेवारत शिक्षा का आयोजन ।
- प्राथमिक विद्यालय के पर्यवेक्षकों एवं अध्यापक शिक्षा के लिए सेवारत शिक्षा एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन ।
- राज्य के विद्यालयों में क्षेत्र सेवा एवं प्रसार सेवाएँ प्रदान करना ।

- प्राथमिक शिक्षा के विभिन्न आयामों पर शोध के मार्ग प्रशस्त करना ।
- विद्यालय के लिए अनुकूल साहित्य के उत्पादन की व्यवस्था करना ।
- राज्य के शैक्षिक कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना ।
- पाठ्यपुस्तकों का संशोधन एवं परिमार्जन
- राज्य में शैक्षिक समस्याओं की पहचान करना तथा इन समस्याओं के समाधान हेतु प्रोजेक्ट संचालित करना ।

उपरोक्त कार्यों की सम्पूर्ति हेतु प्रत्येक SIERT में विभिन्न विभागों द्वारा कार्य किया जाता है । सेवारत शिक्षा एवं प्रशिक्षण, शैक्षिक प्रसार, कम्पयूटर शिक्षा, स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा, व्यावसायिक निर्देशन एवं प्रौढ़ शिक्षा, पिछडे वर्ग की शिक्षा, विकलांग शिक्षा, स्कूल शिक्षा, राष्ट्रीय एकीकरण, कला व संगीत शिक्षा तथा शिक्षण-अधिगम सामग्री का प्रकाशन का महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। यह संस्थान अल्प एवं दीर्घकालिक प्रशिक्षण कार्यक्रम, सेमीनार, कार्यशाला का आयोजन भी करता है ।

3. अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय (College of Teacher Education 'CTEs') - अध्यापक शिक्षा व्यवस्था में माध्यमिक विद्यालय शिक्षकों की शिक्षा एवं प्रशिक्षण महत्वपूर्ण भाग है । माध्यमिक शिक्षा की सफलता के लिए दक्ष एवं प्रभावी शिक्षकों की शिक्षा तथा सतत् व्यावसायिक विकास आवश्यक है । शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालय एवं संस्थान प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षकों की शिक्षा के विशेषज्ञ माने गये है । वह अपने निष्णात् शिक्षक-अध्यापकों द्वारा सेवारत शिक्षकों को शिक्षित करने का दायित्व वहन करते हैं । CTEs सेवारत शिक्षकों की शिक्षा एवं प्रसार कार्यकमों के लिए संसाधन केन्द्र हैं ।

अध्यापक शिक्षा में CTEs की निम्न भूमिकाएं है -

- माध्यमिक विद्यालय शिक्षक के रूप में स्नातकों के लिए सेवारत अध्यापक शिक्षा की व्यवस्था ।
- स्नातकोत्तर विद्यार्थीयों लिए 12 स्तर की शिक्षा हेतु सेवारत अध्यापक शिक्षा की व्यवस्था करना ।
- माध्यमिक विद्यालय शिक्षकों के लिए सेवारत अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम संगठित करना।
- विद्यालय संकुल के लिए प्रसार सम्बन्धी तथा अन्य सहयोगी सेवाएँ प्रदान करना ।
- विद्यालय शिक्षा में प्रयोग, अनुसंधान एवं नवाचार संचालित करना ।
- शैक्षिक संदर्भ में नये क्षेत्रों के लिए प्रशिक्षण एवं संसाधन सहयोग प्रदान करना ।
- अध्यापक शिक्षा में व्यावसायिक शिक्षा को सहयोग प्रदान करना ।
- अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम में सामुदायिक सहभागिता बढ़ाना ।

4. उच्च शैक्षिक अध्ययन शिक्षा संस्थान (Institute of Advanced study in Education 'IASEs') - राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में अध्यापक शिक्षा व प्रशिक्षण में गुणात्मक सुधार लाने पर विशेष बल दिया गया है । राष्ट्रीय शिक्षा नीति की अनुशंसाओं के आधार पर माध्यमिक स्तर की शिक्षक शिक्षा के स्नातक, अधिस्नातक सेवापूर्ण प्रशिक्षण, सेवारत शिक्षा के शोध कार्य एवं शैक्षिक नवाचार आदि की गुणवत्ता एवं प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए राज्य में केन्द्रीय प्रवर्तित योजना के अन्तर्गत चार उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान (IASE) तथा

आठ शिक्षक शिक्षा महाविद्यालयों (CTE) की स्थापना सन 1987-88 से 2002 तक की अवधि में की गयी ।

उच्च शैक्षिक अध्ययन संस्थान (IASEs) अध्यापक शिक्षा में उत्कृष्टता एवं शोध के केन्द्र है इन्हें सम्पूर्ण भारत में स्थापित किया गया है । चूंकि इन्हें CTEs का व्यापक रूप माना गया है अतः इसके कार्यों और भूमिकाओं के प्रति अधिक अपेक्षा भी रखी गयी है । ये अनुसंधान के क्षेत्र में उत्कृष्ट स्तर पर ध्यान केन्द्रित करता है । यह सेवापूर्ण एवं सेवारत अध्यापक शिक्षा हेतु उत्तरदायी है । प्राथमिक एवं माध्यमिक अध्यापक शिक्षकों की शिक्षा एवं शैक्षिक अनुसंधान के लिए एम.एड., एम.फिल. और पी.एच.डी. (M.Ed, M.Phil and Ph.D) स्तर के कार्यक्रम संचालित करता है ।

इसके अतिरिक्त प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षकों, अध्यापक-शिक्षकों, प्रधानाध्यापकों, पर्यवेक्षकों, विद्यालय निरीक्षकों के लिए क्रियाओं और कार्यक्रमों का आयोजन करता है ।

- शिक्षकों व अन्य व्यक्तियों को शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग व सोफ्टवेयर निर्माण की तकनीक में प्रशिक्षित करने का दायित्व वहन करता है ।
- DIETs and CTEs को निर्धारित परिसीमाओं के साथ अकादमिक परामर्श प्रदान करता है|
- महत्वपूर्ण शिक्षण-अधिगम तकनीक पर आधारित अनुदेशन सामग्री, दृश्य-श्रव्य कैसेट्स का निर्माण व विकास तथा नवाचार में संलग्न रहता है ।
- गैर औपचारिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, विशिष्ट शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, नियोजन एवं व्यवस्थापन, प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में विशेष निष्णात विकसित करने का प्रयास करता है|
- सीनियर सैकेण्डरी स्कूल के सेवारत शिक्षकों के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान केन्द्रित करता है।
- अध्यापक शिक्षा के लिए पायलेट अध्ययन कार्यक्रम आयोजित करता है ।
- अनुसंधान कार्यकर्ताओं को तैयार करता है ।

5. जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (District Institute of Education & Training 'DITEs') - शिक्षा का महत्वपूर्ण आधार प्रशिक्षण है । प्रशिक्षण शिक्षा को प्रभावी बनाता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में प्राथमिक शिक्षा में नवोन्मेष के लिए दो पहलुओं पर विशेष बल दिया गया है । चौदह वर्ष की आयु तक के बालक-बालिकाओं का सार्वजनिक नामांकन व सार्वजनिक ठहराव तथा शिक्षा की गुणवत्ता में ठोस सुधार हेतु शिक्षक-प्रशिक्षण एक निरन्तर प्रक्रिया है और इसके सेवापूर्व एवं सेवारत अंग पृथक् नहीं किये जा सकते । अतः दूसरे पहलू की क्रियान्वित के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति की कार्य योजनान्तर्गत प्रत्येक जिले स्तर पर शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय को जिला एवं प्रशिक्षण संस्थान 'डाइट' का एक अंग स्वीकार कर संस्थान की स्थापना की गई है ।

'डाइट' का पूरा नाम 'जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान' (District institute of Education & Training) है । डाइट की योजना 'नई शिक्षा नीति' 1986 के क्रियान्वयन की एक महत्वपूर्ण योजना है । इसके अन्तर्गत सातवीं योजना (1990-95) के अन्त तक प्रत्येक जिले में अनिवार्य रूप में डाइट खोले जाने की योजना बनाई गई थी । सत्र 1989-90 तक राज्य में 27

जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान स्थापित हो चुके थे । वर्तमान में राजस्थान राज्य के समस्त 32 जिलों में 32 डाइट संचालित हैं ।

जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डाइट) के आठ प्रभाग हैं, जो इस प्रकार हैं-

1. सेवारत प्राथमिक शिक्षा शिक्षक प्रशिक्षण प्रभाग (P.S.T.E)
2. सेवारत शिक्षक प्रशिक्षण क्षेत्र अन्तर्किया नवाचार समन्वय (IFIC)
3. अनौपचारिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा एवं जिला संदर्भ इकाई प्रभाग (DRU)
4. योजना एवं प्रबन्ध प्रभाग (P&M)
5. शैक्षिक प्रौद्योगिकी प्रभाग (ET)
6. कार्यानुभव प्रभाग (W.E)
7. पाठ्यसामग्री, शिक्षण-सामग्री विकास एवं मूल्यांकन (DMDE)
8. प्रशासनिक शाखा प्रभाग (Administrative)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की कार्य योजना में डाइट के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए--

- प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के कार्यक्रम एवं व्यूह रचना के लिए प्राथमिक स्तर पर अकादमिक एवं सन्दर्भ व्यक्तियों को तैयार करना ।
- आदर्श शिक्षा प्रशिक्षण केन्द्र के रूप में प्राथमिक शिक्षा का गुणात्मक सुधार करना ।
- शैक्षिक प्रशासन व शैक्षिक सुधारों का विकेन्द्रीकरण करना ।
- शिक्षा स्तर की शैक्षिक योजनाओं का निर्माण करना ।
- विद्यालय संकुल एवं जिला शिक्षा बोर्ड को शैक्षिक सहयोग देना ।
- शिक्षा संस्थाओं, जिला शिक्षा बोर्ड, विद्यालय (संकुल) आदि को शैक्षिक सलाह एवं मार्ग-निर्देशन देना ।
- प्राथमिक व उच्च प्राथमिक विद्यालय, अनौपचारिक शिक्षा एवं प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों हेतु मूल्यांकन केन्द्र स्थापित करना।
- अनौपचारिक एवं प्रौढ़ शिक्षा के अनुदेशकों व पर्यवेक्षकों के लिए कार्यारम्भ प्रशिक्षण की आयोजना करना ।
- प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर की शिक्षा संस्थाओं के प्रधानों का प्रशिक्षण एवं अभिनवन तथा सूक्ष्म स्तर योजना की क्रियान्विति करना ।
- संदर्भ एवं अधिगम केन्द्र के रूप में प्रसार सेवा कार्यक्रम आयोजन करना। क्रियानुसंधान एवं प्रायोगिक कार्य की व्यवस्था करना ।
- सामुदायिक कार्यकर्ता, स्वयं सेवी संस्थाओं के कार्यकर्त्ता एवं अन्य विद्यालय से सम्बन्धित व्यक्तियों का अभिनवन देना ।
- औपचारिक विद्यालय निकाय के अध्यापकों की सेवापूर्ण एवं सेवारत शिक्षा तथा प्रशिक्षण की व्यवस्था करना ।
- प्राथमिक एवं प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के प्रभावी रूप एवं सेवारत शिक्षा प्रशिक्षण की व्यवस्था करना आदि ।

इस प्रकार पहली कक्षा से आठवीं कक्षा तक सेवा पूर्व (Pre-Service) तथा सेवारत (In Service) अध्यापकों के प्रशिक्षण तथा शिक्षा के क्षेत्र में हो रहे परिवर्तनों से परिचित कराने का

कार्य डाइट की जिम्मेदारी है । यह आवासीय संस्था है जहां रहकर अध्यापक गण साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यक्रमों एवं व्यायाम तथा खेलों में भाग लेकर सामूहिक सहयोग तथा स्वस्थ प्रतियोगिता की भावना का विकास करते हैं ।

मंडलीय शिक्षा तथा प्रशिक्षण संस्थान में अध्यापक शिक्षा तथा प्रशिक्षण कार्य साथ ही शिक्षण सामग्री निर्माण, शैक्षिक प्रौद्योगिकी तथा शैक्षिक प्रयोग एवं अनुसंधान का कार्य भी होगा । इस संस्थान द्वारा विभिन्न विषयों के लिए पाठ्यक्रम की रचना तथा मूल्यांकन की पद्धतियों का निर्धारण करने में अध्यापक की सहायता की जाएगी । औपचारिकेतर तथा प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहे अध्यापकों की आवश्यकता के अनुरूप कार्यक्रम, पाठ्यचर्या तथा शिक्षण समाग्री के प्रयोग आदि के प्रशिक्षण हेतु कार्य गोष्ठियों का संचालन भी डाइट के विशेषज्ञ करेंगे ।

6. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (Board of Secondary Education) - राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय संस्थानों के अतिरिक्त माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान द्वारा भी सेवारत शिक्षकों के सतत् व्यावसायिक उन्नयन के लिए कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है । अध्यापकों के प्रशिक्षण तथा उनके स्तर-उन्नयन व अद्यतन हेतु बोर्ड द्वारा प्रतिवर्ष अनेक कार्यक्रम आयोजित किए जाते है । अध्यापकों में अनुसंधान, नवाचार प्रयोग और चिन्तन उत्पेरित करने तथा वैज्ञानिक ढंग से समस्या समाधान में रूचि पैदा करने, क्रियात्मक अनुसंधान द्वारा समस्या समाधान की दक्षता विकसित करने हेतु अल्पकालिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते है । शिक्षकों में सृजनात्मक लेखन अभिव्यक्ति हेतु पत्र वाचन, संगोष्ठी तथा अकादमिक पुस्तिकाओं के प्रकाशन के द्वारा शिक्षकों के सतत व्यावसायिक विकास के प्रयास किए जा रहे है ।

स्वमूल्यांकन प्रश्न

1. शिक्षकों का सतत व्यावसायिक विकास होना क्यों आवश्यक है?
2. शिक्षकों के व्यावसायिक विकास की क्या विशेषताऐं होनी चाहिये?
3. आपके अनुसार व्यावसायिक रूप से विकसित शिक्षक के क्या लक्षण होने चाहिये?
4. सेवारत शिक्षकों के सतत व्यावसायिक विकास में दूरस्थ शिक्षा कार्यकम के उद्देश्य स्पष्ट कीजिए ।
5. शिक्षक प्रशिक्षण में दूरस्थ शिक्षा की भूमिकापर विचारार्थ गठित समितियों एवं आयोगों की सूची बनाइये ।
6. सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा में खुली शिक्षा की भूमिका का वर्णन कीजिए ।
7. सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा के लिए राष्ट्र स्तरीय संस्थाओं की भूमिका स्पष्ट कीजिए ।

14.4 संदर्भ सूची (Bibliography)

अजीत कुमार (2002) : 'प्रोफेशनल डेवलपमेंन्ट ऑफ टीचर्स', जयनारायण व्यास यूनिवर्सिटी, उदयपुर ।

देसाई डी. (2003) : प्रोफेशनल ग्रोथ ऑफ टीचर्स;' पर्सपेक्टिव इन एजूकेशन वो (21) सोसायटी फॉर एजूकेशनल रिसर्च एण्ड डवलपमेंन्ट बड़ोदा ।

दुबे एस. एन. एवं वी. टी. पाटिल: इनसर्विस एजूकेशन फॉर टीचर्स, ऑथर्स प्रैस, न्यू देहली, 2001.

हॉले, जायसी एवं शौवर्स (1980): प्रोफेशनल डेवलपमेंन्ट ऑफ टीचर्स, पण्डा प्रणति (एडी) जनरल ऑफ इण्डियन एजूकेशन, वो-29, नं. 3, नवम्बर 2003, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली ।

मट्दू बी.के. (1996): 'न्यू पर्सपैक्टिव्स ऑन टीचर एजूकेशन', नीता प्रकाशन, नई दिल्ली ।

एन.सी.टी.ई.(1998): 'पोलिसी पर्सपैक्टिव्स इन टीचर एजूकेशन-क्रिटीक एण्ड डॉक्यूमेन्टेशन, (द्वितीय संस्करण), नेशनल काउन्सिल फॉर टीचर एजूकेशन, नई दिल्ली ।

रालमैन (1987): प्रोफेशनल डेवलपमेन्ट ऑफ टीचर्स', पण्डा प्रवति (एडी) जनरल ऑफ इण्डियन एजूकेशन, वो-29, नं. 3, नवम्बर 2003, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली ।

सिंह एल. सी. एवं पी. सी. शर्मा: टीचर एजूकेशन एण्ड टीचर्स, विकास पब्लिशिंग हाउस, न्यू देहली, 1965 ।

इकाई-15

शिक्षा की शब्द सूची

Glossary Of Education

'अ'

1. अन्त: संबंध (Inter-relation) - उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु दोनों घटकों में समन्वय, कार्य प्रणाली का स्वरूप निश्चित करने, वृहद शिक्षा प्रणाली को गति प्रदान करना, शिक्षा पर प्रयोग तथा शैक्षिक गुणवत्ता की प्राप्ति में सहायक ।

2. अध्यापक-विद्यार्थी संबंध (Student -Teacher Relationship) - विद्यालय के घटकों में संबंध स्थपित करने वाले शिक्षक-शिक्षार्थी के मध्य अन्तःक्रिया मनोवैज्ञानिक होने के साथ तर्कसंगत होती है ।

3. अभिभावक-शिक्षक संघ (Parent-Teachers Association) - अभिभावकों की अपेक्षाओं तथा विद्यालय प्रणाली में लक्ष्य निर्धारण कर उनका क्रियान्वयन सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक ।

4. अनवरत शिक्षा (Continous Education) - निरन्तर अध्ययन करना ।

5. अनुसंधान (Research) - सर्वेक्षण व प्रयोग के आधार पर नये की खोज करना ।

6. अनौपचारिक शिक्षा (Informal Education) - सीखने के अवसरों में लचीलापन, किसी विशिष्ट अभिकरण, आयु, अध्ययन कालांशों, समय व स्थल के बन्धन का अभाव ।

7. अध्यापक की प्रबंधक के रूप में भूमिका (Role of Teacher as Manager) - अध्यापक द्वारा नियोजन, निर्णय व संसाधनों का अधिकतम उपयोग करना ।

8. अनौपचारिक संगठन (Informal Organisation) - समान रूचियों के आधार पर बने समूह जो उद्देश्य व नियमों के बंधन से मुक्त हों ।

9. अभिलेख (Records) - कार्य के सम्पादन के विधिवत् आलेखन, प्रस्तुतीकरण तथा अर्थपूर्ण बनाने की कला को आलेखबद्ध करना है ।

10. अनुदेशन कार्यक्रम (Instructional Programme) -सदस्यों के द्वारा नवीन तकनीकों को अपनाते हुए सूचनाएं एवं निर्देश देना ।

11. अध्यापक-अभिभावक परिषद (Teacher Parent Council) - अध्यापक एवं अभिभावक द्वारा परस्पर विचार-विनिमय, सलाह एवं परामर्श एवं बालक की प्रगति की समीक्षा करना ।

12. अनुरंजनात्मक क्रियाएं (Entertainment Activities) - मन को लुभाने वाली क्रियाएं यथा वन-विहार, शैक्षिक भ्रमण, पत्र-मित्रता, चित्रकारी, वाद्य-कला, मूर्ति कला आदि ।

'आ'

1. आन्तरिक घटक (Internal Factor) - विद्यालय के भौतिक उपकरण, भौतिक ढांचा, प्रबंध के प्रकार अध्यापक-छात्र संबंध, मानवीय संबंधों की कार्य प्रणाली का वातावरण ।

2. आध्यात्मिक (Spiritual) - जीवन में धारण करने योग्य वे गुण जिनका संबंध मन के अन्तःकरण से हों ।

3. आधुनिकीकरण (Modernization) - आधुनिक स्थितियों के अनुकूल बनाना, आधुनिकता को अपनाना।

4. औपचारिक संगठन (Formal Organization) - समान उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु समूह के निश्चित उद्देश्य, समय व नियमों के पालन की बाध्यता ।

5. आडिटिंग (Auditing) - विद्यालय के वित्तीय आलेख का निरीक्षण ।

6. आत्म-नियंत्रण (Self-Control) - नियमों का पालन तथा अनुशासन द्वारा भावनाओं पर नियंत्रण ।

7. ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड (Operation Black Board) - विद्यालयों में पढने-लिखने की सुविधा तथा प्रत्येक 100 बच्चों पर 3 शिक्षकों की नियुक्ति ।

'इ'

1. ई-अधिगम (E-Learning) - सीखने का नया प्रारूप, जिसमें सीखने वाले की आवश्यकता पर बल दिया जाये ।

'उ'

1. उपकरण (Equipments) - शिक्षा को क्रियात्मक रूप देने तथा गुणात्मकता बनाये रखने के अभिकरण- चॉकपट्ट, विज्ञान सामग्री, क्रीड़ा सामग्री, भाषा प्रयोगशाला के उपकरण ।

2. उत्पादन (Production) - वह निर्मित या निर्माण वस्तु अथवा गुण जो दिखाया जा सके।

3. उच्च शिक्षा (Higher Education) - 16 वर्ष के बाद माध्यमिक शिक्षा के पश्चात् किया जाने वाला अध्ययन।

4. उपचारात्मक शिक्षण (Remedial Teaching) - विद्यार्थी की कठिनाई का पता लगा कर उसे उपचार के रूप में शिक्षण व्यूह रचना (strategy) द्वारा दूर करना ।

'औ'

1. औपचारिक संरचना (Formal Structure) - समाज, विद्यालय प्रणाली का स्वरूप, सामाजिक प्रणाली के स्वरूप की विशेषताओं का निर्धारण औपचारिक रूप से समाज द्वारा निर्धारित ढांचा ।

2. अनौपचारिक शिक्षा (Informal Education) - स्थान, समय व पाठ्यक्रम विशेष में किया जाने वाला अध्ययन ।

'क'

1. कर्मचारी (Workers) - विद्यालय के लक्ष्यों के प्रति रागात्मक एवं भावात्मक संबंध रखने वाले तथा विद्यालय प्रणाली की सक्रियता बनाये रखने में सहयोगी ।

2. कार्य निष्पादन की प्रणाली (Style of Functioning of School System) - घटकों के पारस्परिक निर्भरता पर कार्य निष्पादन का आधार ।

3. कार्य संतुष्टि (Satisfaction) - किसी कार्य को मन लगा कर करना तथा उसके करने से संतोष होना।

4. कार्यानुभव (Work Experience) - करके सीखना तथा कार्य अनुभव से संबंधित क्रियाओं से अवगत होना ।

5. क्रिया का सिद्धान्त (Principle of Activity) - अधिगमकर्ता (learning) अधिक से अधिक क्रियाओं के द्वारा ज्ञान प्राप्त करें ।

6. क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research) - कार्यक्षेत्र / विद्यालय की किसी समस्या को उसके अवयवों में विभक्त कर उनके लिए संभावित हल खोजना ।

7. कार्य का संगठन एवं वितरण (Organisation and Distribution of Work) - समूह द्वारा समान लक्ष्य की प्राप्ति हेतु समूह के सदस्यों की समन्वित क्रियाएं ।

'ख'

1. खुला विद्यालय (Open School) - समय, स्थान, पाठ्यक्रम की अवधि आयु के बंधन से मुक्त शिक्षा अध्ययन केन्द्र |

'ग'

1. गुणात्मक उद्देश्य (Qualitative Objectives) - उपचारात्मक शिक्षण, अध्यापन क्रिया तथा विद्यार्थीयों में सृजनात्मक विकास ।

2. गृह कार्य (Home Work) - अनुभव एवं क्रियाओं का स्वयं संगठन करना ।

'च'

1. चल विद्यालय (Mobile School) - जो विद्यार्थी विद्यालय नहीं आ सकते उन्हें वाहन द्वारा शिक्षण सामग्री तथा शिक्षण करके व्यक्तिगत समस्याओं का समाधान शिक्षक द्वारा करना ।

'व'

1. विद्यार्थी (Student) - विद्यालय व्यवस्था की केन्द्रीय भूमिका, आन्तरिक व बाह्म घटकों में नियंत्रक।

'ज'

1. जानने का अधिगम (Learning to Know) - शिक्षा द्वारा अधिक से अधिक ज्ञान विकसित करना व ज्ञान को हासिल करने की कला जान कर समाज के निर्माण में योगदान देना।

2. जनतांत्रिक (Democratic) - जनता के लिए, जनता का, जनता के द्वारा करणीय कार्य

3. जिला स्तरीय प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) - प्राथमिक स्तर की शिक्षा को सार्वभौमिकरण हेतु प्रत्येक जिले में चलाया जा रहा कार्यक्रम ।

'प'

1. प्रणाली (System) - शिक्षक-शिक्षार्थी, अभिभावक एवं प्रबंध तंत्र के आपस में अन्त: क्रिया करने का पुंज / गुच्छ रूप से चलाने वाला घटकों को लक्षित रखें ।

2. प्रशासक (Administrators) - विद्यालय प्रणाली का लक्ष्य निर्धारक तथा सामाजिक घटकों व लक्ष्य में अन्तःक्रिया करने में सहायक ।

3. प्रबंध के प्रकार (Types of Management) - विद्यालय के मानवीय एवं भौतिक तत्व, नीतियों का निर्धारण व लागु करना, आदेशों की एकता, सम्प्रेषण ।

4. प्राथमिक स्तर (Primary Level) - कक्षा 1 से 5 तक के बालकों को मूल आधार, व्यक्तित्व विकास तथा नागरिक गुणों के ज्ञान की अवधि ।

5. प्रतिभा (Talent) - किसी गुण अथवा विशेषता का प्रयोग कर सृजनात्मकता का प्रदर्शन करना ।

6. परिवीक्षण (Supervision) - संस्थागत लेखा, शिक्षण कार्य, सहशैक्षिक कार्यों का परिवीक्षण ।

7. प्रदर्शन पाठ (Demonstration Lesson) - शिक्षण अभ्यास से पूर्व भावी शिक्षकों को पाठ पढाने के कौशल का प्रस्तुतीकरण ।

8. पाठ्येत्तर क्रियाएं (Co-curricular Activities) - पाठ्यक्रम की परिपूर्ति के लिए पाठ्यक्रम के अतिरिक्त की जाने वाली क्रियाएं ।

9. प्रार्थना सभा (Prayer Assembly) - विद्यालय कार्यक्रम का प्रारंभ संपूर्ण दिन के लिए प्रेरणास्पद, निर्णायात्मक रूप से अन्तःमन की अनूभूति ।

10. परस्पर स्वावलम्बन (Feeling of Inter-dependence) - विद्यालय तथा समुदाय के सदस्य, साधन, आवश्यकताओं, क्रियाओं आदि का आदान-प्रदान ।

'ब'

1. बाह्म घटक (External Component) - विद्यालय क्षेत्र, अभिभावक संघ, समुदायिक, सहभागिता, संचार माध्यम, सांस्कृतिक, सामाजिक, तकनीकी, राजनीतिक कारक ।

2. ब्रिज पाठ्यक्रम (Bridge curriculum) - माध्यमिक स्तर तक ले जाने वाले आरम्भिक पाठ्यक्रम ।

3. बनने का अधिगम (Learning to be) - ऐसी शिक्षा व्यवस्था जो कौशल युक्त एवं जागरूक बनाये और जो कुछ बनने की प्रेरणा प्रदान करें ।

4. बजट (Budget) - आय-व्यय का ब्यौरा व लेखा ।

5. बजट स्वीकरण (Budget Acceptation) - बजट को प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा अनुमति प्रदान करना ।

'भ'

1. संस्थागत (Infrastructure) - कक्षा-कक्ष, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कार्यालय, फर्नीचर, पुस्तकें, खेल का मैदान, कम्प्यूटर प्रयोगशाला आदि ।

2. भावात्मक (Affective) - किसी कार्य, व्यक्ति, वस्तु अथवा स्थान के प्रति लगाव तथा उससे जुडाव।

3. भविष्य विद्यालय (Future School) - भविष्योनमुखता को ध्यान में रखकर जीवन की पूर्णता के लिए शिक्षा तथा शिक्षण का विकास करना ।

4. भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का आदान-प्रदान (Exchange of Human and Physical Resources)- मानवीय संसाधनों में प्रधानाध्यापक, अध्यापक, विद्यार्थी व अन्य कर्मचारी तथा भौतिक साधनों में भवन, फर्नीचर एवं अन्य उपकरण ।

'म'

1. मानवीय संबंधों की कार्य प्रणाली (Working Pattern of Human Resources) - विद्यालय के समस्त सदस्यों के मध्य अन्त: क्रिया कार्य व्यवस्था की प्रणाली को गति प्रदान करती है । मानवीय संबंधों से इसे दिशा प्राप्त होती है ।

2. मानसिक शक्तियों का विकास (Mental Ability development) - कल्पना, तर्क, चिन्तन, मनन, निर्णय, अभिव्यंजना शक्तियों का विकास ।

3. मूल्यांकन (Evaluation) - विद्यालय में हुए विद्यार्थी की व्यवहार परिवर्तन की साक्षियों का संकलन ही मूल्यांकन।

4. महिला समाख्या (Mahila Samkhya) - महिला शिक्षा व सशक्तिकरण के क्षेत्र में जागरूकता व शिक्षा प्रसार का कार्यक्रम।

5. मध्यान्ह भोजन (Mid Day meal) - प्राथमिक स्तर के विद्यालयों में विद्यार्थीयों को दोपहर में दिया जाने वाला भोजन ।

'र'

1. राजनीतिक जटिलताएं (Impact of politics Morass) - विद्यालय प्रणाली की संरचना एवं कार्य निष्पादन की व्यूह रचना जनहित अनुसार घटकों की पारस्परिक अन्त: निर्भरता।

2. राष्ट्रीय खुला विद्यालय (National Open School) - राष्ट्रीय स्तर पर समयावधि, आयु स्थान, पाठ्यक्रम के मूल्यांकन की स्वतंत्रता का अध्ययन केन्द्र ।

3. राष्ट्रीय भावना के विकास की गतिविधियां (Patriotic Activities) - राष्ट्रीय उच्च आदर्शों की भावनाओं से ओत-प्रोत कार्यक्रम यथा-राष्ट्रीय पर्व, जन चेतना रैली आदि ।

'ल'

1. लक्ष्य (Aims) - दिशा निर्देश, अपेक्षा, अभिष्ट प्राप्ति का निशाना ।

2. लोकतांत्रिक नागरिकता (**Democratic Citizenship**) - नागरिकों में स्वतंत्र एवं स्पष्ट चिन्तन करने, स्वतंत्र निर्णय लेने की योग्यता आदि का विकास ।

'व'

1. विद्यालय प्रणाली (School System) - विद्यार्थी, शिक्षक, विद्यालय प्रबंध तथा अभिभावक मिल कर विद्यालय के लक्ष्य प्राप्ति के तरीके निश्चित करना ।

2. विद्यालय बोर्ड (School Board) - राजकीय या गैर राजकीय विद्यालय नियंत्रण एवं हस्तक्षेप को प्रभावित करने वाली विद्यालय प्रणाली

3. विद्यालय प्रणाली की सामाजिक भूमिका (Social Role of School System) - समाज की अपेक्षाओं के अनुरूप इसके स्वरूप का निर्धारण, समाज की संस्कृति व मूल्यों के आधार पर लक्ष्य निर्धारण ।

4. विद्यालय दर्शन (School philosophy) - प्रणाली में कार्य की शैली, संस्था का नियोजन, संचालन की विचारधारा, विद्यालय प्रणाली का गत्यात्मक पक्ष ।

5. विद्यालय क्षेत्र (Locality of schools situation) - विद्यालय विशेष की विशेषताओं एवं न्यूनताओं से प्रभावित क्षेत्रीय आधार अप्रत्यक्ष रूप से विद्यालय के अन्य सभी घटकों का निर्धारक ।

6. विभिन्न स्तर (Different Levels) - शिक्षा के विभिन्न स्तर कक्षा व आयु वर्ग के आधार पर नर्सरी, प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक ।

7. व्यवसायिक शिक्षा (Professional Education) - निपुणता से सीख कर अपनाया गया पाठ्यक्रम ।

8. विद्यालय संरचना (School structure) - विद्यालय की प्रकृति, दर्शन, उद्देश्य, कार्यशैली कार्यकर्ताओं के आधार पर विद्यालय विशेषता ।

9. व्यक्तित्व (Personality) - व्यक्ति का बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक एवं व्यवहारिक पक्षं का समन्वित एवं संतुलित विकास ।

10. व्यवसायिक कुशलता (Professional Skill) - विभिन्न व्यवसाय में निपुणता प्राप्त कर उसे दिखाने का गुण ।

11. व्यक्तिगत भिन्नता (Individual Differences) - मानसिक, शारीरिक आदतों, रूचियों अभिरूचियों आदत में भिन्नता ।

12. व्यावसायिक रूचि (Professional Interest) - किसी व्यवसाय के प्रति सम्मान अथवा अधिक जानकारी रखना।

13. व्यवसायिक एवं औद्योगिक विकास (Professional and Industrial Development) - किसी व्यवसाय से जुडी समस्त तकनीकियों का ज्ञान प्रदान कर उसे उद्योगों से जुड़ने के लिए तैर करना ।

14. विकास की संभावना (Possibilities of Development) - शिक्षण संस्था द्वारा स्वानु आवश्यकताओं तथा साधनों को प्राप्त करना उसके विकास की संभावना ।

15. विद्यालय के भौतिक क्षेत्र (Physical Areas of school) - विद्यालय में पढने वाले छात्र सौन्दर्यीकरण, कक्षा-भवन, पुस्तकालय, खेल का मैदान, कैन्टीन पानी की व्यवस्था, हाल, साईत् स्टैण्ड, छात्रावास आदि।

16. विद्यालय के अकादमिक क्षेत्र (Academic Areas of school) - पाठ्यक्रम, अध्यापक, विषय-विशेषज्ञ, लेख पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएं, शिक्षक-अभिभावक संघ, विद्यालय-सामुदायिक संबंध आदि ।

17. विद्यालय में मुक्तता (Openness in school) - शिक्षा को जनसुलभ बनाने हेतु जब चाहें, जहां चाहे, जितना चाहे उतना ज्ञान प्राप्त करने की मुक्तता ।

18. वेब आधारित अधिगम (Web Based Learning) - सूचना आधारित तकनीक से उभरते लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु सीखने के सभी पक्षों को प्रभावित करना ।

19. विद्यालयों का नेटवर्क (Networking of Schools) - एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय की शैक्षिक, सहशैक्षिक भौतिक तथा प्रशासनिक कार्यों का जुड़ाव व गुणात्मक सुधार हेतु परस्पर समन्वय ।

20. विद्यालय संकुल (School Complex) - विभिन्न स्तर के विद्यालयों में सामंजस्य स्थापित कर शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु परामर्श समिति ।

21. विषय उन्नयन (Subject Promotion) - विषय की गहराईयो को विशेषज्ञों के निर्देशन में किये गये प्रयासों द्वारा उच्च स्तर की प्राप्ति।

22. वायरलाइन तकनीकी (Wireline Technology) - टेलीफोन लाईन पर उच्च गति इन्टरनेट द्वारा उपलब्ध नेटवर्क को बढाना।

23. विद्यालय एक संस्था (School as an institute) - विद्यालय में उपलब्ध भौतिक एवं मानवीय संसाधनों से मिला रूप संस्था कहलाती है।

24. विकेन्द्रीकरण (Dencentralization) - शक्ति का केन्द्र से अन्य भागों से वितरण ।

25. विद्यालय संगठन (School Organisation) - विद्यालय के भौतिक एवं मानवीय संबंधों का समन्वय जो विकास की गति को बढ़ावे ।

26. विकासात्मक उद्देश्य (Developmental Objectives) - शिक्षण प्रशिक्षण प्रक्रिया में सुधार हेतु अध्ययन कौशल, शिक्षण पद्धति एवं पाठ्यक्रम का समुचित उपयोग ।

27. विकेन्द्रीकरण का पिरामिड स्वरूप (Pyramid Image of Decentralization) - सत्ता का केन्द्र या व्यक्ति शीर्षस्थ निकाय से निहित जो समग्र संगठन का निर्णय लें ।

28. विकेन्द्रीकरण का औक्टोपस स्वरूप (Octopus Image) - प्रशासन व निर्णय शक्ति मध्य केन्द्र में हो तथा उसका हस्तांतरण चारों ओर करना ।

29. विकेन्द्रीकरण का कमजोर पक्ष (Weekend Relationship of Decentralization) - सत्ता केन्द्रों का विभाजन तथा विभिन्न भागों में दूरी या वैयक्तिक भिन्नता का विकास ।

30. विद्यालय में बने रहने का सार्वभौमिकरण (Universal Retention) - कक्षा 5 तक स्कूल में सभी प्रवेश लेने वालों का विद्यालय में बना रहना ।

'न'

---

1. नर्सरी विद्यालय (Nursery school) - 3-4 वर्ष की आयु में सामान्य ज्ञान की शिक्षा का स्थान, जहां उनकी देखभाल भी की जाती हो ।

2. नेतृत्व (Leadership) - राजनैतिक, विज्ञान, कला, व्यवसाय, संस्कृति उद्योग, शिक्षा क्षेत्रों में पहल करने, निर्णय लेने में अग्रिम होने का गुण ।

3. नैतिक (Moral) - किन्हीं निश्चित नियमों के अनुसार स्वयं को ले चलना ।

4. नागरिक गुण (Citizen Quality) - दया, प्रेम सहानुभूति, त्याग, धैर्य आदि गुणों को अपना कर नागरिकता का परिचय देना ।

5. निष्पक्ष कार्य (Neutral Function) - किसी व्यक्तिगत अथवा संकीर्णता से जुड़े विवादों से दूर रहकर शाश्वत जीवन के मूल्यों की ओर अग्रसर होने वाले कार्य ।

6. नवाचार (Innovation) - लीक से हटकर नवीन प्रयोगों को अपनाना ।

7. नेतृत्व व्यवहार (Leadership Behaviour) - अग्रिम होने अथवा पहल करने की ओर उन्नमुख अन्त: क्रियाएं ।

8. निर्देशन (Direction) - किसी कार्य को पूर्ण करने के लिए योग्यता, ज्ञान, नेतृत्व, शक्ति, दूरदर्शिता एवं अनुभव द्वारा सूचना प्रदान करना ।

9. नियंत्रण (Control)- शैक्षिक कार्यों को पूरा करने के लिए युक्तियों एवं शक्तियों द्वारा शक्ति रखना ।

10. निष्पत्ति मूल्यांकन (Assessing Achievement) - अध्यापकों एवं अभिकरणों द्वारा शैक्षिक क्षेत्र में विद्यार्थीयों की निष्पत्ति के आधार पर मूल्यांकन करना ।

'श'

---

1. शिक्षक (Teacher)- विद्यालय व्यवस्था का सक्रिय कार्यकर्ता जो विद्यार्थीयों व विद्यालय की लक्ष्य प्राप्ति में निरंतर प्रयत्नशील रहता है ।

2. शिक्षा की प्रयोगशाला (Laboratory of Education) - शिक्षा के विभिन्न प्रयोग विद्यालय के आन्तरिक व बाह्म घटकों के मध्य किये जाते है ।

3. शैक्षिक गुणवत्ता (Quality of Education) - विद्यालय के आन्तरिक व बाह्म घटकों में समन्वय के परिणामस्वरूप शैक्षिक गुणवत्ता की वृद्धि होती है ।

4. शैक्षिक तकनीक (Educational Technology) - शिक्षा के हर क्षेत्र में विज्ञान के ज्ञान का प्रयोग ।

5. शिक्षा का सार्वजनीकरण (Universalization of Education) - शिक्षा के लिए शत-प्रतिशत, नामांकन, ठहराव एवं सार्वजनिक दक्षता हेतु प्रयास ।

6. पॉवर लाइन नेटवर्किंग (Power Line Networking) - विश्वासपद शक्ति लाइन, नेटवर्क, संचरण, जिसमें 250 के.बी.पी.एस. तथा 500 के.बी.पी.एस. की गति के 20 नेटवर्क पोइन्ट होते है ।

7. शारीरिक गतिविधियां (Physical Activities) - आंगिक गति के संचालन हेतु की जाने वाली शारीरिक क्रियाएं ।

8. शैक्षिक क्रियाएं (Educational Activities) - शिक्षा तथा शैक्षिक मुद्दों से जुड़ी क्रियाएं-विज्ञान परिषद, साहित्य परिषद, इतिहास, हिन्दी, सामाजिक अध्ययन परिषद आदि ।

9. शैक्षिक उन्नयन (Educational Improvement) - शिक्षा के विकेन्द्रीकरण से शिक्षा व्यवस्था में सुधार ।

10. शिक्षा का सार्वभौमिकरण (Universalization Improvement) - प्राथमिक शिक्षा सभी के लिए अनिवार्य तथा निःशुल्क ।

11. शिक्षाकर्मी योजना एवं लोक जुम्बिश (Shiksha karmi Project and Lok Jumbish) - शिक्षक प्रशिक्षण, सामुदायिक सहभागिता एवं वैकल्पिक शिक्षा के विकास में सहयोगी प्रायोजनाएं

'स'

1. सामाजिक प्रणाली (Social System) - समाज, समुदाय, विद्यालय बोर्ड, प्रशासक, प्रधानाचार्य, शिक्षक छात्र व कर्मचारी का समूह जो विद्यालय के लक्ष्य तथा उनकी प्राप्ति के तरीके निश्चित करते है ।

2. समाज (Society)- विशिष्ट मूल्य, आशाएं अपेक्षाएं तथा संस्कृति के आधार पर व्यक्तियों का समूह ।

3. सामुदायिक सहभागिता (Community Participation) - विद्यालय प्रणाली के उन्नत स्वरूप के लिए आवश्यक एवं प्राथमिक घटक ।

4. संस्कृति (Culture)- किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र के बौद्धिक विकास का साक्ष्य-साहित्य,कला, संगीत व अन्य उपलब्धियां जिसमें अनुभव एवं प्रशिक्षण द्वारा मन, शरीर एवं बुद्धि का विकास हों ।

5. सामंजस्य (Adjustment)- स्थितियों से मुकाबला करने को तैयार होना अथवा ताल-मेल स्थापित करना

6. सामुदायिक भावना (Community Feeling) - समूह अथवा समाज के बीच रहकर सामाजिक गुणों व दक्षता को सीखने के लिए रूचि लेना अथवा सकारात्मक सोच बनाना ।

7. सक्रिय वातावरण (Active Environment) - किसी कार्य को क्रियाओं के द्वारा ग्रहण करना ।

8. सामाजिक भावना का विकास (Development of Social Feeling) - छात्रों में एक दूसरे से सहयोग, त्याग, सहानुभूति, सामाजिक जागरूकता, स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना रखना ।

9. स्वास्थ्य विकास (Health Development) - शारीरिक रूप से स्वस्थ होना ।

10. सांस्कृतिक विकास (Cultural Development) - छात्रों में बौद्धिक विकास के साक्ष्यों यथा कला, संगीत, साहित्यिक गुणों का विकास करना ।

11. संस्थागत योजना (Institutional Planning) - विद्यालय के विभिन्न साधनों का परीक्षण, विद्यालय की आवश्यकताओं, योजना की अवधि, योजना का क्षेत्र, योजना के भागीदारी तथा बजट बनाना ।

12. संरचनात्मक परिवर्तन (Constructional Change) - शिक्षा व्यवस्था बनाये रखने के लिए शिक्षा के स्तरों में शिक्षा के स्वरूप तथा कार्यों में परिवर्तन ।

13. साथ-साथ रहने का अधिगम (Learning to live together) - बढते तनावों से मुक्ति दिलाने हेतु ऐसी शिक्षा का विकास करना जो भातृत्व (Brotherhood) को बढायें । जिससे कि विभिन्न जातियों, प्रजातियों, संस्कृतियों का साथ मिल कर रहना ।

14. समान समूह के मध्य नेटवर्क (Peer to Peer Networking) - नेटवर्क के अन्तर्गत आने वाले विद्यालय संसाधनों को नेटवर्क के साथ जोडना ।

15. सर्वर नेटवर्क (Server Networking) - नेटवर्क में परिवर्तन किये बिना अन्य व्यवस्था का उपयोग।

16. सेटेलाइट तकनीक (Satellite Technology) - उपलब्ध फोन लाइन में कनैक्शन जोडना ।

17. सामुदायिक रेडियो (Communication Radio) - समुदाय को शिक्षा प्रदान करने हेतु रेडियो प्रसारण का उपयोग ।

18. समाजीकरण (Socialization) - समाज के उद्देश्यों के अनुरूप सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति समाज के सहयोग से सबके लिए ।

19. सूक्ष्म पाठ योजना (Mini Lesson Plan) - पाठ सूत्रों का संक्षिप्त रूप ।

20. साहित्यिक क्रियाएं (Academic Activities) - लेखन पठन से संबंधित समस्त क्रियाएं ।

21. सांस्कृतिक गतिविधियां (Cultural Activities) - समाज तथा जीवन के सीखे हुए व्यवहार से जुडे कार्यक्रम।

22. सृजनात्मक गतिविधियां (Creative Activities) - लीक से हटकर नये तरीके से किये जाने वाले कार्यों से जुड़ी गतिविधियां।

23. सौन्दर्यानुभूति गतिविधियां (Aesthetic Activities) - सौन्दर्य तथा भाव बोध से जुडी क्रियाएं ।

24. सामुदायिक गतिविधियां (Community Activities) - सामूहिक क्रियाएं यथा-सर्वेक्षण, शैक्षिक भ्रमण, पिकनिक, वनशाला मेला आदि ।

25. समन्वय (Co-ordination) - दो या दो से अधिक संभागों, कार्यों के बीच परस्पर तालमेल ।

26. सम्प्रेषण (Communication) - दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच विचारों का आदान-प्रदान।

27. सहयोग (Co-operation) - किसी कार्य को पूर्ण करने के लिए दिया जाने वाला योगदान ।

28. स्टाफ परिषद (Staff Council) - शिक्षक के वैयक्तिक गुण, उसके व्यवसायिक गुणों से युक्त तथा शिक्षा के स्तर को ऊंचा उठाने वाले दायित्व वहन कर्ताओं का समूह ।

29. संगठनात्मक उद्देश्य (Organizational Objectives) - विभिन्न शैक्षिक समस्याओं की पहचान तथा उसका समाधान ढूंढने के लिए प्रधानाध्यापक, शिक्षक, शिक्षार्थी, अभिभावकों का सहयोग व परस्पर तालमेल।

30. संगठन (Organization) - मानवीय तथा भौतिक संसाधनों द्वारा समन्वय स्थापित करके लक्ष्यों की प्राप्ति करना ।

31. संचालन (Executive) - स्टाफ परिषद का योजनानुसार कार्य तथा उसको व्यवहारिक रूप प्रदान करना ।

32. संसाधन विकास (Resource Development) - आवश्यकता होने पर परिषद के सदस्यों द्वारा मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का उपयोग ।

33. सामाजिक क्रियाएं (Social Activities) - साक्षरता, समाज सेवा, श्रमदान, प्रभात फेरी, स्थानीय पर्यवेक्षण, रेडक्रास, विद्यार्थी बैंक, छात्र परामर्श समिति, प्रदर्शनी व मेले ।

34. सांस्कृतिक क्रियाएं (Cultural Activities) - लोक कला एवं संस्कृति से जुडी क्रियाएं यथा गीत-संगीत, नृत्य, चित्र-कला, नाटक, रंगोली, जयंती उत्सव आदि ।

35. साहित्यिक क्रियाएं (Literary Activities) - भाषा एवं साहित्य से जुडी क्रियाएं यथा भाषण, वाद-विवाद, कविता पाठ आदि।

36. सामुदायिक सेवायें (Community services) - सामाजिक भावना, जनसहयोग, सार्वजनिक कार्य, कल्याणकारी कार्यों को शक्तियों को सामाजिक हितों के लिए कार्य करना ।

37. स्वावलम्बन की भावना (Feeling of Independence) - निर्णय लेने व कार्य करने में आत्मनिर्भर होना ।

38. संकेन्द्रण छवि (Concentric Image) - केन्द्रीय सत्ता का विभिन्न स्तरों पर एक दूसरे पर अन्तनिर्भरता

'ज्ञ'

1. ज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive Domain) - किसी सिद्धान्त, विचार, अवधारणा, अर्थ, नाम, संख्या, शब्द संबंध प्रतीक आदि को पहचानना अथवा स्मरण करना ।

'त'

1. तकनीकी विकास (Technical Advancement) - विद्यालय व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए आधुनिकतम वैज्ञानिक उपकरण तथा अन्य साधन ।

ISBN - 13/978-85-8496-333-5